भूमिका

प्रिय पाठकवृन्द !

इस पुस्तक की कोई विस्तृत भूमिका लिखने की आवश्यकता नहीं है। जो कुछ इस पुस्तक में लिखा गया है वह Trial and Death of Socrates by F. J. Church M. A. के आधार पर है। सुकरात यूनान देश का बड़ा भारी राजनैतिक व सामाजिक सुधारक होगया है अतः उसके जीवन चरित को पढ़कर यदि एक भी सज्जन लाभ प्राप्त कर सकें तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूंगा। यदि आपने इस पुस्तक को अपने एक बन्धु के उत्साह का फल समझ कर, अपनाया तो मैं पुनः आपकी सेवा करने का उद्योग करूंगा।

अन्त में मैं पं० ज्योती प्रसाद शर्मा दभा निवासी व म० विजयसिंह जी तथा म० रामकिशोर जी गुप्त को हार्दिक धन्यवाद देता हूं कि इन्होंने मुझे इस काम में अच्छी सम्मति प्रदान की। पं० ज्योती प्रसाद शर्म्मा ने तो इस पुस्तक को मेरे साथ दुहराया भी था अतः मैं उनका विशेषकर कृतज्ञ हूं।

विनीत

व्रजमोहन शर्मा

लहरा निवासी।

॥ ओ३म् ॥

आत्मवीर सुकरात
के
जीवन पर एक दृष्टि

[१]

पूर्व निवेदन

आहार निद्रा भय मैथुनञ्च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम् ।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः ॥

इस छोटी सी पुस्तक में सुकरात के जीवन उसके विचार उस पर लगाये अभियोग, कारागार समय तथा मृत्यु का वृत्तान्त है। इसमें उसकी प्रबल सत्य की खोज का भी वर्णन किया गया है जिस खोज को कोई बाह्यशक्ति उसके जीवन से जुदा नहीं कर सकी थी किन्तु उसका अन्त सुकरात के जीवनान्त के ही साथ हुआ था। इस पुस्तक में यह भी दिखाया गया है कि वह उन लोगों के साथ जो कि मूर्ख होते हुए भी अपने को बुद्धिमान समझते थे, कैसा विलक्षण तर्क करता था। इन

बातों को सामने रखकर देखें तो ज्ञात होता है कि उसने इतिहास के पृष्ठों में कितना उच्च पद प्राप्त करलिया है जब उसके जीवन पर दृष्टि डालते हैं तो उसकी समानता करने वाले संसार में बहुत कम दिखाई देते हैं। सुकरात के जीवन के आरम्भिक समय का एक बड़ा भाग अज्ञात् है। जो कुछ भी उसके विषय में मालूम हुआ है वह केवल तितर बितर पड़े हुए लेखों द्वारा ही जाना गया है। उसके विषय में बहुत से लेखकों के लेख मिलते हैं किन्तु उनमें से विश्वसनीय कोई नहीं है। अफ़लातूं (Plato) और ज़ेनोफ़न (Zenophon) ही की सम्मति उसके सम्बन्ध में सत्य कही जा सकती है। परन्तु इन दोनों ने भी उसकी वृद्धावस्था का ही वृत्तान्त लिखा है, इस प्रकार उसके जीवन का प्रथम भाग अन्धकारमय है। अतः जो कुछ भी उसका हाल मिला है वह पाठकों के सन्मुख टूटे फूटे शब्दों में रखा जाता है। परन्तु उसकी जीवन चर्चा लिखने से पहिले एथेन्स नगर की सुकरात के समय की दशा का जान लेना आवश्यक है।

[२]

एथेन्स नगर की दशा व राज्य प्रणाली

यूरुप महाद्वीप के दक्षिणी भाग में एक यूनान देश है जिसे ग्रीस (Greece) भी कहते हैं! यह देश प्राचीनकाल में सभ्यता के शिखर पर पहुंचगया था। यहां की राजधानी उसी समय से एथेन्स (Athens) नगर में रहती आई है। सुकरात के समय में एथेन्स बड़ा नगर नहीं था और वहां के

निवासी अपना अधिक समय सर्वसाधारण के साथ व्यतीत करते थे। उस समय वहां पर प्रत्येक विद्या तथा कला में प्रवीण लोग निवास करते थे अतः वहां का रहना ही मनुष्य के लिये बड़ी भारी शिक्षा देने वाला होगया! राजनेता पेरीक्लिस (Pericles) का विचार था कि एथेन्स वास्तविक में शिक्षा का केन्द्र हो जावे। सुकरात ने भी एक स्थान पर यूनान देश की आत्मिक व मानसिक उन्नति के विषय में बड़े गौरव के साथ लिखा है। "एथेन्स के निवासी वहां की राज्य सम्बन्धी संस्थाओं द्वारा भी एक प्रकार की शिक्षा पाते थे।" डेलस द्वीप (Delos Island) की सन्धि (डेलस और अन्य कई द्वीपों ने मिलकर ईरान के बादशाह के विपरीत एक षड्यन्त्र रचा था उसी के सम्बन्ध में यह सन्धि हुई थी) का केन्द्र होने के कारण एथेन्स ने इतना उच्च नाम प्राप्त करलिया था कि इसके शत्रु इससे अति द्वेष करने लगे थे। एथेन्स एक ऐसे राज्य का केन्द्र था जिसमें सदैव न्यायानुसार कार्य होते थे। उस राज्य की प्रधान संस्था में प्रत्येक निवासी को (यदि वह किसी प्रकार अयोग्य न था) भाग लेना पड़ता था। इस संस्था के अधिवेशन के समय प्रत्येक सभासद की उपस्थित अनिवार्य (Compulsory) थी। वहां पर कोई पंचायती संस्था वा ऐसी संस्थाएं जैसी कि आजकल इंगलिस्तान जापान, जरमनी, अमरीका इत्यादि सभ्य देशों में हैं नहीं थी। एथेन्स की इस संस्था के प्रधान ही सब कार्य करते थे। जब यह सारी बातें उपस्थित थीं तो अवश्य ही प्रत्येक निवासी प्रतिदिन राजकीय झगड़ों को सुनने और उनके विषय में अपनी सम्मति प्रगट करने का अवसर प्राप्त

करता था, इस प्रकार उसको राज्यसम्बन्धी उच्च श्रेणी की शिक्षा मिलती थी। वह गृहस्थ, लड़ाई, सन्धि विदेशों तथा स्वदेश सम्बन्धी बातों के विषय में समर्थक व विरोधक के तर्क वितर्क को सुनता था। वह देखता था कि किस प्रकार एक ओर से मनुष्य प्रस्ताव उपस्थित करते और दूसरे उसे दूरदर्शिता के साथ काटते थे। प्रत्येक निवासी को स्वयं भी प्रत्येक बात की परीक्षा करनी पड़ती थी और पश्चात् उस पर अपनी सम्मति प्रगट करनी होती थी। वहां पर बहुत से झगड़े पंचायतों द्वारा भी निपटाये जाते थे और इन सभाओं में सबको बारी २ से भाग लेना पड़ता था। पाठको! क्या इस बात से यह अनुमान नहीं किया जा सकता कि एथेन्स निवासी राज्य सम्बन्धी शिक्षा सरलता से प्राप्त कर लेते थे। इससे यह भी प्रगट होता है कि सुकरात को लोगों के प्रति तर्क वितर्क करके सत्य बात को जान लेने की कितनी आवश्यकता हुई होगी। एथेन्स की राज्यप्रणाली का विशेषवर्णन आगे भी प्रसङ्गानुसार किया जायगा।

---

[२]

सुकरात का वंश परिचय और बाल्यकाल

सुकरात का जन्म ईसा मसीह से लगभग ४६६ वर्ष पहिले एक शिल्पकार के घर में हुआ। उस दिन किसको ज्ञात था कि यही तुच्छ बालक अपने जीवन में उन्नति करके सर्वश्रेष्ठ तत्ववेत्ता (Philosopher) हो जावेगा। क्योंकि बहुत से

बोलकर उत्पन्न होते, खाते पीते और मरते हैं परन्तु धर्म व आत्म सुधार की ओर बहुत कम लोगों की दृष्टि जाती है। किसी कवि ने सत्य ही कहा है:—

बरसने को तो बादल रोज़ मौसम में बरसते हैं।
करे क्या लेकर के लाख कीमत में वह सस्ते हैं।
भरन गरमी की पड़ती है मगर काम की एक बूंद होती है।
उसे कहता पानी कौन वह अनमोल मोती है।

सुकरात का पिता सोफ़रोनिस्कस (Sophroniscus) एक छोटा सा शिल्पकार था और उसकी माता दाई का कार्य करती थी। इस बात का ठीक २ पता नहीं लगता कि सुकरात ने आत्मिक और मानसिक शिक्षा कहां से प्राप्त की थी। इसके विषय में हम जो कुछ कह सकते हैं वह यह है कि उसकी आयु का आरम्भिक भाग ऐसे समय में व्यतीत हुआ था जब कि यूनान देश उन्नति और सभ्यता के शिखर पर विराजमान था। वह समय यूनान की कला कौशल, साहित्य, तर्क शास्त्र और, राजनीति की विलक्षण और शीघ्र होनेवाली उन्नति का था। एथेन्स में उस समय बड़े २ राजनेता और विद्वान् पाये जाते थे। वहां पर बड़े २ शिल्पकार, कवि, इतिहासवेत्ता जोकि आज दिन तक आदर्श माने जाते हैं, निवास करते थे। उनमें से कुछ के नाम यहां दिये जाते हैं एशीलस (कवि) फ़ाईडास (शिल्पकार) पेरीकिल्स (राजनेता) थ्यूसी डाइड्स (इतिहासवेत्ता) इक्रीनस इत्यादि। यह ठीक बात है कि सुकरात ने बड़े होने पर इन सब श्रेष्ठ पुरुषों से सम्भाषण किया हो क्योंकि एथेन्स बड़ा नगर नहीं था और इसके अतिरिक्त वहां की राज्यप्रणाली भी बड़ी सहायक थी।

(४)

शिक्षा और गृहस्थ जीवन

सुक़रात के विद्याभ्यास (पाठशाला इत्यादि में पढ़ने) का कुछ भी पता नहीं है किन्तु जो कुछ भी कहा जाता है वह केवल मन गढ़न्त है। बाल्यावस्था में उसके समय का अधिक भाग विशेष कर गान विद्या और शारीरिक व्यायाम में व्यतीत होता था। वह यूनानी साहित्य से अच्छी २ बातें उद्धृत करने का बड़ा अनुरागी था और होमर (Homer) एक प्रसिद्ध (यूनानी कवि व लेखक) के काव्यों से अधिक परिचित था। जेनोफ़न लिखता है कि वह (सुकरात) बड़े २ स्वर्गवासी बुद्धिमानों के लेखों और विचारों को अपने मित्रों के साथ पढ़ा करता था, उनमें ऐसी कहावत भी थीं जैसे 'तू अपने को पहिचान' जिसपर कि उसकी सम्पूर्ण शिक्षा की आधार शिला रक्खी गई है। सुकरात उस समय के प्रचलित गणित शास्त्र की भी योग्यता रखता था। वह किसी अंश में ज्योतिष और उच्च रेखागणित भी समझता था और थोड़ा बहुत शारीरिक, तथा सृष्टि सम्बन्धी शास्त्रों के आविष्कारों से भी परिचित था। परन्तु उसकी इस प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने के विषय में कोई विश्वसनीय साक्षी नहीं है। हम नहीं कह सकते कि वह शारीरिक तथा सृष्टि सम्बन्धी Cosmical शिक्षा से सचमुच ही कुछ जानकारी रखता था और उसने यह शिक्षा किससे कब और कहां पर पाई थी।

ऐसा अनुमान किया जाता है कि उसने गणित और वैज्ञानिक शिक्षा अपने बाल्यकाल में प्राप्त की थी फ़ीडो के साथ

सम्भाषण करते समय वह एक स्थान पर कहता है कि युवावस्था में उसे प्राकृतिक शिक्षा (study of nature) प्राप्त करने की बड़ी उत्कण्ठा थी। उसी स्थान पर यह भी कहा गया है कि उसने प्राकृतिक शिक्षा के पश्चात् (doctrine of ideas) विचार सिद्धान्त (प्लेटो की यह विचार सम्बन्धी कल्पना थी कि यह संसार एक दूसरे संसार का जिसे हम तर्क द्वारा सिद्ध कर सकते हैं अनुकरण है) की ओर अपना ध्यान फेरा था। अरिस्तोफ़ानस अपनी पुस्तक clouds में लिखता है कि सुकरात एक विज्ञानी था जो कि अपने शिष्यों को अन्य बातों के अतिरिक्त गणित और ज्योतिष भी पढ़ाता था, परन्तु इससे कोई बात ठीक २ सिद्ध नहीं होती। उसकी यह बात समूल अयुक्त है क्योंकि यह बात पूर्णतया सत्य ठहराई जा चुकी है कि सुकरात का विज्ञान से कुछ भी सम्बन्ध नहीं था। वह विज्ञान को उसी सीमा तक ठीक कहता था जहां तक वह मनुष्य के लिये लाभकारी होवे जिस प्रकार कि ज्योतिष जहाज के नेता को लाभ देती है। सुकरात कहता था कि विज्ञान से सम्बन्ध रखने वाले लोग सूफ़ी लोगों के समान हैं जो कि सर्वदा असम्भव बातों को सम्भव सिद्ध करने की व्यर्थ चेष्टा करते हैं और जो कि देवताओं की इच्छा के प्रतिकूल बहुत सी बातें प्रगट करते हैं। वह यह भी कहा करता था कि जो समय ऐसी बातों में व्यर्थ नष्ट किया जाता है वह कई प्रकार से लाभकारी बातों में लगाया जावे तो अच्छी बात है।

यह ठीक २ नहीं मालूम कि हमारे चरित नायक का ज़ेन्थिपी (Zanthippe) के साथ विवाह सम्बन्ध किस

समय हुआ था। ज़ेन्थिपी से सुकरात के तीन पुत्र पैदा हुये थे। इनके नाम लेम्प्रोक्लिस, सोफ्रोनिस्कस और मैनेज़ीनस थे। आजकल के लेखक कहते हैं कि ज़ेन्थिपी बड़ी लड़ाकू स्त्री थी, वह सर्वदा सुकरात और अपने पुत्रों के साथ रार मचाये रहती थी। लेम्प्रोक्लिस अपनी माता की कटुवानी और स्वभाव को असह्य समझता था। परन्तु सुकरात ने उस को समझा कर उसके हृदय में यह बात भलीभांति बिठादी थी कि माता पिता की टेड़ी आंखें केवल सन्तान के हित के लिये होती हैं। जिस दिन चरित नायक को विष पिलाया गया था उस दिन ज़ेन्थिपी उसके पास उपस्थित न थी, इस से प्रगट होता है कि सुकरात को गृहस्थी का अधिक ध्यान न था। लेखकों की बहुसम्मति से ज्ञात होता है कि सुकरात का गृहस्थ जीवन सुखमय नहीं था।

---

[५]

आत्मिक बल और न्याय प्रियता

सुकरात के जीवन के प्रथम चालीस वर्ष उपरोक्त बातों से भरे हुए हैं। इन चालीस वर्षों का उसके विषय में अधिक कुछ नहीं मालूम है। ईसा के ४३२ वर्ष पहिले से लेकर ४२६ वर्ष तक वह पोटिडिआ (Potidea) की लड़ाई में रहा और वहां पर भूक प्यास, सर्दी इत्यादि अनेक कष्टों को सहर्ष सहन करता रहा। इसी लड़ाई में उसने एल्कीबाइड्स (Alcibiades) नामी योद्धा की जान बचाई थी और हर्ष पूर्वक उसको वीरता का पुरस्कार दिलाया था। ईसा से ४३१ वर्ष पूर्व पैलोपोनिशिया की लड़ाई (Peloponnesion war) ठन गई और ४२४

वर्ष (ईसा के पूर्व) में थीवन्स ने एथेन्स निवासियों को डेलियम (Delium) स्थान पर परास्त कर तितर वितर कर दिया तव सुकरात और लेशस (Laches) ही ऐसे वीर थे जो निरुत्साह न हुए। अन्य सव तो भाग गये परन्तु सुकरात अपने स्थान पर डटा रहा और उसने सव को अपनी शूरता से चकित कर दिया। यदि एथेन्स के सभी लोग सुकरात का अनुकरण करते तो परास्त होजाना तो दूर रहा रण को अवश्य जीत लेते। फिर सुकरात ने तीसरी वार अपनी वीरता एमफ़ीपोलीज़ (Amphipolis) की लड़ाई में दिखाई परन्तु उसके कार्यों के विषय में अधिक नहीं मालूम है। इस लड़ाई में दोनों ओर के सेनापति मारे गये थे।

इस लड़ाई के १६ वर्ष पश्चात् तक सुकरात के विषय में कुछ नहीं मालूम है। उसके जीवन की विशेष घटनाएं न्यायालय में हुईं जो कार्यवाही के वीच दर्शाई गई हैं जो कि हमारे चरित नायक ने स्वयं वर्णन की हैं। उनसे प्रगट होता है कि उसका आत्मिक वल अद्वितीय था और संसार में ऐसी कोई भी क्रोधी अथवा मार डालने वाली शक्ति नहीं थी जो उसे सत्य के मार्ग से हटा दे। महापुरुषों की वीरता का यही सच्चा नमूना है।

४०६ वी० सी० में लेसीडेमोनियावालों और एथेन्स वालों के वीच अर्गीनुसी स्थान पर युद्ध हुआ जिसका परिणाम एथेन्स निवासियों की पराजय हुई। एथेन्स सेनाधिकारी न तो अपने मृत्यु प्राप्त साथियों को गाड़ सके और न जहाज़ों के टूट जाने पर घायलों की रक्षा ही कर सके इस वात को सुन कर एथेन्स में गड़वड़ी फैलगई और वहुत से

लोग हल्ला मचाने लगे। सेनाधिकारियों के ऊपर यह अभियोग चलाया गया परन्तु उन्होंने कहा कि हमने अपने कई सहचारियों को यह कार्य करने की आज्ञा दी थी परन्तु वे बिचारे तूफान के आजाने से कुछ भी न कर सके। इसके पश्चात् वहां की प्रबन्धकारिणी संस्था ने निश्चय किया कि एथेन्स निवासी दोनों ओर की बातें सुन कर एक ही साथ आठों सेनाधिकारियों के विषय में आज्ञा देंगे परन्तु यह निश्चय करना न्याय विरुद्ध था क्योंकि एथेन्स की राज्य प्रणाली के अनुसार प्रत्येक दोषी के विषय में पृथक २ न्याय करना चाहिये था।

सुकरात भी उस समय वहां की प्रबन्ध कारिणी सभा का सदस्य था। इस सभा के कुल सदस्य पांच सौ थे जो कि १० जातियां में से प्रत्येक के पचास २ प्रतिनिधि लिये जाते थे। प्रत्येक जाति के लोग पैंतीस २ दिन तक अपनी बारी से पंच बनते थे और इनमें से प्रत्येक दश २ एक २ सप्ताह के लिये सरपंच ठहराये जाते थे। इन दश में से एक व्यक्ति वक्ता बनाया जाता था अर्थात् उसी को लोगों की सम्मति लेने का अधिकार था यद्यपि पहिले भी कई वक्ताओं ने उपरियुक्त प्रस्ताव का विरोध किया था परन्तु वह विचारे मृत्यु और अयश के भय दिखाये जाने पर चुप रह गये। जिस दिन सुकरात वक्ता बनाया गया तो उसने उस प्रस्ताव को न्याय प्रतिकूल समझकर उसके विषय में लोगों की सम्मति न ली। लोगों ने उसे बहुतेरा धमकाया परन्तु उसने साहस पूर्वक उत्तर दिया मैंने ठान लिया है कि चाहे जैसी आपत्ति आवे उसे मैं न्याय के हेतु सहन करूंगा और तुम्हारे न्याय विरुद्ध प्रस्ताव में भाग न लूंगा

परन्तु सम्मति न लेने का अधिकार उसे एक ही दिन के लिये प्राप्त था, पीछे बिचारे डरपोक वक्ताओं ने सम्मति लेना स्वीकार कर लिया और अन्त में सेनाधिकारियों को न्याय विरुद्ध मृत्यु दण्ड मिला।

दो वर्ष पश्चात् चरित नायक ने पुनः अपने कार्य से दर्शा दिया कि वह न्याय के लिये सर्व प्रकार के कष्ट सहने को तय्यार है। ४०४ बी० सी* में लैसीडोनियांवालों ने एथेन्स पर अधिकार जमा लिया और नगर की रक्षा करनेवाली चारों ओर की दीवारों को भस्म करा दिया। प्रबन्ध कारिणी सभा का पता भी न रहा और क्रितियास ने लिसिन्डर की सहायता से धनवानों का राज्य स्थापित कर दिया। यह समय बड़ा ही भयानक था क्योंकि राज्य कर्त्ता अपने प्राचीन शत्रुओं को मारने और प्रजा को लूटने पर उतारू थे। वह लोग चाहते थे कि हम अपने कुकर्मों में अधिक से अधिक लोगों को सम्मिलित करलें। इसी विचार से उन्होंने एक दिन सुकरात और चार अन्य पुरुषों को बुलवा भेजा और उनके आजाने पर आज्ञा दी कि सेलेमिस स्थान से लीवन (Leon) नामी पुरुष को पकड़ लाओ वह मारा जावेगा। अन्य चार तो डरके कारण आज्ञा पालन कर मुक्त हुए। परन्तु आत्मवीर सुकरात ने कह दिया कि "जिस कार्य को करने में मेरी आत्मा साक्षी नहीं देगी उसे मैं नहीं करूंगा" और यह कह कर घर को चला गया। क्यों न कहता, जब दुष्ट लोग नहीं मानते तो वीरों का यही कर्त्तव्य है। पहिले और भी एक समय पर सुकरात ने क्रितियासको चिढ़ा दिया था इसका कारण यह था कि सुकरात

*ईसा के सन् से पहिले समय को बी० सी० कहते हैं।

क्रितियास के प्रबन्ध के अवगुण नवयुवकों को सुनाया करता था जिससे यह लोग क्रितियास को घृणा से देखने लगे थे।

[६]

तर्क और उपदेश

न्यायालय की कार्यवाही के बीच में कहा गया है कि एक समय (जिसकी ठीक २ मिती अज्ञात है) शेरोफ़न डेल्फ़ी को गया और वहां जाकर पूछा कि संसार में सुकरात से भी अधिक कोई बुद्धिमान पुरुष है वा नहीं ! तब वहाँ की देवी ने उत्तर दिया कि कोई नहीं है। न्यायालय में अपनी निरपराधता सिद्ध करते हुये सुकरात कहता है कि मैं लोगों से तर्क इसी कारण करता हूं कि देव्योत्तर की सत्यता की परीक्षा भलीभांति करलूं। यद्यपि इस देव्योत्तर ने सुकरात को वास्तविक में बुद्धिमान और परोपकारी नहीं बना दिया था तथापि इसी के कारण उसका ध्यान परोपकार और देश सेवा की ओर बहुत कुछ झुक गया था। अतः हमको यह बात समझ लेनी उचित है कि सुकरात ने इस उत्तर की छाया में रहकर अपने तर्क के यथार्थ कारण को छिपा लिया था। तर्क करने से चरित नायक का अभिप्राय देव्योत्तर (Delphicoracle) की सत्यता परखने का नहीं था किन्तु उसने इस तर्क ही द्वारा लोगों की अज्ञानता को प्रगटकर दिखाया था सुकरात कहता है, 'ईश्वरने मुझे आज्ञा दी है कि मैं लोगों की प्रत्येक बात में उत्तर की स्वप्न में परीक्षा करूं। अतः मैं चुप नहीं रह सकता क्योंकि ऐसा करने में ईश्वर की आज्ञा का पालन नहीं कर सकूंगा।' इस विचार को मनमें रखकर उस महापुरुष ने तर्क आरम्भ किया और लोगों

के क्रोधित होने पर भी निराश होकर उसे नहीं त्यागा। यह ठीक ठीक नहीं कहा जा सकता इस महामति ने लोगों की अज्ञानता को कब समझ लिया था, परन्तु बहुत सी बातों से ज्ञात पड़ता है कि ईसा से ४२३ वर्ष पहिले वह इतना नामी और प्रशंसित होगया था कि अरिस्तोफ़ानस ने एक पुस्तक रची जिसमें सुकरात की मनमानी हंसी उड़ाई है। आत्म-परीक्षा करना तो सुकरात ने उपरोक्त तिथि से नौ वर्ष पूर्व ही आरम्भ कर दिया था।

यद्यपि सुकरात नवयुवकों को सच्ची शिक्षा दिया करता था परन्तु इस शिक्षा के बदले में सूफ़ी* लोगों की तरह द्रव्य स्वीकार नहीं करता था। वह प्रत्येक पुरुष से जो उसकी बात को ध्यान पूर्वक सुनता था बातचीत किया करता था। चाहे श्रोता धनहीन हो वा धनवान हो। कभी तो बड़े बड़े राज्य कर्मचारियों से, कभी शास्त्रज्ञों से, कभी दुकानदारों से और कभी चर्मकारों से वह बातें करता था और सदैव नगर में रहता था। वह कहा करता था 'मैं विद्या का प्रेमी हूं लोगों से नगर में सम्भाषण करके विद्या प्राप्त कर सकता हूं, परन्तु खेत और वृक्ष मुझे विद्या नहीं दे सकते'। उसके जीवन से प्रतीत होता है कि वह अपना सारा समय लोगों के साथ सम्भाषण करने में ही व्यतीत करता था यहाँ तक कि उसने अपने निजी कार्यों को भी छोड़ रक्खा था जिसके कारण वह धनहीन होगया था। चरित्तनायक ने स्वयं कोई संस्था नहीं स्थापित की थी किन्तु उसके प्रेमी चारों ओर से अपने ही आप इकट्ठे होगये थे।

*वह लोग जोकि असत्य बातों को सत्यसिद्ध करने की व्यर्थ चेष्टा करते थे।

[७]

सुकरात के विषय में प्लेटो का विचार

प्लेटो ने एक पुस्तक लिखी है जिसमें उसने अलकीबाइड्स नामी पुरुष का चरित वर्णन किया है और सुकरात के विषय में अपने निजी विचार इसी पुरुष का जिह्वा द्वारा वर्णन किये हैं। उस पुस्तक में अलकीबाइड्स कहता है मैं सुकरात की प्रशंसा एक प्रतिमा से उसकी समानता करके आरम्भ करूंगा। मैं समझता हूं सुकरात विचार करेगा कि मैंने हंसी उड़ाने के लिये उसको प्रतिमा बनाया है परन्तु मैं आपको विश्वास दिलाताहूं कि सत्य को प्रगट करने के हेतु मैंने ऐसा किया है। अतः मैं कल्पना करता हूं कि सुकरात उन मूर्तियों के सदृश है जो कि दुकानदारों के यहां पर विक्रयार्थ रक्खी रहती हैं। उन्हें बाहर से देखने पर मालूम होता है कि बांसुरी लिये हुये मूर्तियां खड़ी हैं परन्तु खोलने पर भीतर देव मूर्तियां दिखाई देती हैं स्यात् सुकरात तुमभी मेरे ऐसा कल्पित करने से सहमत होगे। क्या तुम यह कहते हो कि तुम्हारा रूप इन मूर्तियों का सा नहीं है अब सुनो कि अन्य बातों में उन मूर्तियों से किस प्रकार मिलते हो। क्या तुम सदैव उदासीन नहीं रहते हो यदि तुम इस बात को अस्वीकार करोगे तो मैं साक्षी उपस्थित करूंगा। क्या तुम बांसुरी बजानेवालों के समान बांसुरी नहीं बजाया करते ? क्योंकि गान विद्या में प्रवीण लोग तो मनुष्यों को वाणी द्वारा आकर्षित करते हैं जो कोई गवैया (चाहे प्रवीण हो वा न हो) गान आरम्भ करता है तो वह गान ही की ध्वनि द्वारा लोगों

के मन को आकर्षित कर लेता है और नास्तिकों के हृदयों में ईश्वर की भक्ति उत्पन्न कर देता है परन्तु तुम इन सब बातों को बिना बांसुरी के ही प्राप्त कर लेते हो। क्योंकि जब कभी लोग पैरीक्लिस राजनेता की वक्तृता सुनते हैं तो बहुत उत्कण्ठित नहीं होते किन्तु जब कोई तुमको बोलते हुए सुनता है अथवा किसी अन्य व्यक्ति को चाहे वह चतुर वक्ता हो वा न हो, तुम्हारे शब्द पुनरुच्चारण करते सुनता है तो वह अति विह्वल हो जाता है और उसके हृदय पर तुम्हारी बातों का अमिट प्रभाव पड़ जाता है।

'यदि मुझे लोग पागल सा न समझते तो मैं शपथ द्वारा तुम्हें विश्वास दिला देता हूं कि तुमारी वक्तृता सुनकर मेरा हृदय अकुला जाता है जैसे कि इष्टदेव को मनानेवाले की मदिरा मस्त की सी दशा हो जाती है) मेरे नेत्रों से जल बहने लगता है और मैं अपने को तुच्छ समझने लग जाता हूं। मैंने बड़े २ वक्ताओं की लम्बी चौड़ी मधुर वक्तृताएं सुनी हैं किन्तु मेरी ऐसी दशा कभी नहीं हुई है। तुम ने मेरे ऊपर ऐसा अधिकार कर लिया है कि मुझे अपना जीवन व्यतीत करना कठिन प्रतीत होता है। सुकरात तुम मेरी बात का विश्वास करो कि यदि मैं अब भी तुम्हारी वक्तृता सुनने बैठ जाऊं तो ज्यों की त्यों वही दशा हो जावेगी। क्योंकि मित्रो! सुकरात मुझसे कहला लेता है कि मैं आत्म सुधार न करके दूसरों के सुधार करने की चेष्टा करता हूं वह भूल है। सुकरात के सन्मुख न तो मैं उसकी बात को ही समझता हूं और न उसकी शिक्षा का पालन कर से निषेध करता हूं परन्तु जब मैं बाहर जाता हूं तो चपल लोग मेरी झूठी

बड़ाई करके मुझे उसकी सारी शिक्षा भुला देते हैं। अतः जब कभी मैं सुकरात को देख लेता हूं तो लज्जा के कारण आड़ में हो जाता हूं क्योंकि मैंने उसकी आज्ञा का पालन नहीं किया है। इसीसे मैं कभी २ यह भी चाहता हूं कि यह मनुष्यों के बीच में से कहीं चला जावे परन्तु ऐसा हो जाने पर मुझे और भी अधिक कष्ट मालूम होगा। सो मेरी दशा सांप और छछूंदर की सी होरही है क्योंकि मुझे यह नहीं सूझता कि मैं क्या करूं?

अब आप देखें कि वह मूर्तियों से किस प्रकार मिलता जुलता है और उसमें एक कैसी आश्चर्ययुक्त बात है? आप लोगों में से किसी को उसका स्वभाव नहीं मालूम है केवल मैं जानता हूं बस कारण आपको भले प्रकार समझा दूंगा। सुकरात सच्चे हृदय से स्वरूपवानों व ज्ञानवानों के साथ मैत्री स्वीकार करता है परन्तु इसके साथ ही यह भी कहता है कि मैं तो अज्ञानी हूं यह एक हंसी उत्पन्न करनेवाली बात है। यही बाहरी खोल है जिससे सुकरात ने अपने को ढंक लिया है यद्यपि हम सुकरात की खोल को पृथक कर देखें तो भीतर श्रेष्ठ स्वभाव और बुद्धिमानीही दिखाई देगी। सुकरात धन, बाहिरी स्वरूप और सांसारिक बड़ी २ वस्तुओं की कुछ भी चिन्ता नहीं करता है और इन वस्तुओं की प्रशंसा करनेवाले हम लोगों को भी तुच्छ जीव समझता है। परन्तु उसकी आन्तरिक श्रेष्ठ बातें उसी समय दिखाई देती हैं जबकि वह अपनी वक्तृता सुनाता है, उसकी वक्तृतायें इतनी बहुमूल्य हैं कि सुकरात की आज्ञा को ईश्वराज्ञा समझकर पालन करना उचित है।

एक समय हम सब लोग पोटिडिआ की लड़ाई में थे कि हमारी भोजन सामग्री निवट गई और चारों ओर से आपत्तिओं की भरमार होने लगी। परन्तु सुकरात ने इन सब को सहर्ष सहन किया। जब वहां बहुत सी बुरी भोजन सामग्री हमें मिली तो अकेला यही धीर पुरुष उसे प्रसन्नचित्त होकर खाता हुआ दिखाई पड़ा। लोगोंने बहुत कुछ कहा सुनी करके इसको सबसे अधिक मदिरा पिलादी परन्तु जिस वस्तु का वह कभी सेवन नहीं करता था उसके पीने से भी उसके मुख पर आलस्य और तन्द्रा नहीं दिखाई दी। एक दिन शीत अधिक खिसल रहा था और बरफ़ पढ़ रही थी लोग बाहिर नहीं निकलते थे और यदि कोई निकलता भी था तो कम्बल और शीत रक्षक वस्त्र धारण करके धीरे २ चलता था। परन्तु सुकरात अपने प्रति दिन के वस्त्र को धारण कर बड़े वेग से चला तब लोगों ने यह समझकर कि यह हमारी हंसी उड़ाता है उसके ऊपर क्रोध प्रगट किया।

एक दिन सवेरे सुकरात एक वृक्ष के नीचे खड़ा गूढ़ विचार में पड़ा हुआ दिखाई दिया। दोपहर को भी वह उसी दशा में था यहां तक कि लोग खाना खाकर रात को सो रहे परन्तु यह वहीं पर खड़ा रहा। दूसरे दिन सवेरे अपने प्रश्न का उत्तर निश्चय कर सूर्य देव को प्रार्थना सहित प्रणाम करके उस स्थान से हटा। उसकी यह आश्चर्यजनक घटनायें स्मरण रखने योग्य हैं।

परन्तु मुझे सुकरात की रण वीरता का भी वर्णन करना

उचित प्रतीत होता है। पोटिडिआ की लड़ाई में मैं ही सेनापति था, जब मैं गिर पड़ा तो अकेला सुकरात ही निकट खड़ा हुआ मेरे शरीर व शस्त्रों की रक्षा करता रहा। विजय के अन्त में जब अन्य सेनाधिकारियों ने मुझको वीरता का पुरस्कार देना निश्चय किया तो मैंने कहा कि विजय के लिये सुकरात को पुरस्कृत करना चाहिये, परन्तु सुकरात! मुझे भलीभांति याद है कि प्रथम तुमनेही कहा कि पुरस्कार तुमको न देकर मुझे ही दिया जावे।

जब डेलियम (Delium) की लड़ाई में हमारी हार हो गई उस लड़ाई में मैं तो अश्वारोही सैनिकों में था और सुकरात पैदलों में था और इस पर भी उसके ऊपर शस्त्रों का भारी बोझा लदा हुआ था। जब सुकरात और लेशेज़ साथ २ लौट रहे थे तो दैवयोग से मैं आ निकला और मैंने इन दोनों से साहस बांधकर प्रसन्न चित्त रहने की प्रार्थना की। घोड़े पर सवार होने के कारण इस विपत्तिकाल में सुकरात के दिखाये हुए अपूर्व दृश्य को मैं ही भले प्रकार देख सकता था उस समय सुकरात शान्ति में सबसे अधिक प्रसन्न था। यह शान्त चित्त होकर ही शत्रुओं और मित्रों की ओर देखता हुआ वीरता से कार्य करता रहा। शत्रु डर गये कि सुकरात और उसके साथियों पर ऐसी अवस्था में आक्रमण करना सरल नहीं है। इस प्रकार हम सब लोग बेखटके रण से लौटे। तब अरिस्तोफ़ानस की पुस्तक क्लाउड्स को पढ़कर मुझे निश्चय होगया कि यद्यपि उक्त मनुष्य ने तो सुकरात की हंसी की है तथापि वह वास्तव में ऐसा ही वीर है जैसा कि पुस्तक से प्रतीत होता है।

अनेक गुण एक २ करके किसी न किसी मनुष्य में मिलते हैं परन्तु वे सब के सब सुकरात में ही एकत्रित दिखाई देते थे। सुकरात में सर्वोपरि गुण यह था कि इसकी समानता करनेवाला प्राचीन वा वर्त्तमान काल में कोई भी नहीं मिलता। ब्रेसीडाइड्स और अखिलीज़ ये दोनों वीर एक से हैं। नेस्टर और एन्टेनर (राजनेता) यह भी एक दूसरे से मिलते हैं, परन्तु इस अद्भुत वीर की समानता करनेवाला कोई नहीं दिखाई देता केवल उन मूर्त्तियों को छोड़कर जिनसे मैंने उसकी अभी समानता की है। जब तुम सुकरात की वक्तृता पढ़ोगे तो वह बड़ी भद्दी मालूम होगी क्योंकि वह सदैव अछूत जातियों ही के विषय में बकता रहता था और इसके अतिरिक्त उसकी भाषा भी गंवारी और लम्बे चौड़े शब्दों से शून्य है। किन्तु यदि आप उसकी वक्तृता के आशय को लेकर ध्यान दें तो वह अति मनोहर और आत्मोन्नति व मोक्ष प्राप्ति का मूल साधन प्रतीत होगी। इन्हीं कारणों से मैं सुकरात की प्रशंसा करता हूं।"

---

[८]

सूफ़ी लोग और सुकरात की फ़िलासफ़ी

सुकरात के पूर्व शास्त्रज्ञों का ध्यान चारों ओरसे प्राकृतिक नियमों का अनुसन्धान करने में ही लगा रहा था। उन्होंने अपने ऊपर विश्व को संगठित वस्तु ठहराने का भार लेलिया था। उन्होंने सृष्टिके स्वभाव की भी खोज की थी और अग्नि, जल, वायु आदि तत्वों का भी ज्ञान प्राप्त करना आरम्भ कर

दिया था। वे लोग ऐसे प्रश्नों पर कि सर्व वस्तुयें किसप्रकार बनती विगड़ती हैं। केवल विचार ही विचार करते रहे थे। परन्तु ४५० बी० सी० के लगभग उनमें से सर्वसाधारण का विश्वास उठ गया क्योंकि उस समय एथेन्स निवासी मानसिक व राजनैतिक प्रश्नों की ओर झुक पड़े थे और उनका असम्भव बातों में से विश्वास जाता रहा था। परन्तु उन शास्त्रज्ञों के पास इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं था क्योंकि यह लोग इस ओर विचार ही नहीं करते थे।

उस समय सर्व जनता को जो मानसिक व राजनैतिक ज्ञान की आवश्यकता होरही थी वह नये ही उठ खड़े हुए सूफ़ी लोगों ने पूर्ण की, यह लोग द्रव्य लेकर शिक्षा प्रदान करते थे। इन शिक्षकों की शिक्षा व आत्मोन्नति के विषय में विपरीत सम्मतियां हैं जिनका वर्णन करना हमारे प्रसङ्ग के बाहर है। हमको यही कहना है कि सूफ़ी लोग सर्वसाधारण को प्राचीन अधूरे विचारों की ही शिक्षा देते थे जिसके प्रति सुकरात सदैव झगड़ा ठानता रहा था क्योंकि उनकी शिक्षा नियमानुकूल नहीं थी। उनको सर्वसाधारण के आन्तरिक अवगुणों का कुछ भी ज्ञान नहीं था इसी कारण उन्होंने लोगों का सुधार करने की चेष्टा नहीं की थी। वे अपने शिष्यों को सत्य की शिक्षा ही नहीं देना चाहते थे किन्तु उनकी इच्छा नव युवकों को प्रचलित राजनीतिक व समाजिक दृष्टि से योग्य बनाने की थी। उन्होंने केवल उस समय की कहावतों को इकट्ठा करके अपनी शिक्षा आरम्भ करदी थी। प्लेटो कहता है कि यह लोग उस मनुष्य के समान थे जिसने किसी जंगली जानवर को वशीभूत करके उसे प्रसन्न करने व उससे बचने

की युक्ति का अध्ययन करलिया हो और उसी युक्ति को ज्ञान समझता हो। यह लोग उसी बात को अच्छा समझते थे जिससे इनके शिष्य प्रसन्न हों अन्यथ और सब को बुरा कहते थे। उनकी सारी फ़िलासफ़ी इन्हीं बातों पर निर्भर थी।

परन्तु सुकरात की फ़िलासफ़ीऐसे प्रश्नों का उत्तर जानने पर अवलम्बित थी जैसे पवित्रता क्या है ? अपवित्रता क्या है ? उच्च क्या है ? नीच क्या है ? न्याय परायणता क्या है ? अन्याय क्या है ? बुद्धिमत्ता क्या है ? मूर्खता क्या है ? साहस क्या है ? भय क्या है ? राज्य क्या है ? राज्यनेता कौन है ? राज्य प्रणाली क्या है ? राज्य करने की योग्यता किस शिक्षा से प्राप्त हो सकती है ?

उसका विचार था कि जो लोग इन प्रश्नों का उत्तर दे सकते हैं वही ज्ञानी हैं शेष अज्ञानी हैं जो कि गुलामों से किसी प्रकार भी अच्छे नहीं हैं। उसके कई प्रश्नों के उत्तर प्लेटो की निम्न लिखित अंग्रेज़ी भाषा की पुस्तकों में प्रगट किये गये हैं:—

प्रश्न	नाम पुस्तक
साहस क्या है ?	Laches
सहन शीलता क्या है ?	Charmides
पवित्रता और शुद्धता क्या है ?	Dialogue of Enthyphron
मित्रता क्या है ?	Lysis

सुकरात की फ़िलासफी मनुष्य सम्बन्धी है परन्तु उसके पूर्व शास्त्रज्ञों की प्रकृति सम्बन्धीहै, और सूफ़ी लोगों से उसका केवल शास्त्र के दृष्टि विन्दु में मत भेद है सूफ़ी लोगों का

उद्देश्य केवल इधर उधर की बातों को इकट्ठा करना था परन्तु सुकरात का उद्देश्य मनुष्यों का सुधार करने का था। सूफ़ी लोग मनुष्य के सम्बन्ध में धड़ाधड़ ऐसे शब्दों का प्रयोग करते थे जिनका ठीक २ अर्थ उनको स्वयं ही अज्ञात था। उन्हों ने इन शब्दों का अर्थ जानने के लिये कुछ भी कष्ट नहीं उठाया था वे तो उनके प्रयोग कर लेने ही से संतुष्ट थे चाहे ऐसा करने में वह ठीक हों वा नहीं। संक्षेपतः सुकरात वास्तव में सत्य खोजक था परन्तु सूफ़ी लोग टका कमाने के ही पंडित थे।

---

(९)

लोगों का द्वेष

जिस समय सुकरात कई लड़ाइयों में अपनी वीरता दिखा रहा था साथ ही साथ अरिस्तोफ़ानस [जो कि सदा सुकरात से द्वेष भाव रखता था) ने एक पुस्तक लिखी जिसमें उसने चरित नायक की फ़िलासफ़ी आदि की मनमानी हंसी उड़ाई है सूफ़ी लोगों की फ़िलासफ़ी को अरिस्तोफ़ानस अत्यन्त घृणा की दृष्टि से देखता था क्योंकि वह इन लोगों को नास्तिक और आत्मबलहीन समझता था। वह स्वयं परम्परा से चली आई बातों में विश्वास करता था और उन लोगोंको जो कि इन सब बातों को बिना तर्क उठाये स्वीकार कर लेते थे, अच्छा समझता था। उसने अपनी पुस्तक में सूफ़ी लोगों और स्वतन्त्र विचारवालों पर आक्रमण किया है। उसने इस पुस्तक में सम्पूर्ण हंसी का केन्द्र सुकरात ही को

बनाया है जिसका कारण यह प्रतीत होता है कि इस महा-पुरुष का स्वरूप निराला था जिसे देखकर लोगों को हंसी आती थी आंखें बड़ी २ नासिका चपटी और पोशाक ढीली ढाली थी। प्रत्येक मनुष्य इस महामूर्ति से जो कि गली गली में दिखाई देती थी भली भांति परिचित था। आरिस्तोफ़ानस को इस बात का ध्यान नहीं था कि सुकरात का मुख्य उद्देश्य सूफ़ी लोगों का विरोध करना है, तभी तो उसने झूठी हंसी उड़ाई है। अरिस्तोफ़ानस के लिये यही बहाना संतापजनक था कि सुकरात प्राचीन विचारों में बिना उसकी परीक्षा किये विश्वास नहीं करता है अतः हंसी उड़ाये जाने योग्य है। न्यायालय के पाठ में जो आगे चलकर क्लाउड्स के विषय में कहा गया है वह अक्षरशः ठीक है अरिस्तोफानस ने उस पुस्तक में शास्त्रज्ञों और सूफी लोगों की हंसी उड़ाई है और इन दोनों को ही मिलाकर सुकरात का चरित वर्णन किया है। उसमें दिखाया गया है कि सुकरात हर समय असम्भव बातें किया करता है क्योंकि यूनान के प्राचीन निवासी समझते थे कि पृथ्वी की चाल और प्रबन्ध इत्यादि सब बातें जेअस देवता के आधीन हैं परन्तु सुकरात कहता था कि यह ईश्वरीय नियम बद्ध हैं और पृथ्वी सूरज के चारों ओर परिक्रमा देती है।

अरिस्तोफ़ानस ने दिखाया है कि सुकरात में असत्य को सत्य सा प्रगट करने की बुरी बान पड़ गई थी। उसने यह भी लिखा है कि सुकरात पुत्रों को शिक्षा देता है कि अपने पिताओं को पीटो क्योंकि यह तो एक भ्रम की बात पहिले से चली आरही है पिता ही पुत्र को पीटे। पिता और पुत्र एक दूसरे

पर वरावर२ स्वत्व रखते हैं। आगे चलकर यह कहा कि सुकरात ने जान बूझकर देवताओं के प्रति पाप किया है और इसी से नास्तिक बन गया है। यद्यपि एक शास्त्रज्ञ और एक सूफ़ी में बड़ा अन्तर था तथापि अरिस्तोफ़ानस ने इन दोनों को मिलाकर सुकरात बना दिया है सुकरात की वास्तविक जीवनी पढ़ने से ज्ञात होता है कि उसके शत्रुओं ने द्वेष ही के कारण यह दोषारोपण किये थे। अतः अब बात के कहने की कोई आवश्यकता नहीं है कि क्लाउड्स एक झूठा, मन गढन्त उपन्यास है। इन सब बातों से यही सिद्ध होता है कि इस पुस्तक के लिखे जाने के पूर्व ही सुकरात ने तर्क द्वारा यूनान देश में यश प्राप्त कर लिया था।

अन्तिम जीवन

अब हम उन बातों पर पहुंच गये हैं जो आगे लिखे सम्भाषणों में वर्णित हैं। इसमें सन्देह नहीं कि सुकरात अपने समय का यूनान देश में सर्वोत्तम पुरुष था उसके इसी उच्च पद प्राप्त करने पर अधिकाँस लोगों को द्वेष होगया था और इसी द्वेष का फल यह हुआ कि ३६६ बी० सी० अर्थात् ३६६ वर्ष ईसाके पूर्व में मैलीतस आदि कई बड़े२ राज नेताओं ने उसके ऊपर नवयुवकों का चाल चलन बिगाड़ने का अभियोग चलाया जिसके कारण अन्त में सुकरात को मृत्युदण्ड दियागया। उस समय एथेन्स का प्रधान पुजारी किसी धार्मिक कार्य के लिये एक द्वीप में गया हुआ था इस कारण मृत्यु के पहिले चरित नायक को एक मास तक कारा-गार में बन्द रहना पड़ा। मृत्यु के लिये नियत तिथि से एक रात्रि पहिले क्रितोने जोकि सुक-

रात का परम मित्र था वहां से भाग जाने की सम्मति दी परन्तु सुकरात ने इस काम को न्याय और आत्म विरुद्ध समझ कर नहीं किया। तत्पश्चात् उसने प्रसन्नता पूर्वक विष का प्याला पिया और मृत्यु शय्या पर टांग पसार कर सोगया। उसने यदि अपना वाद विवाद करना छोड़ दिया होता तो अवश्य ही वह मृत्यु दण्ड से छूट जाता किन्तु उसने न्यायाधीशों से स्पष्टतया कह दिया कि (I can not hold my peace for that would be to bisobey God) मैं चुप नहीं रह सकता क्योंकि ऐसा करने से मैं ईश्वरकी आज्ञा का उलंघन करूंगा।

उसने देशवासियों के सुधार के सामने मृत्यु की कुछ भी चिन्ता नहीं की। उसका तो सिद्धान्त था कि "मरना भला है उसका जो अपने लिये जिये, जीता है वह जो मर चुका स्वदेश के लिये।"

उसके जीवन से हमें आत्मबल की बड़ी भारी शिक्षा प्राप्त होती है। वह भलाई के सामने सब वस्तुओं को तुच्छ समझता था जैसा कि उसने अपना मुकद्दमा होते समय न्यायालय में कहा था।

"I spend my whole life in going about and persuading you all to give your first and cheapest care to the perfection of your souls, and not till you have done that to think of your bodies or your wealth; and telling you that virtue does not come from wealth, but that wealth and every thing which men have, comes from virtue."

अर्थात् मैं अपना सारा जीवन तुम लोगों के पास जाने

और तुमको सबसे पहले अपने आत्म सुधार की ओर ध्यान देने के लिये बाध्य करने में लगाता रहा कि जब तक तुम आत्म सुधार न करलो तब तक अपने शरीर और धन की ओर बिल्कुल ध्यान मत दो। और सर्वदा कहता रहा कि धन के द्वारा गुण नहीं प्राप्त होते परन्तु धन और जो कुछ मनुष्य प्राप्त कर सकता है वह सब गुण के द्वारा ही प्राप्त करता है।

---

(११)

न्यायालय और दण्डआज्ञा

विरोधियों के अभियोग चलाने पर सुकरात को राज की आज्ञानुसार न्यायालय में उपस्थित होना पड़ा, उसकी ७० वर्ष की आयु में ऐसा समय उसे केवल एक ही बार देखना पड़ा था। वहां पर नियत समय तीन बराबर भागों में बांटा गया, पहिले भाग में सुकरात ने अपनी निरपराधता सिद्ध करने के हेतु वक्तृता दी. दूसरे में न्यायाधीशों ने सम्मति लेकर दण्ड नियत किया और तीसरे में फिर सुकरात ने दूसरा दण्ड अपने ही लिये नियमानुकूल चुना अब हम पहिले भाग में हुई बात लिखते हैं :—

सुकरात का वक्तृता—"एथेन्स निवासियो! मैं नहीं कह सकता कि मेरे विरोधियों ने आपके हृदय पर कैसा प्रभाव डाला है किन्तु उनकी बातें बाहिरी रूप से इतनी सत्य सी मालूम होती हैं कि मैं अपना आपा भूल गया परन्तु फिर भी वास्तव में उनका एक भी शब्द सत्य नहीं है। उनकी सारी असत्य बातों में से अत्यन्त आश्चर्य जनक यह है कि मैं सूफ़ी लोगों की भांति चालाकी से वाद करता हूं और तुमको मेरी बातें सुनते समय

सावधान रहना चाहिये कि कहीं मैं तुमको पट्टी न देदूं। ऐसा कहते समय उनको लज्जा भी तो नहीं आई क्योंकि मेरे बोलते ही आप लोगों पर सत्य विदित हो जायगा और मैं इस बात को सिद्ध करदूंगा कि मैं किसी प्रकार चालाक नहीं हूं; यदि वह चालाक मनुष्य कहने से उस मनुष्य की ओर संकेत करे जो सत्यवादी हो तब तो मैं अवश्य ही उनके कहने से भी अधिक चालाक हूं। मेरे विरोधियों ने एक भी शब्द यथार्थ नहीं कहा है परन्तु आप सारा सत्य मुझ से सुनेंगे। आप लोगों को मुझ से कोई शब्दों से अलंकृत और मनमोहिनी वक्तृता की आशा नहीं करनी चाहिये जैसी कि उन्होंने आपके सन्मुख दी है। बिना पहिले से तयारी किये ही मैं आपको सब बातों का यथार्थ बोध कराऊंगा क्योंकि मुझे अपने निरपराधी होने का पूर्ण विश्वास है। अतएव आपको अन्यथा विचार कर लेना अनुचित होगा क्योंकि वास्तव में आपके सन्मुख मुझे बुढ़ापे में झूठ बोलना कठिन और लज्जास्पद मालूम होता है। परन्तु एथेन्स निवासियो! मैं आप से एक प्रार्थना स्वीकृत कराना चाहता हूं, वह यह है कि यदि मैं आप लोगों के सन्मुख वैसी ही बोलचाल का प्रयोग करूं जैसा करते हुए कि आप लोगों ने मुझे सार्वजनिक स्थानों में देखा है तो आप लोग आश्चर्य न करें। अब आप ध्यान पूर्वक सत्य को सुनिये। 'मेरी अवस्था सत्तर वर्ष से अधिक है और मेरे लिये यह पहिला ही समय है कि मैं यहां न्यायालय में आया हूं अतएव यहां की बोलचालसे सर्वथा अनभिज्ञ हूं। यदि मैं विदेशी होता तो आप लोग मुझे अपनी मातृभूमि की बोलचाल का प्रयोग करते देख अवश्य क्षमा प्रदान करते किन्तु यह बात तो है

नहीं। इस कारण आप किसी प्रकार मेरी बोलचाल के ढङ्ग पर अधिक ध्यान न दीजियें, किन्तु सत्य बातों को ही ध्यान पूर्वक सुनते चलिये: यही सच्चे न्यायाधीशों का कर्त्तव्य है।

एथेन्स निवासियो ? मुझे प्रथम तो अपने को प्राचीन विरोधियों के लगाये अभियोग को निरपराधी ठहराना है और पीछे से वर्त्तमान विरोधियों के विषय में कुछ कहना है क्योंकि बहुत से लोग कई वर्ष से मेरे विरुद्ध आपके कानों में मंत्र फूंकते रहे हैं और ऐसा करते हुए उन्होंने एक भी शब्द यथार्थ नहीं कहा है, इसी कारण मैं उसे अनायतस (वर्तमान विरोधी) के सामने भी अधिक डरता हूं। किन्तु मित्रो ! दूसरे इनसे भी विकट हैं क्योंकि ये लोग ऐसी बातें कहकर कि यहां पर एक सुकरात नामी बड़ा चालाक मनुष्य है वह सदा पृथ्वी व आकाशकी बातों की परीक्षा करता रहता है और असत्यको बनावटी बातों से सत्य सिद्ध कर देता है, आपको बचपन से मेरा विरोधी बनाते रहे हैं और इसके अतिरिक्त आप उस अवस्था में प्रत्येक बात का सुगमता से विश्वास कर लेते थे। ऐसी गप्पें उड़ानेवालों का मुझे बड़ा भय है क्योंकि प्राकृतिक घटनाओं के जिज्ञासु को यहाँ के निवासी नास्तिक समझते हैं। सब से अधिक अन्याय की बात तो यह है कि मैं उनके नाम भी नहीं जानता इस कारण अरस्तोफ़ानस को छोड़कर औरों में से एक को भी आपके सम्मुख बुलाकर तर्क नहीं कर सकता। इस प्रकार मुझे परछाइयों का ही सामना करना, है जिनसे प्रश्न करने पर उत्तरदाता कोई नहीं है। इस प्रकार मैं आपको विश्वास दिलाता हुं कि मेरे विरोधी दो प्रकार के हैं एक तो मैलीतस और उसके साथी दूसरे प्राचीन जिनका

कि मैं आपको अभी परिचय दे चुका हूं। आपकी आज्ञा से मैं अपने को प्रथम तो प्राचीन विरोधियों के प्रति निरपराधी सिद्ध करूंगा क्योंकि उनके ही लाये हुए अभियोग आप लोगों ने पहले सुने हैं।

अब मैं थोड़े से प्राप्त समय में ही अपना पक्ष आरम्भ करता हूं जिससे मैं इस बात का उद्योग करूंगा कि आपके हृदय से चिरस्थाई झूठे प्रभाव को दूर करूं। यदि ऐसा करने से आपका हित हुआ तो मैं आरम्भ करता हूं, परिणाम तो परम पिता के ही आधीन है। थोड़े से समय में इतना कठिन कार्य करना असम्भव सा प्रतीत होता है किन्तु मुझे तो राजनीतिं का पालन करना ही उचित है।

मैलीतस ने आपके सन्मुख जो अभियोग लिखकर उपस्थित किया है जिसके कारण यह सारा प्रभाव पड़ा है उसको देखना हमारा प्रथम कार्य होगा। वह कौनसी गप्पें हैं जिनको मेरे शत्रु चारों ओर फैला रहे हैं? मैं यह कल्पना किये लेता हूं कि यह लोग नियमानुसार मेरे प्रति अभियोग चला रहे हैं और उनके लाए हुए हस्त लिखित दोष को पढ़ता हूं जो कि निम्न प्रकार हैं। "सुकरात एक दुष्ट मनुष्य है जो सदैव पृथ्वी व आकाश की बातों का अनुसन्धान करता रहता है जो असत्य बातों को झूठे तर्क से सत्य सिद्ध कर देता है और जो औरों को भी यही कहने की शिक्षा देता है।" वह लोग यही कहते हैं और अरस्तोफ़ानस के उपन्यास में भी आपने एक सुकरात नामी मनुष्य को टोकरी में झूलते हुये और यह कहते हुये कि मैं वायु को हिला रहा हूं तथा अन्य प्रकार की व्यर्थ बातें बकते हुये जिनका मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं है देखा होगा। यदि कोई मनुष्य इस प्राकृतिक विद्या

को जानता है तो मैं उसका विरोध नहीं करता हूं परन्तु मुझे विश्वास है कि मैलीतस मेरे ऊपर यह दोषारोपण नहीं कर सकता। सचमुच मुझे इन बातों से कोई सम्बन्ध नहीं है और इस के लिये आप सबही मेरे साक्षी हैं। आप में से बहुतेरों ने मुझे बातचीत करते हुये सुना होगा अब मेरी उनसे यह प्रार्थना है कि यदि उन्होंने यह बातें कहते हुये मुझे सुना है तो अपने अपने पड़ोसी को सूचना देदें इससे आपको यह भी सिद्ध हो जावेगा कि मेरे विषय की उड़ाई हुई अन्य बातें भी असत्य हैं।

मैं स्वयं लोगों को शिक्षा देकर द्रव्य प्राप्त करना जैसा कि जार्जियास तथा हिपियास करते हैं बुरा समझता हूं किन्तु यदि आपने मेरे विषय में द्रव्य लेने की बात सुनी है तो वह निर्मूल है क्योंकि ये लोग चाहे जिस नगर में जाकर नवयुवकों को उनकी समाज से फुसला कर अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं और युवक भी इनसे मिलकर इनके ऊपर व्यर्थ द्रव्य लुटाना अपना अहोभाग्य समझते हैं। पेरस स्थान से एक और भी चालाक मनुष्य इस समय एथेन्स में आया हुआ है। संयोग से मैं एक दिन हिपियास के पुत्र केलियास के पास गया इसने अपने पुत्र को सूफ़ियों के हाथ शिक्षा दिलाने में आप सब लोगों से भी अधिक धन व्यय किया है वहां जाकर मैंने उससे कहा। "केलियास! यदि तुम्हारे दोनों पुत्र बछड़े व बछेड़े होते तो हम लोग उनको स्वाभाविक शिक्षा दिलाने के लिये सरलता से किसी गड़रिये वा अश्वरक्षक को ढूंढ़ लेते परन्तु वह तो मनुष्य हैं तुमने उनकी शिक्षा के लिये किसे योग्य

समझा है ? मनुष्य जाति की शिक्षा में कौन निपुण है ? संभव है कि आपने अपने पुत्रों की शिक्षा के हेतु इन बातों पर विचार किया हो। अतएव बताओ कि ऐसा कोई मनुष्य है वा नहीं ?" जब उसने हां है कहकर उत्तर दिया तो मैंने पूछा "वह कौन है कहां से आया है और उसका वेतन क्या है ?" उसने उत्तर दिया उसका नाम ईविनस है वह पेरस से आया है। और उसका वेतन ३०० रुपया है। तब मैंने विचार किया कि ईविनस बड़ा भाग्यशाली है जो मनुष्यों को शिक्षा देने में प्रवीण है। यदि मैं इस विद्या को जानता होता तो पृथ्वी पर पैर न रखता किन्तु वास्तव में एथेन्स निवासियो ! मैं इस विद्या को नहीं जानता हूं।

कदाचित् आप में से कोई महाशय पूछेंगे 'सुकरात तुम अवश्य ही कुछ न कुछ विलक्षण कार्य करते होगे जिसके कारण ये बातें तुम्हारे विषय में फैलाई गई हैं यदि तुम कोई असाधारण कार्य न करते होते तो यह विपरीत बातें न फैलाई जातीं। अतएव हमें बताओ। वह कौन सा कार्य है क्योंकि हम सच्चा हाल जाने बिना न्याय नहीं कर सकते ?' इस प्रश्न को मैं उचित समझता हूं। और आपके सन्मुख इन झूठी बातों के फैलाने का मैं कारण प्रगट करने का उद्योग करूंगा। अब आप हंसी त्याग कर सुनिये कि मैंने यह बुरा नाम अपनी बुद्धिमत्ता के कारण पाया है, और इस बुद्धिमत्ता का होना मैं मानव जाति के लिये परमावश्यक समझता हूं। इस बुद्धिमत्ता में मैं अवश्य ही बुद्धिमान हूं किन्तु प्राकृतिक बुद्धिमत्ता जिसके विषय में मैं आप से पूर्व कह चुका इस बुद्धिमत्ता से अधिक श्रेष्ठ है। पहिली का मुझे कुछ ज्ञान नहीं है और यदि

कोई इसके विरुद्ध कहता है तो वह झूठ बोलता है और मेरी अप्रतिष्ठा करता है। एथेन्स निवासियो! यदि तुम मुझे अहंकार से कुछ कहते हुये देखो तो भी बीच में मत रोको। इस बात को मैं अपनी ओर से नहीं गढ़ रहा यह तो आपके एक विश्वास पात्र ने कही है। मेरी बुद्धिमत्ता की साक्षी डेलफ़ी स्थान की देवी है आप शेरोफ़न को तो जानते ही हैं वह बचपन से ही मेरे साथ रहा था आप उसके स्वभाव को भी जानते हैं कि जिस कार्य को वह आरम्भ करता था उस में तन-मन लगा देता था। एक समय वह डेलफ़ी को गया और वहां जाकर देववाणी से यह प्रश्न किया "सुकरात से भी बढ़कर कोई बुद्धिमान है?" तो वहां की पुजारिन ने उत्तर दिया कि "कोई नहीं है"। शेरोफ़न तो मर हो गया है परन्तु उसका भ्राता जो इस समय यहां पर उपस्थित है आप लोगों को इसकी सत्यता कहेगा।

अब सुनिये कि यही बात मेरी बुराई फैलने की मूल किस प्रकार बन गई जब मैंने यह देवोत्तर सुना तो विचार करने लगा कि ईश्वर का इससे क्या अभिप्राय है? मैं भले प्रकार जानता हूं कि मैं किञ्चित मात्र भी बुद्धिमान नहीं हूं तो ईश्वर का ऐसा कहने से क्या प्रयोजन है? वह देवता है इसलिये असत्य भाषण तो कर नहीं सकता। बहुत काल तक तो मैं देवोत्तर का आशय ही न समझ सका, अन्त में मैंने इस प्रकार खोज की और मैं ऐसे मनुष्य के पास गया जो बुद्धिमान करके प्रशंसित था क्योंकि वहां जाकर देवोत्तर को झूठ सिद्ध करने की मुझे आशा थी। इस प्रकार वहां जाकर मैंने वाद विवाद आरम्भ किया, उस व्यक्ति का नाम बताने की क

आवश्यकता नहीं है। परन्तु वह एक राजनीतिज्ञ था। परिणाम यह निकला कि जब मैंने उससे बातचीत की तो मुझे ज्ञात हुआ कि वह स्वयं और बहुत से श्रोता गण जो अपने को बुद्धिमान समझते थे वास्तव में अज्ञानी थे। जब मैंने उन्हें उनकी अज्ञानता दिखानी आरम्भ की तो वह सब के सब मेरे शत्रु बन गये। जब मैं वहां से चला तो विचारने लगा कि मैं इस मनुष्य से अधिक बुद्धिमान हूं क्योंकि वास्तविक तो हम दोनों में से कोई कुछ नहीं जानता किन्तु वह अज्ञानी होता हुआ भी अपने को ज्ञानी समझता है अर्थात सत्य बात को न जानता हुआ वह बुद्धिमान नहीं और मैं अपनी अज्ञानता को समझता हूं अर्थात् मैं अपने को अज्ञानी ही समझता हूं इस प्रकार किसी अंश में मैं इस मनुष्य के सामने बुद्धिमान हूं क्योंकि मैं किसी बात को न जान कर यह नहीं कहता कि मैं अमुक बात को जानता हूं। तत्पश्चात् मैं एक दूसरे मनुष्य के पास गया जो कि बुद्धिमान समझा जाता था वहां पर भी यही फल निकला उसके पास भी मैंने कई नवीन शत्रु उत्पन्न कर लिये।

इस प्रकार मैं एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य के पास गया और मुझे ज्ञात हुआ कि मैं नित २ नये शत्रु बढ़ा रहा हूं इसके कारण मैं बड़ी असंतुष्टता और चिन्ता में निमग्न होगया किन्तु मैंने ईश्वर की आज्ञा को शिरोधार्य माना इस कारण मैं देवोत्तर का आशय जानने के हेतु कई मनुष्यों के पास गया परंतु एथेन्स निवासियो? परिणाम यह हुआ कि जो लोग बुद्धिमानी में अधिक प्रशंसित थे वही तो अधिक अज्ञानी निकले और जो साधारण पुरुष थे वह शिक्षा पाने के अधिक योग्य थे।

मैंने जो चक्कर इस देवोत्तर की सत्यता जानने के लिये लगाये थे अब मैं उनका वर्णन करता हूं। राजनीतिज्ञों के पश्चात् मैं कवियों के पास इस विचार से गया कि वहां जाकर मैं अपने को अज्ञानी सिद्ध कर दूंगा। इस अभिप्राय से मैंने उनकी सर्वोत्तम कविताओं को उठाकर उनसे आशय पूछा जिससे मुझे कुछ ज्ञान प्राप्ति की भी आशा थी परन्तु मुझे कहते लाज आती है कि कविगण अपनी कविताओं का भावार्थ श्रोतागण से अधिक संतोष जनक न कह सके। इससे मैंने यह परिणाम निकाला कि यह कवितायें कवियों के निज विचार नहीं हैं। किन्तु इनको वे लोग प्राकृतिक जोश में भरकर लिख तो डालते हैं परन्तु स्वयं उनका आशय नहीं समझते। कवि लोग भी मुझे राजनीतिज्ञों के समान अज्ञानी मालूम हुए क्योंकि वे अपनी कविताओं के अहंकार में अपने को अन्य बातों में भी जिनका उन्हें कुछ भी बोध नहीं था कुशल समझते थे। वहां से भी पहिले की तरह अपने को किसी अंश में ज्ञानी समझता हुआ मैं चल पड़ा।

तत्पश्चात् मैं शिल्पकारों के पास गया क्योंकि मैं अपने को पूर्ण अज्ञानी समझता था और मुझे विश्वास था कि वे लोग तो मुझसे अधिक बुद्धिमान होंगे और यह बात ठीक भी निकली वे अपनी शिल्पकारी के नियमों को अच्छी तरह जानते थे परन्तु फिर भी वे कवियों की नाईं अपने को अन्य बातों में भी प्रवीण समझ कर वही भूल करते थे। उदाहरणार्थ राजनीति में भी वे अपने को कुशल समझते थे। और ऐसा करने से उनका वास्तविक ज्ञान भी अन्धकार में जा छिपता था? मैंने अपने हृदय में प्रश्न उठाया कि मैं इन शिल्पकारों

की तरह शिल्पकारी में ज्ञानी बनूं तब मेरे अन्तःकरण ने उत्तर दिया कि मैं ज्यों का त्यों ही भला हूं।

एथेन्स निवासियो! इसी वाद विवाद के कारण मैंने अपने चारों ओर शत्रु दल खड़ाकर लिया था जिन्होंने यह मेरी झूठी अप्रतिष्ठा फैलाई है। इसी से लोग मुझे जिज्ञासु समझने लगे हैं क्योंकि वे लोग विचारते हैं कि जब बातों में मैं औरों को अज्ञानी कहता हूं उनसे स्वयं अवश्य ही ज्ञानी हूंगा परन्तु मित्र! परमात्मा को ही सच्चा ज्ञानी मानता हूं और मुझे सर्व श्रेष्ठ ज्ञानी मान कर जगतपिता का यही अभिप्राय था कि मनुष्य सर्वथा अज्ञानी है। मैं तो नहीं समझता कि वह मुझे ज्ञानी बतलाता है। परमात्मा ने मुझे सब मनुष्यों से अधिक बुद्धिमान बतलाया है, किन्तु वास्तविक में पूर्ण अज्ञानी हूं अर्थात् मुझसा पूर्ण अज्ञान भी मनुष्य जाति में सबसे अधिक बुद्धिमान है जैसे अन्धों में काना राजा। परिणाम यह निकला कि जब मुझसा अज्ञानी भी मनुष्यों में अधिक ज्ञानवान है तो मानव जाति ही सर्वथा अज्ञानी है। ईश्वर के उत्तर का यह अभिप्राय है कि 'जो मनुष्य सुकरात की भाँति अपने को पूर्ण अज्ञानी समझता है वही ज्ञानी कहे जाने के योग्य है' (Thinking themselves as were children gathering pebbles on the boundless shore of the ocean of knowledge)। इसी कारण तो मैं अब भी इधर उधर हर मनुष्य के पास घूमता हूं, और जब मैं उसे अज्ञानी पाता हूं तो स्पष्ट शब्दों में कह देता हूं कि 'तुम अज्ञानी हो' क्योंकि ऐसा कहने व करने की ईश्वर ने मुझे आज्ञा दी है। मैं इस कार्य में इतना निमग्न रहता हूं कि

मुझे सर्व साधारण के निजी कार्यों में ध्यान देने का अवसर ही नहीं प्राप्त होता है। ईश्वर में इतनी भक्ति होने के कारण ही मैं निर्धन रहता हूं।

इसके अतिरिक्त धनवान् लोगों के लड़कों के पास बहुत सा व्यर्थ समय होता है, इसलिये वह भी मेरे साथ फिरते हैं क्योंकि जब मैं लोगों की परीक्षा करता हूं तो उन्हें आनन्द प्राप्त होता है, कभी कभी ये लड़के भी मेरी तरह अन्य लोगों की परीक्षा करते हैं और इसी प्रकार उन्हें भी ऐसे बहुत लोग मिलते हैं जो अज्ञानी होते हुये भी अपने को ज्ञानी कहते हैं। जब ये लड़के इन लोगों का अज्ञान प्रगट करते हैं तो वे स्वयं उनसे अप्रसन्न होकर मेरे ऊपर कोप करते हैं कि सुकरात बड़ा ही नीच है, वह नवयुवकों को बिगाड़ता है। परन्तु जब उनसे प्रश्न किया जाता है कि वह क्या करता है? नवयुवकों को क्या शिक्षा देता है! तब तो वे सुन्न पड़ जाते हैं और अपना दोष छिपाने की इच्छा से वही सुनी हुई झूठी गप्पें बखानने लगते हैं कि वह नास्तिक है और असत्य बात को उलट फेर कर बनावटी बातों से सत्य सी सिद्ध कर देता है। वे लोग वास्तविक सत्य को अर्थात् अपनी अज्ञानता को प्रगट नहीं करते हैं 'वह लोग मेरे विरोधी बनकर अपनी वाक् पटुता से आप लोगों के कानों में झूठी बातें भर देते हैं! यही कारण है जिससे मैलीतस, अनायतस व लायकन मेरे प्रति अभियोग चला रहे हैं जिनमें मैलीतस कवियों की ओर से अनायतस राजनीतिज्ञों व शिल्पकारों की ओर से और लायकन वक्ताओं की ओर से हैं और जैसा कि मैं पहिले भी कह चुका हूं कि मुझे बड़ा आश्चर्य होगा यदि

मैं इस थोड़े से प्राप्त समय में आप लोगों के हृदयों से इतने दिन के जमे हुये पक्षपात की जड़ उखाड़ने में सफल होगया। एथेन्स निवासियो! जो कुछ मैंने कहा है वही सत्य वृतान्त है इसमें से न तो कुछ छिपाया है और न अपनी ओर से कुछ नमक मिर्च ही मिलाया है। मुझे अब भी विश्वास है कि मेरी स्पष्ट कह देने की प्रकृति ही शत्रु खड़े कर रही है चाहे आप इस पर अब विचार करें चाहे पीछे किन्तु सत्य यही है।

जो कुछ मैंने अब तक कहा वह तो अपने प्राचीन विरोधियों के लाये अभियोगों से मुक्त होने के लिये कहा था परन्तु अब मैं देश भक्त (जैसा वह स्वयं बनता है) मैलीतस के लाये अभियोग से मुक्त होने के लिये बोलता हूं। पहिले की तरह मैं उनके भी लाये हुये अभियोग को पढ़ता हूं। जो कि शायद यह है 'सुकरात एक नीच मनुष्य है, वह नव युवकों को बिगाड़ता है नगर के देवों में विश्वास नहीं रखता और नवीन देवताओं की उपासना करता है) अब मैं एक २ बात को काटने का उद्योग करूंगा। मैलीतस कहता है कि मैं नवयुवकों को बिगाड़ता हूं परन्तु मैं कहता हूं कि वह लोगों के ऊपर अन्धाधुन्ध दोषारोपण करके आप लोगों से बड़ी भारी हंसी करता है और उसे आपकी प्रतिष्ठा का कुछ भी विचार नहीं है यद्यपि उसने देश सम्बन्धी बातों पर कुछ भी विचार नहीं किया है तथापि वह अपने को देश हितैषी कहता है। अब मैं आपके सन्मुख इस बात को भी सिद्ध करता हूं।

इधर पधारिये, मैलीतस महाशय! क्या यह बात सच नहीं कि आप नवयुवकों का चतुर होना देश के लिये अत्यावश्यक समझते हो?

मैलीतस—मैं समझता तो हूं।

सुकरात—आइये और न्यायाधीशोंको बतलाइये कि उ
कौन सुधारता है? तुम इन बातों में अधिक भाग लेते
इसलिये इस बात को भी जानते होगे। तुमने मेरे प्र
अभियोग चलाया है क्योंकि तुम कहते हो कि मैं नवयुवक
को बिगाड़ता हूं, अतएव अब न्यायाधीशों को यह भी प्रग
करदो कि उन्हें सुधारता कौन है? मैलीतस! तुम मौ
धारण किये हो और उत्तर नहीं देते क्या इस बात को सिद्ध
नहीं करता है कि तुमने देश की बातों पर बहुत कम विचा
किया है? महाशय कृपया बतलाइये कि नवयुवकों का सुधा
रक कौन है?

मैलीतस—देश के नियम।

सुकरात—महाशय मेरा यह प्रश्न नहीं है यह बताओ कि
कौन पुरुष इन नियमों का पालन करता हुआ उन्हें सुधारता
है?

मैलीतस—उपस्थित न्यायाधीश उन्हें सुधारते हैं।

सुकरात—तुम्हारा क्या अभिप्राय है क्या यह न्यायाधीश
उन्हें शिक्षा दे सकते और सुधार सकते हैं?

मैलीतस—वास्तव में।

सुकरात—यह अच्छी सुनाई, तब तो हित चिन्तक बहुत
हैं। और क्या यहां के उपस्थित दर्शक भी उन्हें सुधारते हैं।

मैलीतस—जीहां, वे भी सुधारते हैं।

सुक०—मैलीतस! क्या महासभा के सदस्य भी उन्हें

बिगाड़ते हैं या वे भी सुधारते हैं।

सैली०—वे भी उन्हें सुधारते हैं।

सुक०—तो मुझे छोड़कर प्रायः सब ही एथेन्स निवासी उन्हें सुधारते हैं। मैं अकेला ही उन्हें बिगाड़ता हूं, क्या तुम्हारा यही अभिप्राय है?

सैली०— सचमुच मेरा यही आशय है।

सुक०—तब तो तुमने मुझे बहुत नीच माना है। अब यह कि क्या यही बात घोड़ों के विषय में भी यथार्थ है? क्या एक ही मनुष्य उन्हें बिगाड़ता है और अन्य सब सुधारते हैं? इसके विपरीत क्या एक ही मनुष्य जो अश्व रक्षक व शिक्षक है, उन्हें नहीं सुधारता और अन्य सब नहीं बिगाड़ते! मैलीतस क्या यह बात घोड़ों व अन्य जीवों के विषय में युक्त नहीं है। यह बात तो सच है चाहे तुम और अनायतस उत्तर दो वा न दो। नवयुवक बड़े ही भाग्यशाली हैं यदि एक यही मनुष्य उनके साथ बुराई तथा अन्य सब भलाई करते हैं। सचमुच मैलीतस! तुम अपने शब्दों से यह प्रगट कर रहे हो कि तुमने इन बातों पर कभी विचार तक नहीं किया है। जिन बातों के लिये तुम मुझे दोषी ठहराते हो उनका तुम्हें कुछ भी ज्ञान नहीं है, कृपया मुझे यह बताओ कि भले मनुष्यों में रहना अच्छा है। वा बुरों में? उत्तर दीजिये यह कोई कठिन प्रश्न नहीं है। क्या बुरे मनुष्य अपने पार्श्ववर्त्तियों को हानि और भले मनुष्य लाभ नहीं पहुंचाते हैं!

सैली०—है तो यही बात।

सुक०—तो क्या कोई ऐसा भी मनुष्य है जो नगरवालों से लाभ छोड़कर अपनी हानि कराना चाहे कृपया उत्तर दीजिये

क्योंकि उत्तर देने के लिये आप नियम बद्ध हैं क्या कोई अपनी हानि भी कराना चाहता है।

मैली०—कोई नहीं चाहता।

सुक०—तो क्या मैं नवयुवकों को जान बूझकर बिगाड़ता हूं या बिना जाने, जिसके लिये तुम मुझे दोषी बताते हो।

मैली०—तुम जान बूझ कर ऐसा करते हो?

सुक०—मैलीतस! तुम आयु में मुझसे बहुत छोटे हो। क्या तुम समझते हो कि तुम तो इतने बुद्धिमान हो सो यह जानते हो कि भले लोग भलाई और बुरे लोग बुराई करते हैं किन्तु मैं इतना मूर्ख हूं सो यह भी नहीं जानता कि यदि मैं नवयुवकों को बिगाड़ूंगा तो वे मेरे साथ बुराई करेंगे तुम इस बात का विश्वास न तो मुझे दिला सकते हो और न किसी अन्य व्यक्तिको कि मैं यह नहीं जानता हूं। अतएव या तो मैं नवयुवकों को किसी प्रकार नहीं बिगाड़ता और यदि बिगाड़ता हूं भी तो अपने अज्ञानवश, इस कारण तुम सब प्रकार से झूठे हो। और जो मैं अज्ञानवश उन्हें बिगाड़ता हूं तो नियम तुम्हें आज्ञा नहीं देते ऐसे कार्य के लिये दोषी बताओ जिसे मैं जान बूझकर नहीं करता हूं क्योंकि ज्योंही मैं अपनी भूल देखूंगा त्योंही ऐसा करने से रुक-जाऊंगा, किन्तु तुमने मुझे न तो शिक्षा दी और न मेरी भूल बताई, यह सब छोड़कर भी तुम मुझे न्यायालयके बीच दोषी बता रहे हो जहां से नियम किसी अभियुक्त को शिक्षा प्राप्ति के लिये न भेज कर दण्ड पाने की आज्ञा देते हैं।

एथेन्स निवासियो! सच पूछो तो मैलीतस ने इन बातों पर लेश मात्र भी ध्यान नहीं दिया है। तब भी, मैलीतस!

बताओ मैं किस प्रकार नवयुवकों को बिगाड़ता हूं। तुम्हारे लाये हुए अभियोग से तो यह प्रगट होता है कि मैं नवयुवकों को आदेश करता हूं कि नगर के देवों में से विश्वास हटाकर नवीन देवों की उपासना करो। क्या तुम्हारी समझ में मैं इसी प्रकार की शिक्षा से उन्हें बिगाड़ता हूं ?

मैली०—वास्तव में तुम इसी शिक्षा से उन्हें बिगाड़ते हो।

सुक०—तो इन्हीं देवों के नाम पर कृपया मुझे व न्यायाधीशों को अपना आशय समझा दो क्योंकि मैं अभी तक तुम्हारा अभिप्राय नहीं समझ सका। क्या तुम यह कहते हो कि मैं नवयुवकों से कहता हूं कि नगर के देवताओं को छोड़ कर अन्यदेवों की उपासना करो ? क्या तुम मेरे प्रति इस कारण अभियोग चला रहे हो कि मैं नवीन देवों में विश्वास करता हूं ? तुम मुझे पक्का नास्तिक समझते हो वा कुछ देवों का उपासक ?

मैली०—मेरा आशय यह है कि तुम किसी को नहीं मानते।

सुक०—मैलीतस ! यह तो और भी आश्चर्य की बात है। तुम यह बात क्यों कहते हो ? क्या तुम यह जानते हो कि मैं अन्य लोगों की तरह सूर्यचन्द्र को देव नहीं समझता हूं ?

मैली०—न्यायाधीशो ! मैं शपथ द्वारा कहता हूं कि यह सूर्य को पत्थर और चन्द्र को दूसरी पृथ्वी समझता है।

सुक०—प्रिय मैलीतस ! क्या तुम तुम अनक्सागोरस के प्रति अभियोग नहीं चला रहे हो ? मालूम होता है कि तुम न्यायाधीशों को तुच्छ व अशिक्षित समझते हो क्या उन्होंने नहीं देखा कि अनक्सागोरस ने ही यह अपने लिखी विचार अपने

ग्रन्थों द्वारा प्रगट किये हैं। नवयुवक तो इन बातों को केवल चार २ पैसे के टिकट मोल लेकर उक्त लेखक के नाटकों में देखते हैं और यदि मैं भी उनको यही बातें अपनी निजी बताकर सिखाऊं तो वह शीघ्र ही मुझे झूठा समझकर मेरे में से विश्वास हटा लेंगे। कृपया सचमुच बतलाइये कि क्या सचमुच आप मुझे नास्तिक समझते हैं?

मैली०—जी हां मैं आपको पक्का नास्तिक समझता हूं।

सुक०—मैलीतस! मुझे अन्य कोई भी नास्तिक नहीं समझता और मेरी समझ में तो शायद तुम भी जान बूझकर झूठ बोल रहे हो। एथेन्स निवासियो! मुझे मालूम होता है कि मैलीतस बड़ा आलसी और असभ्य है, वह अपने मन में सोचरहा है, क्या यह बुद्धिमान सुकरात समझ सकता है कि मैं उससे हंसी कर रहा हूं क्योंकि मैं एक स्थान पर कही हुई बात को दूसरे स्थान पर काटता हूं अथवा क्या मैं सुकरात को चक्कर में डाल सकता हूं"?। मेरी समझ में मैलीतस अपनी ही कही हुई बात काटता है वह ऐसा कहता हुआ मालूम होता कि सुकरात एक दुर्जन है जो कि देवों में विश्वास नहीं रखता किन्तु जोकि देवों में विश्वास रखता है। यह मूर्खता की बात है।

मित्रो! अब देखिये कि मैं उसका यह आशय किस प्रकार निकाल रहा हूं। एथेन्स निवासियो। मुझे बीच में मत टोको क्योंकि मैं आप से आरम्भ में ही प्रार्थना कर चुका हूं कि यदि मैं अपनी स्वाभाविक बोलचाल का भी प्रयोग करूं तो आप लोग मुझे बोलने से न रोकें।

मैलीतस! तो क्या कोई ऐसा भी पुरुष है जो मनुष्य

सम्बन्धी वस्तुओं की उपस्थिति को तो मानता हो किन्तु मनुष्य जाति की उपस्थिति को न मानता हो ! मित्रो ! मूर्खता द्योतक टोक टाक न करके मैलीतस से मेरी बात का उत्तर निकालो। क्या कोई ऐसा भी मनुष्य है जो यह कहता हो कि घुड़सवारी तो होती है किन्तु घोड़ा कोई वस्तु नहीं होती या यह कहता हो कि बांसुरी बजाई तो जाती है परन्तु बजाने-वाला कोई नहीं होता है ? महाशय ऐसा कोई भी मनुष्य नहीं है, मैं इस बात से न्यायाधीशों व मैलीतस सबको ही संतुष्ट कर दूंगा परन्तु आप मेरे एक और प्रश्न का भी उत्तर दीजिये। क्या कोई ऐसा भी मनुष्य है जो यह कहता हो कि दैवी वस्तुयें तो होती हैं परन्तु देव नहीं होते हैं ?

मैली०—ऐसा कोई मनुष्य नहीं है।

सुक०—मैलीतस ! मुझे इस बात से बड़ी प्रसन्नता हुई कि लस्टम पस्टम करके न्यायाधीशों ने तुम से उत्तर तो निकलवालिया। तो तुम यह कहते हो कि मैं दैवी वस्तुओं में तो विश्वास रखता हूं (चाहे वह नवीन हों वा प्राचीन) और अन्य पुरुषों को भी ऐसा ही करने की सम्मति देता हूं। तो तुम्हारे लाये अभियोगानुसार मैं दैवी वस्तुओं में किसी न किसी रूप में विश्वास करता हूं। इस बात को तो तुमने अपने हस्त लिखित उपस्थित किये अभियोग में स्वीकार किया है परन्तु यदि मैं देव सम्बन्धी वस्तुओं ही में विश्वास करता हूं तो यह स्वयं-सिद्ध है कि देवों में श्रद्धा भी रखता हूं। क्या यह बात ठीक नहीं है ? मैलीतस ! तुम उत्तर नहीं देते और मौन धारण किये हो इससे यह बात सिद्ध होती है कि तुम मेरी बात को स्वीकार करते हो। क्या हम लोग यह नहीं मानते कि देव सम्बन्धी

वस्तुएं अथवा लघुदेव या तो स्वयं देव ही हैं वा देवों के पुत्र हैं? क्या तुम्हें यह स्वीकार है?

मैली०—मुझे यह बात स्वीकार है।

सुक०—तो तुम इस बात को स्वीकार करते हो कि मैं लघु देवों में विश्वास करता हूं, यदि यह लघु देव स्वयं देवता हैं तब तो तुम मुझ से हंसी करते हो क्योंकि तुमने अभी कहा है कि मैं देवों की उपासना नहीं करता हूं और फिर यह कहते हो कि करता भी हूं। क्योंकि मैं लघु देवों में विश्वास रखता हूं। और यदि यह लघुदेव महादेवों के अप्सराओं वा अन्य माताओं से उत्पन्न बालक हैं तो मैं यह पूछता हूं कि ऐसा कौन मनुष्य है जो कहता हो कि संसार में पुत्र तो होता है किन्तु पिता नहीं होता? यह वही बात है जैसे कोई आदमी कहे कि गधे व घोड़े के बच्चे तो हैं किन्तु गधे व घोड़े नहीं हैं। शायद मेरे ऊपर नास्तिकता का दोष इस लिये लगाया है कि या तो तुम मेरी चतुराई की परीक्षा करना चाहते हो वा तुम्हें मेरे में कोई दोष ही नहीं दिखाई दिया है किन्तु तुम किसी को यह विश्वास नहीं दे सकते कि पुत्र तो होते हैं परन्तु पिता नहीं होते।

एथेन्स निवासियो! मैं समझता हूं कि अब मुझे मैलीतस के लाये अभियोग के प्रति अपनी निर्दोषता सिद्ध करने के लिये अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। परन्तु मैं इतना अवश्य कहूंगा कि मैंने अपने वाद विवाद के कारण ही अनेक शत्रु खड़े कर लिये हैं और यदि मुझे मृत्यु दण्ड मिला तो वह मैलीतस वा अनायतस के लाये अभियोग के कारण नहीं किन्तु उस द्वेष और भ्रम के ही कारण मिलेगा। इन दोनों

(द्वेष व भ्रम) ने पूर्व समय में भी अनेक देश हितैषियों के प्राण लिये हैं और आगे भी लेंगे मुझे कुछ भी पछतावा नहीं होगा यदि ये इस समय मेरे जीवन के ग्राहक बनें।

शायद मुझ से कोई प्रश्न करेगा। सुकरात। क्या तुम्हें ऐसे कार्य करने में जिससे तुम्हारी मृत्यु होने की सम्भावना हो लाज नहीं आती? तो मैं शीघ्र ही सच्चे हृदय से उत्तर दूंगा, मित्र! यदि तुम्हारा यह विचार है कि किसी कार्य के करते समय मनुष्य के बुराई भलाई तथा अच्छे बुरे के अतिरिक्त अपने जीवन मृत्यु का भी ध्यान रखना चाहिये तो तुम्हारा विचार सदा निन्दनीय है और तुम भूल कर रहे हो तुम्हारे विचारानुसार तो एचिलीज़ के पुत्र थेटिस ने जो बुराई के सामने मृत्यु का स्वीकार किया था वह उचित नहीं था क्यों कि जब उसकी मातादेवी ने उसे समझाया था कि अपने मित्र की मृत्यु का बदला लेने के हेतु तू हेक्टर का प्राण घातक मत होवे क्योंकि ऐसा करने से तू मारा जायगा तो उसने माता के वचन सुनतो लिये परन्तु डरपोक बनकर जीवित रहना स्वीकार नहीं किया किन्तु स्पष्टतया कहा मैं तो पापी के शीघ्र ही प्राण लूंगा क्योंकि मैं संसार में लोगों के बीच हंसी कराकर और मित्र का बदला न लेकर जीवित रहना अच्छा नहीं समझता, तो क्या तुम सोच सकते हो कि उसने मृत्यु वा भय की कुछ भी चिन्ता की थी? जहाँ कहीं पर भी मनुष्य को नियत किया जावे तो विना मृत्यु व भय की चिन्ता किये उसे वहीं डटा रहना सराहनीय है।

एथेन्स निवासियो! एम्फीपोलीज़ व डेलियन की लड़ाइयों में जहां कहीं पर भी मेरे सेनाधिकारियों ने मुझे नियत

किया था मैं मृत्यु की कुछ भी चिन्ता न करके मनुष्यों की तरह वहीं अड़ा रहा, और यदि मैं मृत्यु या अन्य भय के कारण अपना स्थान छोड़ देता तो मेरे लिये लज्जा की बात होती क्योंकि ईश्वर ने मुझे आज्ञा दी है कि मैं अपना जीवन ज्ञान प्राप्ति व आत्मपरीक्षा में व्यतीत करूं। यदि उस समय मैं अपना स्थान छोड़ देता तो अवश्य ही मेरे ऊपर अभियोग चलाया जा सकता था कि मैंने ईश्वर की आज्ञा का पालन नहीं किया अतः नास्तिकता प्रगट की। यदि मैं मृत्यु से डर जाता तो देवोत्तर का पालन न करता क्योंकि मृत्यु से डर जाना अपने को बुद्धिमान समझना है क्योंकि इससे सिद्ध होता है कि हम मृत्यु की प्रकृति जानते हुए अपने को प्रगट कर रहे हैं जब कि वास्तव में हमें यह ज्ञान नहीं है कि मृत्यु क्या है? सम्भव है कि मृत्यु ही मनुष्य के लिये सर्वश्रेष्ठ वस्तु होवे परन्तु मनुष्य मृत्यु से इस प्रकार डरते हैं जैसे कि वह कोई अत्यन्त बुरी वस्तु है। और यह क्या बात है? केवल जिस बात का हमें कुछ भी ज्ञान नहीं उसमें अपने को पूर्ण ज्ञानी समझना है।

मित्रो! इस विषय में भी मैं सर्वसाधारण से भिन्न हूं और यदि मैं लोगों से अधिक बुद्धिमान होने की डींग भरता हूं तो वह इसी कारण कि मैं यह कहकर कि मुझे दूसरी दुनियां का ज्ञान है, अपने को झूंठा ज्ञानी नहीं बनाता। परन्तु मैं बड़ों की आज्ञा का पालन न करना चाहे वह मनुष्य हों वा देवता बहुत बुरा समझता हूं। मैं कभी किसी बुरे कार्य को करने के लिये उद्यत नहीं हूं और न किसी ऐसे काम के करने से जिसका भला होना सम्भव दिखाई देता है हिच किचाता

हूं। अनायतस कहता है कि यदि अब सुकरात को मुक्त कर दिया गया तो वह नवयुवकों को बिगाड़ना आरम्भ करदेगा। यदि आप उसकी इस बात पर ध्यान न देकर मुझ से कहें कि 'सुकरात' इस समय तो हम तुम को इस शर्त पर छोड़े देते हैं कि तुम अभी से अपने तर्क को तिलाञ्जलि दे दो और यदि तुम फिर भी ऐसा करते हुए पाये जाओगे तो हम तुम्हें प्राण दण्ड देंगे।' यदि आप इस शर्त पर मुझे मुक्त करदें तो मैं यही कहूंगा कि 'श्रीमानों की आज्ञा शिरोधार्य है परन्तु मैं आपकी आज्ञा को इतना आवश्यक नहीं समझता जितना कि ईश्वरीय आज्ञा का पालन, और जब तक मेरे शरीर में सामर्थ्य और श्वास है तब तक मैं आपलोगों को शिक्षा देने से कदापि मुंह न मोड़ूंगा। और जिस किसी से मिलूंगा उसी को सत्य प्रगट करूंगा और कहूंगा कि माननीय महाशय! आप एथेन्स के रहनेवाले हैं जो कि ज्ञान में बड़ा विख्यात और प्रशंसित नगर है, क्या आप को लाज भी नहीं आती कि आप ज्ञान व बुद्धि के सामने प्रशंसा, धन और नाम की अधिक चिन्ता करते हैं? क्या आप आत्म शिक्षा की ओर ध्यान न देंगे! यदि वह उत्तर देगा कि 'मैं ध्यान देता हूं' तो मैं उसे यह सुन कर छोड़ न दूंगा किन्तु उसकी परीक्षा करूंगा और उसे भला न पाकर ऊंची नीची सुनाऊंगा कि तुम बहुमूल्य वस्तुओं का कुछ भी ध्यान न रखकर निरर्थक बातों की चिन्ता किया करते हो। जो कोई भी मुझे मिलेगा, वृद्ध हो अथवा बालक, उसी के साथ में ऐसा व्यवहार करूंगा परन्तु अधिकतर नगर वासियों के साथ क्योंकि उनसे मेरा घनिष्ट सम्बन्ध है और ईश्वर ने ऐसा करने की मुझे आज्ञा दी है। एथेन्स निवा-

सियो ! ईश्वर की ओर से मेरी सेवा से बढ़कर तुम्हें इस नगर में अधिक मूल्यवान कोई वस्तु नहीं प्राप्त है क्योंकि मैं अपना सारा जीवन इधर उधर जाने में व्यतीत करता हूं और लोगों से कहता फिरता हूं कि तुम सब से पहिले आत्मिक शिक्षा की चिन्ता करो तत्पश्चात् धन, दौलत और अन्य सांसारिक वस्तुओं की, क्योंकि धन दौलत से नेकी नहीं प्राप्त होती परन्तु नेकी से धन, दौलत और प्रायः सब ही मूल्यवान वस्तुएं जो मनुष्य को प्राप्त हैं मिल सकती हैं। यदि मैं इसी प्रकार की शिक्षा से युवकों को बिगाड़ता हूं तब तो तुम्हारी बड़ी भूल है और यदि कोई व्यक्ति कुछ और ही बतलाता है। तो निश्चय जानों कि वह असत्य भाषण करता है अतएव एथेन्स निवासियो ! अनायतस की बात सुनो अथवा न सुनो मुझे मुक्त करो अथवा न करो किन्तु विश्वास रक्खो कि मैं अपने जीवन का उद्देश नहीं पलटूंगा उसके लिये मुझे एक बार नहीं भलेही सैकड़ों बार सूली पर चढ़ना पड़े !!!

एथेन्स निवासियो ! मेरी प्रार्थना का विचार करके बीच में टोक टाक मत करो क्योंकि आपको मेरी बातें सुनने से लाभ होगा। मैं आप से एक और बात कहता हूं जिसे सुनकर शायद आप हल्ला मचावेंगे किन्तु ऐसा न करना। विश्वास रक्खो कि यदि तुम मुझ जैसे को प्राण दण्ड दोगे तोअपने लिये कण्टक बोओगे। मैलीतस व अनायतस मुझे कोई हानि नहीं पहुंचा सकते क्योंकि ईश्वर की ओर से मुझे आशा है कि भले मनुष्य को कोई पापी हानि नहीं पहुंचा सकता अब मेरी मृत्यु हो वा देश निकाला अथवा मेरे अधिकार छिन जावें इन बातों को मैलीतस भारी सम·

झता होगा परन्तु मैं ऐसा नहीं समझता किन्तु याद रक्खो कि वह एक निरपराधी की जान लेकर पाप कर रहे हैं। एथेन्स निवासियो! अब मैं अपनी निरपराधता सिद्ध करने के लिये एक भी शब्द नहीं कह रहा हूं मैं तो केवल आप से प्रार्थना कर रहा हूं कि ईश्वर के दिये हुये पुरस्कार को पृथक करके परम पिता के प्रति पाप मत करो। यदि तुम मुझे मृत्यु दण्ड दे दोगे तो स्मरण रक्खो कि मेरा स्थान भरने के लिये तुम्हें कोई दूसरा योग्य पुरुष नहीं मिलेगा ईश्वर ने मुझे इस नगर पर आक्रमण करने के लिये भेजा है, जैसे डुरकी मक्खी सुस्त घोड़े की नासिका में घुसकर डंक मारती है जिससे घोड़ा निद्रा त्यागकर भागने लगता है उसी प्रकार मैं भी आप सोते हुओं के बीच तर्क रूपी डंक मारता हूं जिससे आप लोग चैतन्य हो जाते हैं। मैं सदा आप से प्रार्थना करता रहता हूं। व समयानुसार भला बुरा भी कहता हूं। आपको मेरा स्थान भरने के लिये कोई योग्य पुरुष न मिलेगा और यदि आप मेरी शिक्षा मान लेंगे तो मेरा जीवन बच जावेगा। यदि आप अनायतस की बात स्वीकृत कर लेंगे तो मेरा एक ही हाथ में काम तमाम कर देंगे और फिर बहुत समय तक बिना जगाये पड़े रहेंगे जब तक कि आपके जगाने के लिये परमात्मा पुनः कृपा करके कोई दूसरा योग्य पुरुष न भेजेंगे। इस बात को आप सुगमता से समझ सकते हैं कि ईश्वर ने ही मुझे इस नगर में भेजा है क्योंकि सोचिये तो सही मैं कभी भी किसी मनुष्य के आदेश से अपना लाभ त्याग कर मारा २ लोगों के पास यह कहता हुआ न फिरता कि आप धन दौलत के सामने भलाई की अधिक प्रतिष्ठा करें जिस प्रकार कि कोई

पिता या बड़ा भाई शिक्षा देता है। इन कामों के करने से न तो मुझे कोई निजी लाभ होता है और धन की प्राप्ति ही होती है क्योंकि आप स्वयं देखते हैं कि मेरे विरोधियों ने और तो बहुत दोषारोपण किये हैं किन्तु उन्होंने मेरे ऊपर धन लेने का दोष नहीं लगाया है क्योंकि इसके लिये वे कोई साक्षी नहीं ला सकते थे मेरी निर्धनता भी मेरी ही बात की पुष्टि कर रही है।

कदाचित् आपको यह बात आश्चर्य जनक मालूम होगी कि मैं निजी तौर पर तो लोगों को शिक्षा देता हूं परन्तु यहां महासभा में आकर भाग नहीं लेता जहां पर मैं अपने भाव सहस्रों मनुष्यों पर प्रकट कर सकता हूं इसका कारण कहते हुये आपने मुझे सुना ही होगा वह ईश्वर का दिया हुआ एक दैवी भाव है जिसका वर्णन मैलीतस ने भी अपने अभियोगमें किया है। यह मेरे साथ बाल्यावस्था से ही है यह मुझे बुरा कार्य करने से तो रोक देता है परंतु किसी कार्य करनेमें सहायक नहीं होता है यही भाव मुझे सार्वजनिक सभाओं में भाग लेने से रोकता है क्योंकि एथेन्स निवासियो ! यह स्पष्ट है कि यदि मैंने राजनीति में भाग लेने की चेष्टा की होती तो अवश्य ही मैं अपने प्राण कभी का खो बैठता। मैं सत्य बोल रहा हूं अतएव मेरे ऊपर क्रोधित न हूजिये। एथेन्स निवासियो! किसी भी स्थान में ऐसा कोई मनुष्य नहीं है जो सब लोगों का व राजनीति का विरोध करता हुआ अधिक समय तक अपने प्राण बचा सके। इसलिये जो कोई भी न्याय के लिये लड़ना चाहे तो उसे यह कार्य निजी तौर पर करना उचित है यदि वह संसार में एक पल के लिये भी बेखटके जीने की इच्छा करे।

मैं इस बातको शब्दों द्वारा नहीं किन्तु कार्यों से लिद्धकर सकता हूं। अब सुनिये कि कोई भी मनुष्य मुझे मृत्यु वा अन्य भय की धमकी देकर किसी भी बुरे काम करने के लिये बाधित नहीं कर सकता चाहे वह कैसा ही उद्योग क्यों न करे! मेरी यह बात न्यायालय में कोरी झूठी कहावत सी ही न समझी जावे किन्तु यह अक्षरशः सत्य है। मैंने यदि कभी महा-सभा में कोई पद प्राप्त किया था तो वह एक समय सरपंच का था जब आप लोगों ने अर्गानूसी की लड़ाईवाले आठों सेना-पतिओं के प्रति एक ही साथ दण्ड आज्ञा देने की इच्छा की थी उस समय मैं ही मुखिया था उस समय प्रधानों में से मैं ही अकेला था जिसने आपकी सम्मति के विरुद्ध न्याय पूर्ण तथा नियमानुकूल सम्मति प्रगट की थी। वक्तागण तथा श्रोता-गण मुझे मृत्यु देने वा देश निकाले की धमकी देकर चिल्लाने लगे थे परन्तु मैंने यही उचित समझा था कि कारागार व मृत्यु की चिन्ता न करके मुझे तो न्यायानुसार सम्मति देना चाहिये। यह तो प्रजा तंत्र राज्य के समय की बात रही अब धन पतिओं के राज्य की भी सुनिये। जब उनका आधिपत्य आया तो तीस प्रधानों ने मुझे व चार अन्य पुरुषों को सभा में बुलाया और सेलेमिस स्थान से लीवन नामी पुरुष को पकड़ लाने की आज्ञा दी जिसका पालन न करने पर मृत्यु दण्ड नियत किया गया था। वह लोग इस प्रकार की कठिन आज्ञाएं अपने पापों में अधिक मनुष्यों को सम्मिलित करने की इच्छा से देते थे। परन्तु उस समय भी मैंने शब्दों से नहीं कार्यों से दिखला दिया कि मृत्यु को मैं तिनके के समान भी नहीं समझता और ईश्वरीय नियम मुझको सदा प्रिय और

शिरोधार्य हैं। यह राज सभा मुझे भयभीत कर बुराई कराने में सफल न हो सकी शीघ्र ही वह राज्य नष्ट होगया यदि वह कुछ दिवस और भी स्थिर रहता तो मैं अवश्य ही काल का कवर बनता इस बात के तो आप सब लोग ही साक्षी हैं।

क्या आप अब भी मानते हैं कि यदि मैंने सार्वजनिक सभाओं में भाग लिया होता तो अब तक जीवित रह सकता था ? मैं ही क्या कोई भी ऐसा पुरुष जीवित नहीं रह सकता था। आप स्वयं मेरे सार्वजनिक व निजी जीवन पर दृष्टि डाल कर देख सकते हैं कि मैंने कभी किसी मनुष्य के लिये यहां तक कि अपने शिष्या के लिये भी न्याय त्याग कर सम्मति नहीं दी मैंने कभी किसी भी वृद्ध वा बालक से बातचीत करने के लिये निषेध नहीं किया और न किसी से द्रव्य ही स्वीकार किया चाहे कोई मनुष्य धनवान हो वा निर्धन यदि उसकी इच्छा हो तो चाहे जितने समय तक बातचीत कर सकता है। न्यायानुसार मेरे ऊपर किसी भी मनुष्य के विगाड़ने वा सुधारने का दोषारोपण नहीं किया जा सकता क्योंकि न तो मैंने कभी किसी को विद्या पढ़ाई और न पढ़ाने की चेष्टा की! यदि कोई मनुष्य कहे कि उसने मुझसे विद्या पढ़ी है तो समझलो कि वह झूठ बोलता है अब प्रश्न यह है कि लोग मेरी संगति को क्यों चाहते हैं ? क्या आपने कभी इसका कारण सुना है ? मैंने आपसे सत्य बात जो थी वह कहदी कि उन्हें मेरी तर्क सहित बोलचाल अच्छी मालूम होती है। सचमुच उसे सुनना बड़ा चित्ताकर्षक मालूम पड़ता है। मेरा विश्वास है कि ईश्वर ने मुझे स्वप्न, बोलचाल, देवोत्तर प्रायः सभी बातों में लोगों की परीक्षा करने की आज्ञा दी है। यह बात

सत्य है, यदि सत्य न होती और मैंने युवकों को बिगाड़ा होता तो आज वही लोग बड़े होने पर मेरे प्रति अभियोग चलाते अथवा बदला लेने का उद्योग करते। और यदि वे लोग ऐसा करने से हिचकते तो उनके माता पिता व सम्बन्धी मेरी की हुई बुराई को याद करके बदला अवश्य ही लेते। उनमें से यहां बहुत से उपस्थित हैं, मेरे प्रान्त का किरातो, किरातो बूलस, लिसीनियास इत्यादि बहुत से हैं जिनके मैं नाम गिना सकता हूं, मैलीतस उनको साक्षी भी बना सकता था यदि वास्तव में ही दोषी होता। यदि वह ऐसा करना भूल भी गया था तो मैं एक ओर खड़ा हुआ जाता हूं और वह चाहे जिसको यहां उपस्थित करे यदि उसे कोई मिल सके तो। परन्तु बात तो कुछ और ही है, मैलीतस व अनायतस तो मुझे नवयुवकों का बिगाड़नेवाला कह रहे हैं किन्तु युवक लोग उलटे मेरी सहायता करने को उद्यत हैं। यदि शीघ्र बिगड़े हुओं को मेरे सहायक होना मान भी लिया जावे तो उनके सम्बन्धी मेरे ऊपर दोष लगा सकते हैं। कारण तो यह है कि मैं नसूल निरपराधी हूं।

जो कुछ मैंने अपने पक्ष में कहा वह बहुत कुछ है। शायद आप में से कोई सोच रहा होगा कि यदि उसके ऊपर इससे भी कम दोष लगाया गया होता तो उसने अपने बाल बच्चे न्यायालय में लाकर रोना पीटना आरम्भ करके मृत्यु दण्ड को हटाने की आप से प्रार्थना की होती। अगर कोई ऐसा सोच रहा है तो शायद वह मुझे कठोर हृदय समझ कर क्रोध में आकर अपनी सम्मति मेरे प्रतिकूल दे। यदि कोई ऐसा विचार कर रहा है तो मैं धीरता से यही उत्तर देता हूं कि

मेरी स्त्री है, और तीन पुत्र हैं जिनमें एक तो अभी अजान ही है तब भी मैं इन्हें यहां लाकर न्यायाधीशों से कृपा कराने की प्रार्थना न करूंगा। भूल से अथवा जान बूझकर लोग मुझे सर्व साधारण के प्रतिकूल समझ रहे हैं, उन लोगों के लिये जो वीरता और बुद्धिमानी में विख्यात हैं यह विचार करना बड़ी लज्जादायक बात होगी। मैंने बहुत से प्रशंसित पुरुषों को देखा है कि वे अपने मृत्यु दण्ड दिये जाने के समय, मृत्यु से भय खाते हैं और अपने को अमर समझते हैं यह एक आश्चर्य की बात है। मेरी समझ में ऐसे लोग नगर के ऊपर कलंक लगाते हैं क्योंकि यदि कोई विदेशी आवे तो यही विचार करेगा कि यहां के कर्मचारी जो सर्व-साधारण में से चुने जाते हैं स्त्रियों से किसी प्रकार उच्च नहीं हैं। एथेन्स निवासियो! न तो तुम में से यह काम किसी को स्वयं करना चाहिये और न दूसरे को करने देना चाहिये तुमको घोषणा करा देनी चाहिये कि जो लोग ऐसा करके नगर की हंसी कराते हैं वह दण्डनीय हैं और किसी प्रकार कृपा पात्र नहीं हैं।

प्रतिष्ठा के प्रश्न को छोड़कर भी मित्रो! मैं रो पीटकर न्यायाधीशों से मुक्त होने की प्रार्थना करना उचित नहीं समझता, मेरा तो कर्त्तव्य यह है कि तर्क द्वारा उसकी निरपराधता सिद्ध करें क्योंकि न्यायाधीश तो न्याय करने के लिये हैं न कि अपने मित्रों पर कृपा करने के लिये, उसने इस बात की शपथ भी देदी है कि वह कभी अनुचित कृपा न दिखाकर सदा न्यायानुसार कार्य सञ्चालन करेगा। इसलिये न तो हमें आप लोगों को अपनी शपथ तोड़ने के लिये आग्रह करना

चाहिये और न आप लोगों को हमें ऐसा करने देना चाहिये क्योंकि इनमें से कोई भी बात उचित नहीं है। अतएव आप लोग मुझको ऐसा कार्य करने के लिये न कहें क्योंकि मैं इन बातों को अपवित्र समझता हूं, विशेष कर आज तो आप किसी प्रकार न कहें क्योंकि मैलीतस तो मुझे अपवित्रता करने ही के कारण दोषी ठहरा रहा है। यदि मैं ऐसा करने पर आप का कृपापात्र बन भी गया तो भी देवताओं का तिरस्कार करूंगा क्योंकि आपने देवताओं के सन्मुख जो शपथ दी है उसीको तोड़ने के लिये मैं आपको बाधित कर रहा हूं। इससे तो यह सिद्ध हो जायगा कि मैं देवों की उपासना नहीं करता और मैलीतस ने यही दोष मेरे ऊपर लगाया है। परन्तु मैं तो देवों में विश्वास रखता और उनकी उपासना करता हूं, और मेरे विरोधी उनमें श्रद्धा नहीं रखते। अतएव मैं ईश्वर के नाम पर न्याय को आपके ऊपर छोड़ता हूं जिससे आपका भी और मेरा भी कल्याण हो।

(इतने पर सभासदों की सम्मति ली गई और सुकरात २२० के विपरीत २८१ सम्मतियों से दोषी ठहराया गया)

सुकरात एथेन्स निवासियो! आपने जो आज्ञा दी है मैं उससे कई कारणों से दुखित नहीं हुआ हूं। यह तो मुझे पहिले ही से आशा थी कि मैं दोषी ठहराया जाऊंगा किन्तु सम्मतियों की संख्या देख कर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ है। मैं यह नहीं समझता था कि मेरे विपरीत इतनी थोड़ी सम्मतियां होंगी किन्तु अब मैं देखता हूं कि यदि केवल तीस ही मनुष्यों ने मेरे पक्ष में अधिक सम्मति दी होती तो मैं मुक्त हो जाता।

अब मुझे यह प्रतीत होता है कि मैंने मैलीतस को बचा दिया क्योंकि यदि अनायतस और लायकन दोष लगाने के लिये आगे न बढ़ते तो मैलीतस सम्मतियों का पञ्च भाग अपने पक्ष में न कर पाता अतएव देश के नियमानुसार उसे एक सहस्र ड्रेक्मा (एक सिक्का) दण्ड के देने होते और उसके अधिकार व सम्पत्ति छिन जाती।

तो अब वह मेरे लिये मृत्यु दण्ड तजवीज़ कर रहा है, करने दो। अब मैं नियमानुसार कौन सा दण्ड अपनी ओर तजवीज़ करूं ? मैं लोगों के हितार्थ अपना जीवन व्यतीत करने के बदले किस बात का भागी हूं ? मैंने अपने जीवन में सारे सांसारिक सुख, धन, दौलत, सार्वजनिक सभाएँ वक्तृताएं और अधिकार छोड़ दिये थे क्योंकि मैं जानता था कि इनमें भाग लेने से मेरे प्राण हते जावेंगे। इस कारण मैं उन स्थानों पर नहीं गया जहां कि मैं किसी के भी साथ भलाई नहीं कर सकता था। इसके विपरीत में आप लोगों में यह कहते घूमा कि आप पहिले अपनी आत्मा को पहिचानें और सुधारें तत्पश्चात् सांसारिक बातों की ओर ध्यान दें। तो ऐसा जीवन व्यतीत करने के बदले में किस बात के योग्य हूं ? एथेन्स निवासियो ! यदि न्यायानुसार कहा जावे तो मैं किसी अच्छी बात के योग्य हूं। सर्व साधारण का हित चिन्तक जो सदैव भलाई करने में समय व्यतीत करता है, किस बात के योग्य है ? उसके लिये सर्वसाधारण के सार्वजनिक भवन*

* एथेन्स में यह एक भवन था। जहां पर वे लोग जोकि अपना जीवन देशहित में व्यतीत करते थे, सर्वसाधारण के व्यय पर बुढ़ौती में सुख भोगने के लिये रक्खे जाते थे। वास्तविक चरितनायक के लिये यही स्थान योग्य था।

(Public maintenance in the Prytaneum) में पालन के अतिरिक्त कौनसा अच्छा पुरस्कार हो सकता है ? यह पुरस्कार किसी अन्य प्रतिष्ठा प्राप्त वीर पुरुष के लिये अधिक योग्य है क्योंकि अन्य लोग तो आपको बाह्य प्रसन्नता पहुंचाने का उद्योग करते हैं। परन्तु मैं आपको सच्ची आन्तरिक प्रसन्नता पहुंचाने का उद्योग करता था। अतः मैं अपनी ओर से अपने लिये यही बात तजवीज़ करता हूं।

रोने पीटने और प्रार्थनाएँ करने के विषय में जो मैंने अपने विचार प्रगट किये हैं, शायद आप उनको सुनकर मुझे हठी वा घमण्डी समझते हों। किन्तु इसका कारण यही है कि मैंने कभी किसी के साथ बुराई नहीं की है, यद्यपि मैं केवल थोड़ा ही समय मिलने के कारण आपको यह बात सिद्ध नहीं कर सका हूं। यदि और स्थानों की तरह एथेन्स में भी यही नियम होता कि मृत्यु जीवन का प्रश्न एक दिन में तय न किया जावे तो मुझे पूर्ण विश्वास है कि मैं आपको अपनी बात का विश्वास दिला देता, परन्तु इस थोड़े से समय में शत्रुओं के झूठे अभियोगों के प्रति निरपराधी सिद्ध करना कठिन है। जब मुझे अपनी पवित्रता का पूर्ण विश्वास है तो मुझे अपने लिये बुरी बात क्यों तजवीज़ करनी चाहिये? इससे तो यही बात अच्छी है कि एक सरासर बुरी वस्तु को त्यागकर मेलीतस की तजवीज़ की हुई वस्तु (मृत्यु) से भेंट करूं क्योंकि उसका तो बुरी होना निश्चय ही नहीं है। क्या मैं इसके बदले में कोई ऐसी बात तजवीज़ करूं जिसे मैं स्वयं ही बुरा समझता हूं ? मैं कारागार में अधिकारियों का गुलाम

रहकर जीवन क्यों व्यतीत करूं ! मैं आप से पहिले ही कह चुका हूं कि धनाभाव के कारण मैं द्रव्य दण्ड नहीं दे सकता तो क्या मैं देश निकाला तजवीज़ करूं ? जब आपही मेरे नगर वासी होकर मेरा वाद विवाद सहन न कर उससे छुटकारा पाने का उद्योग कर रहे हैं तो मुझे कब आशा होसकती है कि अन्य देश के लोग जहां जाने की आप मुझे आज्ञा दे सहर्ष सहन करेंगे। क्या मैं इस वृद्धावस्था में एथेन्स को छोड़कर मारा २ इधर उधर फिरूं क्योंकि जहां कहीं मैं जाऊंगा युवक अवश्यही मेरी बातें सुनने की इच्छा प्रगट करेंगे, यदि मैं उनसे नाहीं करूंगा तो वे अपने वृद्धों से कहकर मुझे यहां से भी निकलवा देंगे और यदि मैं सुनाऊंगा तो उनके माता, पिता तथा सम्बन्धी यहां वालों की तरह मुझे निकाल देंगे।

शायद कोई कहेंगे सुकरात! तुम एथेन्स से निकल कर मौन क्यों नहीं साध लेते ? यह मैं नहीं कर सकता क्योंकि ऐसा करने से ईश्वर की आज्ञा का उल्लंघन होगा शायद आप इस बात में विश्वास न करेंगे। यदि मैं कहूं कि भलाई के विषय में दिन रात बातें करने के अतिरिक्त कोई ऐसी अच्छी वस्तु नहीं हैं जिसे मनुष्य प्राप्त कर सके और ऐसा न करने से मनुष्य जीवन, जीवन ही नहीं कहा जासकता तो आपको किञ्चित् मात्र भी विश्वास नहीं होगा। किन्तु मित्रो ! सत्य तो यही है और इसके अतिरिक्त मैं दण्डनीय नहीं हूं। यदि मैं धनवान होता तो विना हानि सहे रुपया दे कर मुक्त हो जाता परन्तु यह बात है नहीं क्योंकि मैं निर्धन हूं आप बहुत अल्प धन मांगे तब काम चले क्योंकि मैं एक डेक्मा (जो ६०

रुपये के बराबर था) ही दे सकता हूं । एथेन्स निवासियो ! ये प्लेटो और क्रिटो तीस ड्रेक्मा की कह कर स्वयं जमानत बनते हैं ।

(यह सुनकर न्यायाधीशों ने उसे मृत्यु दण्ड की आज्ञादी)

सुकरात—एथेन्स निवासियो ! मैं सत्तर वर्ष की आयु का हूं इस से कुछ दिन पश्चात् स्वयं ही मर जाता, आपने मृत्यु दण्ड देकर अधिक समय का लाभ नहीं कर लिया, एक निरपराधी को मृत्यु दण्ड देने के कारण नगर हितचिन्तक तुम्हें बहुत तंग करेंगे। क्योंकि वे लोग आप को गालियां देते समय मुझको अवश्य ही बुद्धिमान कहेंगे चाहे मैं ऐसा होऊं या नहीं । मित्रो ! आप विचार करते होंगे कि मैंने संतोपजनक वाद विवाद नहीं किया जिससे मैं अपनी पवित्रता सिद्ध कर के बच जाता । परन्तु यह बात नहीं है मैंने निर्लज्जता और ढीठता में न्यूनता दिखाई थी इसी कारण दण्डनीय ठहराया गया क्योंकि यदि मैं आपके सन्मुख रोता, पीटता और पछ-तावा करता हुआ आता तो मुक्त हो जाता । मैंने अपने वाद विवाद के बीच सोचा कि कोई ऐसा काम न करूं जो मानव जाति को लज्जा लानेवाली है। रोने पीटने से मुक्त होने के सामने मैं मृत्यु को अच्छा समझता हूं । नियमानुसार मुकद्दमे में और युद्ध में कुछ ऐसी बातें हैं जिन्हें मनुष्य मृत्यु से बचने की इच्छा से नहीं कर सकता । लड़ाई में ऐसे समय प्राप्त होते हैं जब एक योद्धा अपने शस्त्र छोड़ घुटनों के बल गिर कर शत्रु से प्राण दान मांगे और प्रायः संकट के सभी समयों में यदि मनुष्य नीच से नीच कार्य करने पर उतारु हो जावे तो अपनी जान बचा सकता है। परन्तु मित्रो ! मेरी समझ

में तो मृत्यु से बचना इतना कठिन नहीं है जितना कि दुष्टता से क्योंकि यह मनुष्य को अधिक शीघ्रता से पकड़ती है। अब मैं तो बूढ़ा हो गया सो मृत्यु के चक्कर में हूं किन्तु विरोधी वायुगति से दौड़नेवाली दुष्टता के आधीन हैं। अब मैं तो आप से दण्ड पाकर मृत्यु पानेके लिये जाऊंगा किन्तु यह लोग अपनी दुष्टता और बुराई के बदले ईश्वरीय दण्ड पाने के लिये जावेंगे मैं भी अपने दण्ड को भोगूंगा और यह लोग भी। ईश्वर को ऐसा ही करना था परन्तु मेरी समझ में तो न्यायाधीशों ने अन्याय किया है।

जिन लोगों ने मुझे दण्ड दिया है उनको मैं भविष्यत-वाणी कहूंगा क्योंकि मैं मरने के लिये जा रहा हूं और यह ऐसा समय है कि जब बहुधा लोगों में भविष्यतवाणी करने की शक्ति आ जाती है। अब मैं अपने दण्ड देनेवालों को भविष्यतवाणी कहता हूं कि "आप लोगों ने जो मुझे दण्ड दिया है उससे भी कठिन आपत्ति आप लोगों को मेरी मृत्यु के पश्चात् घेरेगी। आपने यह काम इस बात को सोचकर किया है कि मेरे मरजाने पर आप लोग अपने जीवन का हिसाब देने से मुक्त होंगे किन्तु परिणाम विपरीत ही होगा मुझसे शिक्षा प्राप्त बहुत से लोग उठ खड़े होंगे जो आप लोगों से जीवन सम्बन्धी वाद विवाद करेंगे। वे नवयुवक हैं सो आप उन पर अधिक क्रुद्ध होंगे इस कारण वे आप लोगों के ऊपर बहुत ढीठता दिखावेंगे। यदि आप यह सोचते हैं कि लोगों को मृत्यु दण्ड देकर आप बुरा भला सुनने से बच जावेंगे तो आप बड़ी भूल कर रहे हैं बचने का यह मार्ग अस-म्भव है और निन्दनीय है। इस बुरे भले कहने की धमकियों से

बन्द कर देना ठीक नहीं किन्तु आत्मसुधार करना ही उचित है। मेरे विरोधियों व दण्ड देने वालों के प्रति मेरी यही भविष्यतवाणी है।

मृत्यु स्थान को जाने के पूर्व मैं अपने पक्षपातियों से, जब तक राजकर्मचारी अपने कार्य में निमग्न हैं, मृत्यु के विषय में बातचीत करूंगा। मुझे कोई कारण नहीं दिखाई देता जो हमें बातचीत करने से रोके। अतः यहां से जाने के समय तक हम आपस में बातचीत करलें। अब मैं आपको यह समझा देना चाहता हूं कि मेरे ऊपर क्या आया है। मैं आपको सच्चे न्यायकारी कहकर पुकारूं तो अनुचित न होगा अब सुनिए कि मेरे ऊपर क्या आया है! मेरे साथ एक ईश्वरीय भाव रहता है जो सदा बुरे काम करने में मुझे टोक देता है। आज जब से मैं घर से चला हूं तब से न तो मार्ग में, न न्यायालय में और न अब उस भाव ने मुझे किसी कार्य के करने या किसी बात के कहने से रोका है, इस कारण मैं कहता हूं कि जो वस्तु मुझको होने वाली हैं वह भली ही है, जो लोग उसे बुरा कहते हैं वह बड़ी भारी भूल करते हैं क्योंकि यदि वह बुरी होती तो उस ईश्वरीय भावने मुझे रोक दिया होता।

यदि हम एक दूसरी तरह से देखें तब भी जान सकते हैं कि मृत्यु एक अच्छी वस्तु है क्योंकि मृत्यु दो बातों में से एक हो सकती है (१) या तो मृत्यु प्राप्त मनुष्य सुषुप्ति की दशा में होकर जन्म लेने से बरी हो जाता है या (२) सार्वजनिक विचार के अनुसार जीव दूसरे स्थान में जाकर नूतन शरीर धारण कर लेता है। यदि मृत्यु सुषुप्ति की दशा है जिसमें मनुष्य बिना स्वप्न देखे गहरी नींद सोता है तब तो यह बड़ी

ही विलक्षण वस्तु है। क्योंकि यदि किसी मनुष्य से पूछा जावे कि वर्ष के भीतर तुम कितनी रात्रियों में बिना स्वप्न देखे गहरी नींद सोये हो तो मेरे विचार से साधारण मनुष्य क्या एक वादशाह भी सुगमता से गिनकर बता सकता है। यदि मृत्यु की प्रकृति ऐसी ही है तो मैं उसे एक लाभ समझता हूं क्योंकि उस समय अनादि भी एक रात्रि के समान हो जाती है।

यदि सार्वजनिक विचारानुसार मृत्यु केवल दूसरी संसार की यात्रा है तव न्यायाधिकारियो! इससे बढ़कर अच्छी और क्या वस्तु हो सकती है? क्या एक ऐसी यात्रा जिसकी समाप्ति में जीव दूसरे लोक में पहुंचता है जहां सच्चे न्यायाधीश न्याय करने बैठते हैं और यहां के से द्वेषी दिखाई भी नहीं देते, पूर्ण करने के योग्य नहीं है? क्या आप लोग वहां के रहनेवाले सच्चे देवों से वातचीत करना नहीं चाहते? यदि यह बात सच है तो मैं एक बार नहीं कई बार मरने के लिये तयार हूं। वहां पर बड़े २ देवों से भेंट होना मैं तो एक प्रसन्नता समझता हूं। वहां पर मैं यहां की तरह परीक्षा कर सकूंगा कि कौन सच्चा ज्ञानी है और कौन झूंठा अपने को ज्ञानी वतलाता है? उनके सम्भाषण, उनकी परीक्षा और संगति बड़ी ही लाभदायक होगी, वहां के निवासी वादविवाद के लिये मनुष्य को मृत्यु दण्ड नहीं देते हैं। वर्त्तमान सिद्धान्त के अनुसार वहां के जीव प्रसन्न होने के अतिरिक्त अमर भी हैं।

आप लोगों को भी यह समझ कर कि भले मनुष्य पर कोई बुराई नहीं आ सकती, मृत्यु का सामना साहस पूर्वक

करना चाहिये। देवगण भले मनुष्य के गुणों को भूल नहीं जाते; मेरे ऊपर जो विपत्ति आज आकर पड़ी है वह कोई अकस्मात् बात नहीं है। दैवी भाव ने मुझे नहीं रोका इससे मैंने परिणाम निकाला कि मेरा मर जाना ही भला है। अतः मैं अपने विरोधियों अथवा विपक्षियों से किञ्चित भी अप्रसन्न नहीं हूं परन्तु उन्होंने तो मुझे हानि पहुंचाने के लिये ऐसा किया था, इतने के लिये मैं उन्हें दोषी ठहराता हूं।

परन्तु उनसे मेरी एक प्रार्थना है कि जब मेरे पुत्र बड़े बड़े होवें और आत्मिक सुधार के सामने धन दौलत पर अधिक ध्यान दें तो आप लोग उनके साथ वैसा ही वर्ताव करें जैसा कि मैं आपके साथ करता था और यदि अज्ञानी होकर भी अपने को ज्ञानी कहैं तो उन्हें भला बुरा कहना। यदि आपने ऐसा किया तो आपकी मेरे और मेरे पुत्रों के ऊपर अतीव कृपा होगी।

समय आवेगा कि मैं मरने के लिये जाऊं और आप संसार में रहने के लिये। मृत्यु अच्छी है वा जीवन यह बात तो केवल परमात्मा ही पर विदित है।

---

[१२]

कारागार में किराती का सम्भाषण

न्यायालय से लाकर सुकरात एक मास तक कारागार में बन्द रक्खा गया था। क्योंकि उस समय एथेन्स का प्रधान पुजारी डेलस द्वीपको गया हुआ था और उसके लौटने तक किसी को मृत्यु दण्ड नहीं दिया जा सकता था।

सत्ताईसवें दिन करातो प्रातःकाल ही जब कि चारों ओर अंधेरा छा रहा था, कारागार में सुकरात के पास गया। उस समय सुकरात सोरहा था। इस कारण क्रितो चुपचाप बैठा रहा। जब थोड़ी देर के पीछे सुकरात जगा तो निम्न लिखित सम्भाषण आरम्भ हुआ।

सुकरात—आज इतने सवेरे क्यों आये हो? अभी अंधेरा है।

क्रितो—जी हां आज जल्दी आया हूं। अभी सूर्य उदय होने को है।

सुक०—मुझे आश्चर्य होता है कि कारागार रक्षक ने तुमको यहां आने की किस प्रकार आज्ञा देदी?

क्रितो—सुकरात! वह मुझको जानता है क्योंकि मैं यहां पर प्रायः आया जाया करता हूं इसके अतिरिक्त मैंने उसकी मुट्ठी भी गरम करदी है।

सु०—तुम इतने समय से आकर चुप क्यों बैठे रहे? तुमने मुझे क्यों नहीं जगाया?

कि०—वास्तविक में यही चाहता था कि मुझे इतना शोक और इतनी बेचैनी न होती किन्तु तुम्हें गहरी नींद सोते हुए देखकर मुझे आश्चर्य होता है। मैं तुम्हारे आराम में गड़-बड़ी डालना नहीं चाहता था इसी कारण मैंने तुम्हें नहीं जगाया था। और इस समय भी वैसे ही प्रसन्नता प्रगट कर रहे हैं जैसी कि सदा से अपने जीवन में करते आये हैं आप तो इस विपत्ति को बड़े धैर्य के साथ सहन कर रहे हैं।

सु०—क्रितो! यदि मैं इस वृद्धावस्था में शोक करता तो मुझे न सोहता।

कि०—और भी तो इतनी आयु के मनुष्य इस विपत्ति में

पड़ते हैं किन्तु उनकी वृद्धावस्था उन्हें शोक करने से नहीं रोकती है।

सु०—यह बात तो सच है परन्तु तुम अपने आने का कारण बताओ।

कि०—मैं हृदय विदारक समाचार लाया हूं। चाहे आप ऐसा समझें वा नहीं किन्तु मेरे साथियों के लिये और विशेष कर मेरे लिये तो यह अत्यन्त दुःखदायी है।

सु०—सो क्या बात है? क्या डेलस से वह जहाज आ गया है जिसके आने पर मैं मारा जाऊंगा?

कि०—अभी आया तो नहीं है किन्तु सनियम (Sunium) से आये हुये एक मनुष्य द्वारा विदित हुआ कि वह आज आजावेगा तो फिर कल तुम्हारे जीवन का नाटक समाप्त होगा।

सु०—जीवन का भले प्रकार अन्त हो जाने दो क्योंकि ईश्वर की यही इच्छा है परन्तु मेरे विचार से तो जहाज आज नहीं आ सकता है।

कि०- यह तुमने किस प्रकार जाना?

सु०—मैंने अभी एक स्वप्न देखा था। उसी से मैंने यह परिणाम निकाला है। अच्छा हुआ तुमने मुझे नहीं जगाया अन्यथा स्वप्न में भंग पड़ जाता।

कि०—वह स्वप्न क्या है?

सु०—मुझे ऐसा दिखाई दिया था कि एक सुन्दरी स्त्री धवल वस्त्र (पवित्रता का चिन्ह) धारण किये मेरे पास आकर कह रही है 'The Third day hence thou shalt Fair Pithia reach.'

अर्थात् परसों तुम पवित्र तथा सुन्दर स्वर्ग धाम के दर्शन करोगे। परंतु मैं जहाज आने पर दूसरे दिन मारा जाऊंगा अतएव जहाज आज नहीं आ सकता।

कि०—सुकरात! कैसा आश्चर्य जनक स्वप्न..

सु०—किन्तु किरातो! मेरे लिये इसका आशय स्पष्ट है।

कि०—आशय तो स्पष्ट है परन्तु सुकरात मैं अन्तिम समय पर तुम से प्रार्थना करता हूं कि मेरा कहा मानकर अपना जीवन बचालो। आपकी मृत्यु के साथ मैं एक मित्र ही नहीं खोदूंगा किन्तु लोग यह समझेंगे कि सुकरात को बचाने के लिये किरातो ने कुछ भी उद्योग नहीं किया सो यह मेरे लिये लाज की बात होगी। इससे अधिक लाज की और क्या बात हो सकती है कि मित्र के सामने रुपये की रक्षा की जावे? संसार कभी इस बात का विश्वास नहीं करेगा कि मैंने तुम्हारे बचाने का पूर्ण उद्योग किया था।

सु०—परन्तु किरातो! हम संसार की सम्मति पर क्यों ध्यान दें बुद्धिमान लोग तो सत्य बात को मानेंगे वे तो झूठ नहीं बोलेंगे।

कि०—परन्तु हमें संसार की सम्मति का भी कुछ विचार करना आवश्यक है। क्योंकि तुमको जो मृत्यु दंड दिया गया है उसी से स्पष्ट है कि साधारण लोग एक व्यक्ति को बड़ी से बड़ी हानि पहुंचा सकते हैं।

सु०—किरातो! मैं तो यही चाहता हूं कि सर्व साधारण किसी मनुष्य को बड़ी से बड़ी हानि पहुंचा सकें क्योंकि उस दशा में ही वह बड़े से बड़ा लाभ भी पहुंचा सकेंगे। परन्तु इन दोनो में से कोई बात ठीक नहीं है न तो वह किसी मनुष्य

ो मूर्ख ही बना सकते हैं और न बुद्धिमान ही, वे तो अन्धा-
न्ध काम करते हैं।

कि०—चाहे कुछ होवे, सुकरात! क्या तुम इस बात का
य कर रहे हो कि यदि गुप्तचरों ने हमारे तुम्हें चोरी से
काल ले जाने की सूचना देदी तो हमारी धन, और सम्पत्ति
ब की सब छिन जावेंगी। यदि यही बात है तो भय मत करो
योंकि तुम्हारे रक्षा के हेतु हम बड़ी से बड़ी आपत्ति का सहर्ष
हन करने को तत्पर हैं। अतएव मेरी बात को मान लो।

सु०—मुझे इस बात की भी चिन्ता है और कुछ अन्य भी
।

कि०—तो इस बात की चिन्ता मत करो। कई लोगों ने
ोड़ा ही रुपया लेकर तुमको बचा देने का वचन दिया है;
ुम यह भी जान सकते हो कि ये गुप्तचर तो थोड़ा सा ही
न लेकर सहमत हो जाते हैं। इस कार्य के लिये मेरी दौलत
ापके आधीन है और यदि आप मेरी दौलत व्यय करने में
हिचकिचाते हैं तो और भी कई सज्जन रुपया लिये तयार हैं
स कारण तुम धन दौलत की चिन्ता छोड़ दो। इस बात की
ी चिन्ता मत करो कि यदि तुम्हारा देश निकाला होगया हो
ो तुम कहां मारे २ फिरोगे। क्योंकि जहां कहीं तुम जाओगे
हीं तुम्हारा स्वागत किया जायगा। यदि तुम थैस्सली
(Thessaly) जाना चाहो तो वहां मेरे कई मित्र हैं वह सर्व
कार से तुम्हारी रक्षा करेंगे।

जब तुम अपने प्राण बचा सकते हो तो उसे देने से क्या
ाभ है? किन्तु पापही है। तुम्हारे शत्रु तुम्हें मारना चाहते
ैं इस कारण तुम उनके मनोरथ पूरे मत करो। इसके अति-

रिक्त यदि तुम अपने पुत्रों को भी शत्रुओं के सहारे छोड़ जाओगे तो वह अनाथों का सा जीवन काटेंगे। यदि तुम अपने पुत्रों को पढ़ाही नहीं सकते तो तुम्हें उचित था कि उत्पन्न न करते इस प्रकार तुम सुगममार्ग पर चलना चाहते हो, इससे हम सब को लाज आवेगी क्योंकि तुम सदा से लोगों को साहसी और वीर होने की शिक्षा देते रहे हो लोग विचार करेंगे कि तुम्हारा न्यायालय में जाना तुम्हारे न्याय का ढंग और सब से अधिक तुमको मृत्यु दण्ड यह सब हमारी ही उदासीनता से हुए हैं। इससे यह सिद्ध होगा कि हमने तुम्हारा जीवन न बचाया और आपत्ति के समय में मुख मोड़ लिया। सुकरात! सोचो तो सही कि यह बातें हमारे तुम्हारे लिये हानिकारक ही नहीं किन्तु लाभदायक भी होंगी। अब यही एक उपाय सम्भव है कि बचजाने का पक्का विचार करलो। सब बातें आज ही रात को होजानी उचित हैं नहीं तो पीछे बाधा पड़ेगी। ऐ सुकरात मेरी बात सुनने को निषेध मत करो।

सु०—प्रिय किराती! यदि मेरे बचाने के विषयमें तुम्हारी चिन्ता मानसिक कर्तव्य से उचित है तब तो माननीय है अन्यथा उसका अधिक होना अधिक हानिदायक है। मैं केवल कर्तव्य पर ही ध्यान देता हूं अतएव हमें यह देखना चाहिये कि तुम्हारी बात युक्त है वा अयुक्त। मैं तर्क द्वारा अपने पहिले विचारों को कभी न छोड़ूंगा, भलेही लोग बड़े २ डर दिखाकर मुझे भयभीत करना चाहें जैसे कि भूत के भय से बाल बच्चों को डराते हैं। हम पहिले विचार किया करते थे कि तुच्छ लोगों की सम्मतियां माननीय हैं अन्य की नहीं, तो

यह हमारा विचार ठीक था वा नहीं ? किराती ! मेरी प्रबल इच्छा हो रही है कि तुम्हारी सहायता से अपनी पूर्व निश्चित बातों की परीक्षा करूं और यह भी देखूं कि उनका यहां पर प्रयोग करना चाहिये अथवा नहीं ? जब कभी हम निष्पक्ष हो कर सोचते थे तो यही परिमाण निकाला करते थे कि कुछ उदारचित्त पुरुषों की सम्मतियां माननीय हैं शेष की नहीं। किराती ! क्या तुम इस बात को मानते हो। क्योंकि मनुष्य दृष्टि से देखा जावे तो तुम्हें कल मरना नहीं है अतः मृत्यु का प्रभाव तुम्हारे ऊपर नहीं पड़ सकता। तो क्या तुम नहीं विचार करते कि सब लोगों की सब सम्मतियां माननीय नहीं हैं ? किन्तु थोड़े ही मनुष्यों की थोड़ी सम्मतियां माननीय हैं।

कि०—मैं ऐसा विचार करता तो हूं।

सु०—तो क्या हमको अच्छी सम्मतियों की प्रतिष्ठा और बुरी सम्मतियों का त्याग नहीं करना चाहिये ?

कि०—अवश्यमेव।

सु०—किन्तु अच्छी सम्मतियां ज्ञानियों की होती हैं और बुरी सम्मतियां मूर्खों की होती हैं।

कि०—ठीक बात है।

सु०—तो क्या हम नहीं विचार किया करते थे कि रोगी को केवल अपने वैद्य की ताड़ना, प्रशंसा और सम्मति का ध्यान रखना चाहिये अन्य पुरुषों का नहीं ?

कि०—मेरी भी यही सम्मति है।

सु०—तो उसे केवल एक ही मनुष्य की ताड़ना का भय और प्रशंसा का गर्व होना चाहिये अन्य का नहीं ?

कि०—वास्तव में।

सु०—तो उसे अपने वैद्य ही की आज्ञानुसार कार्य करना और भोजन चाहिये। और जो चिकित्सा में प्रवीण उन्हीं के अनुसार न कि औरों के भी।

कि०—यह सच है।

सु०—अच्छा। यदि वह इसी एक मनुष्य का ध्यान करे और उसकी धमकी व बड़ाई को न सोचे किन्तु अन्य पुरुषों का जो चिकित्सा नहीं कर सकते, विचार करे, तो क्या उसे हानि न पहुंचेगी।

कि०—अवश्य ही उसको हानि होगी?

सु०—उसे कैसे और किस प्रकार हानि होगी?

कि०—निस्सन्देह उसका शरीर बिगड़ जावेगा।

सु०—तुम ठीक कहते हो। किरातो! संक्षेपतः क्या यह सिद्धान्त सभी बातों में युक्त नहीं है? इस कारण सत्य असत्य, ऊंच नीच, भलाई बुराई तथा प्रतिष्ठा अप्रतिष्ठा इत्यादि इसी प्रकार के प्रश्नों में जिनके ऊपर हम विचार कर रहे हैं, क्या हम उन्हीं लोगों की सम्मति का ध्यान नहीं रखना चाहिये जो इन बातों को समझते हैं? क्या विपरीत करने से हमारे शरीर का भाग जो सत्य से सुधरता और असत्य से बिगड़ता है निकम्मा नहीं होजावेगा।

कि०—हां सुकरात! मैं तुम्हारी बात को मानता हूं?

सु०—तो क्या जब शरीर ही बिगड़ गया तो जीवन व्यतीत करने योग्य है?

कि०—नहीं कदापि नहीं।

सु०—जीवन उसी समय अच्छा मालूम होता है जब हमारे शरीर का वह भाग जो भलाई से सुधरता और बुराई

से बिगड़ता है, ठीक दशा में रहता है ? क्या वह भाग पञ्चत्व से बने शरीर से किसी प्रकार कम मूल्यवान है ?

कि०—नहीं, कदापि नहीं।

सु०—किन्तु और अधिक ही मूल्यवान है।

कि०—जी हां कहीं अधिक ही मूल्यवान है ?

सु०—प्रिय मित्र ! तब तो हमें लोगों की सम्मति की ओर कुछ भी ध्यान न देना चाहिये। किन्तु हमको तो स्वयं ईश्वर की ओर उन लोगों की सम्मति का विचार करना चाहिये तो तुम्हारा यह विचार अयुक्त है कि हमें सत्य असत्य के विषय में सर्वसाधारण की सम्मति का विचार करना चाहिये।

फिर क्या हम कह सकते हैं कि सर्व साधारण किसी मनुष्य को मृत्यु दे सकते हैं ?

कि०—यह तो स्पष्ट है यह तो अवश्य कह सकते हैं।

सु०—ठीक परन्तु मित्र ! मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि हमारा अभी निकाला हुआ परिणाम वैसा ही है जैसा कि हम लोग पूर्व समय में निकालते आये हैं। अब यह विचार करो कि हमें अपना जीवन केवल व्यतीत करना है वा भलाई से व्यतीत करना है ?

कि०—भलाई के साथ व्यतीत करना है।

जीवन व्यतीत करने का एक ही आशय है। क्या तुम यह मानते हो ?

कि०—जी हां मैं मानता हूं।

सु०—अब इन बातों को लेकर हमें यह सोचना है कि एथेन्स निवासियों की आज्ञा के प्रतिकूल हमारा भागने का

उद्योग करना उचित है वा अनुचित। यदि उचित सिद्ध हुआ तब तो हम करेंगे अन्यथा नहीं। किराती! मेरा विश्वास है कि नाम प्रतिष्ठा धन दौलत और बाल बच्चों के विषय में चिन्ता करना जैसा कि तुम अभी कह चुके हो केवल उन्हीं लोगों का विचार है जो बिना सोचे समझे ही किसीको मृत्यु दण्ड दे देते हैं और यदि उनकी सामर्थ्य होती तो जीवन दान भी देते। परन्तु मेरा अन्तःकरण कहता है कि हमें उस प्रश्न के सिवाय जो कि मैं अभी उठा चुका हूं अर्थात् हम यहां से भाग जाने में उचित कार्य कर रहे हैं वा अनुचित किसी अन्य बात पर विचार नहीं करना चाहिये। यदि हम यह परिणाम निकालें कि ऐसा करना अनुचित है तो हमको यहां रहने से जो कोई भी विपत्ति आवे उसका धैर्य और साहस के साथ सामना करना चाहिये।

क्रि०—सुकरात! मेरी समझ में तुम्हारा कहना यथार्थ है परन्तु हमको क्या करना चाहिये।

सु०—महाशय! मैं इसका भी साथ ही साथ विचार करता हूं और यदि तुमने मेरी कोई बात काट दी तब तो मैं तुम्हारा कहना मान लूंगा अन्यथा तुम कभी मुझ से छिप कर भागने के विषय में न कहना मैं यह नहीं चाहता कि तुम्हारी दृष्टि में अनुचित कार्य करूं मेरी यही इच्छा है कि तुम सहमत होते चलो किन्तु तुम यह बताओ कि निश्चित सिद्धान्तानुसार हमको उस प्रश्न पर विचार करना चाहिये वा नहीं?

क्रि०—अवश्यमेव!

सु०—क्या हमको अनुचित कार्य कभी नहीं करना चाहिये वा हम कभी २ किसी दशा में कर भी सकते हैं? क्या अनु-

चित कार्य करना प्रतिष्ठित है ? जब हमने पूर्वकाल में यह निश्चय किया था कि चाहे संसार सहमत हो वा न हो परन्तु हमको अनुचित कार्य कभी नहीं करना चाहिये तब क्या हम केवल बच्चों के समान झूठी बातें किया करते थे ? उचित करने से चाहे हमको थोड़ा दण्ड मिले या अधिक परन्तु अनुचित करना सदा लज्जास्पद और निन्दनीय है। क्या यह तुमारा विश्वास है ?

कि०—है तो सही।

सु०—तो हमें कभी बुराई नहीं करनी चाहिये ?

कि०—कभी नहीं।

सु०—क्या लोकमतानुसार हम बुराई के बदले बुराई कर सकते हैं ?

कि०—कभी नहीं।

सु०—तो न तो किसी मनुष्य को हानि ही पहुंचानी चाहिये और न बुराई के बदले उसके साथ बुराई ही करनी चाहिये। इस बात के स्वीकृत करने में इस बात का ध्यान रखना कि तुम अपने निजी विचारों से अधिक कुछ नहीं स्वीकार करते हो, क्योंकि मेरी समझ में बहुत थोड़े लोग ऐसे हैं जो इस बात को स्वीकार करते हों, अतएव स्वीकार करने वालों और न करने वालों में कोई भी बात समानता की नहीं रहता इस कारण वे एक दूसरे को बुरी दृष्टि से देखते हैं। क्या हम इस बात को पूर्णतया स्वीकार कर सकते हैं कि मनुष्य को हानि पहुंचाना वा बुराई के बदले बुराई करना सदा वर्जित है क्या तुम इस विषयमें मुझसे मिल हो। मैं तो सदा यही विचार करता रहा हूं और अब भी करता हूं, परन्तु

यदि तुम इस को नहीं मानते तो कारण बतलाओ और जो मानते हो तो मेरी बात सुनो।

कि०—आप कहते चलें क्योंकि मैं भी आपकी बात को मानता हूं !

सुक०—तो मेरा दूसरा प्रश्न यह है कि क्या मनुष्य को अपने सभी सिद्धान्त मानने चाहिये अथवा वह छल करके उनमें से कुछ त्याग भी सकता है ?

कि०—मनुष्य को अपने सभी सिद्धान्तानुकूल चलना चाहिये ।

सु०-तो अब सोचो तो सही कि विना राज्य की आज्ञा लिये मैं उनको हानि पहुंचाऊंगा अथवा नहीं, जिनको कि मुझे हानि नहीं पहुंचानी चाहिये क्या मैं भागने से अपने वचनों का पालन करूंगा !

कि०—मैं तुम्हारे प्रश्न को नहीं समझता हूं अतएव उत्तर नहीं दे सकता ।

सु०—अच्छा तो इस प्रकार समझो कि यदि ज्योंही मैं यहां से भाग जाने के लिये टाट कमंडल बांध रहा होऊं (यदि मेरे वचने से यही अभिप्राय है) ज्योंही राज्य के नियम व व्यवस्था मेरे पास आकर पूछें हमको यथाशक्ति तोड़ देने की चेष्टा करने के अतिरिक्त भागजाने से तुम्हारा क्या विचार है ? क्या तुम समझते हो कि वह राज्य जिसके स्थापित नियमों द्वारा किये हुये न्यायों को साधारण लोग न गिनें, क्या कभी भी स्थिर रह सकता है' ! तो किराती ! इस प्रकार के प्रश्नों का मैं क्या उत्तर दूंगा ! क्योंकि नियम सदा पालने के लिये होते हैं ? क्या मैं उनको यह उत्तर दूंगा

परन्तु राज्य ने मुझे हानि पहुंचाई है, उसने मेरा न्याय ठीक प्रकार से नहीं किया है। क्या मैं यही कहूंगा?।

कि०—अवश्यमेव, आपको यही कहना होगा।

सु०—अच्छा कल्पना करो कि नियम यह उत्तर दें 'सुकरात! क्या तुम्हारे यही वचन थे कि तुम कारागार में से भाग जाओगे या यह थे कि न्यायाधीश जो कुछ आज्ञा देंगे तुम उनका पालन करोगे? यदि हमने उनके इन वचनों पर आश्चर्य प्रगट किया तो वह कहेंगे 'सुकरात! जिस प्रकार तुम अपने जीवन में प्रश्नोत्तर करते रहे हो वैसे ही हमारे प्रश्न का उत्तर दो और आश्चर्य न करो। हमसे और न्याय से तुम्हें क्या मत विरोध है जिसके कारण तुम हम को नष्ट करने की चेष्टा कर रहे हो? क्या इन नियमों द्वारा ही तुम्हारे पिता ने तुम्हारी माता को ग्रहण कर तुम्हें उत्पन्न नहीं किया था? क्या तुम्हें विवाह सम्बन्धी नियमों के विरुद्ध क्या कहना है? यदि मैं उत्तर दूं कि मुझे कुछ नहीं कहना है तो वह पूछेंगे, "तुम्हें उन नियमों के विरुद्ध क्या कहना है जो शिशु-पालन-पोषण संबन्धी हैं और जिनके अनुसार तुम्हारा पालन पोषण और शिक्षा हुई है? क्या हमने तुम्हारे पिता को तुम्हें शिक्षा देने के लिये सन्नद्ध करके उचित काम नहीं किया था?।"

तो मैं यही उत्तर दूंगा कि उचित किया था। तो वह फिर पूछेंगे, जब तुम्हारा जन्म, पालन पोषण तथा शिक्षा सभी काम हमारे द्वारा हुए हैं तो तुम अपने को हमारा पुत्र व सेवक होने से क्यों निषेध करते हो? जैसे कि तुम्हारे पूर्वज भी होते चले आये हैं। तब हमने और हमारे अधिकारों

को समान समझते हो ! क्या तुम यह सोचते हो कि यदि हम तुमको दण्ड देंगे तो तुम हमारे ऊपर बदला लेने का उद्योग करोगे ? तुम्हारे अधिकार वैसे नहीं हो सकते जैसे तुम्हारे माता, पिता, व शिक्षक के थे। तुमको यह अधिकार नहीं है कि यदि तुम्हारे पिता तुमको दण्ड देवें तो तुम उनसे बदला लो, अथवा भला बुरा कहें तो तुम भी भला बुरा कहो, या तुम्हारे साथ बुराई करें तो तुम भी ऐसा ही करो। क्या! तुम यह समझते हो कि तुम्हें अपने देश के नियम व व्यवस्था पर बदला लेने का अधिकार है ? यदि हम तुम्हारे कार्यों को अनुचित जानकर तुम्हें नष्ट करना चाहें तो क्या तुम भी, जो कि सदा भलाई व गुणों की खोज में थे हम से यथाशक्ति बदला लेना उचित समझोगे ! हमारी समझ में तो तुम्हें यह सोचना चाहिये कि तुम्हारा देश तुम्हारे माता पिता से अधिक योग्य, प्रशंसित और पवित्र है देवगण भी उसकी प्रतिष्ठा करते हैं, तुम्हारा कर्त्तव्य है कि उसकी अपने माता पिता से अधिक प्रतिष्ठा करो, यदि वह तुमसे क्रोधित होवें तो या तो उसके आज्ञा का पालन करो अन्यथा उससे क्षमा प्रार्थना करो और जब कभी वह तुमको कारागार, लड़ाई मृत्यु वा अन्य दण्ड दें तो तुम सब कुछ सहन करो। तुमको न तो भागना, न पीछे हटना और न मुख मोड़ना चाहिये। और प्रत्येक स्थान में चाहे न्यायालय हो, लड़ाई हो अथवा कारागार हो तुम्हें उसकी आज्ञापालन करनी चाहिए वा उसे यह विश्वास दिलाना चाहिये कि उसकी आज्ञा अनुचित है। किन्तु माता पिता के प्रति हाथ उठाना ईश्वरीय नियम के विरुद्ध है और देश के प्रति ऐसा करना तो अत्यन्त ही निन्दनीय है। तो क्या

मको यह नहीं कहना चाहिये कि नियम सत्य कह रहे हैं ?

कि०—मेरे विचार से तो वे सत्य हैं।

सु०—शायद ये मुझसे पुनः कहेंगे सुकरात ! सोचो तो सही कि तुम भागने से हम को हानि पहुंचा रहे हो। हमने तुमको संसार में उत्पन्न किया पाला शिक्षा दी और प्रत्येक अच्छी २ वस्तु का थोड़ा २ भाग दिया इस पर भी डंके की चोट घोषणा करदी कि यदि कोई हमसे असंतुष्ट है तो वह जिधर चाहे चला जावे। हमने उसको यह स्वतंत्रता बड़े होने और राज्य व्यवस्था को समझने ही देदी थी। यदि कोई मनुष्य हमसे वा नगर से अप्रसन्न है तो हम उसको एथेन्स के किसी उपनिवेश में जाने से नहीं रोकते किन्तु जो कोई वहां हमको प्रबन्ध करते देख कर भी कहीं नहीं जाता है तो वह वहां रहने से ही प्रगट कर रहा है कि वह हम से संतुष्ट है। हमारी आज्ञा का अपमान करनेवाला तीन बुराइयां करता है, पहले तो वह उन नियमों का पालन नहीं करता जो विवाह सम्बन्धी होने हुए उसके पिता हैं। दूसरे वह अपने पालन पोषण करनेवाले नियमों का प्रतिपालन नहीं करता। तीसरे वह हमें तोड़ देने से उस वचन का पालन नहीं करता जो कि उसने हमारे पालन करने के सम्बन्ध में दिया था। (जो कि उसके नगर में रहने से ही सिद्ध है) बिना हमको अनुचित सिद्ध किये ही वह यह कार्य कर रहा है। फिर भी हमने उसको अपनी आज्ञा का पालन करने के लिये बाधित नहीं किया था क्योंकि हमने उसे दूसरा मार्ग भी बतला दिया था किन्तु वह किसी की भी चिन्ता नहीं करता है।

सुकरात ! तुम अन्य एथेन्स निवासियों के मुकाबले में

एथेन्स नगर को छोड़ कर अन्य स्थानों में बहुत कम गये हो इससे सिद्ध होता है कि तुम उनके देखने से हम से अधिक संतुष्ट थे अतएव हमारा पालन करने को भी तुम सब से अधिक बाध्य हो। तुम कभी किसी खेल कूद वा अन्य प्रकार की यात्रा के लिये नगर छोड़कर नहीं गये जिस प्रकार कि अन्य नगर निवासी जाते थे। तुमको किसी दूसरे नगर वा देश के देखने की इच्छा नहीं हुई थी। अतएव तुम हमसे और नगर से संतुष्ट थे। इसके अतिरिक्त तुमको यह नगर ऐसा सुन्दर और प्रिय मालूम हुआ कि यहीं पर तुमने बच्चे उत्पन्न किये। यदि तुम नगर से किसी प्रकार असंतुष्ट थे। तोअपने न्याय के समय देश निकाला पसंद कर लेते। जो कार्य तुम इस समय राज्य की बिना आज्ञा लिये कर रहे हो, वह तुम न्याय होते समय सबकी आज्ञा से कर सकते थे, किन्तु उस समय तुमने मृत्यु में ही प्रशंसा समझी क्योंकि तुमने स्पष्ट कहा था कि देश निकाले से तो मृत्यु ही अच्छी है। किन्तु अब तुम हमको और वचनों को नष्ट करने में लाज नहीं करते? यह तुम्हारा गुलामों का सा कार्य है अब तुम इस बात का उत्तर दो कि तुमने अपने शब्दों द्वारा ही नहीं किन्तु कार्यों से हमारे प्रबन्ध में रहना स्वीकार किया था वा नहीं? तो मैं इन बातों का क्या उत्तर दूंगा क्या हम यह कह देंगे कि तुम्हारी बात असत्य है!

क्रि०—नहीं, हम उनकी बात को अवश्यही सत्य बतावेंगे।

सु०—तब वह प्रश्न करेंगे तुमने जो हमको यहां अपने रहने की स्वीकारी दी थी वह शीघ्रता में नहीं दी थी कि अचुक दे दी हो परन्तु तुम्हारे सामने ७० वर्ष का समय था! जब

कभी तुमको हम या राज्य प्रबन्ध बुरे लगते तभी तुम अन्य नगर को जा सकते थे। क्या तुम उन वचनों को नहीं तोड़ रहे हो? तुम कहा करते थे कि क्रीट आदि द्वीपों का राज्य प्रबन्ध अच्छा है परन्तु तुमने वहां पर जाना भी पसन्द नहीं किया। तुम अन्धे, लूले, लंगड़ों के मुकाबिले में भी एथेन्स छोड़कर बहुत कम बाहर गये हो। स्पष्टतया तुम नगर से और उससे भी अधिक हमारे नियमों से संतुष्ट थे क्योंकि ऐसा कौन है जो बिना नियमवाले नगर से संतुष्ट होवे! हमारी शिक्षा मान कर भाग जाने से अपना नाम कलंकित मत करो।

क्योंकि सोचो तो सही इस प्रकार भाग जाने से तुम अपने वा मित्रों के लिये क्या भला कर लोगे। यह तो स्पष्ट है कि उनको देश निकाला होगा, धन सम्पत्ति छिन जावेगी, और अच्छे २ अधिकार भी छिन जावेंगे। और यदि तुम किसी सुप्रबन्धित स्थान को चले जाओगे तो वहां के निवासी तुमको नियमों का नष्टकर्त्ता समझकर घृणा की दृष्टि से देखेंगे। इससे तुम यहां के न्यायाधीशों को भी विश्वास दिला दोगे कि उन्होंने जो दण्ड की आज्ञा दी थी वह उचित थी क्योंकि जो मनुष्य नियमों को नष्ट करता है वह अपने चालचलन से नवयुवकों को भी बिगाड़ता है। तब क्या तुम सुप्रबन्धित नगरों और सभ्य समाजों को त्याग दोगे? क्या इस दशा में जीवन जीवन कहा जा सकता है। क्या तुम सभ्य लोगों से उसी तरह ही वार्तालाप करोगे। क्या तुम फिर भी उनसे कहोगे कि अच्छाई, न्याय, संस्थायें और नियम मनुष्य के लिये अत्यन्त बहुमूल्य वस्तुएं हैं? क्या तुम सोचते हो कि ऐसा कहना तुम्हारे लिए लज्जा की बात न होगी?

तुम थैसली में क्रिातो के मित्रों के पास जाओगे जहां कि अत्यन्त कुप्रबन्ध है। वह लोग तुम से पूछेंगे कि तुम किस प्रकार भेष बदलकर, भिखारी के से कपड़े पहिनकर, एक आश्चर्यजनक व हास्यपूर्ण दशा बनाकर कारागार से छिप कर भागे थे? यह कह कर वह लोग तुम्हारी हंसी उड़ावेंगे। क्या कोई भी यह नहीं कहेगा कि तुम अति बूढ़े हो, और थोड़े ही दिवस और जीवित रहोगे तब भी तुम अपने जीवन के इतने लोभी हो कि उसकी रक्षा के लिये बुरे से बुरा कर्म करने को तत्पर हो। यदि तुम उनको अप्रसन्न न करोगे तो शायद वह तुमसे ऐसा न कहें परन्तु यदि तुमने उन्हें अप्रसन्न किया तो वह ऐसी खरी २ सुनावेंगे कि तुम्हारे मुख पर तीतरी उड़ने लगेंगी, इस प्रकार तुमको गुलाम और अनुचित प्रशंसावादी बनकर समय काटना पड़ेगा, अतएव तुम केवल पेट भरने के अतिरिक्त और कुछ न कर सकोगे। तब यहां की यह तुम्हारी न्याय, भलाई इत्यादि सम्बन्धी बातें कहां चली जावेंगी। तो क्या तुम अपने पुत्रों के हितार्थ जीवित रहना चाहते हो! क्या तुम उनका पालन पोषण और शिक्षा पूर्ण कर लोगे! क्या तुम उनको अपने साथ थैसली को ले जाओगे! क्या तुम उनको मातृभूमि के लिए विदेशी बनाकर कुछ लाभ प्राप्त कर लोगे! यदि तुम उनको एथेन्समें छोड़ दोगे तो क्या उनके पास न रहकर तुम उन्हें शिक्षित बना सकोगे? हां तुम्हारे मित्र उनका पालन करेंगे तो क्या तुम्हारे मित्र उनका पालन तुम्हारे थैसली की ही यात्रा करने पर करेंगे और परलोकयात्रा करने पर नहीं? तुमको यह बात नहीं सोचनी चाहिये क्योंकि यदि वह सच्चे मित्र हैं सब दशा

में उनका पालन करेंगे।

नहीं सुकरात हमने तुमको पाला है इस कारण हमारी ही शिक्षा मानो। न्याय के सामने किसी भी पुत्र व जीवन की चिन्ता मत करो जिससे स्वर्ग सभा में न्यायाधीशों के सन्मुख अपनी निरपराधिता सिद्ध कर सको ! यदि तुम भाग जाओगे तो न तो तुम और न तुम्हारे मित्र ही मृत्यु के पीछे होने वाली प्रसन्नता से कुछ प्राप्त कर सकेंगे ! यहांपर हमने नहीं किन्तु लोगों ने तुमको अपराधी ठहराया है ! यदि तुम अपने वचन तोड़ोगे, बुराई के बदले बुराई ही करोगे और हमारे नियमों को, देश को तथा अपने मित्रों को सताओगे तो तुम्हारे भाग जाने पर हम तुमसे अप्रसन्न रहेंगे और तुम्हारी मृत्यु के पश्चात् हमारे सम्बन्धी स्वर्गीय नियम यह देख कर कि संसार में तुमने नियमों को तोड़ा है तुम्हारे साथ सहानुभूति न प्रकट करेंगे। अवश्य हमारी बात मानो और किरातो के प्रलोभन में न फंसो।

प्रिय किरातो ? विश्वास रक्खो जिस प्रकार इष्ट देवों को मनाने वाले स्थानों के कानों में शब्द गूंजते हैं उसी प्रकार यह कहे हुए शब्द ईश्वर की ओर से मेरे कानों में गूंज रहे हैं। मुझे विश्वास होता है कि यदि तुम मेरे विचारों में परिवर्तन करने के हेतु कुछ भी कहोगे तो वह व्यर्थ होगा।

कि०—सुकरात ! मैं अधिक कुछ नहीं कह सकता।

सु०—यदि यही बात है, तो मेरा ही कहना मानो क्योंकि ईश्वर की यही इच्छा है !

सुकरात की मृत्यु के पश्चात् एक दिन ईकेक्रटस (Eche-

crates) ने अपने मित्र फ़ीडो से पूछा।

ईके०—फ़ीडो? क्या सुकरात के विष पीने के दिन तुम कारागार में उपस्थित थे या तुमने यह सब वृत्तान्त किसी अन्य व्यक्ति से सुना है।

फ़ीडो—मैं स्वयं वहाँ उपस्थित था।

ईके०—तो मृत्यु के समय कहे हुये अपने गुरु के शब्द सुनने की मुझे बड़ी लालसा है क्योंकि उस समय से एथेन्स नगर से यहाँ पर मेरे पास कोई नहीं आया है।

फ़ीडो—तो क्या तुमने उसके न्याय व मृत्यु के विषय में कुछ नहीं सुना है?

ईके०—नहीं हमने सुना तो था परन्तु यह नहीं मालूम हुआ कि न्याय होने के बहुत दिन पीछे वह क्यों मारा गया था?

फ़ीडो—आह! यह तो बड़ी विलक्षण बात हुई थी क्योंकि उसके मृत्यु दिन के पूर्व उस जहाज का जो एथेन्स निवासी डेलस द्वीपको भेजते हैं, पिछला भाग सुशोभित कियागया था।

ईके०—यह जहाज कौनसा है?

फ़ीडो—एथेन्स निवासियों के कथनानुसार यह वही जहाज है जिसमें बैठकर थीसियस सात युवक और सात युवतियों की जान बचाने को गया था।*

*एथेन्स में एक कहावत प्रसिद्ध है क्रीटद्वीप में एक राक्षस रहता था वह वह बड़ा भयंकर था। एक सन्धि के अनुसार एथेन्स निवासी उसके खाने के लिये प्रतिवर्ष ७ पुरुष और सात स्त्रियां भेजा करते थे। जब राजकुमार थीसियस बड़ा हुआ तो एक वर्ष चौदहों पुरुषों व स्त्रियों को लेकर वहां गया और लड़ाई की जिसके अन्त में राक्षस मारा गया और थीसियस घर लौट आया।

एथेन्स निवासियों ने डेलस द्वीप के एपोलो देवता को शपथ दी थी कि यदि वह राजकुमार और चौदहों साथी बच गये तो प्रति वर्ष लोग एक पवित्र संदेशा देवता को भेजा करेंगे । एथेन्स के नियमानुसार जब तक वह जहाज लौटकर नहीं आता था उस समय तक, नगर में किसी को मृत्यु दण्ड नहीं दिया जा सकता था । इस कारण सुकरात को मृत्यु के पहिले एक मास तक कारागार में बन्द रहना पड़ा था जहां कि हम लोग सारे दिन उससे बैठे २ बातचीत किया करते थे। किन्तु मृत्यु के दिन हम लोग शीघ्र ही कारागार के द्वार पर पहुंच गये वहां द्वारपाल हमको खड़ा करके भीतर गया जहां कि राज कर्मचारी सुकरात की हथकड़ी बेड़ी उतार रहे थे और लौट कर आने पर हमको भीतर जाने दिया । हम लोगों को देखकर उस की स्त्री ज़ेन्थिपी विलाप करने लगी कि सुकरात का यह अन्तिम समय है और वह अपने मित्रों से बात चीत कर रहे हैं । यह देख कर सुकरात ने क्रिटो द्वारा उस छाती पीटती व विलाप करती हुई को घर भिजवा दिया । मुझे आश्चर्य होता है कि उस दिन भी हमने सुकरात को वैसा ही प्रसन्न-चित्त पाया जैसा कि वह सदा रहता था । वह कहने लगा परमात्मा ने सुख और विपत्ति में झगड़ा होता देख दोनों को एक ही रस्सी से सिरों पर बांध दिया था अतः जिस किसी के पास एक आवेगी तो पीछे २ दूसरी अवश्य ही आवेगी । अब तक तो हथकड़ियों से मुझे हाथ में पीड़ा होती थी किन्तु अब इस स्थान को मलने पर सुख मालूम होता है । इतने पर हम लोगों ने इसे रोक दिया और अपना सम्भाषण आरम्भ किया अन्त में हमने इससे मृत्यु प्राप्त मनुष्य की भविष्य दशा

जिसके विषय में पूछा तो उसने उत्तर दिया।

सुक०—मृत्यु के पश्चात् मनुष्य परलोक में जाते हैं वहां पर प्रत्येक को कर्मानुसार उचित फल दिया जाता है। जो लोग न तो बुरेही कर्म करते हैं और न अच्छे, वह एकरन (Achelan) नदी पर भेजदिये जाते हैं जहां से वह जलपोत द्वारा झील को चले जाते हैं। वहां पर उनको दुष्ट कर्मों के बदले दण्ड दिया जाता है तत्पश्चात् अच्छे कर्मों के बदले पुरस्कार दिया जाता है। किन्तु महा कुकर्मी पुरुष जिनका पवित्र होना असम्भव हो जाता है तारनास (Tarnas) झील को भेज दिये जाते हैं जहां पर उनको उचित दण्ड दिया जाता है। माता पिता के प्रति अपराध करने वाले कुछ दिन पश्चात् अपने २ माता पितासे क्षमा की प्रार्थना करते हैं और जब तक कि क्षमा नहीं मिलती वह कष्ट सहते हैं। परन्तु पवित्र कर्मों वाले शरीर बन्धन से मुक्त हो ऐसा प्रसन्न जीवन व्यतीत करते हैं कि उसका सरलता से वर्णन नहीं कर सकता। अतः पवित्र कर्म करने में हमें किञ्चित् संकोच न करना चाहिये।

ज्ञानी पुरुष इस बात का दुराग्रह न करेगा कि जो बातें मैंने कहा हैं वह अक्षरशः यथार्थ हैं परन्तु उसको इस बात का अवश्य विश्वास होजायगा कि आत्मा अमर है अतएव पवित्र कर्म करने में आगा पीछा न करना चाहिये। इस कारण मनुष्य को सदैव सांसारिक सुखों की ओर अधिक ध्यान न देकर आत्म सुधार करना चाहिये क्योंकि ऐसा करने से जीवनान्त होने पर इसको अच्छा और सुखदायक परिणाम मिलेगा? तुम लोग भी अपने २ समयानुसार इससंसार

को छोड़कर परलोकवासी बनोगे परन्तु मेरा समय अभी आगया है इस कारण विष का प्याला पीने से पहिले मैं स्नान कर लेना उचित समझता हूं जिससे कि पीछे फिर स्त्रियों को कष्ट न उठाना पड़े। इसके पश्चात् किरातो ने पूछा 'सुकरात हमको क्या आज्ञा है? हम तुम्हारी और तुम्हारे बाल बच्चों की किस प्रकार उचित सेवा करें तब सुकरात ने उत्तर दिया तुमको पहिले अपना आत्म सुधार करना चाहिये तत्पश्चात् अन्य कार्य। मेरी सदा से यही शिक्षा है इसीको मानो परन्तु ध्यान रहे कि अब वचन देकर पीछे कुछ भी न करने से कोई लाभ नहीं। तब किरातोने पूछा कि "हम तुम्हारी अन्तिम क्रिया कैसे करें" तब सुकरात ने कहा 'किरातो। यथार्थ में सुकरात तो जीव आत्मा है जो कि तुम लोगों से इस समय वार्तालाप कर रहा है। मृत्यु के पीछे यह प्राण पखेरू उड़ जावेंगे केवल पंचतत्त्व से बना हुआ शरीर रह जायगा इसकी जैसे चाहो क्रिया करना। किन्तु अन्त्येष्टि क्रिया के समय प्रसन्न रहना।

इतना कहकर सुकरात स्नानार्थ एक दूसरी कोठरी में चला गया और किरातो भी हमें ठहरने की आज्ञा देकर उसके साथ ही चला गया। हम लोग आपस में उपस्थित विपत्ति के ऊपर शोक करने लगे और हमको ऐसा कष्ट हुआ जैसे हमारा पिता हमको अनाथ करके त्याग रहा है। इस प्रकार हम अपना भाग्य ठोकते रहे। उसने स्नान करने के पश्चात् अपने पुत्र (जिनमें एक तो कुछ समझदार था और दो छोटे छोटे थे) और अपनी पत्नी सहित सब उपस्थित स्त्रियां बुलाईं। फिर उनको अपनी अन्तिम आज्ञा देकर विदा किया और सायंकाल से एक घंटा पूर्व हमारे पास आया

और अधिक नहीं कहने पाया था कि राजकर्म चारियों के सेवक ने आन कर कहा 'सुकरात जब मैं अन्य पुरुषों को राजाज्ञानु सार विष पीने के लिये कहता हूं तो वह क्रोधित होकर मुझको कुवचन कहने लगते हैं, परन्तु मुझे विश्वास है कि आप अन्याय न करेंगे और न मुझे दोषी कह कर क्रोधित होंगे क्योंकि जितने मनुष्य यहां पर अब तक आये हैं उनमें आप सब से अधिक ज्ञानी हैं। अतः आप यथोचित कीजिये क्योंकि आपको मेरे आने का कारण ज्ञात ही होगा। इतना कहकर वह रोता हुआ बाहर चला गया। सुकरात ने उसे उत्तर दिया 'मैं आपकी आज्ञा का पालन करूंगा,

फिर सुकरात ने हम से कहा यह कैसा सत्यपुरुष है जब से मैं कारागार में आया हूं वह बार बार मेरे पास आता है और सदा सत्यपुरुषों का सा व्यवहार करता रहा है और अब भी वह कितनी उदारता से मेरे लिये शोक कर रहा है अतः उसकी आज्ञानुसार यदि विष तैयार हो तो मेरे पीने को लाओ नही तो शीघ्रतया तयार कराओ। क्रिरातो ने कहा' सुकरात अभी कोई शीघ्रता नहीं क्योंकि सूर्य नहीं छिपा है। बहुधा मनुष्य तो सुर्यास्त के पश्चात् भी सहर्ष खाते पीते और मित्रों से वार्तालाप करते हैं। अतः हमको भी अभी बातें करना चाहिये।'

इस पर सुकरात ने उत्तर दिया' जो लोग ऐसी दुष्टता करने से कुछ लाभ समझते हैं वे ही ऐसा करते हैं। मैं ऐसा कदापि न करूंगा क्योंकि थोड़ी देर पीछे विष पीने से मेरे ऊपर केवल जीवन लालच करने का कलङ्क लगेगा। मेरी जीवनचर्य्या का अन्त होगया इसलिये मुझे नीचता प्रगट

करने को बाधित न करो। तब किराते ने अपने सेवक को बाहर जाने का संकेत किया, वह शीघ्र ही विष देनेवाले मनुष्य को अपने साथ लिवा लाया, जो कि एक कटोरे में विष तैयार करके लाया था तब सुकरात ने कहा, महाशय! कहिये अब मुझको क्या आज्ञा है! उसने उत्तर दिया 'केवल आप इसको पीकर के इधर उधर टहलने लग जाइये, जब आपको टांगे भारी मालूम होने लगें तो पैर फैलाकर सो जाना फिर उसका प्रभाव स्वयं होजायगा,। फिर सुकरातने विषका प्याला लेकर कहा क्या मैं इसमें से किसी देवता के नाम पर थोड़ा सा पृथ्वी पर डाल सकता हूं, उसने उत्तर दिया हम आवश्यकतानुसार ही तैयार करते हैं, उससे अधिक नहीं,। सुकरात ने कहा 'हे ईश्वर। यह मेरी परलोक यात्रा सुखदायक होवे, यही मेरी अन्तिम प्रार्थना है। इतना कहकर उसने धैर्य के साथ विष का प्याला पी लिया। पीने के पूर्व तक तो हम लोग ज्यों के त्यों बैठे रहे परन्तु जैसे ही उसने पिया हम अपने को धीरज न बंधा सके और फूट २ कर रोने लगे यहां तक कि किराते भी आंसू न रोक सका और अपोलोडरस (Appolodorous) ने तो २ कर रोनेसे हमारा साहस तोड़ दिया। परन्तु सुकरात ने कहा 'मित्रो! आप क्या कर रहे हैं। मैंने तो स्त्रियों को पहिले ही से इसी कारण भेज दिया था कि वह ऐसा न करने पावें। यह सुनकर हमको लज्जित होना पड़ा और सब रोने से रुकगये। तब सुकरात इधर उधर घूमने लगा और उसकी टांगें भारी मालूम होने लगीं तो लेट गया, फिर वह मनुष्य उसकी टांगे दबाने लगा और जोर से पैर दबाकर सुकरात से पूछा कि इसे दर्द तो

नहीं मालुम होता था। सुकरात ने नाहीं करदी। हम लोगों को उसका शरीर ठंडा होता हुआ मालूम पड़ने लगा। सुकरात स्वयं ही इस बात से कहने लगा कि हृदय पर पहुंचते ही जीवन का अन्त हो जायेगा फिर उस ने अपना मुंह खोल लिया जो कि पहिले से ढक लिया था और अन्तिमबार कहा 'क्रिटो! मुझे एसलीपायस (Asclepius) देवता की भेंट एक मुर्गा देना है। (देवता को सुकरात ने एक समय अपने रोग मुक्त होने पर एक मुर्गा चढ़ाने कहा था) सो देदूंगा। और क्या कहना है! इसका सुकरातने कोई उत्तर नहीं दिया परन्तु उसके हिलने पर उस मनुष्य ने सुकरात के ऊपर से कपड़ा उतार लिया, और उसकी आंखें गड़गईं। तब क्रिटो ने उसके मुख और नेत्र बन्द कर दिये।

इस प्रकार ईकेकरात! उस अत्यन्त बुद्धिमान, न्यायी और सत्पुरुष को, जिसका सा दूसरा मिलना असम्भव है, जीवन चर्या का अन्त हुआ?

मानवों की जीवनी हैं यह मुझे बतला रहीं।
अनुसरण कर मार्ग जिनका उच्च हो सकते सभी॥
कालरूपी रेत में पद चिह्न जो तजि जायँगे;
मानकर आदर्श उनको ख्याति नर जग पायँगे॥

इति शुभमस्तु

उपसंहार

प्यारे पाठको ! आपने यूनान के तत्त्वज्ञ सुकरात का जीवन चरित पढ़ लिया किस प्रकार उस आत्मवीर ने अपने सच्चरित्र और आत्मिकबल से संसार को दिखला दिया कि धर्मात्मा और न्यायी लोग सांसारिक कष्टों और यातनाओं की परवाह न करके अपने कर्त्तव्य से कभी नहीं हटते। आपने जीवन चरित पढ़ते हुए ध्यान दिया होगा कि सुकरात ने प्रत्येक स्थान पर "आत्म-सुधार" पर बड़ा ज़ोर दिया है। उनका कथन अक्षरशः सत्य है जिस पुरुष ने अपना सुधार नहीं किया है वह दूसरों का कैसे सुधार कर सकता है। जिसने स्वयं जिस फल को नहीं चक्खा वह किस प्रकार दूसरों को उस फल का स्वाद चखा सकता। वास्तविक वही पुरुष दूसरों को मार्ग बता सकता है जो स्वयं मार्ग पर चला हो।

सुकरात ने और सांसारिक लोगों की भांति अपने समय को सांसारिक व्यसनों में पड़ कर व्यर्थ नहीं खोया। वह आरम्भ से ही अपना सुधार करता हुआ दूसरों के सुधार का प्रयत्न करता रहा। इतने ज्ञानी और बुद्धिमान होने पर भी वह साधारण मनुष्यों की भांति अपने जीवन को बिताया करता था यहां तक कि उसे अपने परिवार को पालन करने में भी धनाभाव के कारण बड़ा कष्ट उठाना पड़ता था। साधारण वह कपड़ों से गुजारा करता था। परन्तु उसे यदि रात दिन किसी की चिन्ता थी तो केवल नवयुवकों के आत्म-सुधार की। उनके समझाने का ढंग ही विलक्षण था वह अपराधी के ही मुख से अपराध को स्वीकार करा लेता था। और सदा के लिये पुनः अपराध न करने की प्रतिज्ञा ले लेता था। न्याय और नियम

के पालन करने में वह चट्टान के समान स्थिर रहता था संसार की कोई शक्ति नहीं थी जो कोई कर्तव्य कर्म से डिगा सके। उसने किसी कवि के निम्न लिखित वाक्य को अपने जीवन में घटा कर दिखा दिया था :—

> निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
> लक्ष्मी समाविशतु गच्छतु वा यथेष्ट।
> अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
> न्यायात् पथः विचलन्ति पदं न धीराः॥

अर्थात् संसार के नीति विशारद चाहे बुराई करें अथवा प्रशंसा करें, चाहे लक्ष्मी स्वयं आवे चाहे रूठ कर सदा के लिये चली जावे चाहे मृत्यु आज ही क्यों न आजावे और चाहे युगान्तर के लिये चली जावे परन्तु धीर पुरुष न्याय से कभी विचलित नहीं होते।

पाठको! आपने देखा सुकरात ने विष का प्याला पीकर अपने प्राण समर्पण कर,दिये किन्तु वह अपने कर्तव्य से नहीं हटा हम लोगों को भी अपनी जीवनयात्रा में सुकरात के समान सावधान रहना चाहिये।

ओंकार आदर्श-चरितमाला।

सज्जनों की सेवा में निवेदन है कि ओंकार प्रेस प्रयाग ने संसार के आदर्श पुरुषों के जीवन चरित्र निकालने आरम्भ कर दिये हैं। प्रत्येक जीवन चरित का मूल्य केवल ।) आना है। प्रत्येक जीवन चरित में लगभग १०० पृष्ठ होते हैं और चरित नायक का एक सुन्दर चित्र भी दिया जाता है। प्रत्येक मास में लगभग दो जीवन चरित निकाले जाते हैं। इस प्रकार ४०० जीवन चरित निकाले जायेंगे। यदि आप अपनी तथा अपने बालक तथा बालिकाओं की उन्नति चाहते हैं तो आप पढ़िये और अपने बच्चों को पढ़ाइये। जो लोग अपना नाम ग्राहकश्रेणी में पहिले लिखा लेंगे और रुपया भेज देंगे उन के पास १२ जीवन चरित घर बैठे पहुंच जायेंगे। प्रत्येक जीवन चरित छपते ही सेवा में भेजा जाया करेगा। डांक महसूल न देना पड़ेगा। जो लोग रुपया पेशगी न भेजकर ग्राहक श्रेणी में नाम लिखाना चाहते हैं उनको वी० पी० और डांक महसूल सहित प्रत्येक जीवनी ।=) में भेजी जावेगी।

छपे हुए जीवन चरित	निम्न लिखित छप रहे हैं
१—स्वामी विवेकानन्द	१—तुकाराम जी
२—स्वामी दयानन्द	२—छत्रपति शिवाजी
३—महात्मा गोखले	३—लोकमान्य दादाभाई नौरोजी
४—समर्थ गुरु रामदास	४—स्वामी शंकराचार्य
५—स्वामी रामतीर्थ	५—महात्मा गौतम बुद्ध
६—महाराणा प्रतापसिंह	६—महादेव गोविन्द रानाडे
७—गुरु गोविन्द सिंह	७—गुरु नानक
८—धर्मवीर हकीकत	८—भीष्म पितामह
९—नैपोलियन बोनापार्ट	९—दानवीर जे० एन० टाटा
१०—धर्मवीर पं० लेखराम जी	१०—धनकुबेर कारनेगी
११—महात्मा गान्धी	११—मि० ग्लैडस्टन
१२—ईश्वरचन्द्र विद्यासागर	१२—महात्मा टालस्टाय

मैनेजर ओंकार प्रेस, प्रयाग।

धर्मवीर पं० लेखराम

॥ ओ३म् ॥

धर्म्म-वीर पं० लेखराम

अनाश्रितः कर्म फलं,
कार्य्यं कर्म्म करोति यः।
स सन्यासी च योगी च,
न निरग्निर्न च क्रियः॥

गीता ॥ ६।१ ॥

लेखक

पं० गोकुलचन्द दीक्षित

रचयिता
"भारत संजीवनी, औषध प्रदर्शन" तथा अनुवादक
"दर्शनानन्द ग्रन्थ संग्रह" इत्यादि।

सम्पादक तथा प्रकाशक

पं० ओङ्कारनाथ वाजपेयी

पं० ओङ्कारनाथ वाजपेयी के प्रबन्ध से ओंकार प्रेस प्रयाग
में छपा।

सन् १९१६

प्रथमवार] मूल्य ।=)

भूमिका

सज्जनो जिस प्रकार अभी आपकी सेवा में संसार के ९ महापुरुषों के जीवन चरित्र अर्पण कर चुका हूं उसी प्रकार आज धर्म-वीर पं० लेखराम जी की जीवनी आपके सन्मुख उपस्थित है। इस जीवन चरित्र के पढ़ने से आपको यह मालूम होजायगा कि सच्चे धर्म्मात्मा कितने बलवान होते हैं उन्हें सांसारिक भय अपने कर्तव्य पथ से नहीं डिगा सकते। पंडित लेखराम जी ने वैदिक धर्म्म के प्रचार में अत्यन्त परिश्रम किया था। ईसाइयों और मुसलमानों को शास्त्रार्थ करने का बीड़ा उठाया था। उनके व्याख्यान और शास्त्रार्थ बड़े प्रभाव शाली और युक्ति पूर्ण होते थे। अन्त में अपने कर्तव्य को पालन करते हुये वैदिक धर्म की वेदी पर एक कृतघ्नी मुसलमान के छुरे से आत्म समर्पण कर गये। आशा है इस छोटे से जीवन चरित्र से आप उचित लाभ उठावेंगे।

निवेदक

पं० ओङ्कारनाथ वाजपेयी

[illegible]

ओ३म्

धर्मवीर लेखराम

" जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी "

नाना-दिव्यौषधि-महौषधि-विविध-निधि रत्न गर्भा, प्रकृ-
जन्मभूमि तिक सौन्दर्य कूटागार नगाधिराज हिमा-
लय की क्रोड़ में स्थितभू, लङ्काभाङ्गणांक-पटु विक्रम जाति
प्रसू होनेसे वीर-भूमि नाम से श्लाघ्य है। जो सिन्धु शतद्रु
विपाशादि पवित्र सराविनासिनी सरिता सलिल प्रवाह
से पंजाब नामसे प्रख्यात तथा अपरिमेय अन्न राशि उत्पादि-
का होने के कारण जहांकी उर्वरा भूमि कहलाती है। जिस
हिमालयकी निरन्तर हिम पिहित अंकच्छाया में, काश्मीर,
काङ्गड़ा, शिमला, जम्बू, प्रभृति अनेक सम्पन्न रमणीक
पार्वतीय प्रदेश उसके शिरोभूषण और संसार के अन्य सुन्दर
नगरों से अधिक स्पर्द्धा के योग्य विद्यमान हैं। उसी जन्म
भूमि पंजाब देश के रावल पिण्डी प्रान्त के चांदो वार नगर के
'कुहुटा' नामक ग्राम में सबसे पूर्व पं० लेखराम जी के पूर्व
पुरुष निवास करते थे।

" सजातो येन जातेन यातिवंशः समुन्नतिम् "

इनके प्रपितामहका शुभ नाम "प्रधान" बतलाया जाता है।
यह * शाण्डिल्य गोत्रिय सारस्वत ब्राह्मण थे। इनके दो एक

* पंजाब देश के यह ब्राह्मण जो पौरोहित्य नौकरी करते हैं [illegible]

वंशावली

हुये-जिसमें पहिले का नाम महता नारायन सिंह और दूसरे का श्यामसिंह था। महता नारायणसिंह के दो पुत्र थे बड़े पुत्र का नाम महता तारा सिंह और छोटे का महता गण्डामल था। महता तारासिंह के तीन पुत्र और एक पुत्री थी, सब से ज्येष्ठ पुत्र का नाम स्वनाम धन्य पं० लेखराम दूसरे, का तोताराम, तीसरे का बालकराम और पुत्री का नाम मायावी था।

"सदेशो यत्र जीवति"

वंश प्रशस्ति

पं० लेखराम जी के पितामह महता नारायण सिंह जेहलम प्रान्त में चकवाल नामक तहसील के सय्यदपुर नामी ग्राम में सर्दार कान्हसिंह मजीठिया के यहां सवारों में नौकर थे यह शरीर के बड़े सुडौल, बलिष्ट तथा दृढ़ पुरुष थे इनकी बहादुरी के कारण सर्दार कान्हसिंह इनका बड़ा मान करते थे एक बार पेशावर में सर्दार कान्हसिंह के साथ पठानों का युद्ध हुआ जिस में महता नारायण सिंह के गले में गोली का घाव आया परन्तु रणवीर नारायण सिंहने किसी प्रकार का चित्त पर मैल नआने दिया और बराबर साहस पूर्वक युद्ध करते रहे। युद्ध समाप्त होने पर जब आप पूर्ण निरोग हुये तो सर्दार बहादुर ने आप का स्वर्ण कङ्कणों से कर सन्मान किया। यह बड़े दृढ़ प्रतिज्ञ पुरुष थे जब बृटिश (आङ्गल) राज्य शासन कालमें प्रजा से हथियार लेलिये गये तो नारायण सिंह ने अपने हाथों से

लाते हैं अतः किन्हीं २ के मत से वे सूदन मुहिपाल ब्राह्मण थे और सूदन जाति विशेष का नाम है—लेखक—

हथियार हरण किये जाने को अपना अपमान समझा परन्तु देश, काल और अवस्था का विचार कर स्वयं "पुञ्छ" के राज्य में जाकर हथियारों को बेच डाला और सम्वत् १९१२ के लगभग आप कश्मीर के प्रतिष्ठित सर्दार हाड़ासिंह के यहां कोठारी के पद पर नियत हुये परन्तु अन्त को पुनः अपनी ससुराल सय्यदपुर में लौट आये और उन का देहान्त संवत् १९२५ में वहीं हुआ।

"वरमेकः कुलालम्बी, यत्र विश्रूयते पिता"

लेखराम का जन्म

* वैशाख सम्वत् १९१५ चित्रामांशुक्रवार के दिन सय्यद-पुर में पं० लेखराम जी का जन्म हुआ उस समय किसी को ज्ञात न था कि यह बालक कोई एक साधारण पुरुष न होगा। किन्तु धर्म्म पर अपने प्राणों को बलिदान करने वाला धर्म्म वीर कहलावेगा। ८ वर्ष की अवस्था तक उनका घर में ही पालन पोषण होता रहा। इस समय लोग लाड़ चाव के कारण इन्हें "लेखू" के नाम से पुकारते थे। वे अपने साथियों के साथ ऐसे २ कौतुक करते कि (किसी ने सच कहा है कि "लाल गुदड़ियों में नहीं छुपते") जिसे लोग देख कर बड़े अचम्भित होते थे।

नवाऽविद्वान् रूपद्रविणगुणयुक्तोऽपि तनयः

शिक्षा का प्रबन्ध

पंचम वर्ष के आरम्भ में इनके माता पिता ने ग्राम की प्रथानुसार देहाती मदर्से में फारसी पढ़ने के लिये दे दिया। उस समय पंजाब में उर्दू का सार्वभौम साम्राज्य था अतः शिक्षारम्भ काल में फारसी लिपि के स्थान

* कुछ लोग चैत्र में बतलाते हैं।

वंशावली

हुये-जिसमें पहिले का नाम महता नारायन सिंह और दूसरे का श्यामसिंह था। महता नारायणसिंह के दो पुत्र थे बड़े पुत्र का नाम महता तारा सिंह और छोटे का महता गण्डामल था। महता तारासिंह के तीन पुत्र और एक पुत्री थी, सब से ज्येष्ठ पुत्र का नाम स्वनाम धन्य पं० लेखराम दूसरे, का तोताराम, तीसरे का बालकराम और पुत्री का नाम मायावी था।

"सदेशो यत्र जीवति"

वंश प्रशस्ति

पं० लेखराम जी के पितामह महता नारायण सिंह जेहलम प्रान्त में चकवाल नामक तहसील के सय्यदपुर नामी ग्राम में सर्दार कान्हसिंह मजीठिया के यहां सवारों में नौकर थे यह शरीर के बड़े सुडौल, बलिष्ट तथा दृढ़ पुरुष थे इनकी बहादुरी के कारण सर्दार कान्हसिंह इनका बड़ा मान करते थे एक बार पेशावर में सर्दार कान्हसिंह के साथ पठानों का युद्ध हुआ जिस में महता नारायण सिंह के गले में गोली का घाव आया परन्तु रणवीर नारायण सिंहने किसी प्रकार का चित्त पर मैल नआने दिया और बराबर साहस पूर्वक युद्ध करते रहे। युद्ध समाप्त होने पर जब आप पूर्ण निरोग हुये तो सर्दार बहादुर ने आप को स्वर्ण कङ्कणों से कर सन्मान किया। यह बड़े दृढ़ प्रतिज्ञ पुरुष थे जब बृटिश (आङ्गल) राज्य शासन कालमें प्रजा से हथियार लेलिये गये तो नारायण सिंह ने अपने हाथों से

लाते हैं अतः किन्हीं २ के मत से वे सूदन मुहिपाल ब्राह्मण थे और सूदन जाति विशेष का नाम है—लेखक—

हथियार हरण किये जाने को अपना अपमान समझा परन्तु देश, काल और अवस्था का विचार कर स्वयं "पुन्छ" के राज्य में जाकर हथियारों को बेच डाला और सम्वत् १९१२ के लगभग आप कश्मीर के प्रतिष्ठित सर्दार हाड़ासिंह के यहां कोठारी के पद पर नियत हुये परन्तु अन्त को पुनः अपनी ससुराल सय्यदपुर में लौट आये और उन का देहान्त संवत् १९२५ में वहीं हुआ।

" वरमेकः कुलालम्बी, यत्र विश्रूयतेपिता "

लेखराम का जन्म

* वैशाख सम्वत् १९१५ विक्रमी शुक्रवार के दिन सय्यदपुर में पं० लेखराम जी का जन्म हुआ उस समय किसी को ज्ञात न था कि यह बालक कोई एक साधारण पुरुष न होगा। किन्तु धर्म्म पर अपने प्राणों को बलिदान करने वाला धर्म्म वीर कहलावेगा। ४ वर्ष की अवस्था तक उनका घर में ही पालन पोषण होता रहा। इस समय लोग बड़े लाड़ चाव के कारण इन्हें "लेखू" के नाम से पुकारते थे। वे अपने साथियों के साथ ऐसे २ कौतुक करते कि (किसी ने सच कहा है कि "लाल गुदड़ियों में नहीं छुपते") जिसे अन्य पुरुष देख कर बड़े अचम्भित होते थे।

नवाऽविद्वान् रूपद्रविणगण युक्तोऽपितनयः

शिक्षा का प्रबन्ध

पंचम वर्ष के आरम्भ में इनके माता पिता ने ग्राम की प्रथानुसार देहाती मदर्से में फ़ारसी पढ़ने के लिये बैठा दिया। उस समय पंजाब में उर्दू का सार्वभौम साम्राज्य था अतः अक्षरारम्भ काल में नागरीलिपि के स्थान

---

* कुछ पुरुष चैत्र में बतलाते हैं।

में हमारे चरित्र नायक को उर्दू लिपि ही सीखनी पड़ी। उस समय पाठशाला के मुख्याध्यापक मुं० तुलसीदास जी थे। इनके स्वतंत्र विचार तथा प्राचीन ढर्रे के वर्त्ताव का इनके चित्त पर बड़ा प्रभाव पड़ा। वह अपने सपाहियों में सब से चतुर और तीक्ष्ण बुद्धि के थे। मुं० तुलसीदास जी के अध्यापन काल में इनकी शिक्षा की पूर्ण जड़ जमगई जिसके कारण यह फ़ारसी के एक अच्छे विद्वान समझेजाने लगे।

आकेर पद्मरागाणां जन्म कांचमणेः कुतः

पैत्रिक संस्कारों का प्रभाव

सम्वत् १६२६ में जब लेखराम जी की आयु ११ वर्ष की थी। उनके चचा महता गण्डामल जी पेशावर पुलिस में किसी स्थाई स्थान पर नियत हो गये और उन्होंने लेखराम जी को अपने पास बुला लिया। यहां पर इन्हें बहुत से अध्यापकों से पढ़ना पड़ा परन्तु इनके चचा ने इन्हें स्थाई रूप से एक मुसलमान (यवन) अध्यापक के पास पढ़ने को भेज दिया। एक दिन मौलवी साहब ने इन्हें पानी पीने की छुट्टी नहीं दी और कहा कि यहीं पीलो—वस्तुतः मुसलमान अध्यापक यतः ततः बाल्यावस्था के बालकों पर यावनी मत प्रलेप करने का अधिक प्रयत्न करते हैं परन्तु कुशाग्रबुद्धि पं० लेखराम जी के हृदय पर प्रभाव पड़ना कठिन था उन्होंने शीघ्र ही मने कर दिया कि "मैं नहीं पिऊंगा" और यावत संध्या समय घर को गये तावत् प्यासे ही रहे। जहां इनके चित्त में हठ था वहीं उन्हें अपने धर्म पर बड़ी रुचि थी। एक दिन अपने चाचा को एकादशी का व्रत रखते देख इन्होंने भी अपने चित्त में व्रत रखने का संकल्प किया और कठिन भूख प्यास सहन करते हुये व्रती होने

पैतृक सम्पति थे। इनका साधारण स्वभाव इनके आर्य होने का परिचय देता था। इनके पुरुषार्थ और धैर्य तथा औदार्य भावों के ही कारण २५ वर्ष से भी न्यून अवस्था में पेशावर प्रान्त के उच्चाधिकारियों ने उसी प्रान्त की ऐतिहासिक व्यवस्था का कार्य इन्हें दिया था जिसमें उनकी बुद्धि वैलक्षण्य की बड़ी प्रशंसा हुई।

"गम्यतामर्थ लाभाय क्षेमाय विजयायच"

आजीविका प्रबन्ध

अभी बाल्यावस्था धनच्छाया की भांति ढलही पाई था, युवावस्था का मन्द २ गति से पदारोपण हो ही रहा था कि लेखराम के चचा ने पेशावर पुलिस के सुपरिन्टेन्डेन्ट क्रस्टी साहब से उनकी आजीविका के लिये कहा—निदान सम्वत् १६३२ विक्रमी पौष मास तद्नुसार २१ दिसम्बर सन् १८७५ ई० के दिन जब कि इनकी अवस्था केवल १७ वर्ष की थी उक्त साहब बहादुर ने पुलिस में भरती किये जाने की आज्ञा प्रदान की और इन्होंने पुलिस का सब काम बड़ी शीघ्रता से सीख लिया इसके अनन्तर सन् १८७६ ई० में नकशा नवीस सारजन्ट का काम स्थाईरूप से करने लगे।

"चन्द्र चन्दनयोर्मध्ये शीतला साधु संगतिः"

स्वतन्त्रता और संगति का प्रभाव

लेखराम की अवस्था जब कि १६ वर्ष की थी तो एक धार्मिक सिक्ख सिपाही के सत्सङ्ग से उन्हें परमात्मा की उपासना का अभ्यास होगया था। प्रातःकाल स्नान करके समाधि लगाकर बैठ जाते और गुरुमुखी अक्षरों में गीता का पाठ किया करते थे। यह बहुधा

रात्रि को समाधि लगाये रहते और कई बार ऐसा हुआ कि ध्यान में निमग्न होने के कारण खाट पर से पृथिवी पर गिर पड़ते थे। गीता पढ़ने का यह परिणाम हुआ कि यह कृष्ण भगवान के अनन्य भक्त होगये और रासलीला देखनेकी अभिरुचि उत्पन्न हुई। टीके लगा २ कर "श्रीकृष्ण श्रीकृष्ण" का ही जाप करते थे। कृष्ण भक्ति में प्रेम बढ़नेके कारण नौकरी छोड़कर वृन्दावन धाम सेवन को उद्यत होगये। इन सब विचारों से पूर्व आप शिवजी के परम भक्त थे। रुग्नावस्था में भी मठों में जाते थे। परन्तु आरम्भिक ईश्वराराधन के संस्कारों के कारण इनके चित्त में सम्वत् १९३८ में एक वैराग्यकी लहर उठी। इस समय इनके विचार सर्वथा नवीन वेदान्तियों के से थे। सांसारिक भोगों को मिथ्या कहकर भोग साधन की सामग्री संचय करने के सर्वथा विरुद्ध थे। वेदान्तके सिद्धांतों की छेड़ छाड़ ही उनका मनोरञ्जन था।

न गृहम् गृहिणी बिना गृहणी गृहमुच्यते

विवाहका प्रबन्ध और उससे इनकार

सन् १८८० ई० में जब कि इनकी अवस्था २२ वर्ष की थी इनके माता पिता ने विवाह के निमित्त बहुत कुछ समझाया बुझाया और इसके अतिरिक्त इनके चचा गण्डामल जी ने भी बहुत कुछ कहा कि भाई विना गृहस्थी के मनुष्य आयु भली प्रकार नहीं बिता सकता। परन्तु लेखराम जी ने सब सुनी अनसुनी कर नम्रता तथा समादर पूर्वक मने कर दिया—वैराग्य से प्रेरित हरिभक्त ने जो उत्तर दिया था वह उल्लेखनीय है। लेखराम जी ने उदाहरण की रीति से कहा कि "प्यारे चाचाजी एक राजा के पास कुछ नट कौतुक कला दिखलाने को आये

राजा ने कहा कि भाई नटो ? किसी योगी का अभिनय करो। भंडार से तुम्हें ५००) रु० पारितोषिक का मिलेगा। सुनते ही एक नट ने योगी का रूप धरकर दिखा दिया परन्तु जिस समय समाधि छोड़ी शीघ्र ही पारतोषिकके लिये हाथ पसारा यह कहावत सुना कर कि "स्वयमसिद्ध कथं परान्न साधयेत्" मैं गृहस्थाश्रम में फंसकर अपने अभीष्ट कार्य को भली भांति सम्पादन न कर सकूंगा" अन्तमें इनके चित्त की दृढ़ताई देख कर सबको मानना पड़ा—वाकदान हो जाने के कारण इनके माता पितादि ने उस कन्या का विवाह अपने छोटे पुत्रके साथ कर लिया।

धर्मानुगो गच्छति जीव एक:

धर्म कार्यों में अनुराग वृद्धि

इन्हीं दिनों अर्थात् १८८० ई० में काशी नगर से एक सटीक गीता मँगवाकर उस का पाठ किया करते और मुन्शी कन्हैयालाल अलखधारी तथा मु० इन्द्रमणि की बनाई हुई पुस्तकोंको भी प्रेम से पढ़ते थे। एक दिन महाशय कृपाराम जी ने उन्हें मुहम्मदी मत के ग्रन्थों को पढ़ता देखकर पूछा कि आप यवन मत-सम्बन्धी पुस्तकें अधिक क्यों देखते हैं। क्या यह मत आप को श्रेय विदित होता है। वहां क्या विलम्ब था पं० जी ने उत्तर में कहा कि निस्सन्देह यदि दश घड़े रक्खे हों तो विना परीक्षा अथवा पड़ताल के खोटे अथवा खरे होने का क्या प्रमाण ? बस यही दशा मतों की है कि विना सत्यान्दोलन अथवा परीक्षा के पता लगाना कठिन है कि कौन मत सच्चा और कौन मत कच्चा है! थोड़े ही दिनों में पं० जी यवन मत की कड़ी समीक्षा करने लगे इस बात की चर्चा सब पुलिस में

फैल गई और जब क्रिस्टी साहिब पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट को इस बात का पता चला तो बहुधा वह अपने डिपुटी रीडर मौ० वज़ीर अली के साथ इनका यवन मत पर शास्त्रार्थ देखा करते थे और प्रायः सदैव पं० जी की ही बातोंका अनुमोदन करते थे। इसी अवसर में एक दिन "विद्या प्रकाश" नामक पत्र के द्वारा ज्ञात हुआ कि एक संन्यासी स्वामी दयानन्दजी सरस्वती नामक सत्य धर्म का उपदेश कर रहे हैं और वह मत सम्बन्धी शङ्काओं को विद्या और बुद्धि द्वारा सिद्ध और निवारण करते हैं। शीघ्र ही इच्छा उत्पन्न हुई और उनको एक पत्र लिखा और स्वामी जी की सब पुस्तकों को मगाया साथ ही उपरोक्त पत्र का मँगवाना आरम्भ कर दिया—फिर क्या था पुस्तकें पढ़ने और सत्य प्रामाणिक सूचनाओं से अन्धकार युक्त मन में उजाला आगया। और सम्पूर्ण सत्या-सत्य के विवेचन से मिथ्या बातें किनारा करगईं। और सत्य-

पेशावर में आर्य्य समाज।

वैदिक पथ दिखलाई देने लगा—अन्तको वैदिक धर्म्म को धन्यवाद देते हुये अप्रेल सन १८८१ ई० अर्थात् सम्वत् ११३७ वि० में पेशावर में आर्य-समाज स्थापन की और पूर्ण उत्साह से वैदिक धर्म परिचर्य्या करने लगे—इन दिनों इन्हें धार्म्मिक धुनके सामने सब सर्कारी काम भी हेठे तथा फीके लगते थे।

सद्भिः सह कुर्त्तव्यः सतां सङ्गोहि भेपजम्

लेखराम जैसे दृढ़ी मनुष्य के चित्त की केवल पुस्तकों के

दयानन्द दर्शना-ऽकांक्षा।

पढ़ने से शंकाओं की निवृत्ति होनी कठिन थी उसकी महत्वाकांक्षा उस के मन के कौतूहलों को दुवाला कररही थी परन्तु "यः

पराधीनवृतिः" अर्थात् नौकरी के कारण मन की लहर मन में ही समा जाती थी—निदान एक दिन उन्होंने अपने जी में ठान लिया कि वैदिक धर्म्माचार्य्य, सत्सम्प्रदायाचार्य्य आर्य समाज के प्रवर्त्तक ऋषि दयानन्द के दर्शन कर संशयों की अवश्य निवृत्ति करनी चाहिये—अतः उनका अशीर्वाद लेने के लिये साढ़े चार वर्ष की नौकरी के पश्चात् एक मास की पहिली छुट्टी ता० ५ मई सन् १८८१ को लेकर ११ मई १८८१ में अजमेर की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में मेरठ, अमृतसर इत्यादि बड़ी समाजों को देखते हुये ता० १६ मई की रात्रि को अजमेर नगर में पहुंच कर स्टेशनवाली सराय में डेरा जमाया। और प्रातःकाल बड़े हर्ष के साथ सेठ फ़तहमल की वाटिका में पहुंच कर ऋषि दयानन्द के प्रथम तथा अन्तिम बार दर्शन किये-स्वामी जी के जीवन चरित्र में पं० लेखराम जी लिखते हैं कि स्वामी जी महाराज के दर्शनों से मेरे सब कष्ट दूर हो गये और चित्त को बड़ा हर्ष उत्पन्न हुआ और उनके सदुपदेश से सब शंकाओं की निवृति होगई। जयपुर में पं० लेखराम जी से एकबंगवासी ने प्रश्न किया कि आकाश भी व्यापक है और ब्रह्म भी फिर दो व्यापक एकत्र कैसे रह सकते हैं" इसका उत्तर उनसे न बन आया और यही शंका उन्होंने स्वामी जी से पूछ कर निम्न लिखित उदाहरण से निवृति करली—स्वा० दयानन्द जी ने एक पत्थर उठाकर कहा कि "इसमें अग्नि व्यापक है वा नहीं" उत्तर में कहा था कि "व्यापक है" फिर पूछा कि "मिट्टी" कहा कि "व्यापक है" फिर पूछा "परमात्मा ?" उत्तर में निवेदन किया कि "वह भी व्यापक है, तब स्वामी जी ने लेखराम

दर्शन प्राप्ति।

शंका समाधि।

जी से कहा कि तुमने देखा? कितने पदार्थ हैं परन्तु सब इसमें व्यापक हैं वस्तुतः यह बात है कि जो वस्तु जिससे सूक्ष्म होती है वही उसमें व्यापक हो सकती है। ब्रह्म यतः सूक्ष्माति सूक्ष्म है अतएव सर्वव्यापक है इस उत्तर से लेखराम जी की शंका दूर हो गई। इसके अनन्तर स्वामी जी ने कहा कि यदि और कुछ शंकाएं तुम्हारे चित्त में हों तो उनको निवारण कर लो—लेखराम जी ने पुनः कुछ प्रश्न किये जो नीचे लिखे जाते हैं।

प्रश्न—जीव और ब्रह्म का भेद कोई वेदोक्त प्रमाण बताइये?

उत्तर—स्वामी जी ने कहा कि यजुर्वेद का चालीसवां अध्याय जीव और ब्रह्म के भेद को प्रतिपादन करता है। इस अध्याय को "ईशोपनिषत्" भी कहते हैं।

प्रश्न—अन्य मतावलम्बियों का प्रायश्चित्त करना चाहिये वा नहीं?

उत्तर—अवश्य शुद्ध करना चाहिये—प्रायश्चित्तविधि शास्त्रानुकूल है।

प्रश्न—बिजुली क्या वस्तु है और कैसे उत्पन्न होती है?

उत्तर—विद्युत् प्रत्येक स्थानों में है और संघर्षण (रगड़) से उत्पन्न होती है। बादलों की बिजुली बादलों की रगड़ से उत्पन्न होती है।

इत्यादि शंका समाधान के अनन्तर स्वामी जी ने आदेश दिया कि २५ वर्ष की अवस्था से पूर्व विवाह मत करना। इसके पश्चात् ४ मई सन् १८८१ ई० को दोपहर के समय जब स्वामी जी से विदा होने के लिये गये तो स्वामी जी से कोई वस्तु चिन्ह के लिये मांगी तो स्वामी जी ने एक पुस्तक

अष्टाध्यायी की उठाकर दे दी--जो अब तक पेशावर आर्य-समाज में विद्यमान है इसके अनन्तर लेखराम जी ने स्वामी जी के चरणों को को स्पर्श किया और "नमस्ते" करके घर की ओर सिधारे। अजमेर से लौटते ही पेशावर आर्य-समाज से उर्दू का मासिक पत्र धर्मोपदेश नामक निकालने का प्रबन्ध किया और सम्पादन का भार भी स्वयं अपने हाथों में लिया—आर्य-समाज के प्रचार तथा उन्नति के लिये बड़ा श्रम उठाया यहां तक कि नौकरी के दिनों में ही सत्यवक्ता प्रसिद्ध हो गये और मत सम्बन्धी विषयों में निर्भीक निष्पक्ष वार्तालाप करते थे। इसको अनन्तर जन साधारण में निडर होकर मौखिक धर्मोपदेश भी करते थे मदिरा को रोकने के लिये जब पेशावर में सब से प्रथम "टेम्परेन्स सोसाइटी" (मद्य निषेध परिषद) का प्रथम वार्षिकोत्सव हुआ तो उसमें सम्पूर्ण लोकल अफ़सर और फ़ौजी अफसर उपस्थित थे पं० लेखराम ने एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया जिस से सब श्रोतागण अचम्भित हुये और इनकी वक्तृत्व शक्ति की प्रशंसा करने लगे इसी कारण पक्षपाती अफसरों की इनसे कभी न बनती थी उस व्याख्यान को यह प्रभाव हुआ कि एक फ़ौजी कप्तान ने व्याख्यान का समर्थन किया और कहा कि मैंने भी अपनी सेना में मद्यपान इन्हीं दोषों के कारण बन्द करा दिया है।

मासिक पत्र का प्रबन्ध।

मद्यपान निषेध।

"उपर्युः नीचतर्गच्छात दशाचक्र क्रमेण"

सन् १८८३ ई० के आरम्भ में मिस्टर क्रिस्टी का तबादिला हो गया और नये सुपरिन्टेन्डेन्ट के आने पर और भी

बहुत सी तबदीलियां (परिवर्तन) हुईं इसी चक्र में हमारे चरित्र नायक का भी तबादिला "सुआवी" नामक स्थान को हो गया। वहां जाकर भी धर्म्म प्रचार और पत्र का सम्पादन बड़े प्रेम से करते रहे। परन्तु किसी आर्थिक प्रबन्ध को न देखकर पेशावर आर्य-समाज ने उस पत्र को बन्द कर दिया। यह देखकर पं० लेखराम जी ने एक पत्र १८ मार्च सन् १८८४ में अपने चचा के लिये लिखा जिससे विदित होता है कि पं० जी की न्यून आय होने पर भी वह आर्थिक सहायता देने को उद्यत थे।

'सुआवी" के थाने में पहुंच कर भी उनका महम्मदियों के साथ शास्त्रार्थ हुआ करता था। एक दिन पुलिस के इन्सपेक्टर ने जो थाने के निरीक्षण (मुलाहिज़े) करने आया था लेखराम से मुबाहिसा (शास्त्रार्थ) करने लग गया। पं० लेखराम जी कब डरनेवाले थे। इन्होंने बड़े मुंह तोड़ उत्तर दिये परन्तु उस समय तो उसने कुछ नहीं कहा। दूसरे दिन आज्ञा भंग की रिपोर्ट कर दी जिसके कारण ता० १२ जून १८८३ को सदर से आज्ञा मिली कि "लेखराम का छः मास के लिये दर्जा तोड़ दिया जावे और वह थाना "कालूखां" में बदला जावे। इस स्थान में रहते हुये लेखराम का महम्मदियों से अधिक द्वेष बढ़ गया था। इस कारण काम से अवकाश भी बहुधा कम मिलता था। और "सत्योपदेश" के जीवन का सारा भार पं० जी के ही ऊपर था इसके अतिरिक्त पत्र की आर्थिक दशा में कोई हाथ बँटाने वाला भी न था, इत्यादि कारणों से सत्योपदेश नामक पत्र भी घाटा होने के कारण पेशावर आर्यसमाज को बन्द करना पड़ा। इधर थाना कालू

खां में पहुंचने से पूर्व यहां के महम्मदियों में वड़ी धूम मचगई इसके अतिरिक्त दोनों पत्रों के वन्द हो जाने से पं० जी ने पुस्तकों की—रचना का कार्य करना आरम्भ किया और नवेद् वेवग़ान नामक पुस्तक वनाई ।

स्वधर्म्मनिधनं श्रेयः पर धर्म्म भयापहः

कुछ दिनों पश्चात् एक तड़ित सम्वाद सुनने में आया कि आजमगढ़ निवासी चौधरी घासीराम मुसलमान मत स्वीकार करने वाले हैं । इस सम्वाद से उनके चित्त पर वड़ा क्लेश हुआ और शीघ्र ही छुट्टी ली और वहां जाकर उसको ऐसे प्रभाव शाली उपदेश किये कि वह शीघ्र ही सत्यमार्ग पर आरुढ़ हो गया । परन्तु छुट्टी न मिलने के कारण इन्होंने त्याग पत्र दे दिया । परन्तु लेखराम जी अपने कार्य में चतुर थे अतः पुलिस अफसर ने शीघ्र ही त्याग पत्र लौटा कर छुट्टी स्वीकार कर ली ।

वेदोहि अखिलो धर्म्मः अधर्मस्तद्विपर्ययः

इसी वर्ष कश्मीर की राजधानी जम्बू नगर में मियां नूरुद्दीन खां ने जोकि पेशावर प्रान्त के भेरा नामक नगर के निवासी थे और महाराज कश्मीर के हकीम थे एक ठाकुर दास नामी पुरुष को यवन मत ग्रहण करने पर आरुढ़ किया। ज्योंही पं० लेखराम जी ने यह समाचार सुने तो ३ या ४ वार जम्बू जाकर उससे वात चीत की और अन्त को यवन मत से हटा कर वैदिक धर्म्म पर विश्वास दिलाया। इसी बीच में पं० धर्मचन्द्र जी प्रधान आर्य-समाज अमृतसर के ज्येष्ट पुत्र पं० नारायण कोल जी (जज अदालत सद्र जम्बू) से मिलाप किया ।

स्वातंत्र्यम् यच्छरीरस्य मूढ़ैस्तदपि हारितम्

कश्मीर से लौटने पर पं० लेखराम जी के हृदय में नौकरी से *अकस्मात घृणा उत्पन्न हो गई। उन्हों-ने अन्त को गम्भीर परामर्श से यहि निश्चय किया कि—

नौकरी से त्याग पत्र

वृत्यर्थनाति चेष्टेत साहि धात्रैवनिर्म्मिता
गर्भ्भादुत्पतिते जन्तौ मातुः प्रस्रवतःस्तनौ

अर्थात्-जीविका के लिये अत्यन्त चेष्टा नहीं करनी चाहिये। क्योंकि ईश्वर ने उसका प्रबन्ध तो पूर्व से ही किया हुआ है। बालक के गर्भ से निकलते ही माता के दोनों स्तनों से दूध निकलने लगता है। अतः अब इस नीति के वाक्य का अनुसरण करना चाहिये "हीन सेवा न कर्तव्या कर्त्तव्यौ मह-दाश्रयः" अर्थात् हीन सेवा के स्थान में बड़े का आश्रय करना चाहिये यह दृढ़ विचार कर नौकरी से त्याग पत्र दे दिया। यद्यपि इनके त्याग पत्र देने से स्थानिक हाकिम ने उसे लौटा लेने को कहा और इसी कारण उसने स्वीकार करने में देरी की परन्तु दृढ़ प्रतिज्ञ पं० लेखराम की सत्यधर्म्म की अन्वेषक आत्मा पर इसका कुछ प्रभाव न पड़ा उनकी आत्मा से वार २ यही गूंज उठती थी कि "न भवति पुनरुक्तं भाषितम् सज्ज-

* पेशावर की पुलिसआज्ञा पुस्तक से उन दो आज्ञाओं की प्रति से पता लगता है कि वहां के मुसलमान सब इन्सपेक्टर और सार्जेन्ट लेखराम का १ दर्जा किसी हज़रतशाह चौकीदार के मुकदमे में असावधानी के कारण तोड़ दिया गया था। यद्यपि यह आज्ञा ६ जून १८८४ ई० को निकली थी तथापि लेखराम सार्जेन्ट को इससे पूर्व ही पुलिस दफ्तर में बदल लिया गया था और असिस्टेन्ट मेजिस्ट्रेट की पेशी में रक्खा गया था--उद्धृत

नानाम्" अर्थात् सज्जन पुरुष अपने कहे हुये से फिर नहीं हटते। अन्त को जब त्याग पत्र की स्वीकारी में विलम्ब जान पड़ा तो ता० २४ जुलाई सन् १८८४ ई० को लेखराम जी ने स्वयं अपने हाथों से हुक्म लिखकर उस पर मि० निकलसन के हस्ताक्षर करा लिये और इस प्रकार अपने ही हाथों से मनुष्यों के दासत्व की श्रृङ्खला को तोड़ सदा के लिये मुक्त हो गये। दासत्व से मुक्त होने पर सब से पहिले रावलपिण्डी के वार्षिकोत्सव पर पहुंचे वहां इनका लेखबद्ध व्याख्यान हुआ।
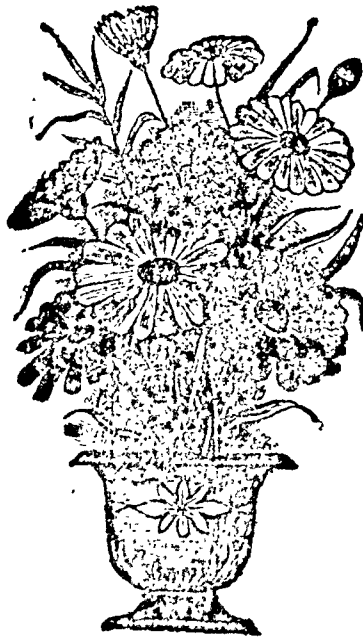
लेखबद्ध व्याख्यान

आर्य धर्म के सार्वभौम होने के प्रमाण और उसकी भविष्यत उन्नति के उपाय

प्रिय श्रोतागण ? आज कैसा शुभ दिन है मुझे आप के सन्मुख कुछ निवेदन करने का अवकाश मिला है। मैं केवल दो बातों के निमित्त अर्थात् पहिले आर्य-धर्म्म का सारभौम होना और उसकी वर्तमान दशा दूसरे उसकी उन्नति के संकेत पर आप सज्जनों के सन्मुख कुछ वर्णन करूंगा।

महाशय गण ? जिस प्रकार एकही परमात्मा जगत का कर्ता है उसी प्रकार एक सत्य धर्म्म भी सम्पूर्ण जगत के लिये एक ही होना चाहिये। इस स्थान पर यद्यपि एक प्रश्न उत्पन्न होता है कि वह धर्म्म कौनसा है ? क्या बौद्ध, जैन, यवन, ब्राह्म अथवा ईसाई मत है या अन्य इत्यादि—(परहित चिन्तन) सब से पूर्व बौद्ध मत की ओर आइये—यद्यपि वह हमें इख़लाक़ी जीवन की उच्च शिक्षा देता है परन्तु हम इस कहावत का आश्रय लेते हुए कि "मूढ़ वैद्य प्राणं समाचरेत्" अर्थात् उसकी शिक्षा हमारा भविष्यत उन्नति के लिये नितान्त अधूरी है। दो एक रूखे सूखे प्रमाणों के अतिरिक्त कुछ ज्ञान उपार्जन नहीं कर सकते। जिससे न हम ईश्वर ही को जान सकते हैं न जीवात्मा की उन्नति कर सकते हैं किन्तु हमारी बुद्धि को एक सत्य के सरलमार्ग से हटाकर कि जिस ज्ञान से हम परमात्मा को समझ सकते हैं अन्धकार में डाल देता है जिससे शान्ति का प्राप्त करना नितान्त असम्भव है इससे

सिद्ध हुआ कि यह मत संसार के लिये नहीं हो सकता। दूसरा जैन धर्म्म है इनका केवल एक कथन है कि जय जिनेन्द्र देव की। इसी शब्द से इनकी उत्पत्ति हो सकती है परन्तु इनके यहां एक अति उत्तम बात है कि इन पुरुषों में जीव हिंसा और मांस भक्षण से बड़ी घृणा है इसके अतिरिक्त एक बड़ा दोष भी है कि परमात्मा को नहीं मानते। अर्थात् नास्तिक हैं। दश तीर्थङ्करों को ही ईश्वर मान रक्खा है और सृष्टि को विना करता के मानते हैं। जब कर्त्ता ही नहीं और न कोई फल दाता है तो फिर सज़ा व जज़ा (बन्ध और मोक्ष) कहां मानो उनके यहां पाप करना कोई अधर्म्म ही नहीं ऐसा धर्म्म सार्वभौम धर्म्म कैसे हो सकता है। अब तीसरी संख्या में यवन मत है। उनके इलहाम (ईश्वर वाक्य) अर्थात् क़ुरान में वर्णित हैं यथा "तहक़ीक असली क़ुरान किसी पोशीदा किताब में है उसको नहीं जानता कोई दिल मगर पाक होवे वह किताब जो उतरी हुई है पर्वर्दिगार आलम से "मगर आज तक कोई मुफ़स्सर (टीकाकार) स्पष्ट रीति से यह प्रमाणित नहीं कर सका कि वह पुस्तक कौन है और कहां है। इसके अतिरिक्त मुक्ति के विषय में इससे बढ़कर और कोई आयत उनके यहां नहीं है कि " ख़ुश खबरी दी उनको जो ईमान लावें और जिन्होंने अच्छे काम किये इस बात के कि उनके पास बाग़ है और जारी हैं उनके नीचे नहरें जिस समय दी जावेगी इस जगह से रोजी किस्म में वह वैसे कहेंगे यह वही है जो हमने दिया था आगे इससे और लाई जावेगी उनके पास वह जगह रोज़ी मानिन्द एक दूसरे के और उनके वास्ते इस जगह औरात पाकी हूरें हैं और

यह हमेशा इस जगह रहेंगी। महाशयो ! यवन मतानुयायियों ने ईश्वर की सृष्टि को गाजर मूली की भांति कुतरा है। और ईश्वर तथा ईश्वर के परोपकार को बहुधा मक्का निवासियों पर ही मुनहसिर (निर्भर) रक्खा है अतः यह मत भी संसार भर के लिये एकसा नहीं हो सकता। चौथी संख्या में ईसाई मत है। मैं (लेखराम) कह सकता हूं कि योरोप अफ्रिका तथा अमेरिका एवं एशिया के बहुत से स्थानों में अङ्ग्रेज़ों का राज्य है। और इन्हीं देशों में इस मत का कुछ २ प्रचार भी है परन्तु यह मत सम्पूर्ण जगत के लिये नहीं हो सकता अंग्रेज़ों ने जितनी उन्नति की है वह व्यापार से और व्यापार से धन प्राप्त हुआ है धन से संघशक्ति और संघशक्ति से राज्य को प्राप्त करते हुये राज्य सम्बन्ध की कार्यवाही में सब से बढ़कर उन्नति को प्राप्त किया परन्तु धर्म सम्बन्धी बातों में अधूरे और उसके सम्बन्धी सिद्धान्तों में कोरे हैं। बाइबिल के प्रथम पृष्ठ पर ही दृष्टि दीजिये जहां से ज्ञात होता है कि मसीह से ४००४ वर्ष पूर्व ६ दिन में संसार को रचकर आराम किया और परमेश्वर की आत्मा पानियों पर तैरती थी। प्रिय श्रोता गणो ! इनके गणित से (४००४ + १८८४)=५८८८ वर्ष अद्यावधि पृथिवी को बने हुये हुये-- साथ ही आप टुक श्रीकृष्णचन्द्र, हरिश्चन्द्र, राजानल, तथा महाराजा रामचन्द्र जी के इतिहास की ओर ध्यान दें— परन्तु वह तो भला हमारे इतिहास ग्रन्थ हैं परन्तु यथार्थ में अंग्रेज़ी इतिहासों को भी देखिये मिस्टर ज्यालू साहिब ने सत्यता को न छुपाकर स्पष्ट अक्षरों में कह दिया कि "एक लक्ष वर्ष में एक हीरा उत्पन्न होता है" तो हे श्रोताओ !

ईसाई लोग अभी तक अपने मत सम्बन्धी इतिहास के ऊपर विश्वास रख सकते हैं।

बाइबिल के चौथे अध्याय की ओर आइये। ईश्वर शिक्षा आपके सन्मुख वर्णन करताहूं। "उसके अनन्तर जो मैंने निगाह की तो देखा कि आकाश पर एक दरवाजा खुलाहै। और पहिला शब्द जो सुना वह नरसिङ्गो का था। जिसने मुझसे कहा कि इधर उधर मैं तुझसे कुछ कौतुक दिखला ऊंगा जो इसके अनन्तर अवश्य होगा तब वहीं मैं रूह (जीवात्मा) में सम्मिलित हो गया फिर क्या देखताहूं कि आकाश पर एक सिंहासन धरा है और उसपर कोई बैठाहै और इस पर जो बैठा था वह देखने में यशव और अलीक (घनश्यामा) के समान था और एक धनक (धनुष) जो देखने में जमुर्रद के (स्वर्ण कान्ति) समान था उस सिंहासन के चारों ओर था और २४ अन्य सिंहासन भी उसके आस पास थे। प्रत्येक सिंहासन पर एक२ वृद्ध पुरुष श्वेत वस्त्र धारण किये हुये बैठा हुआ था। और एक२ सोने का मुकुट प्रत्येक के सिरपर था। विजली और कठोर शब्द उन सिंहासनों से निकलते थे और दीपक उन सिंहासनों के समीप सोभायमान थे, यह ईश्वर की सात रूहें हैं और उन बड़े सिंहासन के आगे एक शीशे का समुद्र बिल्लौर के समान था सिंहासन के बीचो बीच और चारों ओर चार जीव धारी थे जो कानों से वहिरे थे। प्रथम जीवधारी सिंह के समान और तीसरा मनुष्य के समान और चौथा उकाब पक्षी के समान था और प्रत्येक के छह२ सिर थे और चारों ओर भीतर बाहर आंखें ही आंखें दीख पड़ती थीं और वह निश दिन नहीं ठहराते थे परन्तु कहते रहते कि

ईश्वर पवित्र और शक्तिमान था और है और होने वाला है और जब से जीवधारी उसके जो सिंहासन पर बैठा है और जो आदि अन्त तक जीता है। अत्यन्त उपासना करते हैं तब वह २४ वृद्ध पुरुष उस पुरुषके सामने जो सिंहासनपर बैठा है गिर पड़ते हैं और उसकी पूजा करतेहैं। और अपने मुकुट यह करते हुये उस सिंहासन के सन्मुख डाल देते हैं कि हे ईश्वर तूही सर्वशक्तिमान् है। तूने ही सम्पूर्ण संसार के पदार्थों को रचा है। और वह तेरी ही शक्तिसे अद्यावधि उपस्थित हैं। प्रिय महाशयो ! जब इनका ईश्वर ही परिमिति है और यशव और अक़ीक के चेहरेवाला सिंहासन पर बैठा है तो फिर ईसाई धर्म्म सार्वमौम धर्म्म कैसे हो सक्ता है। और जितनी पुस्तकें बाइबिल के प्रत्युत्तर में बनी हैं उनका उत्तर किसी पादरी ने अभीतक नहीं दिया। हमें हज़रत लूत और मूसाके जीवन चरित्र पढ़कर आश्चर्य होता है मेरे विचार से बाइबिल की शंका निवारण होना कठिन है अब शेष रहे ब्रह्म-समाजी यह लोग इन बातों में न्यून ही नहीं किन्तु इन्हों ने अन्य पुरुषों से मांग२ कर एक समुदाय बना लिया है सम्पूर्ण मनुष्य इस गिरोह में केवल अंग्रेज़ी भाषा के विद्वान हैं उनमें बहुधा ऐसे भी हैं जो भली प्रकार उपासना भी नहीं कर सक्ते न अपना कर्तव्य जीवन ही बना सकते हैं प्रत्युत इसकी एक विशेष सुन्दर बात यह और है कि प्रत्येक समय इलहाम (आकाश वाणी) होना मानतेहैं। वह प्रत्येक पर होना सम्भव है इनका गुण औरढंग ही निरालाहै। उनका ध्यान यही है कि पुत्र विद्यायुक्त क्यों नहीं उत्पन्न होते ? इस बात की वे परीक्षा किये हुये हैं कि जो धन पुरुषों का है वही राजा का है। ईसाइयों

की बातों पर लट्टू हैं परन्तु प्राचीनों के सिद्धान्तों तथा महात्मा ओं को सदैव उपालम्भ दिया करते हैं। ये मनुष्य ईश्वर को अनादि नहीं मानते। यही कारण है कि इनके मत भेद पर पुनः इलहाम की आवश्यकता है। बुद्धि को काम में लाने का प्रयत्न करते हैं परन्तु बिना विद्या के इस संसार में जिसकी लाठी उसकी भैंसवाली कहावत चरितार्थ करना चाहते हैं। वे प्रत्यक्ष आखों के लिये सूर्य को तो मानते हैं। परन्तु आत्मिक शुद्धि के लिये प्राचीन ग्रन्थों को नहीं जानते। मानों इन्हें ज्ञान अथवा सत्य शिक्षा की !आवश्यकता ही नही। प्रिय श्रोताओं क्या कोई मनुष्य इसे आलमगीर (सार्व भौम) धर्म्म कह सकता है। सार्व भौम धर्म के लिये आवश्यक है कि वह शंकाओं से रहित हो। परन्तु इन लोगों का इलहाम (अकाशवाणी) तो सर्कारी एक्टों की भांति बदलती रहती है। इन सब कारणों से यह धर्म भी हमारी सब शंकाये निवारण नहीं कर सकता। परन्तु प्यारे श्रोताओ? अब मुझे यह बतलाना है कि वह कौन सा धर्म है जो सार्वभौम धर्म सदासे है और रहेगा प्रथम इस बात पर विचार होना चाहिये कि जैसा उसका नाम सार्वभौम धर्म्म हो वैसा ही वह सर्वदा से हो अर्थात् उसमें उसके प्राचीन होने के प्रमाण भी मिल सकें। यतः (चूंकि) कई प्रकार से यह बात सिद्ध हो चुकी है कि भारतवर्ष की आबादी सब से प्रथम हुई। इसलिये यह सिद्ध होगया कि शिक्षा का आरम्भ यहीं से हुआ। संस्कृत भाषा जिसे अरबी भाषा में "उम्मुललसां" कहते हैं। सब भाषाओं की माता है। अतः संस्कृत की सम्पूर्ण पुस्तकों में सब से प्राचीन पुस्तक वेद है।

महाशयो ? ज्योतिष शास्त्रके गणित से१९६०८५२९४८ वर्ष व्यतीत होचुके जिसकी सत्यता प्रति दिन के संकल्प से भी प्रमाणित होती है। अब हमें विचारना चाहिये कि वेद क्या शिक्षा देताहै। ऋग्वेद अष्टक प्रथम मंत्र३-ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र चार वर्णों का ज्ञान कराता है। वेदों की रीत से इनके दो भेदहैं। प्रथम आर्य दूसरे दस्यु इस मंत्र में ईश्वर आज्ञा भी देताहै कि हे मनुष्य तू उत्तम स्वभाव, सुख आदि ज्ञानके उत्पन्न करने वाले व्यवहारों की शुद्धि के लिये एक आर्य्य अर्थात् विद्वान को जान। द्वितीय दस्यु अर्थात् पीड़ा करनेवाले अधर्मी दुष्ट मनुष्य हैं इनके भेद जान कर धर्म की शुद्धि के लिये दुष्टों का सामना कर और सत्य शिक्षा देने में सदैव तत्पर रह। यह उपदेश भी वेदके उस स्थल का है कि जहां सामाजिक प्रकरण में सभापति का वर्णन किया गया है। जब ऋग्वेद ही आर्य धर्म पर दृढ़ता दिलाताहै। तो अब हम को सत्य आत्मा से वेदों की शिक्षाओं को देखना चाहिये कि वह किस प्रकार के हैं। वेदों में वर्णन आता है कि "य आत्मदा बलदा" (जो ईश्वर आत्मा को बल प्रदाता है) हिरण्य गर्भः सम वर्त्तताग्रे (सृष्टि उत्पति से भी पूर्व परमेश्वर था) अग्नि मीड़े पुरोहितम (उस अग्नि स्वरूप परमेश्वर की स्तुति करते हैं) इत्यादि मंत्रों से कैसी उत्तम शिक्षा मिलतीहै। वह परमेश्वर विद्या की खानिहै। ज्ञान का सागर है। ऋषि मुनियों से लेकर आज तकके विद्वान इस बात को मुक्त कण्ठसे कहते हैं कि जितने ज्ञानकी मनुष्यों को आवश्यकता है वह सब वेदों में विद्यमान है अन्य पुस्तकों की भाँति इसमें कभी न्यूनाधिक नहीं कियागया वेद सर्वथा शंका रहित हैं। वेदों की शिक्षा किसी देश विशेष

पर निर्भर नहीं। किन्तु समस्त संसार के लिये एकसी है। अतः वैदिक धर्म्म के अतिरिक्त अन्य कोई सार्वभौम धर्म्म नहीं कहा जासक्ता। हमारे हिन्दुओं की हीन दशा का कारण केवल एक मात्र यही है कि वेदों से घृणा ईश्वरोपासना का त्याग, मूर्ति पूजा, स्त्री शिक्षा का अभाव, नियोग व पुनर्विवाहादि आपद्धर्म्मों का अवलम्बन। बाल विवाह। देशपात्र के विना दान। एकताका अभाव वर्ण कर्म से नहीं किन्तु जाति से मानना इत्यादि है परन्तु जगदुपकारक श्री स्वामी-दयानन्द सरस्वती महाराज ने वेदों का भाष्य करके (संकृत मात्र) जो सत्य विद्याओं का पुस्तक है उपर्युक्त अवगुणों को दूर करने का प्रयत्न कियाहै। और सत्य का भण्डार मनुष्य मात्र के लिये खोलदिया उस जगदीश्वर की कृपा कटाक्ष से अब दृढ़ विश्वास है कि सम्पूर्ण मिथ्या बातें हमारे भारत वर्ष से शीघ्र ही विदा होजावेंगी--इत्योम् शम्।

रावल पिंडी के उत्सव के पश्चात् पं० लेखरामजी लाहौर में आये और आर्यसमाज मन्दिर में उतरे। इस नगर में ठहर कर संस्कृत का अभ्यास करना आरम्भ किया यतः पं० जी फ़ारसी विद्यामें पहिले ही पूर्ण निपुण थे और अरबी में पं० नारायण कौलजी के सत्सङ्ग से दक्षता प्राप्त करली थी अतः सब प्रकार से धर्म्म प्रचार की सामग्री एकत्रित करने में सदैव लगे रहतेथे

मुक्तग्राम

कुछ दिन पश्चात् पं० लेखराम जी अपने पूर्व परिचित सन्त दामोदरदास जी वेदान्ती के पास आये इन्हीं सन्त जी की संगति से पहिले पं० लेखरामजी के नवीन वेदान्तियों केसे भाव थे—इस अवसर पर सन्त जी ने कहा-बेटा सब ब्रह्म ही ब्रह्म है। इस पर

लेखराम जी ने कहा महाराज आप भी ब्रह्म हैं मैं भी ब्रह्म हूं यह पुस्तक भी ब्रह्म है। उत्तर में हां सुन कर पं० जी ने पुस्तक उठा ली और सन्त जी के मांगने पर पुस्तक न लौटाई और कहा कि ब्रह्म ने ब्रह्म को ले लिया और दूसरा कौन सा ब्रह्म है जिसे ब्रह्म ब्रह्म को दे देवे। यह पुस्तक अब तक पेशावर आर्य-समाज के पुस्तकालय में रक्खी हुई है।

मिर्ज़ाक़ादियानी

इस बीच में कुछ अब्दों से मिर्ज़ागुलाम अहमद साहिब क़ादियानीं ईश्वर वाक्य (इलहाम) का दावा करके मसीह मौऊद की पदवी लेनेके लिये हाथ पैर पसार रहे थे। पं० लेखराम जी मिरज़ा के लिये लिखते हैं कि मिर्ज़ा क़ादियानी जी ने एक "बुराहीन अहमदिया" की रचना के अतिरिक्त बढ़ावे के दश सहस्र मुद्रा पारितोषिक देने को स्वीकार कर अपनी पुस्तक की बड़ी प्रशंसा कराने का प्रयत्न किया है। परन्तु जब यह पुस्तक मैंने देखी तो यह ज्ञात हुआ कि जिस प्रकार दूर के ढोल सुहावने तथा सब सुथरे शाह कहलाते हैं इसी प्रकार हमारे मित्र मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद की दशा है। और केवल ख्याली पुलाव के उसमें कुछ आशय नहीं। बुराहीन अहम-दिया के कर्ता ने केवल रुपया प्राप्तिका एक नया ढंग निकाला है और आठ वर्ष समय को निरे धोखे में टाला है। अपनी पुस्तक में कहीं ब्रह्म समाज और कहीं ईसाईयों को गाली प्रदान कर साथ २ आर्यों को भी कोसते गये हैं। मुझे इस स्थान पर किसी अन्य मत से कुछ सम्बन्ध नहीं और न मैं किसी मनुष्य का ही अनुयायी हूं किन्तु आर्य वैदिकधर्म का अनुयायी हूं अतः वेदोक्त सत्यता को अपना धर्म जानकर

चाहता हूं कि धर्म रूपी तुला में रखकर सत्य के वाटों से 'बुराहीन अहमदिया' को तोलूं। इसके अनन्तर जब पं० जी दुबारा जम्बू को गये तो पं० नारायण कौल जी के यहां उतरे। उक्त पं० जी एक विद्वान् पण्डित होने के कारण फ़ारसी तथा अरबी भाषा में भी बड़े निपुण थे। पं० लेखराम जी को भी वार्तालाप करते २ उनकी फ़ारसी की विद्वत्ता प्रकट हुई तो उन्होंने उक्त पं० जी से बुराहीन अहमदिया के उत्तर देने में सहायता लेनी उचित समझकर पूछा तो उन्होंने बड़ी प्रसन्नता तथा भक्ति भाव से स्वीकार किया। पं० नारायण कौल जी के सम्बन्धियों से यह भी ज्ञात हुआ कि उक्त पं० जी ने लेखराम जी को पुस्तक लिखने में बड़ी सहायता दी थी। मिर्ज़ा गुलाम अहमद के बड़े चेले हक़ीम नूरुद्दीन उन दिनों जम्बू में ही अपना प्रचार कर रहे थे परन्तु पंडित लेखराम जी के जम्बू आने जाने के कारण अधिकांश में उन्हें सब क़ामों में असफलता होती रही।

पं० लेखराम जी की ओर से मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी को घोषणा।

जब सम्पूर्ण पुस्तक बुराहीन अहमदिया के प्रति उत्तर में "तक़ज़ीब बुराहीन अहमदिया" नामक तैयार होगई तो प्रथम पं० जी ने १ अक्टूबर १८८४ ई० को उसको गुरुदास पुर नगर की आर्य समाज में सुनाया इसका कारण केवल छपने में देर न हो और नगर के प्रतिष्ठित पुरुष जो अच्छे कामों में सदैव सम्मिलित रहते हैं और परोपकार की बातों में मन लगाते हैं इस कार्य में थोड़ी २ सहायता करें और कार्यसिद्धि में प्रयास

करें—क्योंकि दूसरों को लाभ पहुंचाना और भूले हुओं को सन्मार्ग बताना अति उत्तम कार्य है। परन्तु उस घोषणा का कोई उत्तर न आया और नाहीं मिर्ज़ा क़ादियानी साहिब ही शास्त्रार्थ के लिये पधारे इसके अनन्तर उन्होंने लाहौर जाने का विचार किया और ईश्वर पर भरोसा कर उसी ओर प्रस्थान किया। यहां पर कुछ विश्राम कर अमृतसर को चले गये और यहां दो मास तक ठहरे।

क़ादियान में जाना

सन् १८८५ के आरम्भ में पं० लेखराम जी द्वितीय बार क़ादियान में गये और वहां के सम्पूर्ण निवासियों को बुराहीन का खंडन पहिले मिर्ज़ा साहिब की शंकाओं से फिर अपनी पुस्तक से मौखिक किया। जिससे वहां के प्रत्येक बालक तक मिर्ज़ा साहिब की सत्यता और पोल जान गया। क़ादियान जाने के निम्नलिखित कतिपय कारण थे (१) मिर्ज़ा साहिब ने एक विज्ञापन इस विषय का दिया था कि जो आर्य पुरुष हमारे पास आवे और एक वर्ष तक निवास करे। यदि इस समय के भीतर उसके कर्म दीन इस्लाम से सम्मिलित न हों तो हम उसको २००) मासिक हानि के देंगे। (२) वहां आर्य समाज भी न था। उसका होना भी इस नगर में आवश्यक था प्रायः मिर्ज़ा साहिब ने ठीक २ उत्तर न दिया इसलिये भ्रमण करते हुये वहांही जाना उचित समझा गया और ठीक २ मास वहां ठहरे इन्हीं दिनों

क़ादिया में आर्य समाज स्थापन

परमात्मा की कृपा से आर्य समाज भी स्थापित होगया—और प्रतिदिन वेदों का उपदेश होने लगा। लेखराम जी का कथन है कि मैं तीन बार मिर्ज़ा जी के घर पर गया परन्तु वह किसी नियम

पर आरूढ़ न पाये गये। मैंने दो वर्ष तक रहने को भी अंगीकार कर लिया परन्तु मिर्ज़ा साहिब इस पर भी न जमे। एक दिन जब कि मिर्ज़ा जी के गृह पर बैठा हुआ था। कुछ थोड़े से प्रतिष्ठित आर्य और मुसलमान भी बैठे हुये थे। मिर्ज़ा जी करामाती जाल फैलाने लगे और कहा कि मुझे फ़रिश्ते दिखाई देते हैं मैंने कहा कि मिर्ज़ा जी क्या आप सत्य२ कहते हो। उन्होंने कहा कि हां सत्य कहता हूं मैंने एक पत्र पर पेंसिल से ओ३म् लिखकर अपने हाथ में रख लिया। और पूछा कि कृपा करके फ़रिश्तों से पूछिये कि मैंने क्या लिखा है? थोड़ी देर मनही मन गुनगुनाते रहे और फिर कहा इस प्रकार नहीं किसी अन्य स्थान में पत्र को रख लो? मैंने अपने पाकट में रख लिया—फिर जब पूछा तो कुछ काल तक अपनें फ़रिश्तों से पूछते रहे परन्तु कुछ न कह सके। इस बात के दश बारह मनुष्य साक्षी हैं। और मिर्ज़ा जी भी स्वयं जानते होंगे। पं० लेखराम का गुरुदासपुर और कादियान में तक़ज़ीब बुराहीन अहमदिया के सुनाने, दो मास तक कादियान में ठहरने और यवन मतकीपोल खोलने से इतना तो अवश्य हुआ कि अन्य पुरुषों का इक्कों पर बैठ कर आना और समाधों पर भेंट चढ़ाना बिलकुल बन्द हो गया—अन्त को पं० लेखराम जी की वह पूंजी जो उन्होंने नौकरी के समय संचय की थी व्यय हो गई। और शेष अन्यत्र से प्रबन्ध कर अम्बाले की ओर पधारे। इस स्थान पर पहुंचने से हमारे चरित्र नायक को विदित हुआ कि "क़ादियान" के

करामात या ढकोसला

क़बरों की पूजा का बन्द होना

"विष्णुदास" नामक हिन्दू को बुलाकर मिर्ज़ा जी ने कहा है यदि वह एक वर्ष के भीतर यवन मत न ग्रहण कर लेगा तो उनके इलहाम के मुताबिक वह मर जायगा यह समाचार सुनकर ४ दिसम्बर सन् १८८५ को पं० जी कादियान में बिजुली की भांति जा दमके और विष्णुदास को बुला कर बहुत समझाया। व्याख्यानों द्वारा मिर्ज़ा जी की कलई खोलने में कुछ उठा न रक्खा। परिणाम यह हुआ कि वह मुसलमान होने के स्थान में आर्य-समाज का सभासद बन गया और मिर्ज़ा जी की बहुत सी कुटिल नीति का निराकरण करने पर आरूढ़ हो गया।

सन् १८८६ ई० के मार्च मास में मिर्ज़ा गुलाम अहमद का किसी कार्य वश होशियारपुर में आना हुआ। स्थानिक गवर्नमेंट हाईस्कूल के ड्राइङ्ग मास्टर महाशय मुर्लीधर जी भी यवन मत की पोल खोलने में अद्वितीय थे। मास्टर साहब ने मिर्ज़ाजी की डींग की बातें सुनकर ता० ११ मार्च सन् १८८६ की रात्रि को मिर्ज़ाजी के स्थान पर पहुंचकर मुहम्मद साहिब के चांद के दो टुकड़े करनेवाले चमत्कार पर लेख बद्ध आक्षेप किये। अनुमान से ६ घंटे तक प्रश्नोत्तर होते रहे। परन्तु अन्त को ता० १४ मार्च सन् १८८६ ई० के दिन मिर्ज़ा जी ने प्रकरण छोड़ कर यह प्रतिज्ञा की कि जीवात्मा अनादि नहीं है किन्तु हादिस (उत्पत्तिवान है) इस पर भी बड़ी देर तक शास्त्रार्थ होता रहा। परंतु यतः मिर्ज़ा जी का होशियारपुर में आना केवल रुपये बटोरने के लिये हुआ था। इस समय को अच्छा समझ कर एक पुस्तक "सुर्माचश्म आरिया" लगभग २६० पृष्ठों की लिखकर छपवा डाली। हमारे चरित्र नायक के चित्त पर इसका बड़ा

आघात हुआ। परन्तु यह सोचकर कि कदाचित् उक्त मास्टर जी ही उसका खण्डन छपवा लेंगे छपने के समय की प्रतीक्षा करने लगे। इसके अनन्तर २५ अप्रेल सन् १८८६ ई० को पं० लेखराम जी ने पेशावर आर्य-समाज के पंचम वार्षिकोत्सव पर जाकर एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया। और १० अक्टूबर सन् १८८६ ई० भेरा आर्य-समाज के वार्षिकोत्सव में सम्मिलित हो वहां "हवन के लाभ" पर एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया। १६ अक्टूबर सन् १८८६ ई० की आर्य पत्रिका में एक महाशय लिखते हैं कि "लेखराम आर्य-समाज लाहौर का एक कट्टर मेम्बर है। उसने अपनी सम्पूर्ण अवस्था को आर्य समाज पर बलिदान कर दिया है। और अर्बी तथा फार्सी भाषा का बड़ा विद्वान् है इसने अमृतसर नगर के वार्षिकोत्सव पर अन्य मतों पर एक बड़ा प्रभावोत्पादक व्याख्यान दिया। और इन्हीं के परिश्रम से खतोया नगर के पुरुषों ने अपने गांव में आर्य-समाज स्थापन की। इसके अतिरिक्त, मियानी, पिण्डदाद खां, आदि नगरों में बड़े २ व्याख्यान दिये। मजीठ नगर में लाला गण्डामल असिस्टेन्ट इंजीनीयर को आर्य समाज की सत्यता पर विश्वास दिलाया और अब वह कश्मीर देश को शास्त्रार्थ के लिये जा रहा है" इन्हीं दिनों पं० जी ने निम्न लिखित पुस्तकों का लिखना आरम्भ किया—(१) माहियत ऋग्वेद नामक पुस्तक जो प्रतिपक्षियों की ओर से ऋग्वेद के खण्डन में लिखी गई थी उसका" सदाक़त ऋग्वेद नामक प्रत्युत्तर लिखा—(२) आईना इंजील के प्रत्युत्तर में इंजील की हक़ीक़त—(३) तहक़ीक़ याने हक़ के उत्तर में "सच्चे धर्म्म की शहादत—(४) शहादत अहिवाल ६ खण्डों में—(५) मूर्ति

प्रकाश—(६) स्त्री शिक्षा—(७) इतर रूहानी जो गुलाब व चमन के उत्तर में लिखी गई थी।

जब पं० लेखरामजी की प्रतीक्षा करते हुये कुछ समय व्यतीत हो गया और जुलाई सन् १८८७ ई० में "तकज़ीब बुराहीन अहमदिया" का पहिला भाग भी छप कर जन साधारण में हाथों हाथ बिक गया—तो हमारे धर्म वीर जी ने पता लगवाया कि मास्टर जी ने उस पुस्तक का उत्तर अभी तक क्यों नहीं छपाया। तो ज्ञात हुआ कि मास्टर जी को सर्कारी नौकरी के कारण इतना अवकाश नहीं कि वह उत्तर लिख सकें। अन्त को उन्होंने स्वयं ही मिर्ज़ा जी के सब आक्रमणों का उत्तर लिखना आरम्भ कर दिया और पुस्तक का नाम "नुसख़ा खब्त अहमदिया" रक्खा इस पुस्तक के लिखने में पं० धर्म्मचन्द्र जी प्रधान आर्य-समाज अमृतसर ने बड़ी सहायता की। जिसके कारण पं० जी का यश तथा वैदिक वैजयन्ती की ध्वनि समस्त भारतवर्ष में गूंज उठी।

सन् १८८७ के आरम्भ में पं० लेखराम जी को आर्य्य गज़ट फ़ीरोजपुर का सम्पादक बनाया गया। और अनुमान दो वर्ष तक उसका सम्पादन बड़ी योग्यता से करते रहे। जहां पं० लेखराम जी के ऊपर गज़ट के सम्पादन का भार आपड़ा। वहीं उन्हें समय २ पर आर्यसमाजों के वार्षिकोत्सव पर भी आना जाना पड़ता था। इस कारण पं० जी को अवकाश न मिलता और अहर्निशि धर्म्म के कामों में लगे रहते थे। ता० १२ अप्रेल १८८८ ई० को मुल्तान आर्य-समाज में यह प्रस्ताव प्रविष्ट हुआ कि श्री १०८ श्री स्वामी दयानन्द जी महा-

स्वामी दयानन्दजी के जीवन चरित्र की सामग्री संचय

राज के जीवन की घटनायें तथा वृतान्त संग्रह करने को पं० लेखराम जी नियत किये जावें। इसके अनन्तर यही प्रस्ताव श्रीमती आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की अन्तरङ्ग सभा में भी प्रविष्ट किया गया और सभा ने शीघ्र ही स्वीकार कर लिया। मानो पं० जी को धर्मवीर के स्थान में आर्य पथिक बना दिया गया निदान नवम्बर सन् १८८८ ई० से आर्य-पथिक लेखराम जी ने स्वामी जी के जीवन वृतान्त एकत्रित करने का कार्य आरम्भ कर दिया। महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र शीघ्र ही जनता के सन्मुख पहुंच जाता और वृतान्त भी भले प्रकार के वर्णन किये जाते। यदि यह कार्य किसी ऐसे पुरुष को दिया जाता जो उपदेश के कार्य से मुक्त होता। यह बात कौन पुरुष नहीं जानता कि पं० लेखराम जी को प्रत्येक समय उन्नति का ध्यान रहता था, जो एक स्थान पर उनको कभी बैठने नहीं देता था। यदि उन्होंने कदाचित् यह सुन लिया कि अमुक पुरुष ईसाई अथवा यवन मत ग्रहण करता है तो शीघ्र ही अपने आवश्यकीय कार्य्यों को छोड़ कर वहां पहुंचना अपना औचित्य (फर्ज़) समझते थे। यही कारण था कि लगातार चलते हुए मत सम्बन्धी बातों को सुनकर बीच में उसी स्थान पर ठहर जाते थे चाहे कार्य की पूर्णता में देर हो क्यों न होजाय। इसी कारण आर्यप्रतिनिधि सभा भी उनसे चूं न करती थी। परन्तु उन दिनों पं० लेखरामजी के अतिरिक्त कोई ऐसा योग्य पुरुष न था जो इस काम को कर सकता। परन्तु कहा जा सकता है कि लगातार प्रचार के कार्य में प्रवृत्त रहते हुये और शंका समाधानों में फंसे रहते भी जो वृतान्त पं० लेखरामजी ने संग्रहकर पाये थे वह किसी

लगातार काममें लगे हुये मनुष्य सेभी होसकने कठिन थे। यद्यपि आर्य प्रतिनिध सभाने पं० लेखरामजी को जीवन वृतान्त संग्रह करने में शीघ्रता करनेके लिये कई तार दिये। परन्तु उस धर्मवीर ने धार्मिक प्रचारको कभी ठंडा न रक्खा एक समय की बात है कि पं० जीने सुना कि अमुक स्थान पर शास्त्रार्थ होगा। पं० जी बिना आर्य-प्रतिनिध सभाकी आज्ञा के वहां चले गये और यवनों तथा ईसाइयों से शास्त्रार्थ किया लौटने पर सभाकी ओर से कई आक्षेप हुये पं० लेखराम जी ने निस्वार्थ भाव से कह दिया कि जो दिन मैंने शास्त्रार्थ में अपनी ओर से दियेहैं। उतने दिनों का वेतन सभासे न लूंगा।

२८ दिसम्बर सन् १८८८ ई० को लाहौर आर्यसमाज के उत्सव पर जाकर वहां बड़ी योग्यता से शंका समाधान किया। और विदा होकर मथुरा में पहुंचे वहां महात्मा विरजानन्द के अन्य शिष्यों से मिले उस समय दण्डी जी के शिष्यों में पं० दामोदर जी, युगुल किशोर जी तथा हरिकृष्ण जी थे उन से स्वामी जी के जीवन के वृतान्त पूछे और अन्य२ स्थानों में भी भ्रमण करते रहे तदन्तरः—

ता० २ अक्टूबर सन् १८८९ ई० को आर्यसमाज पेशावर के वार्षिकोत्सव पर पुनः पधारे। उत्सव समाप्त होने पर डाकूर सीताराम जी मंत्री आर्यसमाज पेशावर ने पं० जी के साथ एक ऐसा ठट्ठा किया अर्थात् उनके निवास के लिये एक एक ऐसे गृह का प्रवन्ध किया कि जिसमें सर्प वहुत रहते थे और कहाकि पं० जी आप वहुत कहा करतेहैं कि हवन करनेसे कोई भय नहीं रहता अतः इस सर्प युक्त गृह में निवास कीजिये फिर देखें आप कैसे रहसक्ते हैं। पं० लेखराम जीने उस दिन

तो ताला लगा दिया। दूसरे दिन जब पं० जी के नौकर ने ताला खोला और मकान में घुसे तो उसने कई सर्प देखे। वह देखकर भागा और पं- जीके पास गया और कहने लगा कि महाराज मकान में तो बहुत से सांप हैं। इस बात को सुनकर पं० जी ने उस घर में जाकर हवन किया और उसमें एक और भांति की आहुतियें दीं और फिर घर को बन्द करदिया। दूसरे दिन जब घर को खोला तो हवन की भस्म पर बहुत से सर्पों को अचेत पड़ा पाया। शीघ्र ही पं० जी ने उन्हें पकड़वा कर जंगल में छुड़वा दिया। और नवम्बर सन् १८८६ में देहरादून में जाकर एक व्याख्यान "पुराण खंडन" पर दिया। इधर मुं० पूर्णचन्द्र जी से और पं० लेखरामजी से मिलाप हुआ और २१ दिसम्बर १८८६ ई० को जो प्रश्न मुंशी पूरनचन्द्र जी ने पं० लेखरामजी से किये थे उनके उत्तर पं० जी ने बड़ी योग्यता से निम्न लिखित अनुसार दिये।

सर्प यज्ञ करना

प्रश्न—स्वामी दयानन्द सरस्वती और स्वामी शंकराचार्य्य जी की तसनीफ़ (रचना) में क्या भेद है ?

उत्तर—देखो सत्यार्थ प्रकाश ७ वां समुल्लास पृष्ठ १६१ और ११ वां समुल्लास पृष्ठ २६० से २६८ तक।

प्रश्न—ब्रह्म जो सर्वत्र सब पदार्थों में स्थित है फिर यदि वेदान्तियों ने अपने में ही मान लिया तो क्या बुरा किया ?

उत्तर—श्रीमद्भगवतगीता के सिद्धान्त के विरुद्ध सर्वव्यापक को एक देशीय मानना और स्वयं ईश्वर बन बैठना तथा संसार को मिथ्या कहना और ब्रह्म में अविद्या का आवरण मान कर अज्ञानी कहना कहां तक न्याय संगत है।

इसके अतिरिक्त, उपकार, विद्या और सत्ययोग को छोड़ कर मिथ्या पाखंड का प्रचार आर्षग्रन्थों को कलंकित कर आर्य्यत्व को धब्बा लगा देना जीव और ब्रह्म की एकता का वेदान्त शास्त्र विरुद्ध उपदेश करना अयोग्य है जिस वेदान्त शास्त्र पर महर्षि बौधायन कृत भाष्य कि जिसका प्रमाण रामानुज स्वामी ने भी दिया है और स्वामी जी ने भी जिसको माना है उसे झूठा कहना बड़ा अनर्थ है। चारों वेद और दशों उपनिषदों में जिनमें कि जीवेश्वर अभेदवाद की गन्ध तक नहीं परन्तु नवीन वेदान्तियों ने स्वार्थवश सब के विपरीत अर्थ कर महान अनर्थ किया है अतः इनका मत वेदानुकूल कदापि नहीं कहा जा सकता।

प्रश्न—"एको ब्रह्म द्वितीयोनास्ति" यह वेद की श्रुति है अथवा नहीं? यदि है तो इसका क्या अर्थ है।

उत्तर–जहां तक मुझे वेदों का ज्ञान है यह वेद की श्रुति नहीं है।

प्रश्न—आत्मा, परमात्मा और जीवात्मा तीन नाम ईश्वर के कैसे हुये?

उत्तर—यह प्रश्न शुद्ध नहीं है? यदि अलख मुराद ईश्वर से है तो आप जीवात्मा नाम इसका कभी न देखेंगे। आत्मा ईश्वर का नाम इसलिये है कि वह सर्वव्यापक है। *जीव से परमात्मा इस कारण भिन्न है कि उसकी पहिचान हो सके। जीवात्मा या जीव ब्रह्म का कभी भी नाम नहीं हो सकता। ब्रह्म, अलख, और परमात्मा का नाम कहीं २

* देखो निरुक्त अध्याय ३ मं ५

आया है परन्तु आत्मा (जीव) कहीं नहीं आया।

प्रश्न—राम और कृष्ण का नाम जो बहुधा हिन्दू लोग जपते हैं इससे क्या मुराद है। क्या दशरथ महाराज के पुत्र राम तथा वसुदेव जी के पुत्र कृष्ण चन्द्रजी ही का बोधक है अथवा कुछ और भी अर्थ है ?

उत्तर—राम और कृष्ण का अर्थ केवल दो नामों काही बोधक है कि जिनका उससे सम्बन्ध है कहीं २ यह नाम बलराम तथा परशुराम के भी हैं। और कृष्ण नाम व्यासजी का भी है। परन्तु रामानुज स्वामी से पूर्व "राम" नाम और बोपदेव से पूर्व "कृष्ण" नाम कभी भी ईश्वर के परियाय में प्रयोग नहीं किया गया। हिन्दू लोग कुछ ही अर्थ करें परन्तु मेरे विचार से कौशल्या के पुत्र राम तथा देवकीसुत कृष्ण के ही नाम को जपते हैं ईश्वर के नाम को नहीं।

प्रश्न—पहिले जब आर्य गज़ट फीरोज़पुर से निकलता था तो उसके आरम्भ में एक वेद मन्त्र अर्थ सहित लिखा जाता था पश्चात् क्यों बन्द हो गया।

उत्तर—प्रेस में कोई शुद्ध लिखनेवाला पण्डित न था।

प्रश्न—यदि कोई आर्य वेद विरुद्ध कर्म्म करे तो उससे क्या कहना चाहिये।

उत्तर—प्रश्न आपका ठीक है परन्तु अभी आर्य पुरुष क्षमा के योग्य हैं क्योंकि योग्य उपदेशों तथा उपदेशकों का अभाव है। कुछ समय देना चाहिये। हां यदि जान बूझ कर कोई वेद विरुद्ध करे तो वह अवश्य डबल पोप है—

लेखराम—बुलन्दशहर

इन दिनों पं० जी ने निम्नलिखित पुस्तकें और बनाईं

(१) सदाक़त इलहाम (२) पुराण किसने बनाये (३) देवी भागवत समीक्षा (४) सांच को आंच नहीं (५) हिन्दू आर्य नमस्ते की तहक़ीकात (६) धर्म्म प्रचार। इस समय पं० जी ने पंजाब देश में लगभग सर्वत्र भ्रमण कर वैदिकधर्म की दुन्दुभी बजाई। इसके अतिरिक्त पश्चिमोत्तर देश के भी मुख्य २ नगरों में भ्रमण किया और स्वामी जी के जीवन वृत्तान्त की सामग्री एकत्रित की।

ऋषि अन्वेषण के लिये यात्रा

अगस्त सन् १८९० ई० में पं० लेखरामजी जालन्धर नगर में पधारे वहां जाने पर उन्हें ज्वर आगया अतएव कुछ दिन शान्ति सरोवर पर ठहर कर पुनः यात्रा आरम्भ की। जालन्धर से चलकर पं० लेखराम जी अक्तूबर सन् १८९० ई० को कानपुर में पहुंचे और वहां कई प्रभावशाली व्याख्यान दिये जिनमें "सृष्टि उत्पत्ति" विषयक बड़ा उत्तम व्याख्यान था।

कानपुर से चलकर पं० लेखराम सीधे प्रयाग पहुंचे। उन दिनों वैदिक यंत्रालय इसी स्थान में था और पं० भीमसेन तथा ज्वालादत्त भी उसमें काम करते थे। यहां पं० लेखराम जी एक मास तक सब पत्र व्यवहार देखते रहे पं० जी ने एक दिन वहां एक बड़ी विचित्र लीला देखी कि वेद भाष्य का एक छपा हुआ अङ्क जला दिया गया और उसका शंसोधन कराकर फिर से छपवाया गया था। यह देख पं० लेखराम जी ने हलचल डाली जिसका यह परिणाम हुआ कि वेदभाष्यके अंकों के अवलोकन का भार कतिपय प्रसिद्ध आर्य पुरुषों पर डाला

गया। यहाँ से चलकर पं० जी मिर्ज़ापुर के वार्षिकोत्सव पर गये वहाँ २४ अक्टूबर सन् १८६० ई० को आपका उत्सव में व्याख्यान हुआ। वहां के सभासद आपके बड़े भक्त बन गये निदान एक दिन एक आर्य सभासद कोजो जाति से कलवार थे पं० जीने उन्हें समझाया कि भाई जब आप वैश्य का काम करते हो तो यज्ञोपवीत क्यों नहीं धारण कर लेते उससे वंचित रहना अच्छा नहीं। सभासदने उत्तर दिया—महाराज मेरा यज्ञोपवीत यहां कौन करायेगा? पं० जी ने उत्तर दिया कि "मैं कराऊंगा। देखूं कौनसा आर्य समाजो पंडित है जो सम्मिलित न होगा। बस फिर क्या था नगर के प्रसिद्ध २ पुरुषों को आमन्त्रित किया गया और एक तिथि निश्चित कर सभासद का यज्ञोपवीत कराया गया जिसमें विशेषता यह थी कि नगर के दो ब्राह्मणों अर्थात् पं० घनश्याम शर्मा तथा पं० रामप्रकाश जी ने इस संस्कार में सहयोग दिया और वे अपने ऊपर भाई बान्धवों के आक्षेपों का कुछ भी विचार न कर धर्म-संस्कार में दृढ़ता पूर्वक सम्मिलित रहे। यहां से चलकर पं० जी काशी जी पहुंचे और धर्मचर्चा करते रहे। जनवरी सन् १८६१ ई० को काशी से प्रस्थान कर डुमरांव राज में निवास करते हुये ता० १७ जनवरी १८६१ के दिन दानापुर पहुंचे और ता० १७ से १२ फ़रवरी तक दानापुर, बांकीपुर और पटना ही में कार्य करते रहे।

डा० मुन्नी लाल का शाह से पंडितजी वार्तालाप

पटने में पहुंचने पर पं० लेखराम जी डा० मुन्नीलालशाह के यहां एक सप्ताह तक ठहरे। स्वामी जी के जीवनचरित्रका संग्रहकरने के लिये इन्हें बहुत से स्थानों में जाना पड़ा

डाक्टर साहब का कहना है कि उन दिनों में मेडीकल कालेज में पढ़ता था। एक दिन पं० जी ने मुझ से कहा कि महाशय ? यहां कोई ऐसा पुस्तकालय भी है कि जिसमें ऐसा हस्तलिखित कुरान मिले कि जिसमें ४० अध्याय हों क्योंकि मुझे ज्ञात हुआ है कि उसके अन्तिम १० अध्याय यवन मत के विरुद्ध हैं— और कहा कि मैंने यह पुस्तक पंजाब में ढूंढ़ी परन्तु कहीं खोज न मिला। इसके अनन्तर मैं पं० लेखरामजी को मौलवी खुदा बख़्श के प्रसिद्ध पुस्तकालय में ले गया। वे और मैं दोनों एक कमरे में चले गये। पं० जी ने जाते ही मौलवी साहिब से उक्त पुस्तक के विषय में पूछा उन्होंने उत्तर दिया कि जी हां एक पुस्तक है। इस पर पं० जी बड़े अचम्भित हुये कि ऐसा पुस्तक यहां कहां से आई। मौलवी साहिब ने पुस्तक देते समय कहा कि यह पुस्तक बड़ी कठिनतासे प्राप्त हुई थी, कहा कि एकबार एक मौलवी शाह ईरान के मन्त्री के साथ काबुल आया। मेरे एक मित्र ने जो वहां नौकर थे पूछा कि आप ने कभी ऐसा कुरान देखा है कि जिसमें ४० अध्याय हों। उसने कहा कि मेरे पासही है। और कुछ वार्तालाप करने के अनन्तर उन्होंने वह कुरान की पुस्तक २५) रु० को मेरे मित्र को बेच दी। ज्योंही कुरान पं० जी को दिया गया उन्होंने शीघ्र ही उसका पढ़ना आरम्भ कर दिया और बड़ी शीघ्रता से उसकी आवश्यक बातों को नक़ल करने लगे।

पं० जी उसके कार्य से बड़े प्रसन्न हुये। और मेरी बड़ी सराहना की पुनः दूसरे दिन उसी स्थान पर गये और शेष १० अध्यायों में से मुख्य २ बातों को नोट कर लिया और अन्य

पुस्तकों को भी देखा और मेरे साथ घर पर लौट आये। इतने में अनायास मेरे पास एक तार आया कि पंडितजी जीते हैं या नहीं यह तार उन के घर से आया था। विदित होता है कि उनकी माता को किसी ने यह सूचना दे दी थी कि लेखराम का देहान्त होगया। पं० जी तथा डाक्टर साहिब में इस विषय में बातचीतहोने लगी।

पं० लेखराम जी—मेरे मित्रों और सम्बन्धियों को मेरे देहान्त के बारे में पूर्व भी तार भेजे गये हैं और आजका तार भी उसकाही उदाहरण है।

डाक्टरजी—आप ऐसे बदमाशोंका कुछ इलाज क्यों नहीं करते।

पं० जी—डाक्टर साहिब ! मैंने वैदिक धर्म की सत्यता के कारण बहुत से शत्रु बढ़ा लिये हैं और यह भी आशा है कि कोई मुसलमान मुझे कतल भी करेगा।

डाक्टर जी—आप ऐसी बातें न करें सब का ईश्वर मालिक है। कोई कुछ नहीं कर सकता। परन्तु आपको इसका यत्न अवश्य करना चाहिये।

पं० जी—यह सब ठीक बात है परन्तु आप यवनों के स्वभाव से परिचित नहीं हैं। वे मत सम्बन्धी बातों पर कभी कुछ ध्यान नहीं देते और पक्षपात से अन्धे होकर अपनी ही पुस्तकों को सत्य कहते हैं, जहां उनकी पुस्तकों का खण्डन किया झट आपे से बाहर हो जाते हैं। परन्तु हमें इस कठिनाई को कठिनाई न समझ वह पुरुषार्थ करना चाहिये देखिये मैं कुछ उपाय सोच रहा हूं......कि......

डाक्टर जी—पं० जी आप क्या सोच रहे हैं ?

पं० जी—कुछ बातें सोच रहा हूं जिनका अभी प्रकट करना

इस समय उचित नहीं समझता हूं।

डाक्टर जी—क्या आप का विश्वास मुझ पर नहीं! क्या मैं उन्हें दूसरों पर प्रकाशित कर दूंगा ?

पं० जी—नहीं २ यह मेरा विश्वास नहीं है। आप सच्चे वैदिक धर्मावलम्बी हैं। हां यदि आप पूछना ही चाहते हैं, तो तुम्हें बतलाये देता हूं कि मेरी इच्छा अन्य देशों में जाकर वैदिक धर्म के प्रचार करने की है। परन्तु मैं पहिले श्री स्वा० जी की जीवनी पूर्णकर लूंगा तब पूर्व संकल्प का अनुष्ठान करूंगा अन्यथा मुझे कर्त्तव्य हीन कहने लगेंगे। परन्तु आप मेरी इच्छा को अभी किसी पर प्रगट न करें

डाक्टर जी—आप को ऐसा भयानक संकल्प नहीं करना चाहिये।

पं० जी-मेरी इच्छा है कि मुझे कितनी ही कठिनाइयां सहनी पड़ें। परन्तु मैं अपने इरादे से न हटूंगा। यद्यपि हम यह जानते हैं कि सत्य धर्म संसार भर का एक है। मान भी लो कि यदि किसी मूर्ख ने मुझे क़तल भी कर दिया तो वैदिक धर्म का महत्व और भी अधिक बढ़ जायगा। क्योंकि आर्यधर्म के अनुयायी बहुत सा मेरा काम अपने अपने हाथों में लेने के लिये उस समय बाहर निकल आवेंगे। और यवन देश में वैदिकधर्म का प्रचार करनेको उद्यत होंगे। इस लिये मुझे अपने जीवन की इच्छा न करते हुये वैदिकधर्म के महत्व पर तत्पर रहना चाहिये

डाक्टर जी-इस समय तो आप स्वामी जी के जीवन वृतान्त को पूरा करने ही में पूरा ध्यान दें।

पं० जी०—यह तो अवश्य ठीक है। मैं भी यही चाहता हूं कि

यह कार्य्य शीघ्रही समाप्त होजावे—और सत्यार्थ प्रकाश का भी अर्बी भाषा में अनुवाद होजावे।

डाकृरजी—आप अपने कथन के अनुकूल यदि यवन देश में वैदिक मत के प्रचार को गये भी तो क्या काबुल, अरब, ईरान और मिश्र आदि देशों में भी जाइयेगा ?

पं० जी—जी हां-मेरे कहने का तात्पर्य यही तो था। परन्तु मुझे आशा नहीं कि मैं अपने संकल्प को पूरा कर सकूं। क्योंकि मेरा अनुभव है कि कहीं इसी देश में ही क़त्ल न किया जाऊं।

डा०-क्या मैं पूछ सकता हूं कि आपने सत्य धर्म रूपी वैद्यक में कितनी निपुणता प्राप्त की है।

पं० जी—मैंने कतिपय असाध्य रोगों के लिये कई उपयोगी नुसखे (चुटकले) इकट्ठे करलिये हैं और इतना कह उन्होंने अपनी नोट बुक निकाल कर कहा कि आप देख सकते हैं।

दूसरे दिन हम लोग खड्ग विलास यन्त्रालय में गये और वहां "कवि वचन सुधा" नामक पत्र को-जिसे भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रजी सम्पादन करते थे देखने की इच्छा की। यंत्रालय के प्रबन्धकर्त्ता ने बड़े प्रेम पूर्वक उसका फ़ायल (नत्थी) देखने को दिया-जिसमें से स्वामीजीके जीवन वृत्तान्त सम्बन्धी बहुत सी बातोंका पं० जी ने टिप्पणी में उल्लेख कर लिया, इस पत्रमें हुगली का शास्त्रार्थ भी छपा था।

खड्ग विलास प्रेस में जाना

इसके पश्चात् बा० रामप्रसाद जी के साथ हम देवालय में गये जहां परमेश्वर के निराकार होने पर शास्त्रार्थ छिड़

रहा था। बहुतसी बातें होने के अनन्तर पं० जी ने निराकार न माननेवाले पुरुषों को अच्छे प्रकार समझाया और व्याख्यान भी इसी विषय पर दिया। इसके अनन्तर पं० जी ने कलकत्ते जाने का विचार किया और वहां एक सप्ताह ठहरे। एक दिन पं० जी की दो पुरुषों से बातचीत सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ पं० जी ने मुझे पूछने पर बतलाया कि पठान आर्य्य हैं।

स्वर्णरेखा नदी के तट पर व्याख्यान

ता० १८ जनवरी सन् १८६१ को पं०जोने विहारमें जाकर लगभग २०० श्रोताओं की उपस्थिति में "आर्यसमाज को आवश्यकता" पर एक व्याख्यान दिया और स्वामी जी की जीवनी के लिये भी सामग्री इकट्ठी करते रहे।

हरिद्वार का कुम्भ और उस पर प्रचार की अभ्यर्थना

ता० ७ मार्च सन् १८६१ ई० को पं० लेखरामजी ने "आर्यावर्त" नामक पत्र में हरिद्वार के कुम्भ पर आर्यसमाज के प्रचार की बड़ी आवश्यक अभ्यर्थना की और ५) का दान अपनी जेब से भेजा साथही यह प्रार्थना की कि इस प्रचार मण्डली को अप्रैल के आरम्भ से ११ अप्रैल तक प्रचार करने के लिये शीघ्रही हरिद्वार को चली जाना चाहिये। यतः लाला मुंशी रामजी (वर्त्तमान महात्मा जी) आरम्भ से ही पूर्ण उत्साह से वैदिक धर्म प्रचार का कार्य कर रहे थे आप भी ता० १ अप्रेलको स्वयं हरिद्वार पहुंच गये और लालाजीको प्रचार में सहायता दी-महात्मा जी से पं० लेखरामजी का यहीं गाढ़ स्नेह होगया था।

कुम्भ प्रचार की समाप्ति पर ता० २० मई सन् १८९१ को पं० लेखरामजी हैदराबाद में गये और वहां जाकर कई व्याख्यान दिये जिससे आर्यसमाज स्थापित होगया। इस स्थान पर मुहम्मदी और ईसाइयों का बड़ा ज़ोर था परन्तु पं० जी के व्याख्यानों के प्रभाव से एक रईस अपने दो बालकों सहित ईसाई होते २ रह गया। सिन्धी रईस जो यवनमत की ओर झुक रहे थे उनमें मुख्य दीवान सूरजमल जी थे। पं० जीका हैदराबाद में आना सुन सूर्य्यमल जी अपने इलाक़े (प्रान्त) की ओर चले गये। परन्तु पं० जी ने निराशा न कर उनके दो पुत्रों कोही जा घेरा बड़े पुत्र का नाम दीवान मेवारामजी था। इन्होंने पं० जी को बहुत टाला परन्तु यह अपने पुरुषार्थ से विमुख न हुये और और बार बार जाने पर उन्होंने यह आग्रह किया आपका जिस मौलवी पर विश्वास हो उससे मेरा शास्त्रार्थ कराकर अपना मन समझौता करलें। पं० जी ने यहां पर शास्त्रार्थ के विज्ञापनों की भरमार करदी। अन्त को सब से पहिले मौ० सय्यद मुहम्मदअली शाह के साथ मुहम्मद साहिब के मोज़िजे (चमत्कारों) पर शास्त्रार्थ हुआ। मौलवी साहिब पं० जी के धाराप्रवाह वक्तृत्वशक्ति के सामने तङ्ग आगये और उत्तर न देसके। इस पर चार मौलवियों अर्थात् मुहम्मद सदीक़.हाजी सय्यद गुलामुहम्मद,मुफ़्ती सय्यद फ़ाजिलशाह और सय्यद हैदरअली शाह ने पं० जी के नाम बड़े लम्बे चौड़े पत्र भेजने आरम्भ किये। पं०जीने भी फ़ारसीका फ़ारसीमें और उर्दू का उर्दू में उत्तर यथा योग्य दिया। इसका यह परिणाम हुआ कि सूर्यमल जी के दोनों पुत्रों को यवन मत से घृणा

हैदराबाद में जाना

होगई। और एक आर्य परिवार वैदिक पथसे च्युत होता २ रह गया। हैदराबाद में ठहर कर एक पुस्तक कि जिसका शीर्षक "क्या आदम और हव्वा हमारे पहिले वालदेन थे" रक्खा। जिसका यह फल हुआ कि ८ वा १० नवयुवक ईसाई होते २ बच गये।

सिन्ध हैदराबाद से लौटकर ता० ८ अगस्त को पं० जी मान्टगोमरी आदि आर्यसमाजों में पधारे और अपने मनोहर व्याख्यानों से श्रोताओं को तृप्त किया वहां से लौटकर ता० १० अक्टूबर को लाहौर आर्यसमाज में एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया। और ता० १८ अक्टूबर को आर्यसमाज अमृतसर के वार्षिकोत्सव पर प्रचार के लिये गये।

ता० १५ दिसम्बर को पं० जी ने आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री द्वारा ज्ञात किया कि कोई केशवानन्द नामक उदासी साधु आर्य धर्म्म के विरुद्ध आन्दोलन कर रहा है अतः आप "नाहन" पधारें। इस समाचार को सुनकर पं० जी नाहन राज्य में गये और साधु केशवानन्द उदासी के साथ महाराज नाहन के सन्मुख वातचीत की। वहां पर इनकी इतनी धाग बैठी कि धर्म्मवीर जी को चार व्याख्यानों के देने का अवसर प्राप्त हुआ जिससे नाहन राज्य में आर्यसमाज स्थापित होगया। इसके अनन्तर वर्ष की समाप्ति पर्यन्त पं० जी पंजाब में ही भ्रमण करते रहे। जिससे सहस्रों मनुष्यों को सत्योपदेश से लाभ प्राप्त हुआ।

नाहन राज्य से लौट कर ता०२१ मार्च सन् १८६२ ई० को पं० लेखराम जी भियानी ज़िला शाहाबाद को गये और वहां प्रचार कर आर्यसमाज स्थापन किया तदनन्तर आप अजमेर

पधारे और बा० राम विलास शारदा से मिले स्वर्ग वासी पं० वज़ीर चन्द्र जीभी उनदिनों वहीं थे अतः पं०जी का राजपूताने से कुछ अधिक स्नेह होगयाथा और इसी कारण जून सन् १८९२ पर्य्यन्त पं० जी स्वामी दयानन्द जी के जीवन वृत्तान्तों को संग्रह करते हुये राजपूताने में ही रहे।

प्रकृति का परिचय

जिन दिनों बून्दी राज में ब्रह्मचारी नित्यानन्द जी तथा स्वा० विश्वेश्वरानन्द जी ने शास्त्रार्थ की धूम मचा दी थी। और जब उसका पता अजमेर आर्य समाज को लगा तो उन्होंने पं० लेखराम जी को सहायतार्थ भेजने का विचार किया। यद्यपि कुछ मनुष्यों ने यह कर भय दिलाया कि वह रियासत का मामला है, कुछ झगड़ा न खड़ा हो जाय और पं० जी को कष्ट पहुंचे। परन्तु धर्मवीर ने एक की न सुनी और सीधे सिंह की न्याई बून्दी की ओर प्रस्थान किया। यतः महाराज साहिब के शास्त्रार्थ से मने करने पर उक्त संन्यासी भी लौट आये थे तो यह सुन कर आप जहाजपुर चले गये और वहां पहुंच कर सांयकाल को ही व्याख्यान दिया पं० जी कुछ दिनों यहां रह कर जुलाई के आरम्भ में फिर पंजाब को चले गये ता० २२ जुलाई सन् १८९२ में "सीवी" (बिलोचिस्तान) को गये वहां स्वा० नि·

मुंशी प्यारे लालजी पेन्शनर पेशकार दफ़्तर पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट वान्दी कुई जो मुं० हीरालाल जी मीर मुंशी रेज़ीडेन्सी उदय पुर तथा भूत पूर्व प्रधान आर्यसमाज भरतपुर के पिता हैं। लेखराम जी की प्रकृति के विषय में कथन करतेथे कि उन्हें भोजन में उड़द की दाल अत्यन्त प्रिय थी और जिन दिनों वह राजपूताने में जीवन वृतान्त संग्रह कर रहेथे। बहुधा बांदी कुई आया करतेथे तो वहां अपना प्रिय भोजन किया करते थे।

त्यानन्द सरस्वती का पौराणिक पं० प्रीतम शर्म्मा से शास्त्रार्थ होनेवाला था। परन्तु प्रीतम शर्म्मा जी ने शास्त्रार्थ से इन्कार किया और कहा कि ता० २४ जुलाई को आपका हमारा शास्त्रार्थ क्वेटे में होगा यह कह कर चलदिया। परन्तु पं० लेखराम जी स्वा० नित्यानन्द जी के पास सीवी ही में एक सप्ताह तक प्रचार करते रहे।

अक्टूबर मास के आरम्भ में पं० जी जालन्धर पहुंचे। उन दिनों छावनी में जाटोंका रिसाला नं० १४ था जिसका अधिक भाग आर्य्यसमाजी था पं० जी का एक व्याख्यान सदर बाज़ार में बड़ा प्रभावशाली हुआ और इसी प्रकार और भी दो व्याख्यान उपरोक्त रिसाले ही में होते रहे। इसके अनन्तर पं० जी ने पुनः राजपूताने की ओर प्रस्थान किया, और स्वामी जी के जीवन वृतान्त की खोज में अजमेर से बीकानेर, अहमदाबाद इत्यादि होते हुये मोरवी पर्यन्त पर्यटन किया। इन स्थानों में जीवन वृतान्त की अधिक सामग्री हाथ लगी। अतः सन् १८९३ के आरम्भ तक पं० जी ने स्वामी जी के जीवन चरित्र को अन्वेपण पूर्वक संग्रह कर उस कार्य को समाप्त कर लिया। और फिर अजमेर लौट आये और यहां अन्तिम व्याख्यान देकर आगरे में पहुंचे वहां २५ फ़रवरी से १ मार्च सन् १८९३ ई० तक स्थानीय आर्यसमाज तथा आर्य मित्र सभा में व्याख्यान देते रहे।

पं० लेखराम जी का बाबा केसरसिंह से वृक्षों में जीव है या नहीं इस विषय पर वार्तालाप हुआ जिसमें पण्डित जी ने साबित कर दिया कि वृक्षों में जीव है परन्तु सुषुप्ति अवस्था में है।

" यदि रामा यदि च रमा यदि तनयो विनयधी गुणोपेतः
तनये तनयोत्पत्तिः सुरवर नगरे किमाधिक्यम् " ।

गृहस्थाश्रम में प्रवेश

ऋषिदयानन्द की आज्ञा का पूर्ण पालन करते हुये जिस समय पं० लेखराम जी ३५ वर्ष के हुये तो ज्येष्ठ सम्वत् १९५७ विक्रमी के आरम्भ में इन्होंने १ मास की छुट्टी ली और अपने निवासस्थान "कुहूटा" को गये वहां जाकर अपने विवाह का प्रवन्ध किया। और मरी पर्वतान्तरगत भन्नग्राम निवासी एक कुलीन गृह में वैदिक रीत्यानुसार इनका विवाह संस्कार हुआ। इनकी स्त्री का नाम कुमारी लक्ष्मी देवी था। विवाह के पश्चात् कुछ दिनों अधिक अपने ग्राम में रह कर अपनी पत्नी को धार्म्मिक शिक्षा देने का प्रवन्ध करते रहे परन्तु वहुत से धार्म्मिक प्रचार के कार्यों के उपस्थित रहने से वह अपनी स्त्री की शिक्षा के कामोंको अधिक दिन न कर सके।

" न कृतो प्राणिनां हिंसाः मांस मुत्पद्यते क्वचित् "

जोधपुर में मांस झगड़ा

जोधपुर के महाराज मेजर जनरल सर प्रतापसिंह जी यद्यपि ऋषि दयानन्द तथा वैदिक धर्म्म के दृढ़ भक्त हैं। तथापि उनके चित्त में यह वस गई है कि मांस भक्षण के विना क्षत्रियों में वीरता स्थिर नहीं रह सकती। उक्त महाराज जोधपुर राज्य के ३ पीढ़ियों से प्रवन्ध कर्ता भी हैं। इधर लाहौर आर्य समाज के भी दो दल उसी मांस प्रचार की व्यवस्था के कारण हो रहे थे। यद्यपि यह सव गन्ध जोधपुर राज्य के ही मांस विषयक व्यवस्था के कारण लाहौर में फैली थी। और इसी कारण स्वा० प्रकाशानन्द जी मांस दलकी ओर से जोधपुर के झगड़े

में पहुंचे भी थे। इनका मुख्य तात्पर्य यह था कि वहां पहुंच कर यह लीला रची जावे कि समाचार पत्रों, सम्पादकों तथा उपदेशकों से पत्रों द्वारा इस बात की व्यवस्था ली जावे कि मांस भक्षण वेद विहित है और व्यवस्थापकों को उचित पारितोषिक भी दिलाया जावे। कतिपय आर्य पुरुषों ने महाराज साहिब की हां में हां मिलाकर इस मांस यज्ञ में आहुतियां डालीं। कुछ उपदेशकों को भी अर्थ प्राप्ति हुई। अब यह विचार हुआ कि यदि पं० भीमसेन जो उन दिनों ऋषि दयानन्द के *निज शिष्य समझे जाते थे और मेरठ के पं० गङ्गा प्रसाद एम. ए. भी स्वर्गवासी पं० गुरुदत्त के पश्चात् उनके सदृश माने जाते थे अतः इनसे भी व्यवस्था ली जावे। इसी कारण इन दोनों महानुभावों को महाराज की ओर से निमन्त्रण भेजा गया।

"अर्थ कामेष्वसक्तानां धर्म ज्ञानं विधीयते"

इधर पं० भीमसेन शर्मा की प्रकृति से आर्य पुरुष पूर्ण परिचित थे अतः उनको ठीक अवस्था में रक्खे जाने के लिये पंजाब प्रतिनिधि की ओर से पं० लेखराम जी को भेजा जाना निश्चित हुआ। महाराजा साहिब के निमन्त्रण को प्राप्त कर पं० भीमसेन और पं० गङ्गाप्रसाद एम. ए. दोनों २ अगस्त सन् १८९३ ई० के प्रातः जोधपुर पहुंचे। जब इस विषय की वार्ता पं० गङ्गाप्रसादजी से आई और इन्हें बहुत प्रकार के

* इन दिनों पं० भीमसेन जी बड़ी प्रतिष्ठा के साथ "आर्य सिद्धान्त" नामक पत्र के टाइटिल पर यह लिखा करते थे :—

(श्रीमतां परम विदुषां श्रीमद्दयानन्द सरस्वती स्वामिनां पं० भीमसेन शर्म्मा—सम्पादित, प्रकाशिता नीतञ्च)।

लालच दिये गये तो उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि धन तथा प्रतिष्ठा के लिये मिथ्या बोल कर धर्म से गिरना श्रेष्ठ पुरुषों के लिये लज्जा की बात है अतः यह लालच उन्हें धर्म से च्युत नहीं कर सका। ता० ४ अगस्त को पं० भीमसेन जी से महाराज साहिब की प्रथम भेंट हुई। यद्यपि इस विषय पर विचार करते हुये पं० भीमसेन ने कहा तो सही कि वेदों में मांस भक्षण का प्रत्यक्ष निषेध पाया जाता है तथापि यह मानकर कि हिंसक पशुओं का वधपाप नहीं क्योंकि वेदों में उनके मारने की आज्ञा पाई जाती है अतः दबे दातों ऐसे पशुओं के मांस भक्षण का विधान श्रुति सम्मत होने की व्यवस्था देदी। उधर ५ अगस्त सन् १८९३ ई० को पं० लेखराम जी जोधपुर पहुंचे और इस व्यवस्था का समाचार सुना धर्मवीर पं० लेखराम जी ने पं० भीमसेन की ख़ूब ही ख़बर ली क्योंकि स्वा० प्रकाशानन्द ने सारे नगर में यह समाचार फैला दिये थे कि पं० भीमसेन ने मांस भक्षण वेदानुकूल होने से उसको समर्थन करते हुये व्यवस्था दे दी। पं० लेखराम जी ने पं० भीमसेन से कहा कि आत्मघात करना अच्छा नहीं होता सत्य की सदैव जय होती है अतः यदि आपने महाराज साहिब से स्पष्ट शब्दों में मांस भक्षण का निषेध न किया हो तो यह ज्ञात रहे कि आर्य संस्थाओं में पैर रखने को स्थान न मिलेगा। जब पं० भीमसेन दूसरे दिन महाराज साहिब से विदा होने के लिये गये तो महाराज साहिब के विना पूछे ही कहने लगे कि मांस-भक्षण पाप है और वेदों में हानिकारक पशुओं को दण्ड देने तथा अधिक हानि पहुंचाने पर मार डालने की भी आज्ञा है परन्तु उन मरे हुये पशुओं का मांस

देना चाहिये। इस अभ्यर्थना (अपील) में २००) रु० तो प्रचार के मार्ग व्यय के लिये और सुयोग्य अंग्रेज़ी भाषा जाननेवाले विद्वान की सेवा मांगी गई थी परन्तु शोक कि उन दिनों अमेरिका जाने के लिये कोई प्रस्तुत न था। जोधपुर से लौटकर पं० लेखरामजी पंजाब गये वहां प्रत्येक स्थानों में मांग पर मांग आने लगी। क्योंकि विरोधियों के आक्रमण निवारण के लिये पंडित जी ढाल का काम देते थे। पंडित जी को विरोधियों के बहुत से पत्रों के उत्तर भी देने पड़ते थे एक पत्र जो उन्होंने *मौलवी अबीदुल्ला के नाम फ़ारसी भाषा में लिखा था उसका अनुवाद पाठकों के चित्त विनोद के लिये लिखा जाता है।

पत्र का अनुवाद

"तहक़ीक पसन्द रास्ते के कारबन्द अनन्तरामअल मशहूर मौलवी अबीदुल्ला! ख़ुदारास्ती की हिदायत देवे। नमस्ते मुझे एक अर्से से ख़्याल था कि आपको बज़रिये ख़तो किताबत के आर्यधर्म उसूल से मुत्तलै करूं और परमात्मा परब्रह्म की इबादत (उपासना) का तरीक़ा निहायत उम्दा बिला सिफ़ारिश ग़ौर आपको बतलाऊं रब्बुल आलमीन (सृष्टिकर्त्ता परमेश्वर) का हज़ार २ शुक्र (धन्यवाद) है कि आज वह मेरी मुराद पूरी हुई। अब मैं मतलब की ओर रूजू होता हूं अर्थात् आपकी किताब तुहफ़तुल हिन्द (تحفة الهند) अल आख़िर बचश्म ग़ौर देखी। और उसके सब एतराज़ात (आक्षेपों) को इन्साफ़ (न्याय) की तराज़ू (तुला) में तोला कुल दार-

---

* यह वही मौलवी साहिब हैं कि जिनका जवाब हुज्जतुल इस्लाम में दिया गया है।

मदार केवल पद्मपुराण भागवत, शिवपुराण व गरुण पुराण तथा मजमुई क़िस्सेजात् पर पाया गया और साथही मुझे आपकी अक़्ल पर अफ़सोस आया कि आपने इन क़िस्सेजात् को तहक़ीक़ से ही बनाया तो राजा भोज के समय के पुराण इत्यादि आपने दूरन्देशी से क़ाबिल एतराज़ात मान लिये और इस वे बुनियाद तोहमत (अभियोग) की बदौलत धर्म मुक़द्दम व तरीक़ा मुनव्वर से मुतनफ़िफ़र होकर मुसल्मान होगये। वेशक इतना तो मानता हूं कि इन दिनों आफ़ताब (सूर्य) सदाक़त (सच्चाई) अब्र (बादल) ज़ुलमत और जहालत (अन्याय और अविद्या) में डूबा हुआ है चुनांचि आप की तहरीर से जाबजा (यत्रतत्र) ज़ाहिर है। इसके अलावा वुतपरस्ती, मक़ां परस्ती, दरिया परस्ती, और आफ़ताब परस्ती इत्यादि कई अक़्साम (भांति) की जहालतों को भी आमदनी की सूरत करलिया है इन्हीं दिनों की कमबख़्ती का बाइस है कि आप जैसे लायक़ और रास्ती के मुतलाशी बुनियाद सदाक़त से फिर कर नये मज़हबों में दाख़िल हुये चले जाते हैं परन्तु परमात्मा को भारतवर्ष की बुरी दशा पर रहम आया और बमूजिब (Law of Nature) सृष्टि क्रम के ज़रूरी था कि कोई फ़ाज़िल होता चुनांचे मुत्तसिफ़ औसाफ़ जनाब स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महराज ने जगत के उद्धार पर कमर बांधी और जो और लोगों से तमै (लालच) और तलवार से न हो सका वही तहक़ीक़ात (अन्वेषणा) व दलाइल बेनज़ीर से अच्छी प्रकार दिखलाया बाद अपनी ख़िदमत मफ़ज़ा के वह महाराज रिहलत आलिये जाविदानी (परमधाम) होगये। चुनांचे इस वक्त आर्य-

वर्त्त में तीनसौ के क़रीब बल्कि ज़्यादह आर्य समाजे हैं उन्होंने वेद मुक़द्दस से यह साबित करदिया कि हिन्दू लफ़्ज़ ग़लत है असल नाम आर्य है. वेद मुक़द्दस से ज़्यादा तौहीद और वहदानियत और किसी किताब में नहीं है दुनियां की सब किताबों में वेद पुराने हैं। तवारीख़ और तालीम दोनों से यह साबित है कि वेदों में कोई क़िस्सा नहीं है और न किसी इन्सान मुर्दा व ज़िन्दा पर ईमान लाने की ज़रूरत है। तमाम मख़लूक़ात के वास्ते निहायत उम्दा और इन्सानी इर्शाद (आज्ञा) परमात्मा की तरफ़ से मौजूद हैं। पस गुज़ारिश है कि अगर आप दर हक़ीक़त रास्ती व तहक़ीक़ दर पसन्द हैं तो मुबाहिसा करके तहरीरी व तक़रीरी फ़र्माकर वेद मुक़द्दस आर्यधर्म को क़ुबूल करें। क्योंकि अर्से १३ साल की तहक़ीक़ात से स्वामी जी ने साबित करदिया है कि वेद मुक़द्दस के सिवाय और कोई किताब इलहामी नहीं है। पस बख़ियाल नेकनीयती के यह न्याज़ नामा इरसाल ख़िदमत हैं।

आपका न्याज़मन्द

लेखराम—

विपदि धैर्यमथाभ्युदयेक्षमा।
सदसि वाक् पटुता युधि विक्रमः॥
यशसि चाभि रुचिर्व्यसनं श्रुतौ।
प्रकृति सिद्ध मिदं हि महात्मनाम्॥

[मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी का विज्ञापन]

"आज की तारीख़ से जो २० फ़र्वरी सन् १८९३ है छः वर्ष के अन्तरगत यह मनुष्य (पं० लेखराम) अपनी बद ज़बानियों की वजह से जो इसने (रसूल अल्लाह) के हक़ में

की है आज़ाब शदीद में मुब्तला होजावेगा।" इसके अतिरिक्त पं० लेखराम जी के क़त्ल की भविष्य वाणी सच्ची दिखलाने की गरज से इसी विज्ञापन में यह भी वर्णन किया कि अब मैं इस पेशीनगोई को प्रगट कर सम्पूर्ण यवनों आर्य्यों, ईसाइयों तथा अन्य पुरुषों पर प्रगट करता हूं कि यदि ६ वर्ष के भीतर कोई आज़ाब लेखराम के ऊपर नाज़िल न हुई तो समझो मैं ख़ुदा की ओर से नहीं। यदि मेरी पेशीन गोई झूंठी निकली तो प्रत्येक दंड के भुगतने के लिये मैं उद्यत हूं कि मेरे गले में रस्सा डालकर मुझे सूली पर चढ़ाया जावे। इस विज्ञापन द्वारा पं० लेखराम जी के क़त्ल के इरादे को मिर्ज़ा जी ने उपरोक्त शब्दों में प्रगट करदिया था और यह शेर विज्ञापन के आरम्भ में लिखा हुआ था।

पेशीनगोईकी आड़में क़त्ल करवादो

"इल्ला ऐ दुश्मन नादानो बेराह।
तीरज़ तेगे बुर्राने मुहम्मद"॥

इसके अतिरिक्त मुसलमानों को भड़काते हुये लिखा था कि "कौन मुसलमान है जो इन पुस्तकों को सुने और उसका हृदय खण्ड २ न हो" और यह मेरी पेशीनगोई मुसलमानों के लिये और उनके लिये जो असलियत को जानते हैं एक संकेत है।

धर्मवीर पं० लेखराम जी ने इस विज्ञापन को पढ़ा और एक उत्तर दिया जो—बड़े सरल शब्दों में लिखा गया था वर्णन किया जाता है पाठकगण? क्या यह हमारे क़त्ल या विष देने के मंसूबे नहीं हैं। परन्तु मिर्ज़ाजी विश्वास रक्खें कि मैं उनकी इन धमकियों से उनकी ओर रुजू नहीं हो

सकता। हां यदि वह मुसलमान मत की सत्यता सिद्ध करदें और इस लिये कि उन्होंने अपने तईं प्रगट किया है कि खुदा ने उन्हें मसीद मौजूद पैदा किया है तो कुछ चमत्कार दिखलावें और मुझे क़ायल करें। और वह चमत्कार यह होगा कि (१) यदि मिर्ज़ा ज़ी एक मास के भीतर अपने इलहामी खुदा की सहायता से संस्कृत में उपदेश सीखकर आर्यसमाज के दो विद्वान् पं० देवदत्त शास्त्री और पं० श्यामजी कृष्णवर्मा का दम बन्द करदें। तब हम आप के इलहाम के सामने अपने तईं पराजय मान लेंगे। (२) छः शास्त्रों में से ३ शास्त्रों के ऋषिकृत भाष्य नहीं मिलते। यदि वह तीनों भाष्य अपने इलहाम देनेवाले की मार्फ़त (द्वारा) हमको मंगवा दें तो मैं अवश्य आप की सत्यता को मान लूंगा। पं० लेखराम जीने ३ शेर भी लिखे जो पाठकों के मनोरञ्जनार्थ नीचे लिखे जाते हैं-

दरीं रहगर कुशन्दम वर - व- सोज़न्द
न तावम् रुये दीने वेद अक़दस—
फ़िदा गश्तम ज़ि सरतापा बराहश
नसिरओ पा व्रम परमात्मा वस
नदारम ग़ैर ऊ — परवाय हरगिज़
चि बाकम गर बुवद नाशाद हरकस

प्रिय पाठको! इन शैरों के आशय से पता चलता है कि हमारे चरित्रनायक का सत्य पर कितना विश्वास था। हमारे धर्मवीर को मुहम्मदी तलवार का भय न था। किन्तु सत्य धर्म के त्यागने से आत्मा हिचकती थी।

इन्हीं दिनों अमेरिका के शिकागो नगर की प्रदर्शिनी की

शिकागो की प्रदर्शिनी

धूम सुनने में आई। और इधर आर्य समाजकी भी ओर से प्रतिनिधि भेजे जाने के लिये विचार प्रविष्ट था। जब पं० लेखराम जी जोधपुर में ही थे। उन्हीं दिनों राव राजा तेजसिंह द्वारा आपको ज्ञात हुआ कि महाराजा प्रतापसिंह जी के द्वारा भेजे हुये स्वामी भास्करानन्द (जो उन दिनों अमेरिका ही में थे) यह चाहते हैं कि यदि आर्य समाज उन्हें अपना प्रतिनिधि चुन ले तो अच्छा हो परन्तु लेखराम जी को भली भांति ज्ञात था कि वह एक धूर्त्त मनुष्य है। इसके लिये जनता को परिचित करने के लिये आपने चेतावनी की। दूसरी ओर मुं० शगुनचन्द (स्वर्गवासी शिवगणाचार्य) आशागतों में थे और अपने व्याख्यान के नमूने—आर्य जनता को दिखा रहे थे। परन्तु पं० जी जानते थे कि–इन तिलों में तेल कहां? आर्यसमाज का प्रतिनिधि एक सुयोग्य वक्ता, सिद्धान्तों का ज्ञाता तथा सच्चा हितैषी होना चाहिये। वहां इन बातों में से कोई भी न थी। अन्तको पं० जी ने बा० रामविलास शारदा जी द्वारा एक अपील आर्य जनता की विज्ञप्ति के लिये मुद्रित कराई और एक सुयोग्य अंग्रेजी जाननेवाले के लिये आवश्यकता प्रगट की परंतु शोक कि उन दिनों कोई माई का लाल जानेको उद्यत न हुआ हमारे पं० जी के हृदय पर इसका प्रबन्ध न हो सकने के कारण एक बड़ी चोट सी लगी। परन्तु क्या करें यदि वह अंग्रेज़ी जानते होते तो अवश्य अर्णव पोत (जहाज) में बैठ कर अमेरिका चले जाते।

कार्तिक सम्वत् १९५० में लाला मुंशीराम जी ने अपने

हैदराबाद में धर्म प्रचार — प्रसिद्ध पत्र सद्धर्म प्रचारक में पं० जी के विषय में अपील करते हुये इस प्रकार लिखा कि "कुरानाचार्य पं० लेखराम जी की प्रत्येक स्थानों पर बड़ी आवश्यकता रहती है । दूसरे उनके पास स्वामी जी के जीवन का कार्य बड़ा आवश्यक है। हम स्वामी जी के जीवन चरित्र को रोककर जहां तक हो सकता है केवल समाजों को प्रसन्न करने के लिये पण्डित जी को भेज देते हैं परन्तु "एक लेखराम और सम्पूर्ण समाजोंमें उनकी आवश्यकता" हम इस समय पाठकगणों के सन्मुख हैदराबाद का समाचार इस प्रकार वर्णन करते हैं जो कि हमारे वर्णन की सत्यता को प्रगट करता है कि हैदराबाद में आजकल यवन मत बड़ा जोर पकड़ रहा है। इस समय के आये हुये समाचारों से ज्ञात होता है कि महाराजा कृष्णप्रसाद जी जो पेशावर फ़ौज वज़ीर हैं। यवन मत की ओर झुक रहे हैं और उन का पौराणिक मत पर पूर्ण विश्वास नहीं। इस समय वहां आर्य पथिक को पहुंचने की बड़ी आवश्यकता है और यह भी ध्यान रहे कि इस समय पं० जी के शरीर में कुछ कष्ट भी है। प्रिय पाठको! आपको ज्ञात हुआ हुआ होगा कि हमारे चरित्र नायक का जीवन कितना आवश्यकीय जीवन था। तथापि पं० जी अपने स्वास्थ की ओर धर्म प्रचार के सामने कुछ ध्यान न देते थे। वह उसी रुग्नावस्था में हैदराबाद गये वहां जाकर अपने काम में सफलता प्राप्त की।

लाहौर में इंडियन नेशनल कांग्रेस — इसी वर्ष अर्थात् सम्वत् १८९३ के दिसम्बर मास में लाहौर में कांग्रेस का बड़ा अधिवेशन होने वाला था। और उन दिनों लाहौर में

नेशनल कांग्रेस का केन्द्र बन रहा था। राजनैतिकों के शिरोमणि स्वनाम धन्य दादा भाई नौरोजी को उक्त कांग्रेस (भारत जातीय महासभा) का प्रधान निर्वाचित किया गया था। दूर २ से बहुत से प्रसिद्ध आर्य भाई भी सम्मिलित हुये थे। इस अवसर पर एक ऐसे योग्य वक्ता की आवश्यकता थी कि जो इस समय को साध ही न सके किन्तु जिसकी बढ़ी चढ़ी वक्तृत्व शक्ति के साथ उसकी आवश्यक बातों में जानकारी भी बढ़ी हुई हो।

अतः इस अवसर पर पं० लेखराम जी को ही बुलाया गया और वहां उनके कई व्याख्यान हुये। जो उन दिनों के समाचार पत्रों में छप चुके हैं।

मनस्वी कार्यार्थी न गणपति दुःखं न च सुखम्

१० जनवरी सन् १८६४ ई० को कांग्रेसकी समाप्ति पर जब पं० जी लाहौर से लौटे तो उन्हें समाचार मिला कि शाहाबाद (ज़िला अम्बाला) से लगभग १० कोस की दूरी पर "मीरान जी का ठगायन वास" नामक नगर में कुछ हिन्दू मुसलमान होने को उद्यत हैं। उन दिनों पं० जी के पैर में एक फोड़ा निकल आया था परन्तु पं० जी अपनी असह्य वेदना की ओर कुछ ध्यान न देते हुये वहां गये और उन्हें व्याख्यानों द्वारा समझा बुझाकर उनको स्वधर्म पर स्थित रक्खा सुना गया है कि इस स्थान पर इन को बड़ी आपत्ति झेलनी पड़ी थी। परन्तु उस समय के समाचारों तथा दर्शकों के कथन से ज्ञात हुआ कि उस आपत्ति को पं० जी ने बड़े साहस तथा धैर्य से सहन करते हुये अपने मनोरथ को सफल किया। उनके व्याख्यानों का यह प्रभाव हुआ कि वहां आठ ही आर्य

समाज स्थापित होगया।

शाहाबाद से लौटकर ता० १६ जनवरी १८६४ को पं० जी आर्य समाज में पहुंचे। और वहां आपका एक प्रभावशाली व्याख्यान हुआ। कर्नाल से लौटते हुये ता० २२ जनवरी को जालन्धर आर्य समाज में पहुंचे। वहां से ता० १३ फरवरी को झींग मधियाने में जाकर तीन दिन लगातार व्याख्यान दिये और १३ अप्रैल को कुरुक्षेत्र के मेले पर आकर कई व्याख्यान दिये।

पर्य्यटन

१५ जुलाई को जालंधर में मूर्तिपूजा पर व्याख्यान हुआ और वहां से क्वेटा आर्य समाज की ओर प्रस्थान किया वहां पहुंच कर ३ व्याख्यान दिये १३ अगस्त को वहां से लौटते हुये बिलोचिस्तान, भावल पु और मुल्तान की आर्य समाजों में गये-वहां से गोविन्दपु आर्य समाज के वार्षिकोत्सव में सम्मिलत हुये। वहां से पु जालंधर आर्य समाज को पधारे यहां पर एक राधास्वामी चेले को आर्य बनाया और फिर लाहौर आर्य समाज में डे जमाया इस समय पं० जी के साथ आपकी धर्म्म पत्नी जी थीं। मार्ग में लौटते समय आप जतगरा में उतरे और वहां ए व्याख्यान दिया और लाला मूसा नामक नगरमें एक पुरुष यवन मत से हटा कर सत्मार्ग पर लाये। इन्ही दिनों जी ने अनुराग से भरत् के खंडहरों को जा देखा। यह वही प्रसिद्ध स्थान कहा जाता है कि जहां म

भरतजी की नन्हसाल

राज कैकेय की राजधानी थी। और भ भक्ति भाजन भरत जी महाराज की नन्हस थी। यहां पर उन्होंने एक प्राचीन काल का सिक्का भी दे

था। इसके अनन्तर ता० १० मार्च सन् १८९५ ई० को स्याल-कोट नगर में पहुंचे वहां रिसाले के सिपाही यवन मत की ओर झुक रहे थे वहां पहुंच कर उनकी शंका समाधान की और आर्य धर्म पर आरूढ़ किया। ता० ३१ मार्च को देहली आर्यसमाज में जाकर व्याख्यान दिया और यवनोंसे शास्त्रार्थ भी किया था यहां पर मुसलमानों ने चिढ़ कर पं लेखराम जी पर दावा करदिया। प्रकरण वश उस मुकद्दमे की एक संक्षिप्त प्रति दी जाती है—बहुत सम्भव है कि पाठकों का मनोरंजन करे।

	दावा बनाम मुल्ज़िमान
(१) मौलवी अब्दुल हक़	(१) पं० लेखराम
(२) हबीब अहमद	(२) नरसिंहदास
(३) मुहम्मद उद्दान	
(४) कमरुद्दीन	
(५) अब्दुल करीम	
देहली निवासी मुस्तग़ीसान	

जुर्म बमूजिब दफ़आत् २९२, २९३, २९८, ५०१, तथा ५०२ ताज़ीरात हिन्द—"हुक्म आख़िरी इस्तग़ासा खर्च"

"यह इस्तग़ासा अब्दुल हक़ की ओर से पं० लेखराम के ऊपर है जो कि अमृतसर का निवासी सुना जाता है। इस्तग़ासा यह है कि पं० लेखराम ने एक पुस्तक बनाई जो कि शामिल मिस्ल है और जिसमें अनुचित वाक्य यवन मत के पैग़म्बरों के लिये इस्तेमाल किये गये हैं जिससे वह मस्तू-जिब सज़ा का ठहरता है। मुस्तग़ीसों के यह बयानात हैं कि लगभग ढाई माह व्यतीत हुआ कि एक पुस्तक एक पुरुष ने अब्दुल हक़ को दी और कहा कि यह पुस्तक पं० लेखराम ने

भेजी है जिस आदमी ने यह किताव दी थी वह नामालूम और अब्दुलहक़ एक महजूवी मुन्सिफ़ रियासत हैदराबा के नौकर हैं इसलिये उसने वह पुस्तक अपने दोस्तों दिखलाई जिसमें मुहम्मद उद्दीन और क़मरुद्दीन भी शामि थे। हबीवुद्दीन वयान करता है कि मुझको यह किताव ए स्कूल के लड़के से मिली। उसने अब तक उसको न लौटाया। अब्दुल करीम वयान करता है कि ज्योंही मैं इस किताव का शोर सुना मैंने फ़ौरन बाज़ार से मंगवा परन्तु इनमें से किसी वयान से भी कोई जुर्म इन दफ़आत वखिलाफ़ लेखराम ज़ाहिर नहीं होता—क्या वह ज़ाहिर कर हैं कि कोई जुर्म जो दफ़ा २९२ सरज़द हुआ-जुर्म जिसक दावा किया जाता है "कि एक ला मालूम आदमी ने य किताव अब्दुल हक़ को देकर कहा कि यह लेखराम ने भेज है" और इन किताबों का छपवानेवाला लेखराम ही कहा जात है-यह किताबें अमृतसर में छपी हैं। मैं नहीं ख़्याल करता वि लेखराम की निस्वत ज़िला देहली में कोई जुर्म सरज़ि में करने का सबूत दिया गया है। इसके अलावा मैं ख़्या करता हूं अगर ज़ेर दफ़ा २९२ में कोई जुर्म देखा भी जात तव भी वाकआत इस मुक़दमे के ऐसे हैं किसी फौज़दार कारर्वाई की ज़रूरत न मालूम हुई आशाअतकी तारीख़ १-८९ई० है। मुस्तग़ीसान के कब्जे में यह किताव महीनों से है और और जव वह इस्तग़ासा करते हैं कि यह किताव फ़ुहश है। मैं ख़्याल करता हूं कि इसमें ज़्यादा कारर्वाई की गुंजा इश नहीं इसलिये ख़ारिज करता हूं*। दः हाकिम

* इस मुक़द्दमे की अपील देहली और लाहौर चीफ़ कोर्ट में भी की गई परन्तु दोनों स्थानों से ख़ारिज हो गई।

"यस्तर्केणानुसंधत्ते सधर्म्मवेदनेतरः"

ता० १३ अप्रैल के प्रातःकाल पं० जी मालेर कोटला के के उत्सव में सम्मिलित हुये—यह एक मुसलमानी रियासत है। हमारे चरित्र नायक के पहुंचते ही धूम मच गई। शंका समाधान के समय एक मुंशी अब्दुल्लतीफ़ नामी ने पुनर्जन्म विषय में कुछ प्रश्न किये जिनका उत्तर पं० कृपाराम जी (स्वर्गवासी माननीय स्वा० दर्शनानन्दजी महाराज) ने बड़ी योग्यता से दिये—परन्तु मुन्शी जी उत्तर सुनकर कह दिया करते थे कि तबियत को तसकीन नहीं हुई। उस समय महात्मा मुंशीराम जी उस उत्सव का प्रबन्ध कर रहे थे। उन्होंने स्वामी दर्शनानन्द के दिये उत्तरों का भाव समझाना चाहा—इस पर मुंशी जी ने घबड़ा कर कहा कि साहिब आप कौन हैं जो भाव समझावेंगे इस पर महात्मा जी ने उत्तर दिया "स्थानिक समाज के प्रधान की आज्ञा से यहां का प्रबन्ध भी कर रहा हूं। इसके अतिरिक्त पञ्जाब प्रतिनिधि का प्रधान भी हूं।" इस पर भी उन्हें विश्वास न आया और बोले कि आपका नाम प्रतिनिधि सम्बन्ध में मैंने कभी नहीं सुना—यहां तक कि सद्धर्म प्रचारक पत्र में भी नहीं पढ़ा-अतः आप प्रतिनिधि के प्रधान नहीं है। इस पर महात्मा जी को सन्देह हुआ और उन्होंने युक्ति से पूछा कि मुंशी जी क्या आप मेरा नाम जानते हैं। मुन्शी साहब ने तुरन्त उत्तर दिया कि जी हां खूब जानता हूं। महात्माजी नें पूछा कि भला बतलाइये तो सही कि क्या नाम है? मुंशी जी कहने लगे आप ही तो पं० लेखराम साहब हैं। इस पर श्रोतागण खिल खिला कर हंस पड़े किसी कवि ने सत्य कहा है।

"को वीरस्य मनस्विनः स्वविषयः को वा विदेशः स्मृतः"
यं देशं श्रयते समेव कुरुते बाहु प्रतापार्जितम्"

मालेर कोटले से लौटने के पश्चात् पं० लेखराम जी रोपड़ आर्यसमाज के उत्सव पर पहुंचे और वहां उनके २ व्याख्यान भी हुये इधर वालकराम उदासी साधु भी-प्रीतम देव, केशवानन्दादि की भांति पञ्जाब में भ्रमण कर स्वा० दयानन्द जी तथा आर्य्य समाज को जी खोल कर गालियां प्रदान कर रहे थे। पं० जी ने सुनकर वालकराम जी से शास्त्रार्थ करना चाहा। और "भेरा" आर्य समाज में जा विराजे परन्तु उक्त साधु जी ने शास्त्रार्थ से मनेकर दिया—पं० जी को कई आवश्यक कार्यों के अतिरिक्त लाहौर जाना आवश्यक था क्योंकि पं० लेखराम जी की धर्मपत्नी गर्भवती थीं और कुछ सन्तानोत्पत्ति की आशा थी इसलिये वह ता० १५ मई सन् १८८५ को लाहौर से लेकर कुहटा पहुंचे—वहां ता० १८ मई शनिवार के दिन प्रातः ६॥ बजे पुत्र उत्पन्न हुआ। बच्चे का नाम करण संस्कार वैदिक रीति से करके २८ मई को पुनः यात्रा आरम्भ कर दी—और "भेरा" आर्यसमाज में आ विराजे यहां वालकम साधु को पुनः आमंत्रित किया परन्तु वह न आये और शास्त्रार्थ के नाम से टालमटोल करते रहे। इन्हीं दिनों पं० जी को समाचार मिला कि उनके पिता का देहान्त हो गया अतएव वह छुट्टी लेकर अपने निवास स्थान कुहटा को गये और फिर अपनी धर्म्म-पत्नी और पुत्र "सुखदेव" को लेकर जालन्धर ही आगये।

पुत्रोत्पत्ति का आनन्द

पं० जी के पिता का देहान्त

ता० १६ मई सन् १८८६ को आप रोपड़ आर्य्य-समाज के उत्सव पर पहुंचे—उन दिनों द्वारिकामठ के श्री शंकराचार्य जी का जालन्धर में आगमन सुनाई देता था। अतएव आप जालन्धर पहुंचे। वहां पर बड़े बड़े विद्वानों के व्याख्यान हुये। पं० जी का व्याख्यान भी विशेष हलचल मचाने वाला था—यहां से चल कर कर्त्तारपुर ग्राम (दण्डी विरजानन्द जी के जन्म स्थान) में उपदेश दिया—और आर्य्य-समाज स्थापित की—इन दिनों पं० जी जहां कहीं उत्सवों पर जाया करते थे वहीं उनके साथ उनकी धर्म्मपत्नी तथा प्रिय पुत्र सुखदेव जाया करते थे—इसी के अनुसार एक समय अम्बाला और मथुरा आर्य्यसमाजों के उत्सवों पर गये वहां से उनका पुत्र सुखदेव बीमार होकर लौटा। परन्तु पुत्र को बीमार ही छोड़ कर शिमला आर्य्य समाज के उत्सव पर पधारे और जब ता० २६ अगस्त सन् १८९६ ई० को लौटे तो पुत्र की बीमारी बढ़ती ही पाई।

यद्यपि चिकित्सा तथा निदान कराने में कुछ कमी नहीं की गई थी परन्तु प्रभु की बड़ी विचित्र लीला है कि हमारे चरित्रनायक का सुपुत्र सुखदेव सबके देखते २ ता० २८ अगस्त सन् १८९६ के दिन लगभग सवावर्ष की आयु में नश्वर भौतिक कलेवर का परित्याग कर * प्रेतभाव को प्राप्त होगया उस समय पं० लेखराम जी के चित्त में किंचित उद्वेग के स्थान में सहनशक्ति का अपूर्व चमत्कार देखा गया। आपने धैर्य्य को धारण करते हुये शोक को पास तक न फटकने दिया सच है:—

* पुनरुत्पत्तिः प्रेत्यभावः (न्यायदर्शने)

प्राप्तव्यमर्थं लभते मनुष्यो देवोऽपि तं लंघयितुं न शक्तः
तस्मान्न शोचामि न विस्मयो मे यदस्मदीयं नहि तत्परेषाम् ।

परन्तु मृत बालक की दुखिया माता के कोमल हृदय पर एक भारी वज्रपात हुआ कि जिस जालन्धर की भूमि में उसने पुत्र रत्न प्राप्त किया था उसे उसी जालन्धर की कठिन भूमि में सब के सन्मुख हाथों से खो देना पड़ा हा ! फिर उस भारत महिलाअग्रगण्या से यह दुख क्योंकर सहन हो सकता था संसार का विचित्र प्रवाह है किसी महात्मा ने सत्य कहा है.-

क्वचिद्विद्वद्गोष्ठी क्वचिदपि सुरामत्त कलहः
क्वचिद्वीणावादः क्वचिदपि च हाहेति रुदितम्
क्वचिद्रम्या रामा क्वचिदपि जरा जर्जर तनुः
नजाने संसारः किममृतमयः किं विषमयः ॥

धर्म प्रचार

सितम्बर सन् १८८६ ई० के आरम्भ में पं० लेखराम जी ने पुनः वैदिक धर्म का प्रचार आरम्भ किया और पसरूर में लगभग ८०० श्रोताओं के बीच में वैदिक धर्म की श्रेष्ठता पर एक प्रभावशाली व्याख्यान दिया। यहां पर व्याख्यान की समाप्ति पर शंका समाधान का समय दिया गया जिसमें एक मौलवी महोदय ने कुछ प्रश्न किये थे जिसका उचित उत्तर दिया गया। लाला गणेशदास जी सियालकोटी जी यहां की एक विचित्र घटना की सूचना देते हैं कि जिससे हमारे चरित्र नायक के निर्भीक दृढ़व्रत होने का प्रमाण पाया जाता है। तीसरे दिन जब कि पं० लेखराम जी का व्याख्यान होने ही वाला था कि एक बड़े

प्रसिद्ध म्यूनिस्पल कमिश्नर आप और महाशय मथुरादास जी उपदेशक के समीप बैठ कर कुछ कानाफूसी करने लगे। आर्य पथिक ने कहा कि "घुसपुस कानाफूसी क्यों करते हो, क्या बात है" ?

मथुरादास जी ने कहा कि यह महाशय थानेदार जी का सन्देसा लाये हैं कि यदि आपके व्याख्यान देने से यहां बलवा हो जावे तो पुलिस उत्तरदाता न होगी। यह सुनते ही पं० जी के चित्त में क्रोध का आवेश हुआ और कड़क कर बोले कि "क्या हम युद्ध के लिये आये हैं हम तो धर्मोपदेश करने आये हैं जिसका जी चाहे सुने जिसका जी न चाहे न सुने! यदि इसी प्रकार किसी बात की आशंका की जाती है तो हम देखेंगे कि कौन बलवा करता है। हमें अपनी रक्षा के लिये केवल ईश्वर की सहायता ही पर्याप्त है" यहां से चल कर पं० जी वज़ीराबाद के उत्सव में पहुंचे। वहां इनके व्याख्यानों की धूम मचगई सायंकाल के समय महात्मा मुन्शीराम जी का व्याख्यान होनेवाला था इसलिये उस समय क़ादियानी मिर्ज़ा गुलाम अहमद के चेले हकीम नूरुद्दीन भी आये। मुसलमान श्रोताओं की कमी न थी इस समय यवन श्रोताओं की उपस्थिति में पं० लेखराम जी व्याख्यान के लिये खड़े किये गये। इस व्याख्यान में हमारे चरित्र नायक ने ईश्वर का स्वरूप ऐसा खींचा कि मुसल्मानों के सिर हिलने लगे। जब मिथ्या पैग़म्बरों का परिचय (दिग्दर्शन) कराया गया तो कर्त्तलध्वनिसे सभामण्डप गूंजता था और हकीम नूरुद्दीन मनहीमन खिजते थे। व्याख्यान समाप्त होने के पश्चात् पं० जी कतिपय आर्य भद्र पुरुषों के साथ वायु सेवन के लिये पलकू

के तट पर गये वहां से लौटते हुये संध्या के समय नगर के बाहर एक मस्जिद में देखा तो मौलवी नूरुद्दीन साहब का व्याख्यान हो रहा है। रात अंधेरी थी सब सुनने को खड़े हो गये—मौलवी साहिब कह रहे थे कि "ओ बेवक़ूफ़ो! तुम सब बकरों की भांति डाढ़ी हिला रहे थे और यह न समझे कि तुम्हारे ईमान पर कुल्हाड़ा चलाया जारहा था" यह सुनकर रात अधिक हो जाने से घर की ओर लौट आये। यहां से चलकर हमारे व्याख्यान केशरी पं० लेखराम जी-जगरांड, झङ्गस्याल तथा लुधियाने आर्य समाजों के उत्सवों में सम्मिलित होते हुये—भागोवाला (ज़िला गुरुदास पुर) की आर्य समाज के उत्सव में पधारे—यहां पर सायङ्काल के समय एक मुसलमान ग्रेजुएट से शास्त्रार्थ हुआ—उस समय २००० से कम उपस्थिति न थी शास्त्रार्थ बड़ा रोचक था पाठकों के चित्त विनोद के लिये उल्लेख किया जाता है। एक ओर प्रश्नकर्त्ता तुर्की टोपीवाले ग्रेजुएट महोदय दूसरी ओर उत्तर-दाता पं० लेखरामजी थे-पं० जीने यह प्रतिज्ञा की हुई थी कि "दुर्जन तोषन्याय के अनुसार जो कुछ उत्तर में कहा जावेगा उसके लिये कुरान व हदीस मूलका प्रमाण देंगे।" और पूछा प्रश्नकर्ता महाशय भी क्या ऐसा करने को उद्यत हैं? क्योंकि प्रश्नकर्त्ता महोदय भी कह चुके थे कि वह मूल वेदों का ही प्रमाण देंगे। यह शास्त्रार्थ "नियोग" विषय पर था—प्रश्न कर्त्ता महोदय को एक स्थान पर प्रमाण देने की आवश्यकता हुई तो लगे पुस्तक पढ़ने और बोलने।

मुहम्मदी—देखिये हवाला रगवेद, मन्डिल..........
सोक्त...........

आर्यपथिक—महाशय जी शुद्ध उच्चारण तक न कर सकना और वेद दानी का दावा। बस आप निग्रह स्थान में आगये अतः या तो हार मानो या दावा छोड़ो ?

मुहम्मदी--अजी पं० साहिब! चाहे हम वेद जाने या न जाने एतराज़ तो ठीक है।

आर्य पथिक—पहिले कहिये, "मैंने झूंठ बोला कि मैं मूल वेद जानता हूं और झखमारी", यह कहो तब मुबाहिसा आगे चलेगा।

मुहम्मदी—बहुत हेर फेर के पश्चात् अच्छा मैंने ग़लत कहा था कि मैं मूलवेदों में से हवाला दूंगा। अब मेरे सवाल का जवाब दीजिये।

आर्य पथिक—आये अब राह-ए-रास्त पर हां अब जवाब देता हूं।

वहां पर दश बीस लिखे पढ़े मुसलमान भी खड़े थे सब बोल उठे-सुबहानऽल्ला ! क्या ताक़त मुनाज़िरा (वादशक्ति) है आर्यपथिक ने अपनें उत्तर में नियोग का ही भलीभांति मण्डन नहीं किया किन्तु मुता के मसऽले को भी पेश किया ?

मुहम्मदी—रोक कर कहने लगे कि सिर्फ़ कुरान की आयत पढ़ने से काम न चलेगा किसी मुस्तनिद (प्रामाणिक) तफ़सीर (भाष्य) का हवाला भी देना चाहिये।

आर्यपथिक—अच्छा बतलाओ तुम किस तफ़सीर को मुस्तनिद मानते हो ?

मुहम्मदी महाशय ने जिस तफ़सीर का नाम लिया वही पं० लेखराम के हाथ में थी। उन्होंने उसमें से पढ़कर सुनाया ज्ञात होता था कि उस तफ़सीर को मुहम्मदी महाशय ने

कभी पढ़ने का सौभाग्य भी प्राप्त न किया था। पं० जी से पढ़ने के लिये स्वयं पुस्तक मांगी। यहां पण्डित जी की आशु· स्फूर्ति (हाजिर जवाबी) काम आई क्योंकि इसी शास्त्रार्थ में एक स्थान में इन्हीं प्रश्नकर्त्ता महोदय ने यह कहा था कि "खुदा को बीच में क्यों घसीटते हो क्या लाज़िमी है कि खुदा को मानकर ही मुवाहिसा चले ?" इसी के आधार पर एक सन्मुख खड़े हुये मौलवी को सम्बोधन कर पं० जी ने कहा मौलवी साहिब, आप तशरीफ़ लाकर हाज़रीन को पढ़कर सुनादें और देखिये कुरान शरीफ़ की तफ़सीर में क्या लिखा हुआ है। मैं इस दहरिये (नास्तिक) के हाथ में कुरान शरीफ़ न दूंगा।

मौलवी साहिब को कोई आकर्षण शक्ति वेदी तक खींच लेगई और उन्होंने तफ़सीर ज्यों की त्यों पढ़दी और अपनी ओर से यह भी कह दिया :—

"कौन कहता है कि कलाम मजीद में मुताका हुक्म नहीं है। इस पर सभा मण्डप में चारों ओर से करतलध्वनि होने लगी और शास्त्रार्थ सानन्द समाप्त हो गया। इसके पश्चात् पं० जी ने श्री परमपदारूढ़ ऋषिवर दयानन्द की जीवनी को पूरा करने के लिये उनके जीवन की अनेक घटनाओं का संग्रह करते हुये भिन्न २ स्थानों में जाके प्रभावशाली व्याख्यान दिये। पं० जी बड़े हाज़िर जवाब थे एक दिन व्याख्यान देने के पश्चात् लाला चेतनानन्द जी के मुंशी ने विघ्नडालने की इच्छा से कहा कि "पंडित जी ने गुरुनानक को हिन्दू तो कहीं नहीं कहा"—इस कुटिलनीति को पं० जी तुरन्त समझ गये और बोले कि देखो बाबा नानकदेव स्वयं क्या कहते हैं। "हिन्दू अन्हा (अन्धा) तुर्कोकाणा। दोहां विच्चो ज्ञानीस्याणां। बाबानानक जी ज्ञानी अर्थात् आर्य थे गुलाम हिन्दू न थे।

जीवन की अन्तिम जवनिका

"मांस मूत्र पुरीषास्थि निर्मिते च कलेवरे
विनश्वरे विहायास्थां यश. पालय मित्रमे"

ता० १५ फ़र्वरी सन् १८९७ ई० के दिन एक मनुष्य आदर्श-त्यागी लाला हंसराज प्रिन्सपल दयानन्द एङ्गलो वैदिक कालिज के पास आया-और फिर वही पुरुष दूसरे दिन का-लेज के "हाल" में घूमता हुआ दिखाई दिया। वहां वह पं० लेखराम जी की खोज करता हुआ पता पूछता फिरता था। अन्त को पता पूछते २ वह हमारे चरित्रनायक से आमिला और प्रकट किया कि पहिले मैं हिन्दू था और अब दो वर्ष से मुसलमान हो गया हूं परन्तु अब फिर अपने सत्य मत पर आना चाहता हूं। आप कृपा करके मुझे शुद्ध कर लीजिये सदय हृदय पं० लेखराम जी ने उत्तर दिया कि मैं तुम्हें अवश्य शुद्ध करलूंगा। इस मनुष्य का डीलडौल छोटा जो लग भग ४ या ५ फ़ीट का होगा-काला रंग चेहरे पर दाग़ और नासिका बैठी हुई थी। बोलते समय दो दान्त बाहर निकलते हुये दिखाई पड़ते थे। आंखें छोटी २ और चेहरा गोल परन्तु गाल भीतर की ओर घुसे हुये थे। यह शरीर का हाल था, सिर के बाल छोटे २ और बीच में मुड़ेहुये। डाढ़ी मूंछ छोटी २ जिसमें डाढ़ी अभी भली प्रकार नहीं आई थी और अवस्था लगभग २५ वर्ष के थी।

अपरिचित पुरुष की भीमाकृति

यह मनुष्य हिन्दी बहुत कम बोल सकता था। उसका चेहरा बड़ा भयानक था। पं० जी के पीछे जब पं० जी के मित्र

उससे उसकी जाति और ग्राम का पता पूंछते थे तो वह किसी को स्पष्ट उत्तर न देता और अपने आपको बङ्गाली प्रगट करता था परन्तु परीक्षा से विदित होता था कि वह पटना का रहनेवाला होगा। उसके चेहरे को देखकर मनुष्य विना रोके टोके कह सकते थे कि वह जाति से बूचड़ होगा। परन्तु सरल हृदय आर्य पथिक का यही कहना था कि नहीं भाई? यह धर्म्म का खोजी है शुद्ध होकर सत्य धर्म्म को ग्रहण करना चाहता है।

"अज्ञात कुल शीलस्य वासो देयो न कस्यचित्"

इस पुरुष ने धीरे २ पं० जी पर ऐसा विश्वास जमालिया कि तीन चार वार इनके गृह में भोजन करता हुआ देखा गया। इससे बढ़कर हृदय की और क्या स्वच्छता होगी कि हमारे चरित्र नायक ने अन्य पुरुषों के अविश्वास के बदले में यह भी जांच न की कि यह पुरुष रात्रि के समय कहां रहता है और १५ या १६ दिन तक पंडित जी के साथ रहता रहा इस समय में न मालूम कितनी वार क़ातिल ने अपनी छुरी को तौला होगा और न मालूम क्या २ विचार इसके मस्तिष्क में घूम रहे होंगे। ता० १ मार्च सन् १८९७ के अनन्तर पं० जी को मुल्तान आर्यसमाज के उत्सव पर व्याख्यान देने को जाना पड़ा। परन्तु ता० ५ मार्च को आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का का पत्र मिला कि वह सीधे सक्खर आर्यसमाज के उत्सव पर चले जावें परन्तु हा हन्त? मृत्यु सिर पर खड़ी हंसरही थी। तार पहुंचने से पूर्वही पं० जी लाहौर लौट आये। ता० ५ मार्च और ईद का दिन था। हत्यारे ने उस दिन पं० जी के घर और आर्यप्रतिनिधि सभा के दफ़्तर तथा स्टेशन

उससे उसकी जाति और ग्राम का पता पूंछते थे तो वह किसी को स्पष्ट उत्तर न देता और अपने आपको बङ्गाली प्रगट करता था परन्तु परीक्षा से विदित होता था कि वह पटना का रहनेवाला होगा। उसके चेहरे को देखकर मनुष्य विना रोके टोके कह सकते थे कि वह जाति से बूचड़ होगा। परन्तु सरल हृदय आर्य पथिक का यही कहना था कि नहीं भाई ? यह धर्म्म का खोजी है शुद्ध होकर सत्य धर्म्म को ग्रहण करना चाहता है।

"अज्ञात कुल शीलस्य वासो देयो न कस्यचित्"

इस पुरुष ने धीरे २ पं० जी पर ऐसा विश्वास जमालिया कि तीन चार वार इनके गृह में भोजन करता हुआ देखा गया। इससे बढ़कर हृदय की और क्या स्वच्छता होगी कि हमारे चरित्र नायक ने अन्य पुरुषों के अविश्वास के बदले में यह भी जांच न की कि यह पुरुष रात्रि के समय कहां रहता है और १५ या १६ दिन तक पंडित जी के साथ रहता रहा इस समय में न मालूम कितनी बार क़ातिल ने अपनी छुरी को तौला होगा और न मालूम क्या २ विचार इसके मस्तिष्क में घूम रहे होंगे। ता० १ मार्च सन् १८९७ के अनन्तर पं० जी को मुल्तान आर्यसमाज के उत्सव पर व्याख्यान देने को जाना पड़ा। परन्तु ता० ५ मार्च को आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का का पत्र मिला कि वह सीधे सक्खर आर्यसमाज के उत्सव पर चले आवें परन्तु हा हन्त ? मृत्यु सिर पर खड़ी हंसरही थी। तार पहुंचने से पूर्वही पं० जी लाहौर लौट आये। ता० ५ मार्च और ईद का दिन था। हत्यारे ने उस दिन पं० जी के घर और आर्यप्रतिनिधि सभा के दफ़्तर तथा स्टेशन

पर लगभग २० चक्कर लगाये । ता० ६ मार्च सन् १८९७ ई० की प्रातः काल को फिर पं० जी के घर पर आया परन्तु पं० जी अब तक लाहौर न पहुंचे थे । वहां से निराश होकर फिर आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय में गया और पं० जी के पास पहुंचा और बाहर की खिड़की में बाहर की ओर मुंह करके जा बैठा । इस समय पंडित जी आगये इस दिन यह अधिक चौकन्ना था और ठहर २ कर चौंकता तथा बैठे २ थूकता रहा मानो उसका जी मिचलाता था । यह देखकर ला० देवीदास जी ने कहा यह मनुष्य स्थान बिगाड़ता है अतः यहां बैठा है ? भोले आर्य्यधर्म्म वीरने दिया कि भाई बैठे रहने दो तुम्हारा क्या लेता है वह इस दिन नित्य से विरुद्ध कम्बल वह ओढ़े हुये था जिससे अङ्ग का कोई भाग स्पष्ट दिखलाई न देता था ।

सभा के कार्यालय से चलते हुये यह किसी भांति कांपा । पं० जी ने कहा कहो भाई तुमारी क्या दशा है ? कम्बल इस प्रकार क्यों लपेट लिया है ? क्या ज्वर तो नहीं है । उसने कहा कि हां साहिब कुछ पीड़ा है । पं० जी मार्ग में किशनचन्द्र कम्पनी में बातें करते रहे और वह पुरुष बाहर ही खड़ा रहा । इसके अनन्तर पं० जी उसको डाक्टर विष्णुदत्त के के पास ले गये और कहा कि यह शुद्ध होना चाहता है और धर्म्मात्मा भी है इसका निदान कीजिये । डाक्टर जी ने नाड़ी देखकर कहा कि ज्वर तो नहीं है परन्तु इसका रुधिर अवश्य चक्कर खा रहा है । यदि पीड़ा है तो पलस्तर लेप लगा दूं । हत्यारे ने उत्तर दिया कि कि औषधि लगाने के स्थान में पीने की दे दीजिये । डाक्टर जीने कहा कि कोई

शर्बत पी लेना। परन्तु पं० जीने कहा कि अच्छा ठाकुर जी पीने की ही दवा दे दीजिये! मानो धर्मवीर अपने हाथों ही अपने प्राण देने का प्रबन्ध कर रहे थे। यदि उस समय प्रलेप लगाने के लिये उसका शरीर नङ्गा किया जाता तो अवश्यही उसकी छुरी का पता लगजाता और वह पकड़ा भी जाता। परन्तु वहां तो कुछ और ही होना था मार्ग में जाते हुये पं० जी ने उसे शर्बत भी पिलवाया जिसके बदले कुछ ही देर में रुधिर की नदी में नहानेवाले थे। लगभग चार बजे के हमारे चरित्र नायक उसको साथ लेकर एक बजाज़ की दूकान पर गये। और उसके हाथों एक थान अपनी माता के पास दिखलाने को भेजा। उसके चले जाने पर बजाज ने पं० जी से कहा आप भी क्याही भयानक पुरुष अपने साथ लिये फिरते हैं। कहीं मेरा थान लेकर न चलता हो। निश्छल हृदय पं० जी फिर उत्तर देते हैं कि नहीं भाई? यह धर्मात्मा है और शुद्ध होना चाहता है, ऐसा मत कहिये।

यस्माच्च येन च यथा च यदा च यच्च,
यावच्च यत्र च शुभा शुभ मात्म कर्म।
तस्माच्च तेन च तथा च तदा च तच्च,
तावच्च तत्र च विधातृवशादुपेति॥

पं० जी बजाज़ की दूकान पर से उठकर घर पहुंचे परन्तु काल का साया साथ था। घर में ऊपर की छत पर सीढ़ी के के साथ लगा हुआ एक बरामदा था। इसी में बहुधा पं० जी बैठकर काम किया करते थे। दोनों ओर भीतें और एक ओर भीतरी कमरे का द्वार था। इस कमरे में इनकी धर्म्मपत्नी बैठी हुई थीं और किवाड़ बन्द थे। चारपाई (खाट) पर

जाकर पं० जी बैठ गये। चारों ओर महर्षि दयानन्द जी के जीवन चरित्र सम्बन्धी पत्र पड़े थे और बीच में खुले द्वार की ओर मुंह किये खाट पर धर्मवीर-आर्य पथिक विराजमान हो कर जीवन चरित्र का कार्य करने लगे। बाईं ओर हत्यारा भी कम्बल लपेटे कुर्सी पर जा बैठा। दाईं ओर दो कुर्सियां और पड़ी थीं। लगभग छः बजे सायंकाल के लाला केदार-नाथ मन्त्री लाहौर आर्यसमाज और लाला देवीदास जी एका-उन्टेन्ट क्लर्क आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब पं० जी के पास गये और पं० जी से एक व्याख्यान रविवार के दिन देने के लिये प्रार्थना की। इनके जाने के अनन्तर सिवाय पं० जी की धर्म्म-पत्नी और माता जी के कोई न रहा। ला० जीवनदास जी भी बाहर सैर करने को गये हुये थे। माता एक ओर पाकशाला में थीं। पं० जी ने हत्यारे से कहा कि "भाई तुम भी जाओ और आराम करो"? यह बात उनकी धर्म्मपत्नी ने सुन ली। परन्तु हत्यारा चुपचाप सुनता रहा और कुछ भी उत्तर नहीं दिया। कुछ काल के अनन्तर माता जी ने कहा कि "पुत्र लेखराम तेल अभी नहीं आया" सुनकर पं० जी जीवनचरित्र को जिसे लिख रहे थे रखदिया और जिस ओर वह हत्यारा बैठा था उधर को मुंह करके शय्या से उतर खड़े हुये। प्यारे पाठकगण? आप में से कुछ महाशय पं० जी के समीप रहे होंगे तो अवश्य परीक्षा की होगी। आप जान गये होंगे कि उसके अनन्तर पं० जी ने क्या किया होगा! हत्यारा भी जानता था कि अब क्या होनेवाला है! कदाचित वह अपनी छुरी को भीतर से दृढ़ता पूर्वक पकड़ रहा था! पं० जी शय्या से उठे और अङ्गड़ाई लेते हुये कहा कि "ओह! भूल गया" हाय! अब क्या था

मानो कालचक्र ने निज आज्ञा से उन्हें उठाकर कहा कि उद्यत हो जाओ तुम्हारा समय आगया !! देर मत करो !!! बस अपने काल के गाल में जाने ही को थे कि कलेजे को पं० जी ने उत्साह पूर्वक उभार कर हत्यारे के सन्मुख कर दिया और खड़े होगये । मानो उससे निज हाथों से ही कलेजे को उभार कर कहा कि भाई मैं उद्यत हूं शीघ्र काम करो ।

"सारा शरीर अपना लोहू में डूबो दिया
पर बुज़दिली के दाग़ से माथा बचा लिया"

परन्तु हाय ? इस समय पत्थर का भी हृदय मोम सा हो जाता—लोहा भी पिघल जाता । यदि मनुष्यत्व के भाव का लेश मात्र भी पत्थरवत् हृदयवाले क़ातिल के भीतर होता तो छूरी वहीं की वहीं रह जाती । परन्तु वह दुष्ट तो बहुत दिनों से इसी समय के लिये मनुष्यत्व को हृदय से दूर कर चुका था । इस से बढ़ कर और कौन सा समय उसके लिये हो सकता था । उसने एक साथ ही छुरी पं० जी के पेट के भीतर घुसेड़ दी और ऐसी शीघ्रता से फेरा कि आठ दश घाव भीतर हो गये और अंतड़ियां भी बाहर निकल आईं । प्रियपाठको ! आप कलेजे को थांमे होंगे और इस आशा में होंगे कि आपके सन्मुख इस भयानक दृश्य तथा वज्र और पत्थरवत् हृदय को भी खंड २ करनेवाली चिल्लाहट तथा आह का चित्र खींचू जोकि धर्म्मवीर के मुख से निकली । परन्तु घबड़ाइये न, कोई शोक का शब्द न था और न कोई पीड़ायुक्त चिल्लाहट की ध्वनि थी केवल एक साधारण क्रोध का शब्द उनकी माता तथा पत्नी ने सुना । हा धर्म्म वीर ! यदि तुम कुछ रोते और चिल्लाते मनुष्य शीघ्र ही उस दुष्ट हत्यारेको पकड़ लेते । परन्तु तुम्हारे

हृदय में पतित पर दया और क्षमता की इयत्ता समाप्त होती थी ! हा शोक ! तुम्हारी शूर वीरता ने उस दुष्ट पापी को बाल २ बचा दिया और आप की आत्मा ने शीघ्र ही श्रद्धा युक्त चित्त से कहा कि "मेरी पतित भ्राताओं में ज्यों की त्यों श्रद्धा है" अन्तड़ियों का बाहर निकलना ही था कि एक हाथ द्वारा आंतों को सम्हाल दूसरा हाथ क़ातिल के ऊपर फेंका साधारण मनुष्य तो लोहू के दर्शन से शीघ्र ही वे सुध होजाता परन्तु साहसी लेखराम जी ने फिर सिंह के समान प्रत्याक्रमण किया—सिंह के शरीर से चाहे रुधिर की नदियां क्यों न वह जावें फिर भी हृदय में कम्पायमान नहीं होता छुरी छीनते समय भी शोक का एक शब्द मुख से न निकला—इसी झपट के साथ दोनों सीढ़ी तक जा पहुंचे और झट छुरी छीन ली। क़ातिल के दोनों हाथ और धर्म्मवीर जी का केवल एक हाथ इस पर भी रुधिर के परनाले चल रहे थे। सम्भव था कि वह छुरी धर्म वीर के हाथ से छीन लेता इतने में धर्मवीर की जननी ने किनारे से जा एक हाथ मारा और छुरी उसे न लेने दी और पं० जी की धर्म्मपत्नी ने इस भय से कि हत्यारा पुनः वार न करे उन्हें रसोई की ओर खींच लिया परन्तु न मालूम कि क़ातिल को क्या सूझी कि अरुण नेत्रों से डराता हुआ फिर पीछे की ओर लौटने लगा इतने में धर्मवीर जी की माता ने दोनों हाथों से उसे पकड़ लिया। उस समय वह हांफ रहा था। उसने माता जी के एक वेलन जो वहां पड़ा था दो तीन मारे जिससे वह अचेत होकर पृथिवी पर गिर पड़ी और न जाने वह किस मार्ग से भाग कर एक गली में आंख ओझल होगया। ८॥ वजे का समय था—

माता और पत्नी का कोलाहल सुनने पर भी कोई पड़ोसी सहायता के लिये न आया—कुछ देर के पश्चात् ला० जीवन दास जी लौटे तो देखा कि शय्या पर धर्मवीर सीधे लेटे हुये हैं और एक हाथ से अपनी आन्तों तो दबाये हुये हैं। रुधिर की धारा बह रही है। यह देख कर उक्त लाला जी शोक सागर में डूब गये इतने में डाक्टर सन्तराम जी और कतिपय पुरुष भी जा पहुंचे। वहां जाकर देखा कि पं० लेखराम के मुख पर शोक का कोई चिन्ह नहीं है पूछने पर बड़ी दृढ़ता से बोले कि "वही जो शुद्ध होने आया था कमबख़्त मार गया" इसके अनन्तर कहा कि डाक्टर को बुलाओ शीघ्र बुलाओ। ला० जीवन दास ने यत्र तत्र दौड़ कर चारों ओर इस दुख जनक सम्वाद से दिशाओं को पूरित कर दिया—इस समाचार को सुनकर महाशय डा० जयसिंह जी तथा डा० हीरालाल जी तथा बहुत से मेडीकल कालेज के विद्यार्थी आन पहुंचे। यह कार्य करते कराते लगभग १ घंटा व्यतीत होगया परन्तु धर्मवीर के मुखावलोकन तथा उनके हरीवत् नाद से यह विदित न होता था कि यह हमें शीघ्र ही छोड़ जावेंगे। शय्या पर लिटा कर जब वैदिक धर्म के सच्चे धर्म वीर का शरीर अस्पताल की ओर ले चले तो पुलिस का १ सार्जेन्ट भी आन पहुंचा—अभी धर्मवीर जी अस्पताल पहुंच न पाये थे कि भाग्यवश महात्मा मुंशीराम जी भी चारबजे की गाड़ी से लाहौर पहुंच गये और इस हृदय विदारक समाचार को सुनकर उनके मकान की ओर बढ़े और मार्ग में आर्य पथिक की सवारी को आता हुआ देख कर हृदय थाम कर साथ होलिये—धर्मवीर जी को अस्पताल में लाया जाकर एक मेज़ पर लिटा दिया गया।

लाo मुंशीराम जी ने आगे बढ़ कर देखा कि आर्य पथिक के दोनों हाथ मस्तक पर रक्खे हुये थे क्योंकि उस समय अन्तड़ियां सिविल सर्जन के हाथ में थीं। लालाजी को देखते ही दोनों हाथ उठालिये और बड़ी दृढ़ता के साथ आर्य-पथिक ने कहा कि "नमस्ते लालाजी आप भी आगये" लाला जी के नेत्रों से अश्रुपात होने लगा-दिल दहल गया और लाला जी को ऐसा ज्ञात हुआ मानो शिमले के वार्षिकोत्सव से लौटते हुये मुझे पं० जी नमस्ते कर रहे हैं फिर कहा लाला जी "बेअदबियां माफ़ करना" लाला जी भी गद २ वाणी से अपने आसुओं को रोकते हुये बोले कि पं० जी आपतो ईश्वर पर दृढ़ विश्वास रखनेवाले हैं। प्रत्येक संकट में उसी का सहारा ढूंढा करते थे उसी का ध्यान कीजिये—यह सुनकर बोले कि "अच्छा, तो शायद ही बचूंगा|लाला जी मेरे अपराध क्षमा करना" फिर एक वेद मन्त्र का उच्चारण करने लगे।

धर्म्मवीर के अन्तिम वाक्य

ओ३म् विश्वानिदेव सवितर्दुरितानि परासुव, यद्भद्रं तन्न आसुव।

अन्त समय पर्यन्त इस मंत्र और गायत्री मंत्र का पाठ करते रहे और बीच २ में कहते थे कि "परमेश्वर तुम महान हो परम पिता हो"—

डाक्टर पीरी साहिब ने उन्हें "क्लोरो फ़ार्म" (सम्मोहन घ्राण) सुंघाया और लगभग दो घंटे तक घावों को सीते रहे एक स्थान से आन्त कटकर दो खण्डों में होगई थी आठ बड़े घावों के अतिरिक्त और भी कई छोटे २ घाव थे। डाक्टर साहिब का भी कथन था कि जिस पुरुष के २ घंटे से रुधिर प्रवाह हो रहा हो वह कैसे जीवित रह सकता है और कहा

कि साधारण दशा में तो कोई ऐसे घावों से वच नहीं सकता कदाचित् यह वचजावे यदि यह पुरुष वच गया तो कौतुक ही मानना चाहिये। १॥ वजे के समय तक धर्म्मवीर जी बराबर संकेत करते रहे और हे ईश्वर तू सर्व शक्तिमान् है यही पाठ करते रहे। न घर का ध्यान न हत्यारे पर क्रोध न मृत्यु पर शोक केवल चित्त में एक उलझन थी वह यह कि "आर्य-समाज कि जिसे ऋषि स्थापन कर गया है उसका काम बन्द न होना चाहिये"। धर्म्मवीर ने न तो माता और पत्नी का शोच किया क्योंकि वह जानते थे कि ईश्वर उनका भी सहायक है और न हत्यारे की खोज की प्रार्थना, क्योंकि उनका विचार था कि वैदिक धर्म्म में वदला लेने को शिक्षा नहीं दी गई है किन्तु केवल यही ध्यान था कि आर्य-समाज से तहरीरी (लिखने) काम वन्द न हो जावे धर्म्मवीर जी ने लाला मुंशीराम जी से कहा कि "लाला जी! देखिये आर्य समाज में काम नहीं हो रहा है!" लाला जी बोले "पं० जी आप के पुरुषार्थ के जैसे अभी मनुष्य बहुत कम हैं" परन्तु कुछ न कुछ होहो रहेगा"–पं०जी ने शीघ्रही उत्तर दिया कि साहब क्या खाक काम हो रहा है मतवादियों की ओर से शंकायें पर शंकाये चली आरही हैं पुस्तकों पर पुस्तकें छप रही हैं इनमें से प्रत्येक का उत्तर दिया जाना चाहिये। लाला जी बोले कि पं० जी घवड़ाइये नहीं आर्य-समाज पर और कामों का भी बोझ आन पड़ा है।

अब प्रत्येक का उत्तर दिया जावेगा। फिर साधु स्वभाव निडर वीर ने कहा "लाला जी आप गज़व करते हैं—क्या उत्तर उस समय दिया जावेगा जब कि विष अच्छे प्रकार

ार में घुल जावे, इसी प्रकार आर्यसमाज की हितवार्ता
भग आधघंटे तक करते रहे। २ वजे के समीप धर्मवीर के
ावर का दृश्य वदलता दिखलाई दिया। दो वार वेग के
थ हाथ हिलाये और लगभग ५ मिनट में हाथ सीधे करके
मात्मा को अपने तईं अर्पण कर सदा की नींद में सो गये।
ली फटने के साथ २ ही धर्म्मवीर की मृत्यु का समाचार
द्युतवत सारे लाहौर में फैल गया—क्या हिन्दू क्या जैनी
ा ब्राह्मो, क्या सिक्ख, सव के चित्त पर इनकी मृत्यु का
ाव तथा अपने प्यारे वच्चे की मृत्यु से जो दुख आर्य
नता को होगा वह दुःख लेखराम वध को सुनकर हुआ। अन्त
ा सिविल सर्जन ने वड़ी सहानुभूति की दृष्टि से किसी
वन को मृतक शरीर के पास फटकने न दिया और शव
ा आर्य पुरुषों के हवाले करने की आज्ञा प्रदान की। अन्दर
ाकर देखा गया तो आर्य-पथिक को सदैव का यात्री पाया।
* आखें मुंदी हुई परन्तु चेहरे में किसी प्रकार परिवर्त्तन
हीं वही हृष्ट पुष्ट शरीर, वही विशाल छाती कुछ भी भेद न
ा। अश्रुधारा वहाते हुये सव आर्य भाइयों ने शोक पूर्वक

---

* प्रिय पाठको ! आज त्रयोदशी का दिन है लगभग ८॥ वज चुके हैं। इस समय मुझे धर्म्मवीर जी के इस अन्तिम समय की हृदय विदारक कथा लिखने का कुछ ऐसी प्राकृतिक घटनावश अवसर मिला है कि ठीक इसी दिन और ठीक इसी समय मेरी धर्म्मपत्नी भगवती देवी का भी स्वर्गवास हुआ था अतः वह और यह दोनों दृश्य मिलकर मेरे धैर्य को मुझ से दूर करते हैं अतः इस करुणाक्रन्दन को अधिक रोचक वनाने की आवश्यकता नहीं केवल परमेश्वर की अपार माया और अटल नियम की ओर ध्यान देना चाहिये। "गतानुगतकोलोकः" की कहावत सत्य है॥

वस्त्र पहनाये । अर्थी को बाहर लाया गया सारे शरीर को श्वेत पुष्पों से ढांप दिया गया और एक केमरा (चित्र पट) जो उस समय विद्यमान था धर्म्मवीर का मुंह खोलकर उनका चित्र लिया गया । अर्थी उठाई और सच्चे शहीद की सवारी सीधी अनारकली में पहुंची । अर्थी के साथ भी २० सहस्र से न्यून पुरुष न था। यहां इनके पुत्र और शोकातुर माता आन पहुंची जिसका विलाप सुनकर २० सहस्र मनुष्यों के नेत्रों से अश्रुनद प्रवाहित होने लगा । एक युवक अचेत हो कर गिर पड़ा ।

अर्थी ने नगर में प्रवेश किया । प्रत्येक स्थान में आर्य जाति की देवियों के नीचे छत फटी पड़ती थी । प्रत्येक देवी को इतना कष्ट था मानों उनका प्यारा आत्मज उनसे सदैव के लिये दूर होरहा है । अन्त को सवारी नगर के बाहर निकली वेद मन्त्रों का उच्चारण करते वैराग के भजन गाते हुये स्मशान भूमि तक पहुंचे-स्मशान में अर्थी को रक्खा गया और मनुष्यों ने पुनः अन्तिम दर्शन की लालसा प्रकट की । एक भक्ति रस से भरा हुआ भजन गाया गया तथा ईश्वर की प्रार्थना की गई और अन्त को मृतक शरीर का विधिवत् वेद मन्त्रों की आहुतियों से दाह किया गया । हा ! वह अमूल्य शरीर केवल सब के देखते २ एक भस्म की ढेरी रहगया । भारत जननी के सच्चे लाल ! चिरकाल से सोती हुई आर्य जाति को उठाने के द्वितीय प्रवर्त्तक, धर्म्म पर सर्वस्व न्योछावर करनेवालों के अमूल्य रत्न हा ! वीर लेखराम यद्यपि तुम हमसे सदैव के लिये दूर होगये हो परन्तु तुमने अपनी रक्त धारा बहाकर-भारतवर्ष में सच्चे धर्म पर न्योछावर होने

लों के लिये उत्तम भूमि का संस्कार किया है। एक २ रक्त
न्दु से एक २ वीर उत्पन्न होने की आशा है। तुमको क़त्ल
हीं किया गया, वरन क़ातिल ने अपनी जाति की जड़ में
ल्हाड़ा मारलिया। तुम्हारा क्या मरा शत्रुओं का मान
ारा गया। यह तुम्हारा कलेवर तो नश्वरही था! परन्तु
ापने अपने तईं विनश्वर कीर्ति के पद पर पहुंचा दिया।
ारे नवयुवको? इस नश्वर शरीर से अमरपद प्राप्ति का
ससे अधिक क्या उपाय हो सकता है कि सत्य पर बलिदान
लिये कटिबद्ध रहे! वेद आज्ञा देता है कि हमें कर्त्तव्य
रायण होना चाहिये। हम कर्म्म योगी बनें इस शरीर का
न्त में क्या होगा?

> वायु रनिलममृतमथेदं भस्मान्त ꣳ शरीरम्।
> ओ३म् क्रतो स्मर क्लिवे स्मर कृत ꣳ स्मर॥ यजुर्वेद।

अर्थात् देहान्तरों में जानेवाला पार्थिवादि विकारों से
हित जीवात्मा अमर है और यह भौतिक शरीर भस्म होने
र्यन्त है ऐसा समझकर हे जीव तू प्रणव के वाच्यार्थ का
मरण कर बल प्राप्ति के लिये स्मरण कर अपने किये हुये का
मरण कर॥

॥ इत्योम् शम्॥

स्वामी विवेकानन्द

ओंकार आदर्श चरितमाला का प्रथमपुष्प।

श्री स्वामी विवेकानन्द

(जीवनी और राष्ट्रीय, सामाजिक और धार्मिक विचारों का संग्रह)

"उत्तिष्ठत जागृत प्राप्य वरान्निबोधत"

लेखक

पं० नन्दकुमारदेव शर्म्मा

सम्पादक तथा प्रकाशक

पं० ओङ्कारनाथ वाजपेयी

"Our youngmen must be strong first of all Religion will come afterwards. Be strong my young friends, that is my advice to you. You will be nearer to heaven through foot-ball than through the study of the Gita.........you will understand Gita better with your biceps, your muscles a little stronger, you will understand the mighty genius and the mighty strength of Krishna better with a little of strong blood in you You will understand the Upanishads better and the glory of Atman, when your body stands firm upon your feet and you feel yourselves as men"—*Swami Vivekananda.*

तृतीय बार] मूल्य ।-)

Printed by Pt. Omkar Nath Bajpai at the Omkar Press, Allahabad.
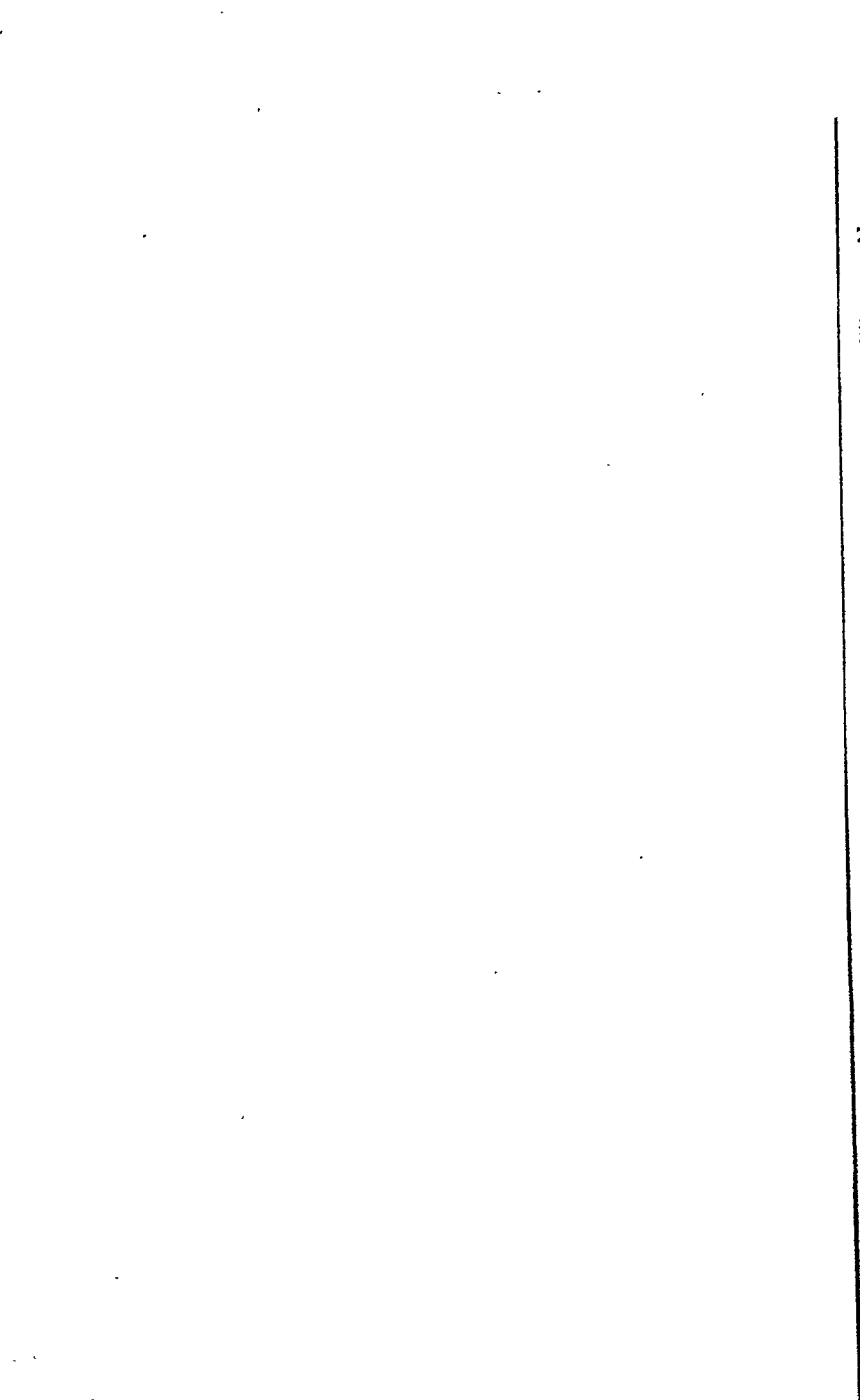
समर्पण

प्यारे नवयुवको !

आज धुलेण्ड़ी है, होली का हुल्लड़ चारों ओर मच रहा है। स्थान स्थान पर खुराफ़ात; वाहियात तथा रङ्ग गुलाल की धूम मच रही है। प्यारे मित्रो ! क्या तुम भी इसी प्रवाह में वहना चाहते हो ? इस प्रश्न के करने से मेरा यह मतलब नहीं है कि तुम होली मत खेलो, नहीं नहीं तुम होली खेलो और ज़रूर खेलो, भले ही रङ्ग की पिचकारी छोड़ो। पर कैसे रङ्ग की पिचकारी कैसी होली इसका भी ध्यान रखो। ऐसी होली खेलो, ऐसे रङ्ग की पिचकारी छोड़ो जिससे अब तक तुम्हें जो यन्त्रणायें होली हैं दूर हों। अपने को तथा अपने इष्ट मित्रों को ज्ञान की पिचकारी का निशाना बनाओ, जिससे अज्ञान दूर हो बस यही सोच कर आज मैं तुम्हें अपना निशाना बनाता हूं ज़रा सम्हल जाओ। स्वामी विवेकानन्द के उपदेशों से छांट छांट कर इस पिचकारी में जो रङ्ग भरा है बस वही रङ्ग तुम पर छोड़ता हूं। लीजिये, इस रङ्ग को अपने हृदय में रङ्ग लीजियेगा, वृद्धा भारतमाता की सेवा सुश्रूषा से विमुख न हूजियेगा। उनकी सारी आशालता तुम्हीं पर है। वह तुम्हारी ही बाट जोह रही है उसे निराश मत करो जननी की सच्ची सन्तान बनो। "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" का निरन्तर जाप करते रहो।

तुम्हारा भाई—नन्द०
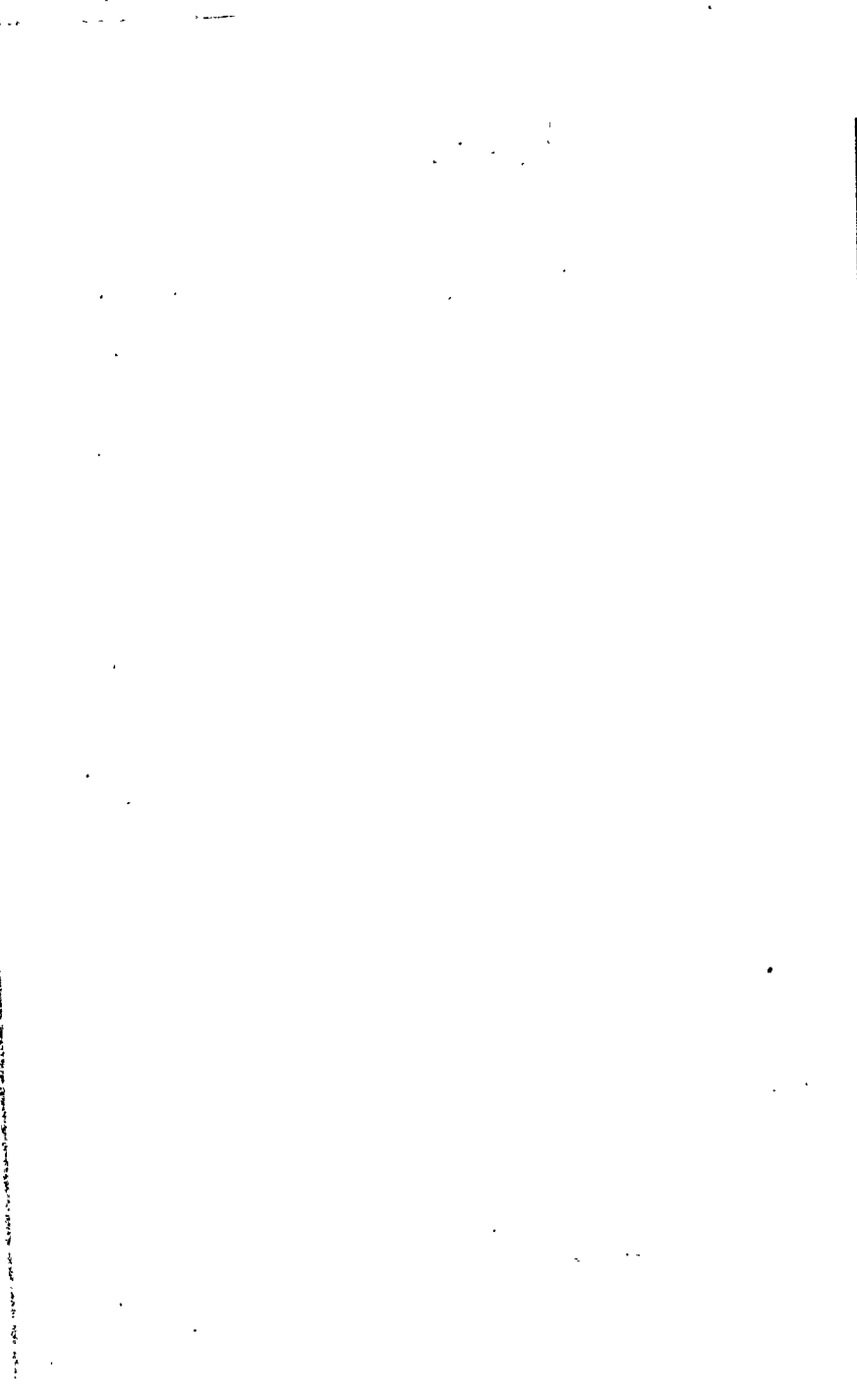
निवेदन

श्री स्वामी विवेकानन्द का नाम पाठकों से अविदित नहीं है। यह वही स्वामी विवेकानन्द हैं जिन्होंने अमेरिका जैसे प्रकृतिवादी देश में वेदान्त की ध्वजा फहराने के अतिरिक्त, भारतीय राष्ट्र निर्माण तथा नव्य-भारत के चरित्र गठन में भाग लिया था। भारतवर्ष में जो जागृति हो रही है विशेषतः बङ्गाल में, उसमें स्वामी विवेकानन्द के उपदेशों का ही कुछ प्रभाव मानना पड़ेगा। यही सोच कर स्वामी जी की जीवनी और उनके उपदेशों का अति संक्षिप्त सारांश हिन्दी पाठकों की सेवा में अर्पित किया जाताहै। कहा नहीं जा सकता कि पाठकों को यह उपहार पसन्द आवेगा अथवा नहीं।

अङ्गरेज़ी भाषा में स्वामी जी के उपदेशों, पत्रों तथा अन्य लेखों का कई भागों में क्रमबद्ध अच्छा संग्रह है। भारतवर्ष की अन्यान्य भाषाओं में उनके उपदेशों कासंग्रह होगया है, पर खेद है अभीतक हिन्दी इससे खाली है। हिन्दी भाषा के साधारण पाठक जो अङ्गरेज़ी तथा अन्य भाषाओं को नहीं जानते हैं, वे स्वामी विवेकानन्द के विचारों से अभी तक अपरिचित हैं। अवश्य ही उनकी वक्तृताओं में से किसी २ का अनुवाद कभी कभी „सरस्वती" तथा अन्य मासिक पत्रिकाओं में निकला है और स्वामी जी के पत्र व्यवहार के प्रथम खण्ड का हिन्दी अनुवाद हुआ है, तथापि स्वामी जी के राष्ट्रीय

सामाजिक तथा धार्मिक विचारों का शृङ्खलावद्ध संग्रह नहीं हुआ है, जिसकी वड़ी आवश्यकता है। यह विचार कर मैंने स्वामी जी के समस्त उपदेश और सम्पूर्ण विचार तो नहीं पर हां उनकी संक्षिप्त जीवनी और उनके राष्ट्रीय, सामाजिक तथा धार्मिक विचारों का अति संक्षिप्त संग्रह इस छोटी सी पुस्तक में कर दिया है। परन्तु यह निश्चय है कि मुझे इसमें सफलता प्राप्त नहीं हुई है। क्योंकि प्रथम तो स्वामीजी के उपदेश अंगरेज़ी भाषा में हैं। मैं अंगरेज़ी का पण्डित नहीं हूं। एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करना वड़ा कठिन है, विशेषतः अंगरेज़ी से करते समय तो पग पग पर कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। अवश्य ही स्वामी जी की भाषा वड़ी सरल, रसीली और हृदयग्राही है पर जैसी अङ्गरेज़ी उनकी सरल है वैसे ही उनके भाव बड़े कठिन हैं, भाषा वड़ी जोशीली है। अनुवाद में उनके वैसे ही भाव और भाषा का जोश रहना असम्भव सा प्रतीत होता है। परन्तु मैंने इसकी चेष्टा अवश्य की है। कहीं उनके शब्दों का ज्यों का त्यों अनुवाद कर दिया है। कहीं उनके भावों को अपनी भाषा में लिखा है और कहीं उनके वाक्यों को तोड़ मरोड़ कर कुछ शब्द अपनी ओर से घटा बढ़ा भी दिया है।

इसके अतिरिक्त एक और भी भय है कि मैंने उनके इतने विचार समूह में से अति संक्षिप्त विचारों को संग्रह करने की चेष्टा की है जिससे अनेक त्रुटियां रहने की आशङ्का है। आशा है सज्जन जन इसका विचार करके कि जब तक कोई विद्वान् ऐसे कार्यों में हाथ डालनेका प्रयत्न न करे तब तक कुछ न करने से कुछ करना अच्छा है, मेरी त्रुटियों को क्षमाकरेंगे।

हमारे देश में आज कल मतभेद और सिद्धान्त विरोध का रोग प्रबल हो रहा है। इस रोग ने हमको यहाँ तक जकड़ डाला है कि चाहे जैसा कोई विद्वान् क्यों न हो पर मत भेद के कारण उसके विचारों का प्रचार नहीं करना चाहते हैं। अन्ध भक्ति की भी हम लोगों के हृदय पर ऐसी छाप बैठ गई है कि अन्य मतावलम्बियों के गुणों के परखने में अपने हृदय की सङ्कीर्णता का परिचय दिया करते हैं। स्मरण रखना चाहिये हमारे ऋषि मुनियोंका कथन है "शत्रोरपिगुणावाच्याः दोषा वाच्या गुरोरपि" अर्थात् शत्रुओं के भी गुणों का बखान करना चाहिये और गुरू के भी दोषों का विना किसी सङ्कोच के वर्णन करना चाहिये। पर अफ़सोस! आज सिद्धान्त विरोध और मतभेद ने हमारे हृदय से ऋषि मुनियों के इस वाक्य को दूर कर दिया है। स्मरण रखना चाहिये जब तक संसार है तब तक लाखों चेष्टायें करने पर भी मत भेद और सिद्धान्त विरोध दूर नहीं हो सकता है और मेरे विचार में

इसका दूर न होना ही अच्छा है। मतभेद और सिद्धान्त विरोध कोई बुरी चीज़ नहीं प्रत्युत अच्छी है। मत भेद और सिद्धान्त विरोध जीवनका लक्षण है। जब तक मतभेद और सिद्धान्त विरोध न हो तब तक किसी विषय का निर्माण होना कठिन है। क्या देखते नहीं हो स्त्री-पुरुष और बाप-बेटे तक में बहुत सी घरेलू बातों के सम्बन्ध में मत भेद रहता है तब धार्मिक सामाजिक एवम राष्ट्रीय जैसे भारी विषयों में मतभेद होना स्वाभाविक ही है और इन विषयों पर जितना मतभेद हो, उस पर जितना विचार किया जाय उतनाही अच्छा है। इसके लिये इससे बढ़कर और कोई उपाय नहीं है जितने महापुरुष हमारे यहां हुये हैं उनके विचारों पर विचार किया जाय। मेरी इच्छा इस कार्य के बीड़ा उठाने की बहुत दिनों से हो रही है, परन्तु कार्य के साधनों के अभाव से इच्छा ही रही आई है उसकी पूर्ति नहीं हो सकी है इस इच्छा के वशी भूत होकर ही मैंने पहले पहिल सन् १९०५ में इस पुस्तक के थोड़े से अंश को बम्बई के "ज्ञान सागर" छापेखाने से जो मासिक पत्र "ज्ञान सागर" निकलता था, उसके दो अंकों में लिखा था। पर पीछे कई कारणों से मेरा उस पत्रसे सम्बन्ध नहीं रहा। बस यह निबन्ध भी छपना बन्द होगया। कई वर्ष पीछे जब सन्१९११ में मैं "विहार बन्धु" से सम्बन्ध परित्याग करके अपनी जन्मभूमि मथुरा चला

आया था तव मैंने इस निवन्ध का एक अंश(स्वामी विवेकानन्द की जीवनी मात्र) ज्वालापुर महाविद्यालय से प्रकाशित होनेवाले भारतोदय नामक मासिक पत्र चतुर्थ वर्ष के चतुर्थ खण्ड में लिखा था। परन्तु कई कामों में व्यस्त रहने के कारण यह निवन्ध अधूरा रहगया। अब कई मित्रों के अनुरोध से पूरा किया है।

यदि हिन्दी रसिकों ने इसको कुछ भी अपनाया तो मैं शीघ्र ही भारतवर्ष तथा अन्य देशों के महापुरुषों के कार्य तथा विचारों को प्रकाशित करने की चेष्टा करूंगा।

उपसंहार में फिर एक वार यही निवेदन है कि जो कुछ भूल चूक हुई हो उसको सहृदय पाठक क्षमा करें।

मुझे इस निवन्ध के लिखने में निम्न पुस्तकों से सहायता प्राप्त हुई है जिनका मैं विशेष आभारी हूं।

(१) From Columbo to Almora (Second edition).

(२) Swami Vivekananda (Speeches and writings, G A. Nateson & Co., Madras).

(३) Swami Vivekananda, His life and teachings (G. A Nateson & Co.)

(४) स्वामी विवेकानन्द का पत्र व्यहार प्रथम खण्ड . (हिन्दी)

(५) स्वामी विवेकानन्दना पत्रते सस्तु साहित्य वर्धक कार्यालय

(६) Indian Nation Builders (Ganesh & Co. Madras.

(७) उद्बोधन (बङ्ग भाषा के पत्र के कुछ अङ्क)

(८) प्रबुद्ध भारत (अङ्गरेज़ी भाषा के मासिक पत्र के सन् १९०३-४ के कुछ अङ्क)

चैत्रकृष्ण पञ्चमी
मंगलवार सं० १९६९

निवेदक
नन्द०
दिल्ली

प्रिय पाठको। मुझे बड़ा हर्ष है कि आपने आशा से अधिक इस पुस्तक का आदर किया है। थोड़े ही समय में इसके तीन संस्करण निकल गये। पं० नन्द कुमार देव शर्मा ने ओंकार आदर्श चरित माला में कई जीवन चरित और लिखे हैं आशा है उन्हे भी आप पढ़कर लेखक और प्रकाशक का उत्साह बढ़ावें गे।

निवेदक
ओंकारनाथ वाजपेयी

आश्विन शुक्ल
८ बुद्धवार
सं० १९७२

स्वामी विवेकानन्द की जीवनी और उनके विचार

प्रथमाध्याय ।

प्रस्तावना ।

[१]

भारत वर्ष ही में नहीं वलिक संसार के अन्य देशों के इतिहासों से भी यह ज्ञात होता है कि समय समय पर ऐसे अनेक विद्वान् महात्मा और योगी जन जन्म लेते रहते हैं, जो अपनी अलौकिक प्रतिभा के वल से जन समाज के समाजिक, धार्मिक और राजनैतिक विचारों में हलचल पैदाकर देते हैं। भारतवर्ष के विषय में यह अलौकिक वात है कि इस देश का कोई भी युग ऐसे महापुरुषों से ख़ाली नहीं जाता है । स्वामी विवेकानन्द भी भारतमाता के उन सपूतों में से एक थे, जिन्होंने वर्त्तमान और गत शताब्दितों में भारत माता की सन्तानों के विचार सुधारने और राष्ट्र निर्माण में भाग लिया था ।

वंश परिचय, बाल्यकाल और छात्रा-वस्था।

आज जिस वङ्गाल ने अपने राजनैतिक जीवन से समस्त भारतवर्ष में नवीन युग उपस्थित कर दिया है उस वङ्गाल को ही स्वामी विवेकानन्द की जन्म भूमि होने का गौरव प्राप्त हुआ है। जो वङ्गभूमि, गत दो शताब्दियों में राजा राममोहन राय, रामकृष्ण परमहंस, महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर, चन्द्र सेन, द्वारकानाथ विद्याभूषण, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर डाक्टर राजेन्द्र लाल मित्र, राय दीनवन्धु मित्र, वङ्किम चटर्जी, कृष्णदास पाल, कृष्ण मोहन वनर्जी, माईकेल सूदन दत्तादि महानुभावों को उत्पन्न करने का प्राप्त कर चुकी है, उसी वङ्गमाता को स्वामी विवेकानन्द उत्पन्न करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। ७ वीं जनवरी १८६२ को कलकत्ते के निकट किसी गांव में स्वामी जी का जन्म हुआ था। इनके पिता का नाम विश्वनाथ दत्त था। पटर्नी-एट-ला (Attorney at--law) थे और कलकत्ता हाईकोर्ट में प्रेक्टिस (वकालत) करते थे। इनकी माता अभी तक जीवित थीं। उनकी स्मरण शक्ति के विषय में कहा जाता है कि इतनी तीव्र थी कि जिस गीत को वे एक बार सुन लेती थीं, उसको कभी नहीं भूलती थीं। भला जब मा

तनी चतुर हो तब सन्तान क्यों न बुद्धिमान होगी ? फ्रांस
श के प्रसिद्ध वीर नेपोलियन बोनापार्ट के इस कथन में
अणुमात्र भी सन्देह नहीं है कि "माता पर ही सन्तान के भले
बुरे भावी आचरण निर्भर हैं"। चाहे जिस महापुरुष के चरित्र
अवलोकन कीजियेगा तो पता लगेगा कि उसकी माता
के स्वभाव का उसके जीवन पर बहुत प्रभाव पड़ा है। सो
माता की प्रबलबुद्धि होने के कारण स्वामी विवेकानन्द का
प्रतिभाशाली होना कुछ आश्चर्य की बात नहीं है। स्वामी
विवेकानन्द की वृद्धा माता के विचार कैसे थे। इसका पता
केवल इस घटना से लगता है कि जिस समय उनके दूसरे
पुत्र अर्थात् विवेकानन्द के सहोदर बाबू भूपेन्द्र नाथ दत्त को
कलकत्ते के एक अख़बार में कुछ आपत्ति जनक लेख लिखने
के कारण जेल की सज़ा हुई थी उस समय उनकी माता
तनिक भी विचलित नहीं हुईं। ऐसी विपत्तिमें भी अतुलनीय
धैर्य का परिचय दिया। जब कुछ स्त्रियों ने उनके प्रति
इस विपत्ति में समवेदना और सहानुभूति प्रकट की तब
भी वे धैर्य्यच्युत नहीं हुईं। एक स्त्री का विशेपतया भारत-
वर्षीय अबला का ऐसी विपत्ति में इस भांति धीरज रखना
अत्यंत आश्चर्य दायक है। क्योंकि भारतवर्ष में अपत्यस्नेह
की मात्रा बढ़ी हुई है। अस्तु जो कुछ हो, मेरे कहने का
सारांश यही है कि वृद्धावस्था में जिसकी माता ऐसा

धैर्यवती हो उसके पुत्र से जितने अच्छे अच्छे कार्य परमात्मा करावे, उतने ही थोड़े हैं। इनके जन्म का नाम नरेन्द्रनाथ दत्त था। संन्यासी होने पर पूर्वनाम बदल कर विवेकानन्द नाम रखा गया।

बालापन में स्वामी विवेकानन्द ने नरेन्द्रनाथ रहते समय ही अपनी अनुपम विचार शक्ति, प्रखर बुद्धि और चमत्कारिक प्रतिभा से सब को चकित और स्तम्भित कर दिया था। "होनहार बिरवान के होत चीकने पात" इस लोकोक्ति के अनुसार छात्रावस्था में ही इन्होंने यूरोपियन दर्शन शास्त्र में अच्छी जानकारी प्राप्त करली थी। जब वे कालेज में पढ़ते थे तब ही उन्होंने हर्बर्ट स्पेन्सर के दार्शनिक विचारों की आलोचना की और अपनी वह आलोचना हर्बर्टस्पेन्सर के पास भेज दी। महात्मा स्पेन्सर इनकी आलोचना देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुये और सत्य के अनुसन्धान करने के लिये इनको उत्साहित किया।

गुरू से भेंट

सन् १८८४ से १८८६

कालेज में अध्ययन करते समय यह नास्तिक हो गये थे। उस समय इनका ईश्वर, जीव इत्यादि पर कुछ विश्वास नहीं

रहा। उन दिनों वङ्गाल में ही नहीं सारे भारतवर्ष में धर्म विप्लव मच रहा था। वङ्गदेश में क्रिश्चियन मत की उत्ताल तरङ्गों को रोकने के लिये ब्रह्मसमाज की नींव पड़ चुकी थी। कृष्णमोहन वनर्जी, कालीचरण वनर्जी, माईकेलमधुसूदन दत्तादि जैसे विद्वान् भी प्रभु ईसा मसीह के शरणागत हो चुके थे। कहने को ब्रह्मसमाज क्रिश्चियन मत की ऊंची तरङ्गों के रोकने को स्थापित हुआ था, परन्तु कुछ परिवर्तन रूप में उसके द्वारा क्रिश्चियन मत के लिये नयी सड़क बनने लग गई थी। जिसकी स्थिति अभी तक ज्यों की त्यों है। ब्रह्मसमाज के प्रवीण नायक, बाबू केशवचन्द्र सेन की वाकपटुता के प्रभाव से हिन्दुओं के धार्मिक विचार और विश्वास में परिवर्तन हो गया था। ऐसे कठिन धर्म विप्लव के समय में स्वामी विवेकानन्द भी ब्रह्मसमाज के विचारों की ओर झुक गये थे। परन्तु उनकी ब्रह्मसमाज से कुछ तृप्ति नहीं हुई। इस बीच में उन्होंने कलकत्ता यूनिवर्सिटी (विश्वविद्यालय) से बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करली थी। और कानून की परीक्षा की तैयारी कर रहे थे, साथ ही अपने संशयों की निवृत्ति के लिये कितने ही व्यक्तियों के पास गये पर कहीं भी उनकी शङ्का का समाधान नहीं हुआ। एक दिन उनके पितृव्य (चाचा) जो रामकृष्ण परमहंस के शिष्य थे, उनको अपने साथ वहां लेगये।

*महात्मा रामकृष्ण परमहंस एक पहुंचे हुये साधु थे। आज कल के कनफटे चिमटा हाथ में लिये, "दाता भला करे" कहने वाले साधुओं की तरह नहीं थे। जिस तरह मथुरा के प्रज्ञाचक्षु स्वामी विरजानन्द सरस्वती को स्वामी दयानन्द

श्री रामकृष्ण परमहंस स्वामी विवेकानन्द के गुरू थे। स्वामी विवेकानन्द तथा उनके साथी श्री रामकृष्ण परम हंस को अवतार मानते हैं। परन्तु वास्तव में रामकृष्ण परमहंस ने कभी स्वयं अवतार होने का दावा नहीं किया था। सन् १९१० में अङ्गरेज़ी के प्रसिद्ध लेखक और ब्रह्मसमाज के प्रख्यात नायक पं० शिवनाथ शास्त्री एम० ए० ने माडर्न रिव्यू में "Men as I have seen" शीर्षक लेखावली लिखी थी जिसमें उन्होंने बङ्गाल के प्रसिद्ध पुरुषों के दर्शनों का उनके हृदय पर जो प्रभाव पड़ा था वह दिखलाया था उक्त लेखावली में उन्होंने उक्त परमहंसजी का भी वर्णन किया है, जो नवम्बर सन् १९१० के माडर्न रिव्यू के अङ्क में छपा है। एक बार उक्त परमहंसजी की पीड़ितावस्था में पंडित शिवनाथ शास्त्री उनसे मिलने गये थे। तब तो उक्त शास्त्रीजी ने परमहंसजी से कहा:—

As there are many edition of a book so there have been many editions of God Almighty and your disciples are about to make you a new one. He too smiled and said:-Just fancy God Almighty dying of a cancer in the throat what great fools these fellows must be."—The Modern Review of November 1910. जिस भांति एक पुस्तक के कितने ही संस्करण होते हैं उसी भांति सर्व शक्तिमान जगदीश्वर के भी बहुत से संस्करण हुए हैं और अब आपके शिष्यवर्ग आप का नया संस्करण करने वाले हैं। इस पर परमहंसजी हंसे और कहा:—सोचो तो सही, सर्वशक्तिमान् परमेश्वर गले में फोड़ा होने के कारण मर रहा है, ये मनुष्य कैसे मूर्ख हैं?

सरस्वती को देख कर, उनके द्वारा अष्टाध्यायी और महाभाष्य के भारतवर्ष में पठन पाठन की प्रणाली के प्रचार की आशा हुई थी वैसे ही श्री रामकृष्ण परमहंस को हमारे चरित्रनायक नरेन्द्रनाथ दत्त (स्वामी विवेकानन्द) को देख कर यह आशा हुई कि इसके द्वारा मेरे सिद्धान्तों का प्रचार होगा। श्रीरामकृष्ण परमहंस ने नरेन्द्रनाथ दत्त को देखते ही पूछाः—"क्या तुम धर्म विषयक कुछ भजन गा सकते हो ?" इसके उत्तर में नरेन्द्रनाथ दत्त ने कहाः—"हां गा सकता हूं"। पीछे उन्होंने दो तीन भजन अपनी स्वाभाविक मधुर ध्वनि में गाये। उनके भजन गाने से परमहंसजी बहुत प्रसन्न हुये। तब से वे परम-हंसजी का सत्सङ्ग करने लगे और उनके शिष्य तथा वेदान्तमत के दृढ़ अनुयायी हो गये थे।

सन् १८८६ का वर्ष महात्मा रामकृष्ण परमहंस के शिष्यों के लिये ही नहीं किन्तु समस्त भारतवर्ष के लिये बुरा था। उस वर्ष की १६वीं अगस्त को महात्मा रामकृष्ण परमहंस इस भारतमाता की गोद खाली कर गये। उनके शिष्य और भक्तों को उनकी वियोग वेदना सहन करनी पड़ी। परमहंसजी के देहान्त के कारण समस्त धर्मानुरागियों में शोक की ज्वाला प्रज्वलित हो गई थी।
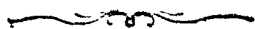
गुरु स्मारक

उनके देहान्त हो जाने के पश्चात् उनकी ग्रेज्यूएट शि-
मंडली को उनके वेदान्त सम्बन्धी विचारों के प्रचार करने की
अपरिमित लालसा हुई। जिस युवावस्था में हतभाग्य इस
देश के नवयुवकों को भोग विलास के अतिरिक्त और कुछ
सूझता ही नहीं है वहां रामकृष्ण परमहंस के नवयुवक शिष्यों
ने अपनी तरुणावस्था का कुछ विचार न करके सांसारिक
माया से मोह हटा लिया और अपने गुरु के उपदेशों के प्रचार
करने की असीम चेष्टा करने लगे। उन्होंने अपने समस्त सुख
चैन को लात मार कर हिन्दू जाति और भारतवर्ष की सेवा
करने की प्रतिज्ञा की। परमहंस जी की ग्रेज्यूएट शिष्य-मंडली
ने अपने पहले नाम बदल कर विवेकानन्द अभयानन्द ब्रह्मा-
नन्द, रामकृष्णानन्द, अद्वयानन्द, त्रिगुणातीतानन्द, निरंजना-
नन्द आदि नवीन नाम धारण कर लिये। हमारे चरित्र नायक
नरेन्द्रनाथ दत्त ने अपना नाम विवेकानन्द रखा।

अज्ञातवास और भारत भ्रमण

सन् १८८७–१८९२

सबसे पहले स्वामी विवेकानन्द हिमालय शिखर पर
छः वर्ष तक एकान्तवास में रहे। फिर वहांसे तिब्बत गये आ

उन्हों ने बौद्धधर्म सम्बन्धी जानकारी प्राप्तकी। फिर भारतवर्ष में जहां तहां उपदेश करते रहे। इस भ्रमण में वह राजपूताने की प्रसिद्ध रियासत खेतड़ी गये थे। उस समय उन्हों-ने भारतवर्ष में दूर दूर तक भ्रमण किया था। मदरास और पश्चिमी किनारे त्रिवेन्द्रम तक गये थे। जहां कहीं गये, वहीं उन्हें नव्यभारत के निर्माण करने में सफलता प्राप्त हुई थी।

अमेरिका यात्रा

किन्तु स्वामी विवेकानन्द के विकास होने का स्थान शिकागो की रिलिजिस पार्लामेंट (धर्मसम्मेलन) थी * और

*शिकागो में स्वामी विवेकानन्द की सफलता सुनकर थियोसॉफिकल सोसाइटी ने भी वाह वाह लूटनी चाही थी, यह अफवाह थी कि अमेरिका में स्वामी विवेकानन्द को थियोसॉफिकल सोसाइटी के कारण सफलता प्राप्त हुई। स्वयं स्वामी विवेकानन्द को मदरास में इस चर्चा का अपनी वक्तृता में प्रतिवाद करना पड़ा था था। वहां पर उन्होंने "My plan of Campaign" शीर्षक जो वक्तृता दी थी उसमें स्पष्ट कहा था There is another talk going round that the Theosophists helped the little achievements of mine in America and in England. I have to tell you in plain words that every bit of it is wrong, every bit of it is untrue.)From Columbo to Almora, page 117 इसका सार यह है

जाते हैं । जो पत्र सम्पादक काशी नरेश के विलायत यात्राकी व्यवस्था देने पर भी अपने पत्र में मिथ्या समाचार छापदेते हैं कि उन्होंने व्यवस्था नहीं दी और जब काशी नरेश की व्यवस्था उनकी सेवा में पहुंचाई जावे तो भी वे अपनी बात का प्रतिवाद छापना उचित नहीं समझते हैं तब ऐसे समाचार पत्रों से आशा ही क्या की जा सकती थी ? ऐसे सङ्कीर्ण नीतिवाले समाचार पत्रों ने स्वामी विवेकानन्द के अमेरिका जाने का प्रतिवाद किया तो आश्चर्य ही क्या है ? हिन्दी के स्वर्गीय एक "कोविद रत्न"ने तो टेसू लिखकर ही विवेकानन्द की दिल्लगी उड़ाई थी । इस पर उदार हृदय पाठकों को क्षुब्ध नहीं होना चाहिये । क्योंकि आज कल भी हिन्दी भाषा के कितने ही समाचार पत्रों के ऐसे ऐसे सभ्य और शिक्षित सम्पादक हैं, जो अपने प्रतिवादियों को "टेसू की उम्मेदवारी या "होली का नाच" लिखकर गालियां दिया करते हैं । कितने ही ऐसे सम्पादक हैं जो हिन्दू समाज से पुरानी कुप्रथाओं को उठाने में पाप समझते हैं हिन्दी ही के पत्र क्यों बङ्गभाषा तथा उर्दू के समाचार पत्र भी इस रोग से मुक्त नहीं हैं । अतएव पुरानी चाल के अंग्रेज़ी भाषा के समाचार पत्रों ने भी स्वामी विवेकानन्द की विलायत यात्रा का प्रबल प्रतिवाद किया था, पर इस विरोध से स्वामी विवेकानन्द की यात्रा में कुछ रुकावट नहीं हुई । वे किसी विरोध बाधा से भयभीत न होकर

"करतल भिक्षा, तरुतल वासा" इस सिद्धान्तको धारणकरके जापान होते हुये अमेरिका पहुंच हीं तो गये।

अमेरिका प्रवास

कहा जाता है, परमेश्वर उसकी सहायता करता है जो अपनी सहायता आप करता है। जब स्वामी विवेकानन्द अपने आत्मिक बल के सहारे अमेरिका जाने को तैयार हुये तो परमेश्वर ने भी उनको सहायता दी। अमेरिका में पग रखते ही उनके धैर्य की परीक्षा का समय उपस्थित हुआ। जिस समय वे अमेरिका पहुंचे, उस समय उनके पास जो थोड़ा सा रुपया था, निबट गया। वहां उनके भूखे मरने की नौबत तक आगई थी। एक दिन जब वे बोस्टन के पास एक गांव की गली में खिन्न चित्त से भ्रमण कर रहे थे, तब तो एक वृद्धा महिला को स्वामी जी की सूरत शक्ल और पोशाक देख कर आश्चर्य हुआ। इसमें सन्देह नहीं, स्त्रियों के हृदय में दया का श्रोत पुरुषों की अपेक्षा विशेष होता है। जब तिब्बत में बौद्ध लामा, ब्रह्मसमाज के प्रसिद्ध संस्थापक, प्रातः स्मरणीय राजा राममोहन राय के प्राण लेने को उतारु होगये थे तब वहां पर बौद्ध महिलाओं ने राजा साहब के जीवन की रक्षा की थी। यही दशा स्वामी विवेकानन्द की भी हुई उनका

परिचय अमेरिकनों को उक्त अमेरिकन महिला द्वारा प्राप्त हुआ था। एक अमेरिकन महिला का गेरुआ वस्त्रधारी हिन्दू संन्यासी के प्रति इस भांति अपनी दया का परिचय देना क्या परमात्मा की प्रेरणा नहीं है ?

अमेरिकन महिला ने स्वामी जी से यह जान कर कि वे कौन हैं ? उनको अपने यहां भोजन के निमित्त निमन्त्रण दिया अमेरिकन लोग बड़े ही कौतुक प्रिय होते हैं। इस अमेरिकन महिला ने भी स्वामी जी को अपने यहां निमन्त्रण देनेमें विशेष कौतुक समझा था। उसने समझा था कि पूर्वीय मनुष्यों का नमूना ही अपने मित्रों को दिखलावेंगे। किन्तु थोड़ी देर पीछे ही उक्त अमेरिकन महिला को ज्ञात हुआ कि ये तो गूदड़ी में लाल छिपे हुये हैं। यह "पूर्वीय नमूना" तो अद्भुत प्रतिभाशाली है। और ऐसा प्रतिभाशाली है कि पश्चिमी सभ्यता के केन्द्र-स्थल में भी ऐसे "नमूने" बहुत कम मिलते हैं। स्वामी जी के दार्शनिक विचारों को अमेरिकन महिला और उसके मित्र समझ नहीं सके ! इसलिये उन्होंने दर्शन शास्त्र के एक अध्यापक को उनसे मिलने के लिये बुलाया था। यह सच है, हीरे की परख जौहरी ही जान सकता है। दर्शन शास्त्र के अध्यापक ने स्वामीजी से भेंट करते ही उनको पहचान लिया कि वह एक रत्न हैं ? उस अमेरिकन अध्यापक ने स्वामी जी को शिकागो की पार्लामेंट आफ़ रिलीजन्स (धार्मिक-सम्मेलन) के सम्बन्ध

"करतल भिक्षा, तरुतल वासा" इस सिद्धान्तको धारणकरके जापान होते हुये अमेरिका पहुंच हीं तो गये।

अमेरिका प्रवास

कहा जाता है, परमेश्वर उसकी सहायता करता है जो अपनी सहायता आप करता है। जब स्वामी विवेकानन्द अपने आत्मिक बल के सहारे अमेरिका जाने को तैयार हुये तो परमेश्वर ने भी उनको सहायता दी। अमेरिका में पग रखते ही उनके धैर्य की परीक्षा का समय उपस्थित हुआ। जिस समय वे अमेरिका पहुंचे, उस समय उनके पास जो थोड़ा सा रुपया था, निवट गया। वहां उनके भूखे मरने की नौबत तक आगई थी। एक दिन जब वे वोस्टन के पास एक गांव की गली में खिन्न चित्त से भ्रमण कर रहे थे, तब तो एक वृद्धा महिला को स्वामी जी की सूरत शक्ल और पोशाक देख कर आश्चर्य हुआ। इसमें सन्देह नहीं, स्त्रियों के हृदय में दया का श्रोत पुरुषों की अपेक्षा विशेष होता है। जब तिब्बत में बौद्ध लामा, ब्रह्मसमाज के प्रसिद्ध संस्थापक, प्रातः स्मरणीय राजा राममोहन राय के प्राण लेने को उतारु होगये थे तब वहां पर बौद्ध महिलाओं ने राजा साहब के जीवन की रक्षा की थी। यही दशा स्वामी विवेकानन्द की भी हुई उनका

परिचय अमेरिकनों को उक्त अमेरिकन महिला द्वारा प्राप्त हुआ था। एक अमेरिकन महिला का गेरुआ वस्त्रधारी हिन्दू संन्यासी के प्रति इस भांति अपनी दया का परिचय देना क्या परमात्मा की प्रेरणा नहीं है?

अमेरिकन महिला ने स्वामी जी से यह जान कर कि वे कौन हैं? उनको अपने यहां भोजन के निमित्त निमन्त्रण दिया अमेरिकन लोग बड़े ही कौतुक प्रिय होते हैं। इस एमरिकन महिला ने भी स्वामी जी को अपने यहां निमन्त्रण देनेमें विशेष कौतुक समझा था। उसने समझा था कि पूर्वीय मनुष्यों का नमूना ही अपने मित्रों को दिखलावेंगे। किन्तु थोड़ी देर पीछे ही उक्त अमेरिकन महिला को ज्ञात हुआ कि ये तो गूदड़ी में लाल छिपे हुये हैं। यह "पूर्वीय नमूना" तो अद्भुत प्रतिभाशाली है। और ऐसा प्रतिभाशाली है कि पश्चिमी सभ्यता के केन्द्र-स्थल में भी ऐसे "नमूने" बहुत कम मिलते हैं। स्वामी जी के दार्शनिक विचारों को अमेरिकन महिला और उसके मित्र समझ नहीं सके! इसलिये उन्होंने दर्शन शास्त्र के एक अध्यापक को उनसे मिलने के लिये बुलाया था। यह सच है, हीरे की परख जौहरी ही जान सकता है। दर्शन शास्त्र के अध्यापक ने स्वामीजी से भेंट करते ही उनको पहचान लिया कि वह एक रत्न हैं? उस अमेरिकन अध्यापक ने स्वामी जी को शिकागो की पार्लामेंट आफ़ रिलीजन्स (धार्मिक-सम्मेलन) के अध्यक्ष

डा० वेरोज़ (Barrows) से परिचय कराया था। उक्त डाकृर ने स्वामी जी को सम्मेलन में हिन्दुओं का प्रतिनिधि स्थिर किया था।

धार्मिक परिषद् में वक्तृता

धार्मिक परिषद् में स्वामी जी ने जो पहिली वक्तृता दी थी। उस से ही उनकी अमेरिका में विशेष ख्याति हो गई थी। उनका इस पहिली वक्तृता से ही अमेरिकनों पर सिक्का जम गया था। उनकी अलौकिक वक्तृता शक्ति, विचार शैली और मधुर वार्त्तालाप ने अमेरिकनों को अपनी ओर आकर्षित कर लिया था। उन्होंने स्वयं अपने पत्र में जो शिकागोसे २ नवंबर १८९३ को भेजा था, लिखा है:—"जिस दिन परिषद्की उपक्रम सभा हुई उस दिन सुवह हम सव प्रतिनिधि आर्ट पैलेस नामक एक घर में पहले एकत्र हुये। सभा होने के लिये एक भव्य मण्डप तैयार किया गया था और उसके चारों ओर दूसरे छोटे २ मण्डप भी कमरों की जगह पर वनाये गये हैं। अपने देश से ब्रह्मसमाज की तरफ़ से श्रीयुक्त माजूमदार, वम्बई के श्रीयुक्त नगरकर, जैन धर्म प्रतिनिधि श्रीयुक्त गांधी और थियासोफ़ी की ओर से श्रीमती वेसेण्ट और श्रीयुक्त चक्रवर्ती आदि लोग आये हैं इनमें से श्रीयुत माजूमदार से

मेरी पहिले से पहिचान थी और श्रीयुत चक्रवर्ती मुझे नाम से पहचानते थे। इसके बाद हमने जुलूस की धूमधाम के साथ सभागृह में प्रवेश किया और हमारे बैठने के लिये जिस उच्च पीठ की योजना की गई थी उस पर जा बैठे। इसी पीठ पर और ६ सात सौ उच्च वर्गीय अमेरिकन लोग भी बैठे थे। यह सब समाज देखकर मैं तो एक दम घबड़ा गया, और अब इस समाज में मैं व्याख्यान देनेवाला हूं। मेरा हृदय धड़क ने लगा, और जीभ बिलकुल सूखकर तलुवे में जा लगी। श्रीयुत माजूमदार का व्याख्यान बहुत ही सरस हुआ, चक्रवर्ती उनसे भी अच्छे बोले और श्रोता लोगों ने भी उन दोनों का अच्छा आदर किया। उन सबों ने बहुत उत्तम तयारी की थी। उन्हों ने अपने व्याख्यान पहले ही से पाठ कर रखे थे मुझ मूर्ख को यह विचार पहले सूझा ही नहीं, और अन्त में प्रसङ्ग आही पहुंचा। डाक्टर बेरोज ने श्रोताओं को मेरा परिचय देदिया। मैंने मन ही मन में देवी सरस्वती को वन्दना कर व्याख्यान शुरू किया।

अमेरिका के मेरे प्यारे भाई और बहिनों!

दो मिनट तक तालियों की गर्जना कानों की झिल्लियां फाड़ रही थीं। मैंने अपना व्याख्यान जैसे तैसे करके समाप्त किया। जब मैं बैठ गया तब जान पड़ा कि जैसे बड़ा भारी बोझा मेरे सिर से उतर गया हो। दूसरे दिन के समाचार

पत्र देखे तब मुझे मालूम हुआ कि मेरा व्याख्यान सर्वोत्कृष्ट हुआ। इस दिन से मैं विख्यात मनुष्यों में गिना जाने लगा। जिस दिन मैंने अपना वेदान्त विषयक निबंध पढ़ा उस दिन तो बेहद भीड़ हुई थी। समाचार पत्रों ने भी मेरी खूब स्तुति की थी। इस कारण सभ्य स्त्रियां तो उस दिन बहुत ही एकत्रित हुई थीं। परिषद् भर के सारे व्याख्याताओं में उत्तम व्याख्यान देने के कारण प्रायः सभी समाचार पत्र मेरी प्रशंसा कर रहे थे।

इसमें सन्देह नहीं कि स्वामी जी की इस वक्तृता ने अमेरिकन लोगों पर विशेष प्रभाव डाला था। जब उन्होंने हिन्दू धर्म पर अपना निबंध पढ़ा था तब तो सभी ने उसको बड़े चाव से सुना था। वहां के समाचार पत्रों में उनकी वक्तृता की बड़ी प्रशंसा निकली थी। अमेरिका में जिधर देखिये उधर इनकी वक्तृता की धूम मची हुई थी। न्यूयार्क क्रिटिक नामक एक अख़बारने लिखा थाः—"वह (स्वामी विवेकानन्द) ईश्वर का उत्पन्न किया हुआ महान वक्ता है। उसका मज़बूत और चमत्कारिक मुख, पीले और नारङ्गी वस्त्र, उन सच्चे वचन और बहुमूल्य भाषण से कम चित्ताकर्षण करनेवाले न थे"। दूसरे अख़बार न्यूयार्क हेरल्ड ने लिखा था—"इसमें संदेह नहीं कि पार्लामेंट आफ़ रिलीजन्स में स्वामी विवेका-

नन्द एक महान पुरुष हैं। उनकी वक्तृता सुनकर हम सोचने लगे हैं कि ऐसी विदुषी जाति के लिये पादरियों को भेजना कैसी मूर्खता है" ?

वहां की अनेक सभाओं ने स्वामीजी को अपने यहां व्याख्यान देने के लिये बुलाया था। किसी ने सच कहा है "राजा का मान केवल अपने देश में ही होता है पर विद्वान का सर्वत्र होता है"। बस इस न्याय के अनुसार ही स्वामी विवेकानन्द का अमेरिका में खूब मान हुआ। दो अमेरिकन उनके शिष्य भी हुये। जिनमें से एक मेडम लुईसी थी जो पीछे स्वामी अभयानन्द कहलाई जाने लगी थी। यह एक फ्रेंच स्त्री थी। दूसरा एक पुरुष था, जिसका नाम मिस्टर सन्डसवर्ग था जो पीछे कृपानन्द कहलाया। स्वामी विवेकानन्द ने अमेरिका में अगणित स्थानों में व्याख्यान दिये थे। जिससे अमेरिका में वेदान्त सम्बन्धी चर्चा खूब फैली। यों स्वामी विवेकानन्द ने अमेरिका में वेदान्त की ध्वजा पताका उड़ाकर आर्यों के गौरव को बढ़ाया था।

इङ्गलैंड यात्रा

सन् १८९५ अक्टूबर—१८९६ दिसम्बर

अमेरिका में स्वामी विवेकानन्द ने सन् १८९५ अक्टूबर में

इङ्गलैंड की यात्रा की थी। वहां वे तीन मास तक रहे थे। वहां पर इनके व्याख्यानों की खूब धूमधाम रही थी। इङ्गलैंड में स्वामीजी के व्याख्यानों के प्रभाव का अनुभव केवल इतने ही से किया जा सकता है कि एक अंग्रेज़ी अख़बार नें उस समय लिखा था :–"लण्डन में अनेक जातियों के, अनेक अवस्थाओं के मनुष्य मिलते हैं, पर इस समय इङ्गलैंड में उस तत्ववेत्ता से बढ़कर और कोई व्यक्ति नहीं है, जो अभी शिकागो में धार्मिक परिषद् हुई है, उसमें वह हिन्दू धर्म की ओर से प्रतिनिधि था।"

उन दिनों प्रोफ़ेसर मैक्समूलर भी जीवित थे, स्वामी जी ने उक्त प्रोफ़ेसर महोदय से भी भेंट की थी, और उनसे श्रीरामचन्द्र परमहंस के जीवन चरित्र और उपदेश के छापने का अनुरोध किया था। वहां मिस मारगेट नोबिल जो पीछे *भगिनी निवेदिता के नाम से भारतवर्ष में विख्यात हुईं थीं इनकी शिष्या हो गईं थीं। इसके अतिरिक्त स्वामी विवेकानन्द के दो और भी अङ्गरेज़ शिष्य हुये थे। उनमें से एक स्वर्गीय जे० जे० गोविन था, वह जहां स्वामीजी जाते थे, उनके साथ ही साथ जाता था। दूसरा कप्तान सेवियर था, जिसने हिमालय के मायावती में अद्वैताश्रम स्थापित करने में सहायता दी थी

*भारतवर्ष में आकर भगिनी निवेदिता श्रीगौराङ्ग महाप्रभु की भक्ता हो गई थीं।

इङ्गलैण्ड से स्वामीजी ६वीं दिसम्बर १८९५ को अमेरिका लौट आये थे। उस समय उनके शिष्यों ने अमेरिका के कई स्थानों में स्वतन्त्र मठ स्थापित कर लिये थे। इङ्गलैण्ड से लौटकर उन्होंने "सन्डे लेक्चर" (रविवार व्याख्यान श्रेणी) शुरू किये थे। जिसमें श्रीमद्भागवतगीता तथा अन्य विषयों पर इनके व्याख्यान होते रहे थे।

भारतवर्ष को लौटना

सन् १८९६ दिसम्बर से १८९९ जून

इस भांति सभ्य देशों में वेदान्त की ध्वजा पताका उड़ाकर स्वामीजी १६वीं दिसम्बर सन् १८९६ को अपनी जन्मभूमि भारतवर्ष को चल पड़े थे। साथ में कितनीही अंगरेज़ महिलाएँ और सज्जनों को शिष्य रूप में यहां लाये थे। जिस जहाज़ में स्वामीजी सवार थे वह १५वीं जनवरी सन् १८९७ को कोलम्बो वन्दर पहुंचा था। वहां पर उनका खूब धूम धाम से स्वागत हुआ फिर इसी अवसर पर स्वामीजी ने कोलम्बो से अलमोड़ा तक यात्रा की थी। जहां कहीं वे गये वहीं पर उनका विशेष रूप से स्वागत हुआ था, स्थान स्थान में उनको अभिनन्दनपत्र समर्पण किये गये थे और उन्होंने वेदान्त का खूब प्रचार किया था। ब्रह्मचारियों के पढ़ाने के लिये दो

भारतवर्ष को लौटना

वहां से भारतवर्ष को लौटे; पर स्वास्थ्य बहुत बिगड़ चुका था। भारतमाता का यह दुर्भाग्य है कि यहां सार्वजनिक कार्य करनेवालों का स्वास्थ्य बहुत ख़राब हो जाता है और वे अपने स्वास्थ्य की कुछ चिन्ता भी नहीं करते हैं। अतएव स्वामीजी भी अपने स्वास्थ्य की कुछ चिन्ता न करके निरन्तर कार्य करते ही रहे। रामकृष्ण सेवाश्रम साधुओं की सहायतार्थ स्थापित किया था। काशी में एक और आश्रम ब्रह्मचारियों के पढ़ाने के लिये स्थापित किया था। विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिये एक रामकृष्ण पाठशाला भी खोली थी। इसी अवसर में जापान से कई नामी जापानी उनको धार्मिक परिषद् में जो उस समय जापान में होनेवाली थी, बुलाने के लिये आये थे किन्तु स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण उन्होंने वहां जाने का विचार परित्याग कर दिया था।

मृत्यु

सन् १९०२ की चौथी जुलाई, भारतवर्ष में दुर्दैव उपस्थित करने को आई थी। शोक! अत्यन्त शोक!!! भारतमाता के जिस लाल ने सात समुद्र, तेरह नदी पार कर वेदान्त की ध्वजा

फहरा कर, सभ्यताभिमानी देशों के निवासियों के हृदयों पर विजय प्राप्त की थी। आज के दिन उसी को कराल काल ने झपट लिया। दुष्ट मृत्यु ने बूढ़ी भारतमाता पर तनिक भी दया नहीं की। चौथी जुलाई सन् १९०२ की रात्रि के ९ बजे पर स्वामीजी का देहान्त हुआ था शोक! महाशोक!!! भारतमाता की गोद में से एक ऐसा पुत्र रत्न उठ गया जिसका स्थान अभी तक पूर्ण नहीं हुआ है।

स्मारक

दुख के साथ कहना पड़ता है भारतवासियों में कृतघ्नता की विशेष मात्रा बढ़ी हुई है। नहीं तो क्या स्वामीजी के स्थान स्थान में आज कुछ स्मारक न होते? हिन्दू जाति! तू भले ही औरों के साथ अपनी कृतज्ञता का पूर्ण परिचय देती रही हो। पर इसमें सन्देह नहीं, तू अपने लालों के साथ सदैव निष्ठुरता का परिचय देती आई है। तू ने राजा राममोहन राय और स्वामी दयानन्द सरस्वती को विगानों से भी बढ़कर समझा था तूने स्वामी विवेकानन्द और स्वामी रामतीर्थ का अमेरिका और इङ्गलेण्ड के समान भी अपने यहां आदर नहीं किया। यदि हिन्दू जाति स्वामी विवेकानन्द के प्रति अपना कुछ भी कर्तव्य समझती तो आज क्या भारतवर्ष के स्थान स्थान में उनका कोई

रक नहीं दिखलायी पड़ता। यद्यपि कलकत्ते के निकट
ूरमठ में रामकृष्ण मिशन ने उनका स्मारक रखने का कुछ
त्न किया है, किन्तु समस्त हिन्दुओं को स्वामीजी का कुछ
ारक वनाना चाहिये। स्मरण रहे जो जाति अपनी योग्य
न्तानों का आदर करना नहीं सीखती है उस जाति की
दापि उन्नति नहीं होती है।

स्वामीजी के जीवन पर एक दृष्टि

अव विचारना चाहिये, स्वामी विवेकानन्द में ऐसे क्या गुण
, जिससे उनका भारतवासियों पर ही नहीं, वल्कि विदेशियों
क पर प्रभाव पड़ा है। इसमें सन्देह नहीं, स्वामी विवेका-
न्द अंग्रेज़ी भाषा के अच्छे विद्वान् थे तथा और भी कई
ाषाओं के ज्ञाता थे। प्रभावशाली वक्ता थे, कवि भी थे।
रन्तु ये सव ऐसे अलौकिक गुण नहीं जो अन्य व्यक्तियों
ें न हों। भगवान की कृपा से इस समय भी भारतवर्ष में
स्वामी विवेकानन्द के समान और उनसे वढ़ कर भी अच्छे
अच्छे पुरुष विद्यमान हैं वक्ता और कवियों का भी अभाव नहीं
है। पर स्वामी विवेकानन्द के उपदेशों के विशेष प्रभाव होने
का कारण केवल उनका हृदय था उनके हृदय में भारतवर्ष और
मनुष्य जाति के प्रति प्रेम भरा हुआ था। यही दशा स्वामी

रामतीर्थ की थी। जब से स्वामी विवेकानन्द और स्वामी राम-तीर्थ अमेरिका से लौटे तब से दोनों की यह अपरिमित लालसा हो गयी थी कि इस वृद्धा भारतमाता को जो यन्त्रणायें मिल रही हैं, वे दूर हों। पर भारतमाता अथवा हमारे दुर्भाग्यवश उक्त दोनों पुरुष इस संसार से शीघ्र चल बसे। परमात्मा को यह स्वीकार न हुआ भारतमाता के ऐसे पुत्र थोड़े दिन तो यहां और ठहरते। स्वामी विवेकानन्द के हृदय में सहानुभूति और देशभक्ति का स्रोत कितना बह रहा था उनका पता उन पत्रों से लगता है, जो उन्होंने जापान अमेरिकादि देशों से अपने भारतीय मित्रों को भेजे थे। आज कल कई यूनिवर्सिटीज़ अपने यहां के छात्रों को अंगरेज़ी के प्रसिद्ध कवि विलियम कूपर के लेटरस् (पत्र) पढ़ाया करती हैं। नहीं जानते जब कभी किसी स्वदेशी विश्वविद्यालय की प्रतिष्ठा होगी तबी स्वामी विवेकानन्द के पत्रों को कितना उच्च स्थान प्राप्त होगा!।

प्रेम के अतिरिक्त स्वामी विवेकानन्द में एक और भारी गुण था। वह था त्याग और वैराग्य। इस समय त्याग और वैराग्य की चाहे जैसी मिट्टी पलीत हो रही हो पर सच्चे त्याग और वैराग्य बिना कभी कोई परोपकार में रत नहीं हो सकता है वर्त्तमान समय में भी रामकृष्ण परमहंस स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानन्द और स्वामी रामतीर्थ

त्याग और वैराग्य की सजीव एवम् ज्वलन्त मूर्ति हैं। इस समय लाला लाजपत राय जो त्याग और वैराग्य की निन्दा करते हैं, वह इसलिये कि आज कल जितने त्यागी और वैरागी हैं, वे त्याग और वैराग्य दोनों शब्दों की हत्या कर रहे हैं। उनका त्याग और वैराग्य बनावटी है। वे त्यागी और वैरागी बन कर अपने जीवन का बोझ समाज पर डालते हैं। अतएव इस बनावटी त्याग और वैराग्य की जितनी निन्दा की जाय उतनी ही थोड़ी है। पर सच्चे त्याग और वैराग्य की भी आवश्यकता प्रत्यक्ष प्रतीत हो रही है। इस सच्चे त्याग और वैराग्य के बलही स्वामी विवेकानन्द अमेरिका जैसे प्रकृत-वादी देश में वेदान्त की ध्वजा फहराने में समर्थ हुये थे। स्वामी विवेकानन्द अविवाहित और ब्रह्मचारी थे, सुतराम ब्रह्मचर्य ने भी त्याग और वैराग्य के साथ ही साथ उनको नव्य भारत के निर्माण करने में सहायता दी थी।

दूसरा अध्याय

राष्ट्रीय विचार

(२)

स्वामीजी की देशभक्ति ।

स्वामीजी की देशभक्ति तो शब्द शब्द में टपकती है। जापान से स्वामीजी ने जो पत्र भेजा था, वह अन्यत्र प्रकाशित है। उसको पढ़कर पाठक जान सकेंगे कि स्वामीजी के हृदय में भारतभूमि के प्रति कितनी ममता थी? स्वामी विवेकानन्द वेदान्ती थे, वेदान्त का उद्देश्य अपना पराया कुछ न समझना है। पर स्वामी विवेकानन्द मातृभूमि के प्रति प्रेम का लोभ सम्वरण नहीं कर सके थे। कलकत्ता में जो अभिनन्दन पत्र (एड्रेस) उनको भेंट किया गया था उसके उत्तर में उन्होंने एक स्थल पर कहा था:—मेरे चलते समय, मुझसे एक अंगरेज़ मित्र ने पूछा था*:—"स्वामी! विलासी, प्रतापी और शक्ति शाली पश्चिम में चार वर्ष के अनुभव केपश्चात् भारतवर्ष

*स्वामी विवेकानन्द का पत्रव्यवहार पेज ६५-६५

को अब आप कैसा पसन्द करते हो ?" मैं इसका उत्तर केवल इतना ही दे सका, "मुझे यहां आने से पहिले भी भारतमाता के प्रति ममता थी। अब उसी भारतवर्ष की धूली मेरे लिये पवित्र है। अब वह पवित्र भूमि मेरे लिये तीर्थ है। इसके अतिरिक्त उनके पत्रों में स्थान स्थान पर भारतवर्ष के प्रति प्रेम टपकता है। उन्होंने दार्जलिङ्ग से "भारती" की सम्पादिका के नाम जो पत्र भेजा था, उसमें लिखा है :—"धर्म ज्ञान का प्रचार करने के लिये प्रदेश जाने में मेरा यही उद्देश्य था कि मैं अपनी जन्मभूमि के उद्धार के लिये कुछ प्रयत्न करूं। मैं फिर योरोप जाऊंगा या नहीं सो आज निश्चयात्मक रूप से नहीं कहा जा सकता। अब भी यदि मैं जाऊंगा तो मेरा उद्देश्य केवल अपनी मातृभूमि की सेवा करना होगा वास्तव में इससे बढ़ कर और उनकी देशभक्ति का ज्वलन्त दृष्टान्त क्या मिल सकता है ?

*" I was asked by an English freind on the eve of my departure ,' Swami, how do you like now your mother land after four years' experience of the luxurious, glorious powerfull west " ? I could only answer: " India I loved before I came away. Now the very dust of India has become holy to me, the very air is now to me holy, it is now the holy land the place of pilgrimage, the Tirtha " (from Columbo to Almora, page 220.)

वर्तमान शिक्षा पर स्वामीजी

अब हम स्वामी विवेकानन्द के विचारों की पर्यालोचना में प्रवृत्त होते हैं। स्वामी विवेकानन्द के धार्मिक सामाजिक और राजनीतिक विचार चाहे जैसे रहे हों पर इसमें सन्देह नहीं उनका समस्त पुरुषार्थ भारतवर्ष के राष्ट्र निर्माण की ओर विशेष रहा था। राष्ट्र निर्माण का प्रथम साधन राष्ट्रीय शिक्षा है स्वामी विवेकानन्द का हृदय भी भारतवर्ष में शिक्षा का वर्त्तमान परिणाम देख कर विह्वल हो गया था। उन्होंने राष्ट्रीय शिक्षा की आवश्यकता अपनी वक्तृताओं तथा पत्रों में कई स्थानों पर दर्शायी है मदरास में स्वामी जी ने एक व्याख्यान The future of India अर्थात् भारतवर्ष का भविष्य दिया था। उसने अन्यान्य बातों के साथ ही साथ स्वामीजी ने शिक्षा सम्बन्धी अपने विचार प्रकट किये थे। जिसके कुछ अंशों का अनुवाद यहां दिया जाता है। स्वामी जी ने कहा था :—"हमको जाति की धार्मिक और ग्राहस्थ शिक्षा को थामना होगा। क्या तुम उसको समझते हो? तुम को सोचना चाहिये, तुमको बोलना चाहिये, तुमको ध्यान देना चाहिये और तुमको काम करना चाहिये। पर तिस पर जाति के लिये कोई मुक्ति नहीं है। यह शिक्षा जो तुम प्राप्त कर रहे हो उसमें कुछ अच्छी बातें हैं किन्तु उसमें एक बहुत भारी बुराई है और यह बुराई इतनी अधिक है कि इसमें सभी

अच्छी बातें दब गई हैं* प्रथम बात तो यह है यह शिक्षा मनुष्य बनाने वाली नहीं है, शिक्षा न होने के समान है। जो निषेधात्मक शिक्षा अथवा ऐसी कोई पढ़ाई जिसमें अभावात्मक भरा हो मृत्यु से भी बुरी है। लड़का स्कूल भेजा जाता है और वहां पर सबसे पहिली बात सीखता है वह यह है कि मेरा बाप मूर्ख था। दूसरी बात यह है कि मेरा दादा (पितामह) पागल था। तीसरी बात यह है जितने अध्यापक हैं सब के सब कपटी बनावटी हैं चौथे यह जितने पवित्र ग्रंथ हैं सब मिथ्या हैं इस समय तक वह सोलह वर्ष का हो जाता है उसे कुछ भी ज्ञान प्राप्त नहीं होता है। और उस शिक्षा का परिणाम यह हुआ कि लगातार पचास वर्ष के शिक्षा प्रचार होने पर भी तीनों प्रेसीडेन्सीज़ (प्रान्तों) में एक भी आदमी पैदा न हुआ। जिस किसी मौलिक पुरुष का आर्विभाव हुआ है उसने इस देश में शिक्षा प्राप्त नहीं की है दूसरे देशों में शिक्षा प्राप्त की अथवा वे एक बार पुराने विश्वविद्यालयों में मिथ्या विश्वासों को दूर करने के लिये गए हैं। यह शिक्षा नहीं है। यह केवल समाचारों का ढेर अपने मस्तिष्क में भर लेना और उन पर दङ्गा मचाते रहना,

* यहां पर स्वामीजी का यह तात्पर्य है कि शिक्षा प्राप्त करने पर भी शिक्षा के जो गुण हैं वे मनुष्य में न आवें तो शिक्षा न होने के बराबर है न उसमें कुछ लाभ है।

और अपने समस्त जीवन को वाटरलू का संग्राम बनाना ही शिक्षा नहीं है। हमको जीवन बनाना, मनुष्य निर्माण करना चरित्र गठन करना और विचारों को एक सा करना है यदि तुमने पांच विचार एक से कर लिये और अपना जीवन तथा चरित्र गठन कर लिया तो तुम्हारे पास उस मनुष्य की अपेक्षा अधिक शिक्षा है जो पुस्तकालय द्वारा कंठ करके शिक्षा दे सकता है। जिस गधे पर चन्दन लदा होता है। वह सिर्फ चन्दन के बोझ को ही जानता है नकि चन्दन का मूल्य पहचानता है। यदि शिक्षा केवल जानकारी ही प्राप्त करा सकती है तो इस संसार में ग्रन्थालय सब से बड़े महात्मा और विश्वकोष (Incyclopidia) ऋषि हैं। इस लिये हमारे हाथों में समस्त देश की शिक्षा का धार्मिक और गार्हस्थ आदर्श होना चाहिये। और जहां तक हो सके राष्ट्रीय पद्धति राष्ट्रीय प्रणाली पर होनी चाहिये। हो सकता है स्वामी जी ने बतलाया और उन्होंने आगे चल कर इस व्याख्यान में धार्मिक शिक्षा की जो प्रणाली बतलाई है, उससे शायद कोई सहमत न हो, परन्तु यह सब निर्विवाद स्वीकार करेंगे कि इस देश में धार्मिक और नैतिक शिक्षा की विशेष आवश्यकता है। इस भांति शिक्षा सम्बन्धी विचार उन्होंने कई स्थानों पर प्रकट किये हैं। स्थान के सङ्कोच के कारण यहां पर हम सब को उधृत करने में असमर्थ हैं। देवगढ़ वैद्यनाथ से २३

दिसम्बर सन् १९०० को स्वामी जी ने एक वङ्गालिन स्त्री
ो पत्र लिखा था उसका कुछ अंश यहां उद्धृत करते है
से उनके शिक्षा सम्बन्धी विचारों का पाठकों को और
पता लग जावेगा। स्वामी जी लिखते हैं:—"शिक्षा" यह
वहुत व्यापक अर्थ का है। विस्तृत वचन से ज्ञान दर्शक
ों का वड़ा संग्रह मस्तिष्क में भर लेना शिक्षा नहीं है।
यदि शिक्षा कहेंगे तो एक वड़े कोष को भी सुशिक्षित
सकेंगे। इसी प्रकार अनेक प्रकार के विषयों पर व्याख्यान
लेना भी शुशिक्षा का लक्षण नहीं है। जिस पठन, मनन अथ-
आचरण से हम अपनी इच्छा शक्ति का निग्रह करके उसे
न्य मार्ग पर ला सकते हैं और प्रत्यक्ष फलदायी कर सकते
उसे शिक्षा कहते हैं। तो फिर जिस शिक्षा से इच्छा शक्ति
ागृत नहीं होती किन्तु वह निद्रा रोग से ग्रस्त होकर मृत्यु
थपर आरूढ़ होती है उसे क्या शिक्षा नाम दिया जासकता है
तो यह कहता हूं कि मनुष्य की वुद्धि वृद्धि के लिये पूर्ण
अवकाश और स्वतंत्रता मिलने पर उसके वर्ताव में कुछ समय
तक प्रमाद भी होंगे। पर मैं समझता हूं कि ये प्रमाद भी उस
शुद्ध आचरण से श्रेष्ट होंगे जो केवल यांत्रिक पद्धति से होता है
रहता है। यह यदि सच है तो ऐसे निर्जीव मृत पिण्डों के वने
हुए समाज का सृष्टि में क्या महत्व है! ये श्रृङ्खलायें यदि
न होतीं तो, सव राष्ट्रों में अगुआ कहलाने का जिसे हक़ है।

और जहां की भूमि सारी पृथ्वी भरको ज्ञान देनेवाली खानि है क्या वही राष्ट्र आज गुलामी का राष्ट्र और वही भूमि क्या आज मूर्खता की जन्म दात्री के उज्ज्वल नामों से प्रसिद्ध हो रही होती।

जापान और स्वामी

(३)

जिस समय स्वामी विवेकानन्द जापान होते हुये अमेरिका गये थे, उस समय जापान का इतना नाम नहीं हुआ था, जितना अब है। पर स्वामी जी उसी समय जापान को देखकर पहचान गये थे कि अवश्य एक दिन यह देश उन्नति के शिखर पर पहुंचेगा। और इसके गुणों के सामने संसार के अन्य देशों को अपना मस्तक झुकाना होगा। उन्होंने जापान से जो चिट्ठी भारतवर्ष को भेजी थी उसमें भारतीय नवयुवकों को जापान देखने का परामर्ष दिया है। बड़े ही मार्म्मिक शब्दों में भारत वासियों को जापान से अच्छी अच्छी बातों के सीखने की अपील की है। जापान से स्वामी जी ने जो पत्र भेजा था, उसका अक्षर अक्षर पढ़ने योग्य है। इसी लिये हिन्दी पाठकों के विनोदार्थ उक्त चिट्ठी का यहां स्वतंत्र

अनुवाद प्रकाशित किया जाता है:—"इस संसार में जापानी पवित्र मनुष्यों में से एक हैं। उनकी प्रत्येक वस्तु स्वच्छ और सुन्दर है। उनकी गलियां प्रायः चौड़ी और सीधी तथा नियमित रूप से पटी हुई हैं। उनके घर पिंजड़े के समान छोटे छोटे, पर विल्कुल स्वच्छ हैं। उनके जंगली वृत्त, सदैव हरी भरी रहने वाली छोटी पहाड़ियां प्रत्येक गांव और शहर का पिछवाड़ा वनाये हुये हैं! नाटा क़द, सुन्दर शरीर जापानी पोशाक, उनके कार्य, ढङ्ग, भाव प्रभृति सवही चित्र के समान मनोहर हैं। जापान मनोरंजन की भूमि है, वहुधा प्रत्येक घर के साथ एक छोटा सा वाग भी है। जिस में छोटी छोटी झाड़ियां, घास की चौरस भूमि, छोटे छोटे वनावटी पानी के झरने और पत्थर के छोटे छोटे पुल हैं।

ज्ञात होता है, जापानियों को वर्तमान समय की आवश्यकता पूरी तरह से सूझ गई है। उन्होंने तोपों सहित अपनी सेना का पूरा संगठन कर लिया है। कहा जाता है, उनके कर्मचारियों में से एक ने तोपों का आविष्कार किया है जिनके मुक़ाबिले में कोई दूसरी तोप नहीं है। वे लगातार लड़ाई के जहाज़ का वेड़ा भी वढ़ा रहे हैं। मैं ने जापानी एन्जीनियर की वनाई एक टनलवोर्ड देखी, जो लग भग एक मील लम्बी है। यहां की दिया सलाईयों की फैक्टरी (कारखाना) भी देखने योग्य है। और वे इस पर भी झुके हुये हैं, जिस वात

की आवश्यकता हो, वह अपने देश में ही बना लेना।

मैं ने बहुत से मन्दिर देखे, प्रत्येक मन्दिर में पुराने बङ्गाली अक्षर, संस्कृत में कुछ मन्त्र लिखे हुए हैं। कुछ थोड़े से ही पुरोहित संस्कृत जानते हैं, पर यह चतुर बुद्धिमान दल हैं। उन्नति की वर्त्तमान तेजी पुरोहितों के भीतर भी प्रवेश कर गयी हैं। जापान के बारे में जो कुछ मेरे हृदय में है वह इस छोटे से पत्र में नहीं लिख सकता हूं मैं केवल यही चाहता हूं मेरे नवयुवकों को प्रति वर्ष जापान और चीन आना चाहिये। जापानी लोग अब भी यह समझते हैं कि भारतवर्ष केवल भूमि है! और तुम वास्तव में हो क्या? तुम अपनी सारी ज़िन्दगी बक बक करते रहे हो, व्यर्थ बातें बनाते रहते हो? आओ! इन जापानी आदमियों को देखो। फिर जाओ लज्जा के कारण अपना मुंह छिपा लो। एक बुद्धिहीन जाति, अगर तुम जाओगे तो तुम्हारी जाति खोजायगी। सहस्रों वर्ष तक अपने सिरों पर वहमों का बोझा लाद कर बने रहने वाले, सहस्र वर्ष से भोजन की छूत अछूत के सम्बन्ध में अपनी शक्ति नष्ट कर रहे हो। युगान्तर के लगातार सामाजिक अत्याचारों ने तुम में से मनुष्यता (इन्सानियत) को कुचल डाला है। अब तुम क्या हो? और अब क्या कर रहे हो?......हाथ में बड़े बड़े पोथे लिये समुद्र किनारे सैर करते हो यूरोपियन मस्तिष्क कार्य के बदहज़मी और

भटकते हुए टुकड़ों को दुहराते रहते हो। सम्पूर्ण आत्मा-तीस रुपये मासिक की क्लर्की और अच्छे कानूनदां बनने में झुकी रहती है। यही नव्य भारत की उच्चाकांक्षा है? क्या समुद्र में तुम को, पुस्तकों, गाउन्स (विश्वविद्यालय के वस्त्र) और विश्वविद्यालय के प्रशंसा पत्र तथा समस्त को डुबोने के लिये भी पर्याप्त जल नहीं है।

आओ! आदमी बनो!! अपने सङ्कीर्ण घोंसलों (मकानों) में से निकलो और दूर दूर तक देखो। देखो किस भांति जातियां बढ़ रही हैं क्या तुम मनुष्य को प्यार करते हो? क्या तुम अपने देश को प्यार करते हो? तब आओ हमको उच्च और उत्तम वस्तुओं के लिये द्वन्द करना उचित है। पीछे को मत देखो, सब से प्यारी और समीपस्थ आवाज़ तक को मत सुनो। पीछे को मत देखो, किन्तु बराबर सामने दृष्टि रहने दो।

आज भारत को कम से कम अपने एक सहस्र नवयुवक मनुष्यों को ध्यान में रखो, मनुष्यों की न कि पशुओं की आवश्यकता है। परमेश्वर ने तुम्हारी बनावटी सभ्यता को तोड़ने के लिये अङ्गरेज़ी गवर्नमेन्ट को यन्त्र स्वरूप में भेजा है। मदरास ने सब से पहिले आदमी, अंगरेज़ों को यहां टिक-ने में सहायता देने के निमित्त दिये थे। अब मदरास में कितने निस्वार्थ आदमी हैं, जो जीवन और मृत्यु के संग्राम में नये

पदार्थ लाने को, दीनों को सहानुभूति, क्षुधा पीड़ितों को रोटी और बहुत से आदमियों को ज्ञान की ज्योति तथा तुम्हारे पूर्वजों के अत्याचारों के कारण जो पशु श्रेणी में आ चुके हैं उन्हें आदमी बनाने को तैयार हो ?

जाति की रक्षा करो

मैं नहीं जानता कि स्वामीजी के उपदेशों को पढ़कर लोगों ने क्या मतलब निकाला है ? पर मैंने अब तक स्वामी जी के जितने उपदेश पढ़े हैं, उनसे यही मतलब निकाला है कि दीन दुखियों, पीड़ितों की सहायता करना परमधर्म है। उनका कहना था, मनुष्य जाति विशेषतः मूर्ख भारतवासियों की रक्षा करनी चाहिये। स्वामी जी का हृदय दुर्बलों के प्रति अत्याचार सहन करने को तैयार नहीं होता था। मद्रास में उन्होंने अपने एक व्याख्यान में कहा था:—"वर्त्तमान समय में मनुष्य इतने गिर गये हैं कि वे विचार करते हैं, कलियुग में हम कुछ कर नहीं सकते हैं। यदि वे केवल किसी तीर्थ स्थान में जायंगे वहां उनके पाप क्षमा हो जांयगे। यदि कोई अपवित्र मनुष्य मन्दिर में जाता है तो अपने समस्त पापों को साथ वहां ले जाता है और घर को पहले से भी बुरी दशा में लौटता है। तीर्थ पवित्र पदार्थ और मनुष्य से भरा हुआ स्थान है। किन्तु यदि कोई पवित्र मनुष्य किसी ऐसे स्थान में रहता है।

कि वहां पर कोई मन्दिर नहीं है, तो भी वह तीर्थ है। यदि कोई अपवित्र मनुष्य किसी ऐसे स्थान में रहता है जहां सैकड़ों मन्दिर हों तो वह तीर्थ भी तीर्थ नहीं रहता है। तीर्थ स्थान में रहना बहुत कठिन है, यदि किसी साधारण स्थान में पाप किया जाता है तो उसका शीघ्र ही संशोधन हो जाता है पर तीर्थस्थानमें जो पाप किया जाता है उसका शीघ्र संशोधन नहीं हो सकता है। सभी उपासना का पवित्र उद्देश्य यही है कि स्वयं पवित्ररहो और दूसरों की भलाई करो वह जो दीन दुखी में' पीडित में, पीड़ित में शिव को देखता है, वही वास्तव में शिव की सच्ची उपासना करता है। और जो केवल मूर्त्ति में शिव को देखता है, उसकी उपासना प्रारम्भिक है। मन्दिरों में शिवजी के देखने की अपेक्षा, शिवजी उसी से अधिक प्रसन्न होते हैं, जिसने एक दीन दुःखी में शिव देख-कर, विना उसके धर्म, जाति पांति का विचार करके, उसकी सहायता और सेवा की है।

एक धनाढ्य मनुष्य के एक वाग था और उसके दो माली थे। इनमें से एक माली वहुत सुस्त था और कुछ काम नहीं करता था। पर जव कभी उसका धनाढ्य स्वामी वाग में आता तो यह सुस्त आदमी हाथ जोड़ कर उसके सामने खड़ा हो जाता और कहता था कि मेरे स्वामी का कैसा सुन्दर चेहरा है और उसके सामने नाचने लग जाता था।

दूसरा माली कुछ बोलता नहीं था, किन्तु वह कार्य खूब करता था। सब प्रकार के फल और शाकभाजी पैदा करता और उनको अपने सिर पर स्वामी के पीछे बहुत दूर पहुंचा आता था। बस सोच देखो, इन दोनों मालियों में अपने स्वामी का कौन अधिक प्यारा होगा? बस शिव हमारा स्वामी है। और यह संसार उसकी वाटिका है। इसमें दो तरह के माली हैं। एक जो आलसी हैं, बनावटी हैं और कुछ काम नहीं करता है वह अपने शिव की नाक आंखों के सम्बन्ध में ही चर्चा किय करता है। और दूसरा वह है, जो शिव के दीन दुःखी बच्चों और पशुओं की रखवारी और रक्षा करता है। इन दोनों में शिव का कौन प्यारा होगा? जो उसके बच्चों की सेवा करता है। जो पिता की सेवा करना चाहता है, उसको पहिले बच्चों की सेवा करनी चाहिये। बस जो शिवजी की सेवा करना चाहता है, पहले उसको शिव केबच्चों की तथा इस संसार की सेवा करनी चाहिये।

गीता में कहा गया है, जो परमेश्वर के सेवकों की सेवा करते हैं, वे उसके सब से बड़े बड़े सेवक हैं। बस इसी कोअपने ध्यान में रक्खो। मैं पुनः कहता हूं कि यदि तुम पवित्र हो तो जो कोई तुम्हारे पास आवे, उसकी यथाशक्ति सहायता करो यही एक अच्छा कर्म है, इस कर्म के बल से ही चित्त की शुद्धि होती है। बस फिर जो शिव प्रत्येक मनुष्य के हृदय में रहता है स्पष्ट दिखलाई पड़ेगा। वह सदैव प्रत्येक हृदय में

रहता है। यदि प्रतिबिम्ब (दर्पण) पर किसी तरह की मिट्टी और गर्द है, तो हम अपनी मूर्त्ति नहीं देख सकते हैं। अज्ञानता और पाप ही हमारे हृदय दर्पण पर मिट्टी और धूल है। यही स्वार्थ ख़ास पाप है कि पहले हम अपना विचार करते हैं। जो यह विचार करता है, पहिले मैं खाऊंगा मेरे पास दूसरे से अधिक रुपया होगा और सब पदार्थ पहले मेरे ही पास होंगे। जो यह विचार करता है मैं दूसरों से पहिले स्वर्ग को चला जाऊंगा वह स्वार्थी मनुष्य है। निस्वार्थी मनुष्य कहता है मैं अपने भाइयों की सहायता करने से चाहे नरक को जाऊं मुझे स्वर्ग की परवाह नहीं है। यह निःस्वार्थ भाव ही तो धर्म का परीक्षण है। जिसका जितना निःस्वार्थ भाव है, वह उतना ही धर्मात्मा और शिवजी के निकट है, वह विद्वान् हो चाहे अविद्वान् वह चाहे इस बात को जानता हो, पर वह शिव के निकट अन्य व्यक्तिओं से विशेष है। स्वार्थी मनुष्य ने चाहे जितने मन्दिरों के दर्शन किये हों, चाहे जितने तीर्थ स्थानों में गया हो, कोढ़ी के समान उसने अपने को रङ्ग भी लिया हो, तब भी वह शिव से बहुत दूर है।

लाहौर में भक्ति पर व्याख्यान देते हुए, उन्होंने कहा था :—"वर्त्तमान में सब से अच्छा धर्म यह है कि प्रत्येक मनुष्य बाज़ार में जाय और वहां पर अपनी शक्ति के अनुसार एक, दो छः बारह भूखे "नारायण" की तलास करे। उन

दूसरा माली कुछ बोलता नहीं था, किन्तु वह कार्य खूब करता था। सब प्रकार के फल और शाकभाजी पैदा करता और उनको अपने सिर पर स्वामी के पीछे बहुत दूर पहुंचा आता था। बस सोच देखो, इन दोनों मालियों में अपने स्वामी का कौन अधिक प्यारा होगा? बस शिव हमारा स्वामी है। और यह संसार उसकी वाटिका है। इसमें दो तरह के माली हैं। एक जो आलसी हैं, बनावटी हैं और कुछ काम नहीं करता है वह अपने शिव की नाक आंखो के सम्बन्ध में ही चर्चा किय करता है। और दूसरा वह है, जो शिव के दीन दुःखी बच्चों और पशुओं की रखवारी और रक्षा करता है। इन दोनों में शिव का कौन प्यारा होगा? जो उसके बच्चों की सेवा करता है। जो पिता की सेवा करना चाहता है, उसको पहिले बच्चों की सेवा करनी चाहिये। बस जो शिवजी की सेवा करना चाहता है, पहले उसको शिव केबच्चों की तथा इस संसार की सेवा करनी चाहिये।

गीता में कहा गया है, जो परमेश्वर के सेवकों की सेवा करते हैं, वे उसके सब से बड़े बड़े सेवक हैं। बस इसी कोअपने ध्यान में रक्खो। मैं पुनः कहता हूं कि यदि तुम पवित्र हो तो जो कोई तुम्हारे पास आवे, उसकी यथाशक्ति सहायता करो यही एक अच्छा कर्म है, इस कर्म के बल से ही चित्त की शुद्धि होती है। बस फिर जो शिव प्रत्येक मनुष्य के हृदय में रहता है स्पष्ट दिखलाई पड़ेगा। वह सदैव प्रत्येक हृदय में

रहता है। यदि प्रतिविम्ब (दर्पण) पर किसी तरह की मिट्टी और गर्द है, तो हम अपनी मूर्त्ति नहीं देख सकते हैं। अज्ञानता और पाप ही हमारे हृदय दर्पण पर मिट्टी और धूल है। यही स्वार्थ ख़ास पाप है कि पहले हम अपना विचार करते हैं। जो यह विचार करता है, पहिले मैं खाऊंगा मेरे पास दूसरे से अधिक रुपया होगा और सब पदार्थ पहले मेरे ही पास होंगे। जो यह विचार करता है मैं दूसरों से पहिले स्वर्ग को चला जाऊंगा वह स्वार्थी मनुष्य है। निस्वार्थी मनुष्य कहता है मैं अपने भाइयों की सहायता करने से चाहे नरक को जाऊं मुझे स्वर्ग की परवाह नहीं है। यह निःस्वार्थ भाव ही तो धर्म का परीक्षण है। जिसका जितना निःस्वार्थ भाव है, वह उतना ही धर्मात्मा और शिवजी के निकट है, वह विद्वान् हो चाहे अविद्वान् वह चाहे इस बात को जानता हो, पर वह शिव के निकट अन्य व्यक्तिओं से विशेष है। स्वार्थी मनुष्य ने चाहे जितने मन्दिरों के दर्शन किये हों, चाहे जितने तीर्थ स्थानों में गया हो, कोढ़ी के समान उसने अपने को रङ्ग भी लिया हो, तब भी वह शिव से बहुत दूर है।

लाहौर में भक्ति पर व्याख्यान देते हुए, उन्होंने कहा था :—"वर्त्तमान में सब से अच्छा धर्म यह है कि प्रत्येक मनुष्य बाज़ार में जाय और वहां पर अपनी शक्ति के अनुसार एक दो छः बारह भूखे "नारायण" की तलाश करे। उन

उन "नारायण" को सदैव स्मरण रखना चाहिये, हिन्दू धर्म के अनुकूल जिसको दान दिया जाता है वह दान दाता से बड़ा है। और उस थोड़े समय तक दान प्राप्त करनेवाला स्वयं परमेश्वर है।" वास्तव में विचारा जाय तो स्वामीजी के उपर्युक्त कथन में कुछ अत्युक्ति नहीं है। आज इस देश में ऐसे अगणित नर नारियों की कमी नहीं है जो पापी पेट की ज्वाला पीड़ित हो रहे हैं। निस्सन्देह इनकी क्षुधा निवृत्ति करना परमात्मा की सृष्टि की रक्षा करना है पर जब कोई ध्यान दे तब न!

स्वामीजी के उपर्युक्त कथन से दूसरा प्रयोजन यह निकलता है कि मनुष्य को अपना चरित्र गठन करना चाहिये। विना उज्वल चरित्र के इस संसार में सब धूल मिट्टी है।

अपने पर विश्वास रक्खो

(५)

स्वामी विवेकानन्द को भारतवासियों के स्वास्थ्य पर भी बहुत तरस आया है। स्वामी जी का कहना था और ठीक था कि शारीरिक बलहीन होने के कारण मस्तिष्क की शक्तियों का भी ह्रास हो जाता है। शारीरिक बल न होने से आत्मिक

बल भी नहीं रहता है। भारतवासियों को अपने पर विश्वास नहीं रहा है, अपने एक व्याख्यान में उन्होंने कहा था:—"यदि सभी अंग्रेज़ अपने लिये पापी समझ लें तो अफ़रीका के हवशियों से बढ़कर नहीं होंगे। परमेश्वर उन्हें आशीर्वाद दें कि वे ऐसा विश्वास नहीं करते हैं। इसके विपरीत प्रत्येक अंग्रेज़ विश्वास करता है कि वह विश्व भर का मालिक पैदा हुआ है। वह समझता है:—"मैं बड़ा हूं और संसार के सभी कार्य कर सकता हूं"। ......हमारा अपने में विश्वास नहीं रहा है। हम अपने में अंगरेज़ मर्द और स्त्रियों की अपेक्षा बहुत कम विश्वास करते हैं। यह मेरे स्पष्ट शब्द हैं लेकिन मैं कहने से बाज़ नहीं आसकता कि क्या तुम अङ्गरेज़ पुरुषों और स्त्रियों को नहीं देखते हो कि जब वे हमारे आदर्श को ग्रहण कर लेते हैं, तब वे पागल के समान हो जाते हैं। और यद्यपि वे शासक श्रेणी के हैं तथापि अपने देशवासियों के ताने मारने और ठठोलियों के करने पर भी भारतवर्ष में हमारे धर्म का प्रचार करने आते हैं। तुम में कितने मनुष्य अङ्गरेज़ों के समान कार्य्य करते हैं। तनिक विचारो तो सही कि इस का कारण क्या है? तुम इसका कारण नहीं जानते हो यह बात नहीं है कि तुम इसे जानते नहो, तुम उनसे अधिक जानते हो, तब फिर बात ही क्या है? तुम विशेष बुद्धिमान हो, यह तुम्हारे लिये अच्छा है। पर साथ ही तुम्हारी यह

कठिनता भी है। क्योंकितुम्हारा खून गन्धफिरोज़ा की नाईं है, तुम्हारा मस्तिष्क कीचड़ है, तुम्हारा शरीर दुर्बल है। शरीर को बदलो, यह भी बदल जायगा। शारीरिक दुर्बलताके अतिरिक्त इसका कारण और कुछ नहीं है। पिछले सौ वर्ष से तुम सुधार आदर्श और इन पदार्थों के विषय में चर्चा कर चुके हो और जब ये व्यवहार में आवेंगे तब तुम कहीं दिखलाई न पड़ोगे। तुम ने सारी दुनियाँ को हज़म कर लिया है और सुधार के नाम से समस्त संसार को माना है। इसका कारण क्या है? यह बात भी नहीं है कि तुम इसे न जानते हो इसका कारण तुम खूब अच्छी तरह जानते हो। इसका कारण यह है कि तुम दुर्बल, दुर्बल महा दुर्बल हो। तुम्हारा शरीर दुर्बल है, तुम्हारा हृदय दुर्बल है, तुम्हारा अपने में कुछ विश्वास नहीं है। शताब्दियों पर शताब्दी और एक हज़ार वर्ष तक कुचलनेवाली अत्याचारी जातियों, राजाओं और विदेशियों ने और खास तुम्हारे आदमियों ने तुम से समस्त शक्ति छीनली है। मेरे भाई! तुम कुचले हुये, टूटे हुये अस्थि माँस रहित कीट के समान हो। सोचते हो, अब हमको बल प्रदान कौन करेगा? मैं तुमसे कहता हूं शक्ति जो हम चाहते हैं प्रथम सीढ़ी उस शक्ति के प्राप्त करने की उपनिषद हैं और विश्वास रक्खो कि मैं आत्मा हूं। "मुझे तलवार काट नहीं सकती, हवा मुझे सुखा नहीं सकती। मैं सर्वशक्तिमान हूं।

सर्व देशी हूं"। उन्होंने एक दूसरे स्थान पर कहा है:–"हमारी सब यन्त्रणाओं की आधी जड़ दुर्बलता है"—"क्योंकि उपनिषदों का विशेष गौरव होने पर, हमारे ऋषियों का विशेष महत्व होने पर भी दूसरी जातियों से अपना मुकाविला कर देखो, मैं तुम से स्पष्ट शब्दों में कहना चाहता हूं कि हम दुर्वल हैं और बहुत दुर्वल हैं। सब से पहले हमारी शारीरिक दुर्वलता है। हमारी यंत्रणाओं का तीसरा हिस्सा यह शारीरिक दुर्वलता है। हम आलसी हैं हम काम नहीं कर सकते, हम मिल नहीं सकते, हम एक दूसरे को प्यार नहीं कर सकते। हम पूरे स्वार्थी हैं, हम एक दूसरे को घृणा किये विना और ईर्षा किये विना नहीं रहते हैं। ऐसी दशा में हमने मनुष्यों को तितर बितर कर दिया है। हम इतने स्वार्थी होगये हैं कि इस बात पर शताब्दियों से लड़ रहे हैं कि अमुक चिन्ह किस ढंग से होना चाहिये। उन व्यर्थ के प्रश्नों पर जिनसे कुछ लाभ नहीं है कि अमुक मनुष्य के देखने से हमारा भोजन विगड़ जायगा बड़े बड़े पोथे लिख रहे हैं। पिछली कई शताब्दियों से केवल हमारा यही कर्त्तव्य रह गया है। जिस जाति ने ऐसी सुन्दर आश्चर्य जनक समस्याओं और पुरातत्व सम्बन्धी विषयों में अपने मस्तिष्क की सारी शक्ति को लगाया है वह जितनी वर्तमान उन्नति प्राप्त कर चुकी है उससे अधिक बढ़ने की आशा नहीं है और हमें इस से कुछ लज्जा भी नहीं आती है और हम इस विषय में कुछ विचार भी नहीं कर सकते हैं। हमें बहुत

सी बातें विचारनी हैं पर विचार नहीं करते हैं, विवेचना संबन्धी हमारा स्वभाव तोते के समान होगया है इसका कारण क्या है ? केवल एक शरीरिक दुर्बलता । अब हमारा मस्तिष्क कुछ करने योग्य नहीं रहा है । हमें इसका परिवर्तन करना चाहिये । हमारे नवयुवकों को बलवान होना चाहिये, सब से पहले बल यह ज़रूरी है । धर्म पीछे आता रहेगा । मेरे नवयुवक मित्रो ! पहले बलवान होओ यही मेरी सम्मति आपको है । गीता के मनन करने की अपेक्षा तुम स्वर्ग के निकट फुटबाल द्वारा शीघ्र पहुंचोगे यह शब्द अवश्य ही कड़े होंगे जो मुझे तुमसे कहने हैं । मैं तुम्हें प्यार करता हूं, मैं जानता हूं कि बात कहां खटकती है । मैंने थोड़ा सा अनुभव प्राप्त किया किया है* तुम गीता अपने बाहुओं के द्वारों ज़्यादा अच्छी समझ सकोगे । जब तुम्हारे पुट्ठे कुछ मजबूत होंगे तब गीता तुम्हारी समझ में बहुत अच्छी तरह से आवेगी, तुम अपने में जोशीला खून पाकर भगवान कृष्ण की विलक्षण प्रतिभा और विलक्षण शक्ति को अधिक समझ सकोगे ! जब तुम्हारा शरीर तुम्हारे पैरों पर ही स्थिति होगा और जब तुम अपने को मनुष्य समझोगे तब तुम्हारी समझ में उपनिषदों और आत्मा का महत्व बहुत अच्छी तरह से आजावेगा । बहुत से मनुष्य मेरे अद्वैत सम्बन्धी उपदेशों से बुरे विचार ग्रहण कर

*ये शब्द ताना मारने के तौर पर कहे हैं ।

लेते हैं। मेरा इस संसार में द्वैत अद्वैत अथवा और किसी प्रकार के उपदेश करने का तात्पर्य नहीं है। मेरे कहने का प्रयोजन यही है कि हम आत्मा का उच्च भाव ग्रहण कर लें, उसकी अनन्त शक्ति, अनन्त बल अनन्त पवित्रता तथा उस की अनन्त पूर्णता को प्राप्त कर लें। इस भांति उन्होंने राज योग के उपोद्घात में कहा है:—"जीवन में श्रेष्ठ पथ दर्शक बल है। धर्म में और सभी बातों में उस प्रत्येक पदार्थ को दूर कर दो, जो तुम्हें दुर्बल करता हो"।

भारत माता के होनहार नवयुवको! स्वामी जी के उपर्युक्त शब्दों का यही तात्पर्य है कि अपने शारीरिक बल की वृद्धि करते हुये, मानसिक बलको भी बढ़ाओ। दुर्बलता के कारण तुम्हारे चरित्र में आत्मसम्मान और आत्मगौरव का जो भाव दूर होगया है, उसको लाने का प्रयत्न करो। जिस रोज तुम अपने को समर्थ समझोगे, उसी दिन इस भारत माता का शोक सन्ताप दूर होगा। स्मरण रहे, शारीरिक निर्बलता भी महापाप है।

सी बातें विचारती हैं पर विचार नहीं करते हैं, विवेचना संबन्धी हमारा स्वभाव तोते के समान होगया है इसका कारण क्या है ? केवल एक शारीरिक दुर्बलता। अब हमारा मस्तिष्क कुछ करने योग्य नहीं रहा है। हमें इसका परिवर्तन करना चाहिये। हमारे नवयुवकों को बलवान होना चाहिये, सब से पहले बल यह ज़रूरी है। धर्म पीछे आता रहेगा। मेरे नव-युवक मित्रो ! पहले बलवान होओ यही मेरी सम्मति आपको है। गीता के मनन करने की अपेक्षा तुम स्वर्ग के निकट फुट-बाल द्वारा शीघ्र पहुंचोगे यह शब्द अवश्य ही कड़े होंगे जो मुझे तुमसे कहने हैं। मैं तुम्हें प्यार करता हूं, मैं जानता हूं कि बात कहां खटकती है। मैंने थोड़ा सा अनुभव प्राप्त किया किया है* तुम गीता अपने बाहुओं के द्वारों ज़्यादा अच्छी समझ सकोगे। जब तुम्हारे पुट्ठे कुछ मजबूत होंगे तब गीता तुम्हारी समझ में बहुत अच्छी तरह से आवेगी, तुम अपने में जुशीला खून पाकर भगवान कृष्ण की विलक्षण प्रतिभा और विलक्षण शक्ति को अधिक समझ सकोगे ! जब तुम्हारा शरीर तुम्हारे पैरों पर ही स्थिति होगा और जब तुम अपने को मनुष्य समझोगे तब तुम्हारी समझ में उपनिषदों और आत्मा का महत्व बहुत अच्छी तरह से आजावेगा। बहुत से मनुष्य मेरे अद्वैत सम्बन्धी उपदेशों से बुरे विचार ग्रहण कर

*ये शब्द ताना मारने के तौर पर कहे हैं।

लेते हैं। मेरा इस संसार में द्वैत अद्वैत अथवा और किसी प्रकार के उपदेश करने का तात्पर्य नहीं है। मेरे कहने का प्रयोजन यही है कि हम आत्मा का उच्च भाव ग्रहण कर लें, उसकी अनन्त शक्ति, अनन्त बल अनन्त पवित्रता तथा उस की अनन्त पूर्णता को प्राप्त कर लें। इस भांति उन्होंने राज योग के उपोद्घात में कहा है:—"जीवन में श्रेष्ठ पथ दर्शक बल है। धर्म में और सभी बातों में उस प्रत्येक पदार्थ को दूर कर दो, जो तुम्हें दुर्बल करता हो"।

भारत माता के होनहार नवयुवको! स्वामी जी के उपर्युक्त शब्दों का यही तात्पर्य है कि अपने शारीरिक बल की वृद्धि करते हुये, मानसिक बलको भी बढ़ाओ। दुर्बलता के कारण तुम्हारे चरित्र में आत्मसम्मान और आत्मगौरव का जो भाव दूर होगया है, उसको लाने का प्रयत्न करो। जिस रोज तुम अपने को समर्थ समझोगे, उसी दिन इस भारत माता का शोक सन्ताप दूर होगा। स्मरण रहे, शारीरिक निर्बलता भी महापाप है।

तीसरा अध्याय

सामाजिक सुधार सम्बन्धी विचार

आइये पाठक ! चलिये हम स्वामी जी को राष्ट्रीय संसार में देख चुके हैं, अब सामाजिक संसार में देखें हमारे बहुत से पाठक सोचते होंगे कि स्वामी जी के अङ्गरेज़ी में बी० ए० पास करने और पश्चिमी देशों में भ्रमण करने से पश्चिमी विचार हो गये होंगे । पर यह बात नहीं है पश्चिमी सभ्यता से स्वामीजी की आंखें चकाचौंध नहीं हुई थीं । हिन्दू जाति की वर्त्तमान बहुत सी रीतियों में वे सुधार चाहते थे, पर पश्चिमी विचारों को लेकर नहीं वल्कि अपने ऋषि मुनि-प्रणीत शास्त्र पुराणों के आधार पर उन्होंने अपने व्याख्यानों में कई स्थानों पर यह बात स्पष्ट कही है कि पश्चिमी ढङ्ग के अनुकरण करने से भारतवर्ष को कोई लाभ होने की सम्भावना नहीं है । उन्होंने मदरास में सुधारकों को फटकारते हुए एक व्याख्यान में कहा था कि मैं वर्त्तमान सुधारकों से कह अच्छा हूं, जब वे छोटे २ टुकड़े को सुधारना चाहते हैं तब जड़ और शाखा को सुधारना चाहता हूं, उनका कार्य्य न करने का है, मेरा रचना करने का, मैं सुधार में विश्व

नहीं करता बल्कि विस्तार में विश्वास करता हूं। मुझे अपने को परमेश्वर की स्थिति में रखने और समाज को यह कहने की इस रास्ते चलो, उस रास्ते मत चलो, हिम्मत नहीं होती है। मैं राम के पुल निर्माण में एक गिलहरी के समान रहना चाहता हूं, जो थोड़ी सी मिट्टी ही पुल पर रखने में सन्तुष्ट होगई थी। इस भांति स्वामी जी ने वर्त्तमान सुधारकोंके प्रति असन्तोष प्रगट किया है। पर वास्तव में वे समाज सुधार के विरोधी नहीं थे। सब से पहले प्रत्येक सुधारक स्त्री शिक्षा की आवश्यकता दिखलाता है। स्वामी जी ने भी स्त्री शिक्षा की आवश्यकता को मुक्त कण्ठ से स्वीकार किया है। पर साथही उनका कथन था कि स्त्रियों को अपने विषय में स्वयंही विचार करना चाहिये। स्त्रियों के सम्बन्ध में उनके कथन का सारांश यह है:—"उनकी बहुत सी गम्भीर समस्याएं है पर "शिक्षा" जैसे जादू के शब्द के अतिरिक्त और किसी से इसकी पूर्ति नहीं हो सकती है। सच्ची शिक्षा हम से किसी ने नहीं समझी। इसको शक्ति बढ़ानेवाली कहा जा सकता है न कि शब्दों का ढेर बस हमको भारत वर्ष में निडर स्त्रियों के लाने की आवश्यकता है। संयोगिता, लीलावती अहिल्या और मीरा बाई के समान स्त्रियां हों, स्त्रियां जो वीरों की माता होने योग्य हों। क्योंकि वे पवित्र, निस्वार्थ और बलवान भगवान के चरण छूने से जो शक्ति आती है, उस शक्ति सहित हों"।

स्त्री शिक्षा के अतिरिक्त अछूत जातियों के प्रति जो स्वामी जी के हृदय में स्थान स्थान पर दया का स्रोत बहा है। स्वामी जी मद्रास में बहुत रहे थे और मद्रास में ही अछूत जातिओं के प्रति बहुत कड़ाई है। इसलिये उन्होंने अछूत जातियों के प्रति बुरे बर्ताव की निन्दा की है। उनका कथन था कि भारतवर्ष मेंमुसलमानों की विजय, पददलित दीनों के लिये मुक्ति थी। यही कारण है कि हमारी जातियों में से पांचवां हिस्सा मुसलमान हो गया था। यह सब तलवार के बल से नहीं हुआ। यह ख्याल करना कि यह तलवार के बल से हुआ है, हमारे पागलपन की सीमा है। यदि तुम इस (पददलित जातिओं के उठाने) की परवाह न करोगे तो पांचवां हिस्सा क्या बल्कि तुम्हारे मदरास के आधे लोग ईसाई हो जांयगे। क्या इससे बढ़कर भी कोई अज्ञानता दुनियां में होगी जो मैंने मालाबारमें देखी थी एक * पेरिया को उस गली में जाने की आज्ञा नहीं है, जिसमें एक उच्च जातिका मनुष्य जा सकता है। इतना कहकर आगे स्वामी जी ने मालाबारियों को पागल और उनके घरों को पागल खाना बतलाया है। आगे उन्होंने कहा है—धिक्कार ? तुम अपने बच्चों को खुद भूखा मरने देते हो और जब वे बच्चे दूसरों के पास चले जांय तो उनको भोजन कराके बलवान

* पेरिया—मदरास में एक नीच जाति है।

करते हो अब जातियों के विषय में बहुत विवाद नहीं होना चाहिये। इसका निर्णय उच्चों को नीचे गिराने से नहीं होगा परन्तु नीचों को ऊपर उठाने से होगा......एक ओर आदर्श ब्राह्मण है तो दूसरी ओर आदर्श चाण्डाल है। इस लिये चाण्डाल से लेकर ब्राह्मण तक को उठाने का कार्य होना चाहिये। इस भांति स्वामीजी जाति पांति तोड़ना तो नहीं चाहते थे पर प्रत्येक जाति का सुधार अवश्य चाहते थे। कहीं २ प्रकरणान्तर में जाति पांति की निन्दा की है। इस विषय में आगे उन्होंने और भी कहा है :—"मैंने अपने जीवन में देखा है बहुत सी जातियां बलवान हो गईं हैं"। ऐसे ही एक दूसरे स्थान पर उन्होंने वर्तमान समाज सुधारकों के रामानुज, शङ्कर, कबीर, नानक, दादू, चैतन्य आदि की तरह से सुधार करने की सलाह दी है। और भी कई स्थानों पर अछूत और पद दलित जातियों के सुधारने की सलाह दे दी है।

विधवा विवाह के प्रति स्वामीजी ने खुल्लम खुला न तो सहानुभूति दिखलाई है न निन्दा की है। पर कई स्थानों पर दबी ज़बान से इसको अच्छा नहीं समझा है। जैसे एक स्थान पर लिखा है :—"स्मरण रखो! जाति झोपड़ों में रहती है किन्तु शोक! किसी ने उसके लिये कुछ न किया। हमारे वर्तमान सुधारक विधवा विवाह के सम्बन्ध में बहुत व्यस्त

हैं। निस्सन्देह मुझे प्रत्येक सुधार में सहानुभूति है, किन्तु जाति का विशेष भाग्य विधवाओं को पति मिलने पर निर्भर नहीं है। किन्तु सर्वसाधारण की स्थिति पर है। क्या तुमने उनको उठाया है? बस इस भांति कहीं कहीं उन्होंने विधवा विवाह के सम्बन्ध में अपने उद्‌गार निकाले हैं।

स्त्री शिक्षा, अछूत जाति और विधवा विवाह के अतिरिक्त आज कल नये और पुराने विचार के लोगों में विलायत यात्रा के सम्बन्ध में भी बहुत आन्दोलन होता रहता है। स्वामी जी विदेश यात्रा के प्रबल पक्षपाती थे। अन्यत्र उन्होंने जापान से जो चिट्ठी भेजी थी वह प्रकाशित है। उससे यह स्पष्ट पता लगता है कि स्वामी जी विदेश यात्रा के कितने पक्षपाती थे, पर उन्होंने और भी कई स्थानों पर विदेश यात्रा की स्पष्ट सम्मति दी है। उन्हें भारतवासियों का ,'कूप मण्डूक" रहना पसन्द नहीं था। उनका कथन था कि भारतवर्ष से बाहर बिना दुनियां की सैर किये हम कुछ नहीं कर सकते हैं। जितने बाहर तुम जाओगे और जितना संसार की जातियों में घूमोगे उतना ही तुम्हारे देश के लिये अच्छा है"। इसके आगे कहा है जीवन का चिन्ह विस्तार है हमको बाहर जाना चाहिये विस्तार करो जीवन दिखलाओ अथवा गलो सड़ो और मरो"। इसमें और कोई परिवर्तन नहीं है। उन्होंने अपने एक पत्र में भी लिखा है "भारतवर्ष के भाग्य पर उसी दिन से छाप लग

गयी थी, जिस दिन से भारतवासियों ने म्लेच्छ शब्द का आविष्कार किया और दूसरों से मिलना जुलना बन्द कर दिया"। इसके अतिरिक्त सुना जाता है "कि स्वामीजी यहां तक तैयार थे कि जो लोग हिन्दू धर्म को ग्रहण करना चाहें उनको अपने में मिला लेना चाहिये।"

नये और पुराने लोगों में खान पान सम्बन्धी छूत छात का भी विवाद चला आता है। स्वामीजी के खान पान (भोजन) सम्बन्धी अत्यन्त स्वतन्त्र विचार थे। उन्होंने अपने व्याख्यानों में खाने पीने की छूत छात का तीव्र भाषा में खंडन किया है। भोजन सम्बन्धी वर्तमान छूत छात के विषय में उन्होंने अपने व्याख्यान में कहा था—"उन पुराने विवादों को उन पुरानी लड़ाइयों को जो व्यर्थ की हैं छोड़ दो। छः सौ अथवा सात सौ वर्ष की अवनति के विषय में ख्याल करो कि वर्षों बड़े आदमी इस बात का ही विवाद करते रहे कि हमको बायें हाथ से जल पीना चाहिये अथवा दाहिने हाथ से हाथ चार बार धोना चाहिये अथवा पांच बार और हमको पांच बार कुल्ला करना चाहिये या छः बार। उन आदमियों से तुम क्या आशा कर सकते हो जो ऐसे व्यर्थ के प्रश्नों के विचार करने में अपना जीवन व्यतीत करते हैं और ऐसे प्रश्नों पर विद्वता पूर्णदार्शनिक विचार लिखते हैं। हमारे धर्म का रसोई गृह में परिणत हो जाने का भय है। अब हम में से न तो कोई वेदान्ती है न

पौराणिक है न तान्त्रिक है। हम ठीक हैं मत छुओ, अस्पर्शी हैं, हमारा धर्म रसोई गृह है। हमारा परमेश्वर रसोई का बर्तन है और हमारा धर्म "मुझे मत छूओ मैं पवित्र हूं" है यदि यह दशा एक शताब्दी तक और रही तो हम में से सब पागलखाने में होंगे। मस्तिक के दुर्बल होने का यह प्रत्यक्ष लक्षण है कि जब हृदय जीवन की बड़ी समस्याओं को ग्रहण नहीं कर सकता है और जब समस्त मौलिकता नष्ट हो गई हृदय ने सारी शक्ति फुर्ती और विचार शक्ति खोदी है। तब तो मस्तिष्क जहां कहीं छोटे से छोटा झुकाव पाता है वहीं घूमना चाहता है।

अपने एक पत्र में स्वामी जी ने लिखा है:—आज कल जड़ सुधार के विरुद्ध बोलना हमें बहुत सहज मालूम होता है। पर यह भौतिक सुधार हमें क्यों नहीं चाहिये इसलिये कि अंगूर खट्टे हैं। क्षण भर के लिये मान भी लिया जाय कि यह सुधार सचमुच ही धार्मिक उन्नति में बाधा डालता है तथापि काया वाचा और मन से केवल आध्यात्मिक उन्नति के पीछे पड़े हुए आज कितने सच्चे महात्मा भारत में हैं? यदि कहा जाय कि ऐसे मनुष्य एक लाख हैं तो बहुत समझो! अब क्या तुम्हारा यह कहना है कि इन एकलाख मनुष्यों के लिये तीस करोड़ लोग बैठे रोते रहें। मुसलमानों ने चढ़ाइयां करके भारत को क्यों पादाक्रान्त किया? उसका कारण यही है कि

भौतिक सुधार में हम लोग बिलकुल पिछड़ रहे थे। अच्छी तरह से कपड़े पहनना तक हम लोगों ने मुसलमानों ही से सीखा है। साधारण ऐहिक सुधार ही नहीं, किन्तु मैं जो भोग-विलास तक की तरफ़दारी करूंगा। क्योंकि उसमें ग़रीब लोगों को नवीन नवीन व्यवसाय मिलते हैं। कुछ लोगों के ऐश आराम के कारण ही बहुत लोगों की रोटियां तो चलती हैं। मरने के बाद तो हमें सारे स्वर्ग भोग मिलेंगे और जब तक संसार में रहेंगे तब तक खाने को रोटी भी न मिले। यह कहां का न्याय है? यह जिस ईश्वर का न्याय है उसे मैं ईश्वर ही नहीं समझता। भारत का यदि कभी सच्चा सुधार होनेवाला होगा तो वह भौतिक सुधार ही से होगा इसके बिना अब तो काम ही नहीं चल सकता। अधिक अधिक विद्यादान अधिक उद्यम व्यवसाय अधिक भोजन और फिर अधिक शरीर सामर्थ्य यही उन्नति की सीढ़ियां हैं। अच्छा तो फिर धार्मिक विषयों में रुढ़ि बद्ध हुये पुरोहित वर्ग और उनकी पैदा की हुई रुढ़ियों का संहार होना चाहिये। अंगरेज़ों से अधिक अधिकार मांगने के लिये सभायें करने में आज कल युवा पुरुष दिलोजान से लगे हैं। पर अंगरेज़ लोग मन ही मन तुम्हारी इन सभाओं पर हंस रहे हैं। जो लोग हानिकारक रुढ़ियों की शृङ्खला से जकड़ कर दूसरों को गुलाम बनाते हैं वे क्या स्वयं स्वतन्त्र रहने के योग्य कभी हो सकते हैं।

अंगरेज़ लोग यदि कल अपनी खुशी से भारत को छोड़ कर चले जांय तो भी तुम्हें वास्तव में लाभ क्या हो सकता है। तुम्हारी अयोग्यता तुम्हें उस स्वतन्त्रता का उपयोग कभी नहीं करने देगी रूढ़ियों के दास्य पङ्क में लोटनेवाले गुलामों! तुम स्वतन्त्रता मांगते हो क्या और नये गुलाम तैयार करने के लिये!

स्वामीजी के हृदय में भारतवासियों की आर्थिक स्थिति और दरिद्रता को देख कर बहुत शोक उत्पन्न हुआ है, उन्होंने अपने एक पत्र में लिखा है:—"चीन और भारतवासियों की मृतक सभ्यता में रहने का एक कारण उनकी अत्यंत दरिद्रता भी है। सदैव साधारण हिन्दू और चीनी को अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के अतिरिक्त किसी दूसरे विषय के विचार करने का अवकाश मिलता ही नहीं है। समझे पाठक! स्वामी विवेकानन्द जी के व्याख्यानों और पत्रों में सामाजिक विचारों की प्रत्येक स्थल पर ऐसी झलक प्रतीत होती है। अब हम इस विषय में कुछ नहीं कहेंगे कि स्वामी जी समाज सुधार के पक्ष में थे अथवा विपक्ष में। इसका निर्णय सहृदय पाठक स्वयं करें।

चतुर्थाध्याय

धार्मिक विचार

हिन्दुओं की वेदों पर विशेष भक्ति और श्रद्धा है। जो धर्म प्रचारक खड़ा होता है वह वेदों का ही आसरा लेता है बिना वेदों का आसरा लिये कोई धर्म प्रचारक हिन्दुओं में अपना सिक्का नहीं जमा सकता है। चाहे उसकी वेदों पर भक्ति और श्रद्धा न हो तिस पर भी उसको वेदों की शरण लेनी पड़ती है। सच्ची और सही बात के कहने के लिये पाठक मुझे क्षमा करें। मैंने एक ऐसे समाज के भीतर पहुंच कर देखा है जो संसार भर में वेदों के प्रचार करने का दावा कर रहा है और उसके नेता तथा अन्य उपदेशक गण अपनी वाणी और लेखनी द्वारा सर्व साधारण हिन्दुओं की वेदों पर श्रद्धा उभारने की चेष्टा कर रहे हैं पर उनमें से कतिपय सज्जन न तो वेदों के अनुयायी हैं न वेदों पर भक्ति और श्रद्धा रखते हैं। इसका कारण क्या है? कारण यह है कि वेद पर भक्ति प्रकट किये बिना न तो वे अपने इन्स्टीट्यूशन चला सकते हैं न सर्व साधारण में वे अपना सिक्का जमा सकते हैं। यों वे पबलिक को अन्धकार में रखकर स्वयं लीडर नेता बने हुये हैं। परन्तु-

अंगरेज़ लोग यदि कल अपनी खुशी से भारत को छोड़ कर चले जांय तो भी तुम्हें वास्तव में लाभ क्या हो सकता है। तुम्हारी अयोग्यता तुम्हें उस स्वतन्त्रता का उपयोग कभी नहीं करने देगी रूढ़ियों के दास्य पङ्क में लौटनेवाले कुलामों! तुम स्वतन्त्रता मांगते हो क्या और नये गुलाम तैयार करने के लिये!

स्वामीजी के हृदय में भारतवासियों की आर्थिक स्थिति और दरिद्रता को देख कर बहुत शोक उत्पन्न हुआ है, उन्होंने अपने एक पत्र में लिखा है:—"चीन और भारतवासियों की मृतक सभ्यता में रहने का एक कारण उनकी अत्यंत दरिद्रता भी है। सदैव साधारण हिन्दू और चीनी को अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के अतिरिक्त किसी दूसरे विषय के विचार करने का अवकाश मिलता ही नहीं हैं। समझे पाठक! स्वामी विवेकानन्द जी के व्याख्यानों और पत्रों में सामाजिक विचारों की प्रत्येक स्थल पर ऐसी झलक प्रतीत होती है। अब हम इस विषय में कुछ नहीं कहेंगे कि स्वामी जी समाज सुधार के पक्ष में थे अथवा विपक्ष में। इसका निर्णय सहृदय पाठक स्वयं करें।

चतुर्थाध्याय

धार्मिक विचार

हिन्दुओं की वेदों पर विशेष भक्ति और श्रद्धा है। जो धर्म प्रचारक खड़ा होता है वह वेदों का ही आसरा लेता है बिना वेदों का आसरा लिये कोई धर्म प्रचारक हिन्दुओं में अपना सिक्का नहीं जमा सकता है। चाहे उसकी वेदों पर भक्ति और श्रद्धा न हो तिस पर भी उसको वेदों की शरण लेनी पड़ती है। सच्ची और सही बात के कहने के लिये पाठक मुझे क्षमा करें। मैंने एक ऐसे समाज के भीतर पहुंच कर देखा है जो संसार भर में वेदों के प्रचार करने का दावा भर रहा है और उसके नेता तथा अन्य उपदेशक गण अपनी वाणी और लेखनी द्वारा सर्व साधारण हिन्दुओं की वेदों पर श्रद्धा उभारने की चेष्टा कर रहे हैं पर उनमें से कतिपय सज्जन न तो वेदों के अनुयायी हैं न वेदों पर भक्ति और श्रद्धा रखते हैं। इसका कारण क्या है? कारण यह है कि वेद पर भक्ति प्रकट किये बिना न तो वे अपने इन्स्टीट्यूशन चला सकते हैं न सर्व साधारण में वे अपना सिक्का जमा सकते हैं। यों वे पब्लिक को अन्धकार में रखकर स्वयं लीडर नेता बने हुये हैं। परन्तु-

त्मन्! ऐसे ढकोसलेबाज़ नेताओं से रक्षा कर और सर्व साधारण में ज्ञान की ज्योति का इतना विस्तार कर जिससे उनको अपने समाज के नेताओं की ढकोसलेबाज़ियों का पता लगे।

स्वामीजी का कथन था कि वेदान्त वेद का ही निचोड़ है वह वेद से परे वेदान्त को नहीं समझते थे। वेदों के विषय में जो कुछ उनकी सम्मति थी, उसका अर्थ यह है—वेद तीन बातें सिखलाते हैं पहिले उनको सुनना तब विचारना और उन पर सोचना। पहिले जब आदमी सुनता है तो उसको उस पर विचारना चाहिये उसको केवल अज्ञानता से विचार नहीं करना चाहिये पर खूब जानकर और फिर विचार करके कि वह क्या है, उस पर ध्यान देना चाहिये। तब पहिचानना चाहिये यही धर्म है। विश्वास धर्म कोई अङ्ग नहीं है। हम कहते हैं धर्म सचेत अवस्था में होता है। वास्तव में विचारा जाय तो स्वामीजी के इस कथन में कुछ अत्युक्ति नहीं है। जब हम सांसारिक विषयों में बहुत सी छान बीन करते हैं तब धर्म के विषय में केवल अन्ध विश्वास के सहारे रहना कहां का न्याय है। "पानी पीजै छान, गुरू कीजे जान" इस लोकोक्ति के अनुसार धर्म सम्बन्धी किसी विश्वास को समझे सोचे बिना अज्ञानता पूर्वक ग्रहण नहीं करना चाहिये। क्यों कि धर्म के समान कोई सच्चा सखा नहीं है स्वामीजी वेदों

को अनादि मानते थे। द्वैत विशिष्टा द्वैत और अद्वैत में परस्पर कुछ विरोध नहीं देखते थे। उनका कथन था कि यह दोनों एकही हैं अद्वैत द्वैत का प्रतिवादी नहीं है द्वैत तीनों सीढ़ियों की सिर्फ़ पहली सीढ़ी है। धर्म में सदैव तीन सीढ़ी होती हैं पहली द्वैत है और अन्त में वह अपने को सार्वभौम के साथ देखता है। इसलिये तीनों आपस में प्रतिवादी नहीं बल्कि एकही उद्देश को पूरा करते हैं। स्वामी जी संसार से विरक्त रहना बुरा समझते थे। उनका कथन था कि जब प्रति समय तुम्हारा हृदय संसार की ओर जाता है तब तुम सच्चे वेदान्ती हो। वेदान्त एक ऐसा दर्शन है जिसने मनुष्य को पूरी तरह से नीति सिखलाई है। यहां सब धर्मों का निचोड़ है वेदान्त की शिक्षाओं के सम्बन्ध में उनका यह कहना था कि यह न तो निराशावादी (Passimistic) है न आशावादी (Optimistic) है। वेदान्त इन दोनों की ही शिक्षा देता है और जिस तरह के पदार्थ हैं वैसा ही बतलाता है। यह संसार दुःख सुख हर्ष और विषाद मिश्रित है। एक को बढ़ाइये भी उसके साथ बढ़ेगा' यह संसार न तो अच्छा ही है न बुरा ही है......प्रत्येक युग में माया के विषय में समझाना बहुत कठिन है। निस्सन्देह यह कोई थोरी (कथनात्मक) नहीं है। देश काल पात्र यह तीनों विचार इस में मिश्रित हैं जो आगे नाम रूप में घट गये हैं। यह थोरी कथनात्मक अथवा

कथनात्मक नहीं बल्कि सच्ची है। भक्ति योग नामक पुस्तक में उन्होंने लिखा है:—"मनुष्य पुस्तकों के सहारे सच्ची आध्यात्मिक उन्नति नहीं कर सकता है। इसके लिये गुरु की आवश्यकता है। स्वामी जी ने भक्ति योग नामक पुस्तक में गुरू और शिष्य में किन आवश्यक गुणों का प्रयोजन है, यह दर्शाया है। अवतार और मूर्त्ति पूजा को भी माना है। मूर्त्ति पूजा के सम्बन्ध में उन्होंने कहा है:—तुम सबहो मूर्त्ति पूजक हो और मूर्त्ति पूजा अच्छी है। क्योंकि यह मनुष्य स्वभाव के संगठन में है इसके परे कौन जा सकता है केवल पहुंचे हुये मनुष्य और महात्मा लोग शेष सब मूर्त्ति पूजक हैं।

आर्य्य समाज के प्रवर्त्तक श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का कथन था कि सार्वभौम धर्म केवल वेद ही की शिक्षायें हैं। स्वामी विवेकानन्द जी का भी कथन था:—"All the other religions of the world are included in the nameless, limitless, eternal Vedic religion" अर्थात् संसार के सभी धर्म नाम रहित असीम अनादि वैदिक धर्म में सम्मिलित हैं। स्वामी जी का कथन था कि कभी किसी भी दूसरे के धर्म सम्बन्धी विश्वासों के प्रति विरोध न करना चाहिये। संसार में जितने धर्म हैं वे एक दूसरे के न तो विरुद्ध हैं न शत्रु हैं एक ही अनन्त धर्म

की बहुत सी शक्लें हैं। एक अनादि धर्म ही सदैव स्थिति रहेगा। यह धर्म अनेक देशों में अनेक ढङ्ग से प्रकट हो रहा है। इसलिये हमें सब धर्मों की प्रतिष्ठा करनी चाहिये। इस प्रधान रहस्य को समझने के लिये सच्चाई होनी चाहिये। किसी मत (धर्म) के द्वेषी होने की अपेक्षा हमारी समस्त धर्मों से असीम सहानुभूति होनी चाहिये।

हिन्दू और बौद्धों का सम्बन्ध

बौद्ध और हिन्दुओं के सम्बन्ध में स्वामीजी का कहना था कि हिन्दू और बौद्धों में विशेष विरोध और भेद भाव नहीं है उन्होंने अपने एक व्याख्यान में प्रभु मसीह और भगवान गौतम बुद्ध की बड़ी अनोखी तुलना की थी, जिसका भावार्थ यहां प्रकाशित किया जाता है। जीज़स क्राईष्ट यहूदी था और शाक्य मुनि हिन्दू था, बस यही भेद है। यहूदियों ने क्राईष्ट की शिक्षाओं को अस्वीकार नहीं किया, उसको फांसी पर चढ़ा दिया और उसकी पूजा करते हैं किन्तु असल भेद यह है कि हम हिन्दुओं ने वर्तमान बौद्ध धर्म और भगवान बुद्ध के उपदेशों को जो समझा है उसको प्रकट कर देना चाहते हैं।

शाक्य मुनि कुछ भी नवीन मत के प्रचार करने के लिये नहीं आये थे। वे ईसामसीह के समान पुराने धर्म को पूर्ण करने के लिये आये थे न कि नष्ट करने के लिये इस भांति स्वामीजी ने महात्मा शाक्यमुनि के सम्बन्ध में विचार प्रकट करते हुये आगे कहा है :—"हिन्दू धर्म दो भागों में विभक्त है एक लौकिक दूसरा आध्यात्मिक महात्मागण आध्यात्मिक विषयों पर विशेष रूप से विचार करते हैं।

इस विषय में कुछ जाति पांति नहीं है। भारतवर्ष में उच्च से उच्च नीच से नीच मनुष्य साधु हो सकता है। और इस सम्बन्ध में दोनों जाति समान हैं धर्म में कोई जाति नहीं है सामाजिक स्थिति में साधारणतः जाति है। शाक्य मुनि स्वयं साधु थे उनकी कीर्त्ति इसी में है कि उन्होंने छिपे हुये वेदों में से सच्चाई प्रकट करने में उदारता प्रकट की थी और उस सच्चाई का समस्त संसार में प्रचार किया था। संसार में वे पहिले ही मनुष्य थे जिन्होंने प्रचार का कार्य किया था। वे प्रथम मनुष्य थे जिन्हें दूसरों को पहले दीक्षा देने का विचार हुआ था।

हाल में अमेरिका के एक अख़बार शायद पब्लिक ओपीनियन में तिब्बत के बौद्ध धर्मावलम्बी सभाओं की प्रार्थना छपी है उसमें सन्ध्या मन्त्र और गायत्री ज्यों की त्यों है। इससे बहुत लोग अनुमान करते हैं कि भगवान बुद्ध भी शायद वेदों के प्रचारक थे।

उनकी कीर्त्ति इसी में है कि सब के प्रति विशेषतः अज्ञानी और दीनों के प्रति उनकी अद्भुत सहानुभूति थी। उनके कुछ शिष्यों में से ब्राह्मण भी थे। जिन दिनों बुद्ध भगवान उपदेश करते थे, उन दिनों भारतवर्ष में संस्कृत नहीं बोली जाती थी संस्कृत उस समय कुछ पुस्तकों की भाषा थी। बुद्ध के कुछ ब्राह्मण शिष्यों ने उनके कुछ उपदेशों को संस्कृत में अनुवाद करना चाहा था। किन्तु उन्होंने इसका शीघ्र उत्तर दिया :— "मैं गरीबों के लिये और सर्व साधारण के लिये हूं मुझे उनकी भाषा में बोलने दो"। इसके आगे स्वामी जी ने बुद्ध के शिष्यों ने जो वेद विरुद्ध मार्ग ग्रहण किया था, उसका ज़िक्र करते हुये कहा है:—"इसका परिणाम यह हुआ कि बौद्धधर्म की भारतवर्ष में स्वाभावतः मृत्यु प्राप्त हुई। आज उसकी जन्मभूमि भारतवर्ष में कोई भी स्त्री पुरुष अपने को बौद्ध धर्मावलम्बी नहीं कहता है"।

इसके विपरीत ब्राह्मण धर्म की भी थोड़ी हानि हुई, उसने वह सुधार करने का उत्साह और प्रत्येक को दान करने की शक्ति खोदी, जो सर्वसाधारण को बौद्ध धर्म के कारण प्राप्त हुई थी। जिसके कारण भारतीय समाज इतना उच्च था कि जिसके बारे में एक यूनान का इतिहास वेत्ता लिखता है: — "भारतवर्ष में कोई भी आदमी झूंठ बोलता हुआ नहीं दिख-

लायी पड़ता है, कोई भी हिन्दू स्त्री व्यभिचारिणी नहीं प्रतीत होती है।"

हम तुम्हारे (बौद्ध और ब्राह्मण) विना नहीं रह सकते हैं और न तुम हमारे विना रह सकते हो। विश्वास रक्खो, जो प्रथकता हमको दिखलाई है, उससे तुम ब्राह्मणों के दर्शन और मस्तिष्क के विना ठहर नहीं सकते हो। न तुम अपने हृदय के विना रह सकते हैं। ब्राह्मण और बौद्धों की जुदाई भारतवर्ष के गिराने का कारण हुई है। यही कारण है कि भारतवर्ष में तेंतीस करोड़ भिखारी रह गये हैं और हज़ार वर्ष से विजेताओं का दास हो रहा है। वस अब हमको हृदय से ब्राह्मण धर्म की अद्भुत वुद्धि और उस वड़े स्वामी (वुद्ध भगवान) की पवित्रात्मा तथा मनुष्य वनानेहारी अद्भुत शक्ति को अपनाना चाहिये"। स्वामीजी के उपर्युक्त कथन से यह प्रत्यक्ष प्रतीत होता है कि स्वामीजी की प्रवल इच्छा वौद्ध और वैदिकों के भाव दूर करने को थी।

वौद्ध धर्म के अतिरिक्त सन् १९०० में स्वामीजी ने केलीफ़ोर्निया में एक व्याख्यान, "Chirst the Messenger" दिया था। उस व्याख्यान में ईसामसीह का अद्भुत चित्र खींचा है।

प्रिय पाठक! आपने स्वामीजी के धार्मिक विचारों को पढ़कर क्या तत्व निकाला है? हमने तो यह तत्व निकाला है कि आज कल जो पारस्परिक धार्मिक कलह बढ़ रहा है, प्रत्येक व्यक्ति की दूसरों के धार्मिक विश्वासों के खण्डन करने की जो रुचि बढ़ रही है, वह दूर हो। धर्म का उद्देश्य संसार में शान्ति का सञ्चार करना और सहनशीलता (Toleration) का प्रचार करना है। इसकी इस समय भारतवर्ष में बहुत भारी आवश्यकता है। जिस समय हम लोगों में एक दूसरे के धर्म सम्बन्धी विश्वासों के प्रति श्रद्धा करने की रुचि उत्पन्न हो जायगी उस दिन भारतीय राष्ट्रनिर्माण में विलम्ब नहीं लगेगी।
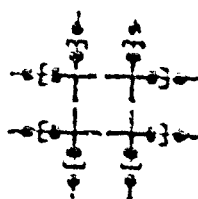
पंचमाध्याय

नव्यभारत के प्रति सन्देश

स्वामी विवेकानन्द के चाहे राष्ट्रीय, चाहे सामाजिक और चाहे धार्मिक विचारों को पढ़िएगा, उनके अक्षर अक्षर में नव्य भारत के प्रति सन्देश है । भारतीय राष्ट्र निर्माण की प्रबल आकांक्षा है । वाक्य वाक्य में उन्होंने नव्य भारत से यही प्रार्थना की है कि "उत्तिष्ठ जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत" उठो जागो और अपनी मातृ भूमि की सेवा करो सेवा भी कैसी नीच भाव से नहीं, बल्कि उच्च भाव से करो । मनुष्य मात्र की सेवा करो; दुःखियों की सेवा और सहायता करके ही परम पिता परमेश्वर की कृपा का आलिङ्गन प्राप्त करो । मनुष्य मात्र को विचार स्वतन्त्रता प्रदान करो । किसी के विचार और कार्य पर रोक और छाप मत लगाओ । स्वामी जी का यह सिद्धान्त था और सच्चा सिद्धान्त था कि वहां समाज कार्य कर सकता है जिन्होंने विचार स्वातन्त्र्य और कार्य को जहां तक उन से दूसरों को हानि न पहुंची हो स्वतन्त्रता दी हो । वास्तव में कार्य और विचार स्वातन्त्र्य पर छाप लगाने से समाज और मनुष्यों के हृदय से उत्साह की ज्योति क्षीण हो जाती है । सो भारतवर्ष के प्यारे नवयुवकों ! सब से प्रथम

इस देश में विचार स्वातन्त्र्य की रक्षा करो। किसी के विचारों पर छाप मत लगाओ। मत भेद होने पर परस्पर जो कलह की कुटेव पड़ गई है, उसको दूर करो। चाहे जैसा दूसरों से हमारा मत भेद हो पर स्मरण रखो जैसा हमको स्वतन्त्रता पूर्वक अपने विचार प्रकट करने और कार्य करने का अधिकार है, वैसा ही दूसरों को है। यह कहां का न्याय है कि हम स्वयं तो अपने विचार स्वतन्त्रता पूर्वक प्रकट करें और कार्य भी मन चाहा करें पर दूसरों के कार्य और विचार पर छाप लगावें। खेद है कि भारतवर्ष में कोई मनुष्य अपने धार्मिक सामाजिक और राष्ट्रीय विचारों को प्रकट नहीं कर सकता है। प्रथम सन्देश नव्य भारत के प्रति यही है।

दूसरा सन्देश नव्यभारत के प्रति यह है कि अपने घोंसलों में ही बैठे मत रहो कूप मण्डूक मत बने रहो। बाहर जाकर देखो कि किस भांति अन्य जातियां उन्नति के निमित्त उद्यम बढ़ा रही हैं। जापान से स्वामी जी ने जो पत्र भेजा था वह अन्यत्र प्रकाशित है नव्य भारत को उस पत्र का एक एक अक्षर अपने हृदय पटल पर अङ्कित करना चाहिये। विचारो जातनो यह ठीक है कि हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों ने भी अनुभव प्राप्त करने के अनेक साधनों में से एक देशाटन रक्खा है।

अतएव देशाटन से वंचित रहकर अपने मानसिक विचारों पर अपने हाथों से ताला ठोंकना है।

एक पत्र में स्वामीजी लिखते हैं—जापान में मुझे एक मज़ेदार बात मालुम हुई कि जापानी लड़कियां समझती हैं कि यदि वे अपनी गुड़ियों पर सच्चे हृदय से प्रेम करती हैं तो गुड़ियां जीवित हो जाती हैं। जापानी लड़की अपनी गुड़िया को किसी प्रकार का कष्ट न होने देने में बड़ी सावधानी रखती हैं। मेरा भी ऐसा ही विश्वास है कि सम्मति के योग से हमारे यहां के जो लड़के बड़े हुये हैं वे यदि अपने गरीब छोटे भाइयों पर कुछ न कुछ प्रेम करें तो यह मृतप्राय भारत थोड़े ही समय में आन्दोलन द्वारा जीवित हो जायगा। अहा हा! विचारे भारतवर्ष! क्या तेरी दृष्टि के सामने ऐसे योगी, योगिनी भी कभी आवेंगी जो जीवन के सारे भोग विलासों को त्याग करके केवल संन्यस्त वृत्ति से क्षण क्षण पर अवनति के गढ़े में गिरने वाले अपने देश भाइयों का उद्धार करने के लिये अपना हाथ आगे करेंगे? सच्ची सहानुभूति और सच्चे प्रेम के बल से दाम्भिक और राक्षसी वृत्ति के लोगों के विचार साफ़ तौर पर ठीक किये जा सकते हैं। इस बात का मुझे इस छोटी सी जीवन यात्रा में भी अनुभव हो चुका है।

एक दूसरे स्थान पर स्वामी जी कहते हैं कि यदि निर्धन लड़का शिक्षा के पास नहीं आ सकता है तो शिक्षा लड़के के पास जानी चाहिये। इस देश में अगणित स्वार्थत्यागी संन्यासी हैं, जो गांव गांव में धर्म की शिक्षा प्रचार करते हैं। क्या उनमें से कुछ अध्यापक स्वरूप में अपने को संगठन करके, गार्हस्थ शिक्षाका प्रचार नहीं कर सकते हैं" प्यारे नवयुवको! स्वामी विवेकानन्द सच्चे संन्यासी थे, इसलिये उन्होंने राष्ट्रीय शिक्षा का भार संन्यासियों पर सौंपना चाहा है उन्हें क्या खबर थी कि अब साधु, संन्यासियों का भीख के गीट इकारने के अतिरिक्त और कुछ कर्त्तव्य नहीं रहा है। प्यारे नवयुवको! इन कनफटे योगी, वैरागी, साधुओं का सरांगा मत करो। यदि तुम सचमुच शिक्षा प्रचार करके इस देश वासियों को अज्ञान के फंदे से छुड़ाना चाहते हो तो स्वयं शिक्षा प्रचारक (Educational Missionaries) बनो। यदि तुम्हारे हृदय में देश के प्रति सचमुच कुछ भी ममता है तो शिक्षा प्रचार के निमित्त संन्यास धारण करो इस से बढ़कर और पवित्र कार्य क्या हो सकता है कि हम मूढ़ जनों के हृदय से अज्ञानान्धकार को मेट दें। क्यों भाइयो! क्या तुम अपने देशवासियों में शिक्षा प्रचार के लिये कमर कसकर तैयार हो। स्वामी जी का यह भी सन्देश था कि भारतवर्ष की बिना धर्म का आसरा लिये कदापि उन्नति नहीं हो सकती है।

पश्चिमी देशों में भले ही राजनीति प्रधान रही हो। पर भारतवर्ष में राजनीति नहीं बल्कि धर्म प्रधान है। धर्म का नाम सुनकर पाठक ! सहमिये नहीं, न चौंकिये धर्म कोई सङ्कीर्ण पदार्थ नहीं है। क्या तुम समझते हो कि आत्मा विभु है अथवा अणु, वृक्षों में जीव है या नहीं ऐसे विषयों पर मग्ज़ पच्ची करना धर्म है कदापि नहीं। ये विषय तो विद्वानों के विद्या विनोद के लिये और दार्शनिक विचारों में रमने के लिये हैं। धर्म का अर्थ है, दुर्बलों की रक्षा करो, बलवानों का अत्याचार उन पर मत होने दो। न्याय और सत्य की सदैव शरण ग्रहण करो। अज्ञानियों के हृदय में ज्ञान की ज्योति का प्रचार करो। मूढ़ जनों को चेतावनी दो कि वे उस महा प्रभु की मङ्गलमय सृष्टि में अपने स्वत्वों को पहचानें अपने अधिकारों को मत नष्ट होने दो, उनकी रक्षाकरो, अपने कर्तव्य पालन में डटे रहो, जीवन संग्राम में सम्हल सम्हल कर अपने डग बढ़ाओ बस धर्म का यही तत्व है इस गूढ़ तत्व के भूल जाने से ही तो हमारी यह अधोगति हुई है। सुतराम् लोग धर्म का मर्म न जानने के कारण ही धर्म को बुरा कहते हैं। आत्म रक्षा तथा देश रक्षा से बढ़कर और कोई धर्म नहीं है।

स्वामी जी ने अमरीका से जो अपने एक मित्र को पत्र लिखा था उसमें उन्होंने अपने देश के दरिद्र और पतितों की दशा सुधार को ही परम धर्म बतलाते हुये में यों लिखा है:—

"यहां के जेलों का प्रबन्ध इतना अच्छा होता है कि उसका यदि वर्णन किया जाय तो तुम्हें सच भी न मालूम होगा, वह प्रत्यक्ष देखना ही चाहिये। अमरीका में बिल्कुल निरक्षर कैदियों को भी कुछ न कुछ व्यवसाय सिखाया जाता है और उन्हें बड़ी ममता से रखते हैं। इस कारण उनकी चित्तवृत्ति में इतना अन्तर पड़ जाता है कि फिर वे बहुधा जेलखाने का मुख नहीं देखते। परन्तु हमारे करोड़ों निरक्षर भाइयों की आज क्या दशा है? इन दुर्बल लोगों के विषय में हमें कैसा जान पड़ता है इसका केवल विचार करने ही से शरीर पर रोयें खड़े हो जाते हैं। बतलाओ भला आज कौन सा मार्ग खुला है जिससे वे बिचारे अपनी दशा सुधार सकें? वे चाहे जितना कष्ट करें, चाहे शरीर क्यों न खपा डालें परन्तु उन गरीबों की उन नीच स्थिति के लोगों की, उन पतित जनों की दशा में क्या आज रत्ती भर भी फ़र्क पड़ने की आशा है। उनका न कोई मित्र है न कोई सहारा है। उनके लिये सब दिन समान हैं। दुष्ट रीति रिवाज़ों ने, अदूर दर्शी समाज ने, आज न जाने कितने दिनों से उन्हें नीचे को ही दाबने का प्रयत्न जारी कर रक्खा है, पर इस दाब का मूल अब तक उन्हें नहीं मिला। सच पूछिये तो वे यह भी भूल गये हैं कि हम भी मनुष्य ही हैं और इसका परिणाम? इसका परिणाम दासत्व। कुछ विचारवान् लोगों के मन में यह बात कुछ वर्ष पहले ही आ गई थी;

पर दुर्भाग्य की बात तो यह है कि इस सब अनर्थ का कारण उन्होंने आर्यधर्म बतलाया। उन्होंने समझा कि आर्यधर्म-जो आज जगत् में सब धर्मों से बड़ा धर्म है—का लय होना ही हमारी दशा सुधारने का एक मात्र उपाय है। पर मित्र ! तुम खूब ध्यान में रक्खो कि इस में धर्म की कुछ भी लाग नहीं है। इस के विरुद्ध आर्यधर्म तो यही कहता है कि "सर्वं खल्विदं ब्रह्म"। इस अनर्थ के कारण पूछिये तो आर्यधर्म के तत्वों को व्यावहारिक स्वरूप देने में लापरवाही की गई और सच्ची सहानुभूति तथा प्रेम की ओर ध्यान नहीं दिया गया। परमेश्वर ने एक बार बुद्ध रूप से इस भूमि में अवतीर्ण होकर स्वयं अपने आचरण द्वारा तुम्हें यह दिखला दिया कि प्रेम का स्वरूप कैसा होना चाहिए। अत्यन्त दरिद्र, अत्यन्त विपद्-ग्रस्त और अत्यन्त पापी या पतित लोगों के साथ भी तुम्हारा कैसा वर्ताव होना चाहिये सो उन्होंने तुम्हें सिखला दिया; पर इस शिक्षक को तुम ने पीठ ही दिखलाई। तुम, कान होने पर भी बहरे, और आंखें होने पर भी अंधे बने। यहूदी लोग जिस प्रकार क्राइस्ट गुरु का उपहास करने के कारण, शापग्रस्त होकर, पृथ्वी भर में भटकते फिरे, और कहीं उन्हें जगह नहीं मिली, उसी प्रकार, ऐसे अनेक महात्माओं का अनादर करके तुम ने यह कर्म-दशा अपने ऊपर खींच ली है। चाहे जो आवे और चाहे जिस रीति से तुम्हें फिरावे। अपनी ऐसी दशा तुम ने अपने हाथों ही कर ली है। अरे

पाषाणहृदय पुरुषों ! तुम्हें यह नहीं जान पड़ता कि तुमने आज तक जो अत्याचार किया उसी के कारण तुम अब गुलाम बने हो। यह तुम नहीं जानते कि अत्याचार और दासत्व एक दूसरे के सगे भाई हैं और ये सदा सहचारी होते हैं।

कदाचित् तुम को स्मरण होगा कि मैं जब पांडुचेरी में था तब एक पण्डित से विदेश-यात्रा के विषय में बातचीत हुई थी। उसके वे पशु-तुल्य हाव-भाव और वह "कदापि नहीं !" वचन तो मैं जन्म भर नहीं भूलूंगा ! ये समझते हैं कि भारत ही सारा जगत है और बस हमीं जगत् में श्रेष्ठ हैं ! पर इन अरण्य-पण्डितों को कैसे मालूम हो कि इस सुन्दर भूमि पर तीस करोड़ कीड़े जो आपस में अत्याचार का खेल मचा रहे हैं उसे देख कर सारा संसार आज हंस रहा है ? अब यह सब दशा बदलने के लिये हमें कमर कसना चाहिये। आगे धर्म, और उसी का प्रत्यक्ष स्वरूप जो बौद्धधर्म है उस का आधार हमें वेग से शुरू करना चाहिए। अपने कार्य की पवित्रता पर अपने हृदय में पूर्ण विश्वास, ईश्वरीय सहाय के विषय में पूर्ण विश्वास और दरिद्र तथा विपद्ग्रस्त भाइयों को मुक्त करने के लिए चाहे जो कर डालने का असीम साहस रखने वाले वीर पुरुष हमें आज चाहिये। आज तक नीच जाति कहला कर अत्याचार सहनेवाले अपने भाइयों को उन की इस दशा से मुक्त करना, उन्हें सब प्रकार से मदद करना

और सर्वत्र समभाव उत्पन्न करना ही जिन्होंने अपने जीवन का उद्देश्य मान रखा रखा है ऐसे धार्मिक मनुष्यों की आज हमें ज़रूरत है।

सर्व समता का तत्व जिस में इतनी उत्तम रीति से ब: ताया है, ऐसा धर्म, आर्यधर्म को छोड़ कर, पृथ्वी की पीठ पर, और एक भी नहीं है! पर ग़रीब बिचारे पीछे पड़े हुए वर्ग पर लगातार अत्याचार करने वाला धर्म भी, आर्यधर्म को छोड़ कर दूसरा नहीं है! पर, भैया रे! इस में धर्म का कोई दोष नहीं-किन्तु धर्म के नाम पर जिन्होंने अत्याचार करने वाले रूढ़िरूप शस्त्रास्त्र निर्माण किये उन भोंदू लोगों का ही यह सब प्रताप है।

अस्तु; धैर्य्य न छोड़ना। "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" यह भगवानकृष्ण का वाक्य स्मरण करो और काम के लिए कमर कसो। मुझे तो जन्म भर यही काम करने की आज्ञा हुई है। सांसारिक सुख किसे कहते हैं, इसको तो मुझे कल्पना भी नहीं है। मेरे भाई बन्धु और इष्ट मित्र भूख से, मेरी आंखों देखते, तड़फड़ा कर मर गये; जिनकी भलाई के लिये मैं खपा उन्होंने उलटी मेरी हंसी की; मेरे विषय में अविश्वास उत्पन्न किया; पर मित्र! यह भी एक तरह से अच्छा ही हुआ। अत्यन्त आपदावस्था एक बड़ी पाठशाला है। ऐसा एक भी साधु अथवा तत्ववेत्ता नहीं मिलेगा जो

इस पाठशाला में न पढ़ कर तैयार हुआ हो। इस शिक्षा के लाभ जानना चाहो तो ये हैं कि इस से अन्तःकरण में सच्ची सहानुभूति की प्रेरणा होती है और मनोधैर्य आता है; पर सब से बड़ा लाभ यह है कि प्रचण्ड शक्तियों के आघात से चाहे इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का बात की बात में, चकनाचूर हो जाय, तथापि न डिगनेवाली असीम इच्छाशक्ति भी इसी शिक्षा से उत्पन्न होती है। जिन्होंने मेरा उपहास किया उन के विषय में मेरी बिलकुल ही द्वेषबुद्धि नहीं। वे तो बुद्धि-मत्ता की दृष्टि से अब तक छोटे बच्चे हैं! लोग उन्हें बड़े और चतुर भले ही कहा करें पर इस से सच्ची बड़ाई और चतुराई क्या थोड़े ही मिल सकती है? इन्हें अपनी ऊंचाई पर से जो क्षितिज दीख पड़ता है उसके आगे का जगत् उन्हें नहीं मालूम है। इन के महत् कर्त्तव्य देखो तो बस इतने ही कि खाओ पीओ, खूब चैन उड़ाओ और मनुष्यगणना में अधिकता करो! इन आनन्दी प्राणियों को इस के आगे देखने की आवश्यकता नहीं रहती। हज़ारों वर्षों से अत्याचार के नीचे पिस कर जो निःसत्व, दरिद्र और तेजहीन हो रहे हैं ऐसे हमारे जो लाखों की मचाई हुई चिल्लाहट से इन की निद्रा भंग नहीं होती और न इन के चैन में बाधा उपस्थित होती है। साक्षात् पर-मेश्वर के ही अनन्त स्वरूप, पर हजारों वर्षों की अत्याचारी रीतियों से वे आज भारवाहक जानवर जैसे बन गये हैं—और

उन्हें ऐसे जीने से मरना क्यों क़बूल हो रहा है—इसका विचार भी इन बड़े कहलाने वाले लोगोंमें स्पर्श नहीं करता ! तथापि इसका पूर्ण विचार जिन्होंने किया है, जिन्हें इस विषय में रामबाण मात्रा मिल गई है—और यह कूट प्रश्न हल करने के लिए जिन्होंने कमर कस ली है—ऐसे महात्मा भी जन्म ले चुके हैं। अतएव, मित्र ! जो इन उपायों का चिन्तन करें वे ऐसे क्षुद्र कीटकों की चिनचिनाहट की ओर ध्यान ही न दें—यही ठीक है।

अब तुम्हें एक और विशेष बात बतलानी है, सो यह कि, ऐसे काम में श्रीमान् कहलानेवालों पर बिलकुल ही विश्वास न करना। ये लोग बिलकुल ही—मृतपिण्ड—मिट्टी के औंधे—होते हैं। इस काम के लिए, तुम्हारे समान ग़रीब, हलके दरजे के, परन्तु विश्वसनीय मनुष्य योग्य हैं। ईश्वर पर पूर्ण विश्वास रखो—और जो कुछ करना हो सो सरल, खुले मार्ग से करो—उस में आड़, परदा या लांप-झांप नहीं चाहिए। ग़रीबों पर सच्चा प्रेम रखो, और मदद की आवश्यकता ही होगी तो वह परमेश्वर की ओर से मिलेगी—और फिर मिलेगी—इस में कुछ भी सन्देह न रखना। यही बोझा हृदय में और यही विचार सिर में सदैव रखकर आज बारह वर्ष से मैं भटकता हूं। अपने देश के श्रीमान् और बड़े कहलाने वाले लोगों से मैं मिला और अब अन्त में इस परदेश में मदद की

भीख मांग रहा हूं। मुझे विश्वास है कि अन्त में वह परमात्मा मेरी सहायता करेगा, इस में कुछ भी फ़र्क नहीं पड़ सकता। यदि कदाचित् भूख और शीत से इस देह का यहीं पात हो गया तो, हे भारत के मेरे तरुण मित्रो ! मैं तुम्हारे लिए एक सम्पत्ति छोड़ जाऊंगा। दीन, दुर्बल निराश्रित और अत्याचार के नीचे दबने वाले मेरे बान्धवों के सुख के लिए तुम अपना जीवन दे दो। तुम विरासत के नाते से मेरे इसी वचन का निर्वाह मेरे बाद करो। जाओ ! इस क्षण उस पार्थ-सारथी के मन्दिर को जाओ और मेरे वचन के निर्वाह करने की शपथ करो। ऐसा करने से वह अशरण-शरण, जिस ने गोकुल में गोपालों की रक्षा की, जिस ने अति शूद्र गुह को निर्भरालिंगन देने में आगा पीछा नहीं किया, जिस ने बुद्धावतार में वेश्या के निमंत्रण को प्रसन्नता पूर्वक स्वीकार कर के उस का उद्धार किया, जिस ने समाज में अत्यन्त तुच्छ समझे जानेवाले भक्तों के लिए अवतार लिये, जिस ने उनके संकटों में दौड़ कर उन की रक्षा की, वही भगवान् श्रीकृष्ण तुम्हारी सहायता करेगा। तो, फिर, प्रति दिन अधिकाधिक अवनति के गर्त्त में गिरने वाले अपने तीस करोड़ भाइयों का उद्धार करने की शपथ तुम कहते हो न ?

यह एक दिन का काम नहीं है, और यह मार्ग चारों ओर भयंकर झाड़ झंखाड़ों से खूब भरा हुआ है। पर इसे मत

कार्य्य में लगो। तुम्हारे पीछे तुम्हारी रक्षा के लिए देखो यह पार्थ-सारथी आयुध सहित खड़ा है। अच्छा तो फिर लो उस का नाम, और हज़ारों वर्षों से जो यह पापों की पर्वत-राशि संचित हुई है उस में आग लगा दो, यह अभी जल कर ख़ाक हो जायगी। आओ आगे! देखते क्या हो? काम बहुत बड़ा तथा विकट और अपना सामर्थ्य अत्यन्त अल्प है, इसलिये डिगो मत! हम सब ज्ञान के पुत्र और भगवान् के बालक हैं। "यत्र योगेश्वरः कृष्णो तत्र श्रीर्विजियो भूतिः"।

इस प्रयत्न में हज़ारों पतन होंगे, पर अन्य हज़ार उन की जगह लेंगे। रोग क्या है, इस का निदान हुआ है और चिकित्सा भी तुम्हें मालूम हो चुकी है। अब दृढ़ विश्वास रख कर चिकित्सा में लगो; पर फिर एक बार बतलाये देता हूं कि बड़े लोगों की मदद की अपेक्षा मत रखो और कलुषित हृदय से की हुई उन समाचार पत्रों की समालोचनाओं की भी मत परवाह करो। घाम (धूप) न देखो, बादल न देखो, भूख न देखो, प्यास न देखो, अधिक क्या, यह देह भी अपना मत समझो। इसे परमेश्वर के कार्य्य में अर्पण करो। पीछे मत देखो। हमारे पीछे पीछे कोई आता है या नहीं, यह विचार भी न लाओ। बराबर आगे-आगे-आगे बढ़ो।"

सब से बढ़कर नव्यभारतवर्ष के प्रति स्वामीजी का यह सन्देशहैः—"हे, भारत मत भूल, तेरी आदर्श देवियां, सीता

सावित्री और दमयन्ती हैं,। मत भूल, तेरे आदर्श देव त्यागियों के त्यागी उमानाथ शङ्कर हैं। भारतवासियो! स्मरण रहे, तुम्हारा विवाह, तुम्हारा धन, तुम्हारा जीवन इन्द्रियजनित सुख के लिये नहीं है, न यह सब किसी व्यक्ति विशेष के सुख के साधन हैं। इस बात को मत भूलो कि तुम अपने जन्म से ही माता के लिये बलिदान किये गये हो। हे वीरो! साहस धारण करो और इस बात का अभिमान करो कि तुम हिन्दुस्तानी हो। अभिमान पूर्वक कहो मैं भारतवासी हूं। प्रत्येक भारतवासी मेरा भाई है। चाहे फटे पुराने चीथड़े पहने हो पर तुम उच्च स्वर से कहो कि भारतवासी मेरे भाई हैं, भारतवासी मेरे जीवन हैं, भारतवर्ष के देवी और देवता मेरे परमेश्वर हैं। भारत वर्ष का समाज मेरे बालपन का पालना है; मेरी युवावस्था की विलास वाटिका है। मेरे बुढ़ापे का एकान्त स्थान है। कहो प्यारे भाई:—"भारतभूमि" मेरे लिये सब से बड़ा स्वर्ग है, भारत माता की भलाई में मेरी भलाई है और रात्रि दिन प्रार्थना करो—तू जगत की माता है, तू ही स्वामी है। मुझे वीरता प्रदान कर, तू शक्ति की माता है, मेरी कायरता दूर कर और मुझे मनुष्य बना। बस यही नव्य भारत के प्रति स्वामी जी का सन्देश है।

प्यारे भाइयों! चेतो अब कब तक अज्ञान रूपी निद्रा की गोद में करवट बदलते रहोगे। प्यारे नव युवकों! [illegible]

माता की मनोहर सन्तानों !! इस देश की एक मात्र आशाओं !!! अब अपना जीवन आदर्श बनाओ अपने चरित्र का आदर्श संगठन करो अपनी मातृ भूमि को भी आदर्श बनाओ जिस दिन तुम में आदर्श नर नारी उत्पन्न होंगे उसी दिन तुम्हारी मनुष्य समाज में परिगणना होगी। बस यही सन्देश नव भारत के प्रति है। परमात्मा हमारे नवयुवकों को इतना आत्मिक बल दें कि उनको अपने पर और अपने देश पर दृढ़ विश्वास हो। यही हमारी हार्दिक इच्छा है। प्यारे मित्रों ऋषि मुनियों के इस वाक्य को मत भूलो कि "उत्तिष्ठत जागृत प्राप्य वरान्निबोधत"।

॥ समाप्तम् ॥

रेनसम सिम्स एन्ड जेफ़रीज़ लिमिटेड, इप्सविच।

रेनसम का "टर्नरेस्ट" हल याने वह हल जिसे मोड़तेवक्त फेरना नहीं पड़ता साधारण भूमि के जुताई के लिये बहुत अच्छा है। समथर खेत हो तो इस हल से जोतने से सब कूंड़ की मिट्टी एकही ओर गिरती है। दो कूंड़ के बीच ख़ाली ज़मीन नहीं बचती। इसके नगरा व हरिस लोहे के होते हैं और लकड़ी के भी मिलते हैं। इस का मध्य भाग ढले हुए लोहे का होता है जिसके एक बाज़ू पर हर फार लगा रहता है जो ज़मीन को काटता है। एक के बाद दूसरा कूंड़ बनाने के लिये हलको मोड़ना नहीं पड़ता है सिर्फ़ १ पेंच निकालने से मध्य भाग और हर फार दोनों दहिने से बांये चले जाते हैं। जिस मार्का का हल होता है उसी मार्का का हर फार लगता है।

6303

मार्का	नाप कूंड़ की, इंच के हिसाब से		अन्दाज़ वज़न हलों का		चलाने में इतने बैल लगते हैं
			लोहवाले सामान का	लकड़ीवाले सामान का	
ए. टी	४ इंच गहरा	८ इंच चौड़ा	४० सेर	३२ सेर	२ से ४ बैल तक
बी. टी.	५ ,,	९ ,,	५४ सेर	४२ सेर	२ से ४ बैल तक
सी. टी.	६ ,,	१० ,,	७४ सेर	६२ सेर	४ से ६ बैल तक

एजेन्ट—अक्टोविअस स्टील एन्ड कम्पनी, कलकत्ता।

कृषि उपयोगी पुस्तक माला—संख्या १

खाद और उनका व्यवहार

लेखक

गयादत्त त्रिपाठी, बी. ए.

प्रकाशक

राधारमण त्रिपाठी,

नं० २४, जवहरी मुहल्ला, (प्रयाग) इलाहाबाद।

बाबू विश्वम्भर नाथ भार्गव के प्रबन्ध से स्टैंडर्ड प्रेस इलाहाबाद में छपी।

१००० प्रति] सन् १९१५ ई० [मूल्य [illegible]
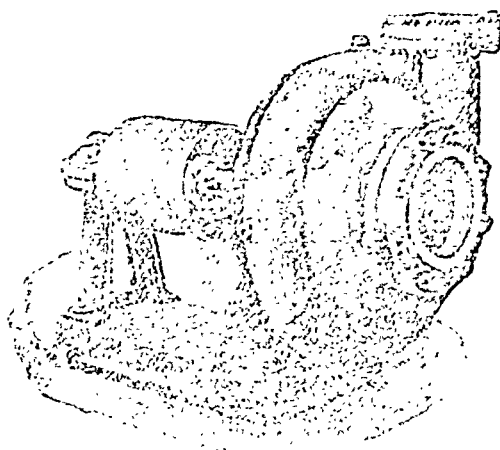
निवेदन।

भारतवर्ष कृषिप्रधान देश है। सारी बस्ती किसानों से भरी है। अतएव कृषि की उन्नति के हेतु कृषि विषयक पुस्तकों की आवश्यकता भी है। हिन्दी भाषा में जो किसानों की मुख्य भाषा है ऐसी पुस्तकों का अभाव देख कर कृषि उपयोगी पुस्तकों के प्रकाश करने को मैं उद्यत हुआ हूं। मेरे साहस पर कतिपय महाशयों ने कृषि सम्बन्धी पुस्तकें लिख देने की प्रतिज्ञा किया है। प्रार्थना है कि हिन्दी के और लेखक महाशय कृषि उपयोगी छोटी छोटी पुस्तकें लिखें। यदि वे मेरे पास ऐसी पुस्तकें लिखकर भेजेंगे तो मैं उनके प्रकाश करने का उद्योग करूंगा। छोटी पुस्तकों से प्रयोजन यह है कि पुस्तक का दाम कम हो जिससे दीन किसानों [illegible] लेनेमें सुविधा हो। किसानों और ग्रामीणों से भी [illegible] है कि वे इन पुस्तकों को स्वीकार [illegible]।

कृषि उपयोगी पुस्तक माला की पहिली संख्या [illegible] इससे कुछ भी उपकार हुआ और मेरा [illegible] बहुत शीघ्र दूसरी संख्या तथा क्रमशः और संख्या [illegible]।

इस संख्या के प्रकाश करने में मुझे विशेष [illegible] एक बड़े बड़े व्यापारियों से मिली है जिसको मैं [illegible] देता हूं। पाठकों के उपकारार्थ इन लोगों ने अपने [illegible] इस पुस्तक में प्रकाश करने को दिया है। इन विज्ञापनों से [illegible] को मालूम होगा कि संसार में कृषि की उन्नति कहां तक हुई और इस उन्नति के हेतु, कारखानों के अच्छे अच्छे सामान क्या हैं और कहां से सुलभ हैं।

कचहरी मुहल्ला
इलाहाबाद
ता० ५ मार्च १९१४ } [illegible] त्रिपाठी

॥ श्री ॥

समर्पण

देशभाषा तथा कृषिकार्य्य के उन्नति में निरन्तर तत्पर कृषकों के प्रेमास्पद माननीय श्रीमान् राजा रामपालसिंह, साहब, सी. आई. ई., ताल्लुकदार कोर्री सुदौली, ज़िला रायबरेली (अवध) की सेवा में महानुभाव की अनुमति से यह छोटी सी पुस्तक सादर समर्पित है।

प्रयाग
ता. ५ मार्च १९१५

गयादत्त त्रिपाठी

खाद और उनका व्यवहार

"खाद पड़े तो खेत, नाहीं तो कूड़ा रेत"

खात, खाद, खाना, खाद्य और भोजन इन शब्दों का एक ही अर्थ है। कृषि कार्य्य में खाद किसे कहते हैं और उसे किसान किस प्रकार काम में लाते हैं यह बहुत प्रसिद्ध है अर्थात् जिस भूमि में पौदे कम उगते हैं या नहीं उगते उसमें फिर से उपजाऊ शक्ति लाने के लिये जिन पदार्थों की आवश्यकता होती है उसे खाद कहते हैं।

कोई भी किसान व बागवान ऐसे न होंगे जो खाद के गुण अथवा आवश्यकता को न जानते हों, कहावत है :—

"खाद देय तो होई खेती, नहिं तो [illegible]"

परन्तु बहुधा अपढ़ होने के कारण उनको हर एक [illegible] के खाद के भिन्न भिन्न परिमाण व पृथक् पृथक् [illegible] की रीति नहीं मालूम है। उनको यह बात यदि ठीक तौर से मालूम हो जावे कि किस फ़सल के वास्ते कैसी खाद उपयोगी होगी अथवा यह कि किसी [illegible] की खाद किस रीति से बन सकती है तो बहुत [illegible] है कि वे किसान भी बहुत शीघ्र व सुगमता से अपनी [illegible] का सुधार सकेंगे।

॥ श्री ॥

समर्पण

देशभाषा तथा कृषिकार्य्य के उन्नति में निरन्तर तत्पर कृषकों के प्रेमास्पद माननीय श्रीमान् राजा रामपालसिंह, साहब, सी. आई. ई., ताल्लुकदार कोरीं सुदौली, ज़िला रायबरेली (अवध) की सेवा में महानुभाव की अनुमति से यह छोटी सी पुस्तक सादर समर्पित है।

प्रयाग
ता. ५ मार्च १९१५

गयादत्त त्रिपाठी

खाद और उनका व्यवहार

"खाद पड़े तो खेत, नाही तो कूड़ा रेत"

खात, खाद, खाना, खाद्य और भोजन इन शब्दों का एक
अर्थ है। कृषि कार्य्य में खाद किसे कहते हैं और उसे
सान किस प्रकार काम में लाते हैं यह बहुत प्रसिद्ध
अर्थात् जिस भूमि में पौदे कम उगते हैं या नहीं होते
में फिर से उपजाऊ शक्ति लाने के लिये जिन पदार्थों की
वश्यकता होती है उसे खाद कहते हैं।

कोई भी किसान व बाग़बान ऐसे न होंगे जो खात के
ा अथवा आवश्यकता को न जानते हों, कहावत है :—

"खाद देव तो होई खेती, नहि तो रहि नदिया की रेती"

न्तु बहुधा अपढ़ होने के कारण उनको हर एक प्रकार के
द के भिन्न भिन्न परिमाणु व पृथक् पृथक् गुण भली
ति नहीं मालुम हैं। उनको यह बात यदि ठीक तौर से
लुम हो जावे कि किस फ़सल के वास्ते कौनसी खाद
योगी होगी अथवा यह कि किसी विशेष पदार्थ की
ाद किस रीति से बन सकती है तो बहुत कुछ आशा है
ये विचारे भी बहुत शीघ्र व सुगमता से अपनी दशा
ा सुधार सकेंगे।

बहुत से पदार्थ ऐसे हैं जो किसानों को बड़ी सुगमता और बिना मूल्य मिलते हैं और जिनसे उत्तम खाद बन सकती हैं। परन्तु किसानों को उनके गुण न मालुम होने के कारण वे पदार्थ वृथा फेंक दिये जाते हैं और उनसे जो लाभ हो सकता है वह नहीं होता। बहुत से पदार्थ ऐसे हैं जिनके गुण किसानों को सरल रीति से मालुम भी हैं पर यथार्थ प्रकार से उनकी रक्षा नहीं कर सकते इस कारण उन पदार्थों में से उर्वरा शक्ति बढ़ाने वाले अंश नष्ट कर दिये जाते हैं जिसके साथ ही किसानों के कठिन परिश्रम भी नष्ट हो जाते हैं।

खाद की आवश्यकता देख अनेक विद्वानों ने इस विषय पर बड़े बड़े ग्रन्थ लिखे हैं जिनको पढ़ने और समझ कर उन रीतियों पर वर्तने से किसान बहुत लाभ उठा सकते हैं पर उसमें कठिनाई इस बात की है कि उसमें बहुत सी पुस्तक ऐसी भाषाओं में हैं जिनको किसान न पढ़ सकते है और न सुनकर समझ सकते हैं यहां तक कि बहुत सी पुस्तकें जो किसानों ही के भाषा में लिखी गई हैं उनमें भी ऐसे शब्दों का प्रयोग कर दिया गया है जिनके समझने के लिये साइन्स की डिगरी उपार्जन करने की आवश्यकता होती है अतएव इस अवस्था में सर्व साधारण किसानों को ऐसे ग्रन्थों से सम्यक् प्रकार से उपकार नहीं होता।

इस छोटी सी पुस्तक में खाद के विषय में केवल उतना

ही लिखा जाता है जिसे किसान एक बार सुन कर भी लाभ उठा सकता है, विज्ञानिक विषय की विशेष बातों को छोड़-कर केवल यह दिखलाया गया है कि कौन पदार्थ किसानों के घर में वा द्वार पर पड़े हैं जिनसे खाद बन सकती है। खाद बनाने के सुगम और कम खर्च वाले प्रकार कौन हैं और यह कि हर एक प्रकार तथा पदार्थ की खाद किस फ़सल के उत्पन्न करने में उपयोगी होती हैं।

जितनी प्रकार की खादों का वर्णन इस पुस्तक में किया गया है उनमें से अधिकांश खाद को बहुधा किसान जानते हैं इस लिये हमें उनकी उचित रक्षा वा उचित प्रयोग की रीति बतलाने में किसानों को केवल उनकी भूली हुई बात को याद दिलाना है और यही उद्देश्य इस पुस्तक का है।

पृथिवी की उपजाऊ शक्ति में जो छीजन होती है उसी को पूरा करने के लिये खाद की आवश्यकता होती है। हर एक तत्व जिनकी सहायता से पौदे उगते वा फलते हैं उनका हर समय में रहना ज़रूरी है यदि उनमें से किसी की कमी हो जाती है तो फ़सल ठीक नहीं होती। एक खेत में फ़सल को अदल बदल बोने से इस प्रकार की कमी बहुधा पूरी होती है पर यह उपाय सदा के लिये नहीं है कभी न कभी खेत की अवस्था ऐसी हो जाती है कि बिना खाद दिये उसमें कोई चीज़ पैदा ही नहीं हो सकती। यही दशा बगीचे और फुलवारियों की भी होती है जितने पेड़ हैं वे सब फलना फूलना बन्द कर देते हैं। उस समय उनका

पुनर्जीवन खाद ही से होता है। किसी खेत में बहुत दिन तक खाद न देने से उनकी सम्पूर्ण शक्ति ऐसी नष्ट हो जाती है कि फिर चाहे जितना परिश्रम करो या खाद छोड़ो पर कुछ भी उपकार नहीं होता। इसी प्रकार जल्दी जल्दी और अधिक खाद से भी नुकसान होता है। किसी खेत में यदि कई बरस तक बराबर खाद डाली जाय तो नतीजा यह होगा कि कुछ दिन तक तो फ़सल अच्छी होगी पर थोड़े दिन के अनन्तर वह खेत सर्वथा नष्ट हो जावेगा और फिर उसमें फ़सल कठिनाई से होगी।

विज्ञानिक लोगों ने खाद के ४ भेद बतलाये हैं।

एक वह खाद जिनमें फ़ास फोरस की विशेषता रहती है जैसे हड्डी प्रभृति की खाद। इस खाद के गुण ये हैं कि इनसे फल और मूल मीठे हो जाते हैं। फल अधिक लगता है, खेत जल्दी पकता है और आरम्भ में कीड़ों से भी रक्षा होती है। खली और कंडे या लीद की राख से भी यही फल निकलता है।

दूसरी खाद यवाक्षार सम्बन्धी होती है। रुधिर, मांस, रोम, सींग या खुर व कीचड़ आदि की खाद इसी प्रकार में है। इन खादों से पौदों की पत्तियां बढ़ती हैं इसी से गोभी सहतूत व तम्बाकू आदि को इनसे विशेष लाभ होता है। यद्यपि इन खादों का गुण तुरन्त नहीं होता पर इससे जो लाभ है वह चिरस्थाई होता है।

तीसरी प्रकार की खाद शार्करीय है अर्थात् वह खाद जिसमें पोटाश का अंश अधिक होता है। पेड़ पत्ते डण्ठल बीज तथा कंडे प्रभृति की राख इस प्रकार की खाद में गणना किई जाती है। पोटाश वाली खाद से पौदे और उनकी जड़ें जल्दी बढ़ती हैं जिससे उनमें दूध और रस जल्दी इकट्ठा हो जाता और दाना व फल पोढ़ा होता है।

चौथा प्रकार की खाद चूना, घोंघा, कङ्कर वग़ैरह की होती है। इस खाद के डालने से पहिले की पड़ी हुई खाद के सोते हुये तत्व जाग उठते हैं और अपना गुण प्रगट कर देते हैं। जिस समय यह मालूम हो कि पौदों में या पेड़ों में पत्तियां बढ़ रही हैं पर बाली व फल की कमी है तो तुरन्त चूना, राख व हड्डी के चूरे की खाद देना चाहिये।

कोई कोई लोग खादों के साथ निमक की गणना करते हैं पर सिवाय गोभी प्रभृति तरकारियों के, इससे विशेष लाभ नहीं होता। साफ़ निमक की अपेक्षा खारी निमक खाद के काम के लिये अच्छा होता है इससे सन जूट सनई कपास आदि के रेशे मज़बूत होते हैं। खारी निमक से पौदों में पत्तियां अधिक नहीं लगने पाती।

खाद के गुण अनेक हैं। कुछ खाद ऐसी होती हैं जो स्वयम् पौदों को लाभदायक होती है कुछ खाद ऐसी है जो भूमि में पड़कर उसमें की स्थिति पदार्थों को ऐसा परिवर्तन कर देती है (बदल देती है) जो आगे चलकर पौदों

को उपकारी हो जाते हैं। कुछ खाद ऐसी होती है जो खेत के मिट्टी को बदल देती है। कुछ खाद ऐसी है जो भूमि में पड़कर उसकी आकर्षण शक्ति को ऐसा बढ़ाती है जिससे वह वायु में स्थित पदार्थों को खींच लेती है और वे पदार्थ उपकारी होते हैं। कितनी खाद ऐसी है जिनके डालने से ऊसर हरे भरे खेत बनते है और जहां कोई विशेष चीज़ नहीं होती थी वह चीज़ होने लगती है।

इस पुस्तक में जितने प्रकार की खाद का वर्णन किया गया है उनके सिवाय और बहुत से रसायनिक तथा अन्यान्य पदार्थ हैं जिनको अन्य देश के विज्ञ कृषक लोग खाद बनाकर लाभ उठाते हैं पर उस प्रकार की खादों की विशेष चर्चा इस पुस्तक में नहीं किई गई क्योंकि उनके जानने के लिये कुछ पदार्थ ज्ञान की आवश्यकता है। बहुत सी विज्ञानिक खाद तय्यार मिलती हैं यदि किसान उनका प्रयोग करना चाहें तो इस पुस्तक में छपे हुये विज्ञापनों से मालुम कर लेयं कि उन्हे रसायनिक व विज्ञानिक खाद कहां मिलेगी।

निःसन्देह विज्ञानिक व रसायनिक खाद का प्रयोग बड़ा उपकारी है क्योंकि यहां आज कल छीजन ज़्यादा है अर्थात जितना अंश पृथ्वी से हर फ़सल के साथ निकल जाता है उतना पूरा करने को खाद नहीं पहुंचती। अब या तो देशी खाद की मात्रा जो आज कल दी जाती है उसकी चौगुनी किई जाय या रसायनिक खाद का प्रयोग किया जाय।

रसायनिक खाद की आवश्यकता देख कलकत्ता की सुप्रसिद्ध शा, वालेस कम्पनी ने अपने यहां एक खाद विभाग अलग खोल दिया है और उसमें एक निपुण विज्ञ कृषक को नियुक्त किया है जो इस देश के कृषी का हाल भली भांति जानता है। जो लोग रसायनिक खाद का व्यवहार किया चाहें वे उक्त कम्पनी से पत्र व्यवहार कर सकते हैं। कौन सी चीज़ की खेती करना है और जहां खेती करना है वहां की ज़मीन कैसी है यह सब हाल लिखने से यह कम्पनी अपने निपुण को नियुक्त कर उचित सलाह व मुनासिब खाद व उनके प्रयोग की रीति प्रभृति तुरन्त बिना मूल्य लिख भेजती है और यदि ज़रूरत हो तो ठौर पर भी अपना आदमी भेज देती है। शा, वालेस कम्पनी का इस प्रकार किसानों की सहायता में तत्पर होना निःसन्देह प्रशंसनीय है। किसानों को इनसे ज़रूर लाभ उठाना चाहिये।

इस पुस्तक में जिन खादों का वर्णन किया गया है उनमें से बहुत सी खाद ऐसी हैं जिनको हर एक किसान प्रतिदिन काम में लाता है और बहुत सी ऐसी हैं जिनको जानता है कि खाद अच्छी है पर जाति पाति के भय से उनका व्यवहार नहीं करता और बहुत सी खाद ऐसी है जिनके गुणों को न जानकर उन्हें सर्वथा नष्ट कर देता है। परन्तु यदि एक बार किसान ध्यान देकर देखेंगे तो मालूम होगा कि ये सब पदार्थ उनको बड़े सुलभ हैं और जो रीतियां उन सब की रक्षा और पाँस के योग्य बनाने की लिखी गई हैं वे सब सुख साध्य हैं।

इतना और भी कहना है कि फ़सलों को खाद से क्या लाभ, किस प्रकार से होता है और इसका परिचय किसानों को क्योंकर मिल सकता है।

जिस प्रकार भोजन से मनुष्य के शरीर को बल और जीवन शक्ति मिलती है उसी प्रकार खाद से पौदों को शक्ति और पुष्टता प्राप्त होती है जो खाद खेतों में छोड़ी जाती है वह गलकर पौदों की जड़ में पहुंचती है और पौदे अपनी जड़ों से उसके रसों को खींचकर अपनी पुष्टता बढ़ाते हैं।

यह बात भी किसानों को विदित है कि वायु में भी बहुत से ऐसे पदार्थ हैं जो पौदों के बढ़ने और पकने में सहायता करते हैं। और इन्हीं खादों के पड़ने से वे भी पदार्थ आकर्षण शक्ति द्वारा पौदों की ओर खिंचकर फ़सल को लाभ पहुंचाते हैं। उत्तम खाद पड़ने से खेती को पाला प्रभृति से भी रक्षा होती है।

खाद से कितना लाभ होता है इसका परिचय बहुत सुगमता से किसान स्वयम् कर सकते हैं। उसकी रीति यह है—किसी खेत का एक हिस्सा खाद देकर बोवें और उतना ही बड़ा दूसरा हिस्सा बिना खाद दिये हुये बोवें और जब फ़सल उतर जावै तो दोना हिस्सों की पैदावार को अलग अलग तौल कर देख लेवें। इस में कोई सन्देह नहीं कि यदि बिना खाद वाले खेत में ७ मन की पैदावर होगी तो दूसरे खेत में जिसमें खाद दिई गई है कम से कम ५॥ मन की पैदावार होगी। इसके अतिरिक्त यह भी सिद्ध माना गया

है कि खाद दिये हुये खेत में का उत्पन्न हुआ अन्न खाने में अधिक स्वादिष्ट और बलिष्ट होता है।

खेतों में खाद या पांस डालने के सिवाय कई और उपाय हैं जिनसे भी खेती बढ़ जाती है और वनस्पतियों को भी लाभ होता है, वे उपाय ये हैं :—

(१) खाली खेत में चरने वाले पशुओं को खली खिलाना।

(२) धनैचा, सन, अरहर प्रभृति दूर तक जड़ फैलाने वाले फ़सलों को खेत में बोना।

(३) बार बार पानी से खेतों को भरना।

(४) दूसरे तीसरे बरस तालाव गड़हा व नालों को खेत में उलच देना।

(५) दिहातों में पेड़ों को लगाना जिससे उन पेड़ों पर सहारा लेने वाले पक्षी और कीड़े मकोड़ों की बीट खाद के लिये सहज में इकट्ठी हो जाय।

(६) जङ्गल और झाड़ियों में आग लगाकर पृथ्वी को खेती के लिये साफ कर लेना।

(७) बोने के पहिले खेतों को कई बार जोतना ; गेहूं जवा प्रभृति के खेत आषाढ़ से कुवांर तक याने बोने के समय तक बार बार हल से खूब जोते जाते हैं। पृथिवी कहती है :—

"जो मोहि जोते तोड़ मड़ोर, ताको कुठिला दूंगी बोर"

(८) गन्ना बोने के पहिले खेत में मूंगफली व आलू प्रभृति का बोना। मूंगफली व आलू के निमित्त छोड़ी गई खाद गन्ना (ऊख) को बहुत लाभ पहुंचाती है।

(९) कीड़े मकोड़े तथा दीमक आदि के रक्षा के लिये प्रयोग किये पदार्थ नीम की खली, रेंड़ी की खली प्रभृति भी दूसरे फ़सल में खाद का काम करते हैं।

(१०) खेतों में घास व सिमार जमने के बाद जोताई करना।

(११) खेतों की जोताई खूब गहरी करना, कहावत है:—

"वीज पड़े फल अच्छा देत, जितना गहरा जोतै खेत"

(१२) खेत में ऊंची मेंड़ बांधना जिससे बरसात का पानी कुछ दिन जमा रहे। कहीं कहीं खेतों में बांध बांध कर पानी रोक रखने की रिवाज है।

"सौ की जोत पचासै जोतै, पै ऊंच के बांधे बारी।
जो पचास सौ का न तुलै, तो देव घाव को गारी॥"

और भी कहा है:—

"मेंड़ बांध दस जोतन दे, दस मन बीघा मोसे ले"

खाद जिन पदार्थों से बन सकती हैं और जिस प्रकार वे खाद कम खर्च में बनती हैं वे सब विधि इस पुस्तक में लिखी जाती हैं।

कम खर्च का शब्द सुनते ही ध्यान आज कल की प्रचलित रीतियों पर जाता है। किसानों को खेत में खाद देते हुये देखने से मालूम होता है कि उनको इस बात का कुछ भी विचार नहीं होता कि किस खेत में कितनी खाद देना चाहिये। एक ही खेत में किसी जगह खाद का ढेर लग जाता है और किसी जगह बिलकुल नहीं। परिणाम यह

होता है कि बहुत सी खाद व्यर्थ जाती है और बहुत सी भूमि बिना खाद के रह जाती है। अकसर खेतों में खाद के कूरे बहुत दिनों तक पड़े रहते हैं जिस कारण वायु तथा (वृष्टि हो जाने से) जल के सम्बन्ध से उस खाद के बहुत से गुणकारी अंश नष्ट हो जाते हैं इसलिये किसानों को चाहये कि बरसात आने पर खेत में खाद छोड़ें और बहुत जल्द उस खाद को खेत में सम करके खेत को भली प्रकार जोत देवें जिससे खाद के सब पदार्थ खेत की मिट्टी में सम्मिलित हो जावें। कहावत है :—

"खाद आषाढ़ खेते में डालै, तब फिर खूब ही दाना पौल"

इस विषय में चीन देश के काश्तकार बड़े चतुर मालुम पड़ते हैं। वे लोग खाद को सारे खेत में नहीं छोड़ते वरन खेत जमने के बाद हर एक पौदों के जड़ों के पास खाद देते हैं जिससे खादकी बहुत बचत होती है। यह तो ठीक है गोबर प्रभृति के साधारण खाद की अपेक्षा सूखे गोबर का चूरा तथा मनुष्य के सूखे मल का चूरा इस प्रकार खेत में भुरभुराने से अधिक लाभ होता है और गन्ने की खेती में इस प्रकार खाद देना साध्य भी है। यहां पर इस बात का भी जानना आवश्यक है कि यह प्रकार खाद देने की केवल गोबर प्रभृति की है। खली व खून प्रभृति की तेज़ खाद का ऐसा प्रयोग नहीं करना चाहिये। इसमें लाभ होने के बदले हानि होने का भय है खली व खून प्रभृति की खाद अपने

तेज़ी से पौदों को जला भी सकती है। धान प्रभृति के खेतों में बीज उगने के बाद खाद देने से खेत के खरकतवार बहुत नहीं बढ़ने पाते॥

पदार्थों के भेद से खाद ४ प्रकार की है १ प्राणिज, २, उद्भिज, ३ खानिज, और ४ मिश्रित।

१—प्राणिज खाद उसे कहते हैं जो मनुष्य पशु पक्षी आदि जीवधारियों के मलमूत्र रुधिर, मांस, हड्डी आदिसे बनती है।

२—उद्भिज खाद उसे कहते हैं जो घास, वृक्ष, लता, वग़ैरह के पत्ते, बीज या शाखाओं से बनती है।

३—खानिज खाद उसे कहते हैं जो (खान) से निकले हुये पदार्थों से बनती है।

४—मिश्रित खाद उसे कहते हैं जो ऊपर के तीनों प्रकारों के मेल से बनती है।

प्राणिज खाद

१—सोन खात या मैले की खाद—यह खाद खेत के लिये सब से अच्छी होती है। इसके गुण अनेक हैं। मनुष्य जो कुछ भोजन करता है उसका बहुत अंश उसके शरीर के पोषणादि में लग जाता है बाकी बचा अंश मैला बनकर बाहर निकलता है। इस खाद का बहुत गुण मनुष्यों के भोजन पर निरभर है जिस देश नगर वा गांव के लोग उत्तम भोजन करते हैं वहां की यह खाद बहुत बलवान व अधिक लाभकारी होती है।

यह तो प्रसिद्ध है कि इसमें दुर्गन्ध बहुत है परन्तु कोयले का चूरा अथवा सूखी मिट्टी व राख मिला देने से इसकी दुर्गन्धि बहुत कम हो जाती है। दूसरी रीति मैला को खेत में ३ इंच की गहराई पर गाड़ देने की है। इससे भी खेत को लाभ होता है और सब से उत्तम रीति यह है कि किसान एक गड़हा १० हांथ लम्बा, ६ हांथ चौड़ा और ३ हांथ गहरा खोदे (सुभीते के अनुसार गड़हा कुछ छोटा या बड़ा भी हो सकता है)। उस गड़हे में पहिले १ फुट भर मैला डाल दे फिर ६ इञ्च मिट्टी डाले फिर १ फुट मैला डाल कर ६ इञ्च मिट्टी डाले इस प्रकार गड़हे को भर कर जिस ज़मीन में वह गहड़ा हो उससे १ फुट और ऊंची मिट्टी से ढंक देवे —६ या ७ महीने में मैले की दुर्गन्ध बिलकुल निकल जाती है और सूखी मिट्टी के समान होकर मैला खेतमें छोड़ने योग्य हो जाता बड़े बड़े क़सबे और शहरों के आस पास यह खाद बड़े सुगमता और कम खर्च में बन सकती हैं। चीन व जापान में किसान मैले को बड़े २ नांद में भरकर उसका दुना या तिगुना पानी मिलाकर आठ या दस दिन तक खूब सड़ाते हैं और फिर खेत में छोड़ने के समय कोयला का चूरा तथा मिट्टी मिलाकर सुखा लेते हैं।

सोन खाद बहुत गरम होती हैं इस कारण जिस खेत में यह खाद छोड़ी जाती है उसमें कई बार पानी देने की आवश्यकता होती है यह खाद सब प्रकार की फसल को लाभकारी होती है पर विशेष कर आलू गोभी आदि तरकारियों को

इससे अधिक लाभ होता है एक साल यह खाद छोड़ने से कई बरस खाद देने की आवश्यकता नहीं रहती।

परीक्षा करने से मालूम हुआ है कि सोन खात देने से प्रति एकड़ खेत में लगभग १५ मन मकाई व ६ मन गेहूं अधिक उत्पन्न होता है, कहावत है :—

"गोबर मैला नीम की खली, याते खेती दूनी फली"।

इस बात की भी परीक्षा किई गई है कि जितनी गोबर की खाद हो उतना ही यदि सोन खाद हो तो सोन खाद का परिणाम अच्छा होगा अर्थात् यह भी सिद्ध हुआ है कि गोबर की खाद से भी अधिक लाभकारी सोन खाद होती है।

२—गोबर की खाद—गाय, बैल, भैंस आदि पशुवों के गोबर से बहुत अच्छी खाद बनती है। इस खाद का व्यवहार प्रायः सब किसान करते हैं। किसानों के घर जो पशु होते हैं उनके गोबर का कुछ भाग तो कंडा बनाकर जलाने के काम मे आता है बाकी भाग का पांस बनाते हैं। दिहातों मे देखने से मालूम होता है कि खाद बनाने के निमित्त किसान एक छिछिले गड़हे में जिसको गैरी कहते हैं गोबर जमा करता जाता है और समय पर वहां से उठा कर खेत में फैला देता है पर गोबर के खाद बनाने की यह ठीक रीति नहीं है।

किसानों को चाहिये कि गोबर की खाद बनाने के लिये एक गहरा गड़हा खोदें जिसको ऊपर से छा देवें और गड़हे के चारों ओर कुछ ऊंची मेड़ बांध देवें फिर उसमें प्रतिदिन

का गोबर इकट्ठा करते जावें और बीच २ में कुछ पानी व मिट्टी देते जावें थोड़ी थोड़ी अरहर व ऊख की पत्ती मिला देवें तो और भी अच्छा होगा, जब गड़हा पूरा भर जावै तो उसे आठ अंगुल मिट्टी से ढंक देंय। बीच बीच फिर पानी देते रहने से सात या आठ महीने में गोबर सड़कर बहुत उत्तम खाद बन जाता है।

ऊपर लिखी हुई रीति से खाद बनाने का प्रयोजन यह है कि धूप पानी और हवा से गोबर में के लाभकारी अंश नष्ट न होने पावें हाल का गोबर खेत में कभी न छोड़ना चाहिये क्योंकि उसमें गरमी अधिक होने से वह बहुत फ़सल को जला देता है दो तीन बरस का पुराना गोबर भी खाद के योग्य नहीं रह जाता।

सब पशुओं के गोबर, समान लाभ कारी नहीं होते जो पशु उत्तम भोजन खाते हैं उनके गोबर में लाभ कारी अंश विशेष रहता है। इसी प्रकार नई अवस्था वाले पशुओं का गोबर वृद्ध तथा दूध देने वाले पशुवों के गोबर की अपेक्षा अधिक गुणकारी होता है।

परीक्षा करने से मालूम हुआ है कि एक एकड़ खेत में ६ गाड़ी गोबर की खाद देने से उस खेत में गेहूं की पैदा वार पांच व ६ मन तक अधिक हो जाती है।

गोबर की पांस रबी और खरीफ की हर एक फसलों को और रेशे वाले भाड़ों को लाभकारी होती है पर इसका

विशेष लाभ धान, गेहूं उरद, मक्का, मटर, सेम (सिम्बी) गुरनास पारस्निप, लीक, गोभी, परवल, तरोई, कुमड़ा, खीरा, अदरख, हलदी, लहसुन व ऊख में प्रगट होता है। केला और पोस्ता (अफीम) व आलू की खेती के लिये यह मुख्य खाद है। जूट की खेती को भी इस खाद से अधिक लाभ होता है। गोबर की खाद, बोने के १ महीना पहिले खेत में देना चाहिये।

३—घोड़े की लीद की खाद—लीद बहुत गरम होती है इस कारण इसको खूब सड़ाकर खेत में छोड़ना चाहिये। ताज़ी लीद पौदों को जला देती है। साधारण प्रकार से लीद दो या तीन बरस में सड़कर खाद के काम की होती है। रसोंईघर और पाखाने के कूड़े के साथ गड़हों में गाड़ देने से और बार बार पानी देते रहने से लीद की खाद छः महीने में भी तय्यार हो सकती है (पानी देने के समय फावड़े से उलट पुलट करने से खाद कुछ और शीघ्र तय्यार होती है)। लीद का रंग जब तक धुंधला या भूरा नहीं होता तब तक खेत में देने के योग्य नहीं होती। घोड़े पांगुर नहीं करते इस कारण उनकी लीद में गौ बैल आदि के गोबर की अपेक्षा खाद में लाभकारी अंश अधिक रहता है।

यह खाद बगीचे और फुलवारियों को अधिक लाभ दायक होती है। गन्ने की खेती को भी इससे फ़ायदा होता है।

४—भेंड़ व बकरी की लेंड़ी—यह खाद किसी प्रकार

सूखी होती है और इसके तत्व बहुत शीघ्र अलग होने लगते हैं इस कारण लेंड़ी में मट्टी चूना प्रभृति कोई चीज़ मिलाकर रखना चाहिये। भेंड़ व बकरियों की लेंड़ी की खाद पौधों को बहुत ताक़त देती है। लेंड़ियों को कुचल कर पानी के साथ गड्ढे में सड़ाने से यह खाद जल्दी तय्यार हो जाती है गुलाब प्रभृति फूल के झाड़ों को इससे विशेष लाभ होता है। मूंगफली के खेत में तो इस खाद का छोड़ना बहुत आवश्यक मालूम होता है। सरसों की खली खाने वाली भेड़ों की मुर्गी लेंड़ी नागबेल, याने पान के लिये अति उपकारी होती है। धान के खेत में भी इस खाद को छोड़ कर किसान अधिक लाभ उठाते हैं। भेड़ की अपेक्षा बकरी की लेंड़ में विशेष फ़ायदा होता है। भेंड़ की लेंड़ विलायती बैंगन व तम्बाकू के लिये अच्छी खाद है।

५—शूकर की विष्टा-यह भी खाद के काम में लाई जाती परन्तु यह इतनी कम निकलती है कि इस विषय में लिखना व्यर्थ मालुम होता है, गोभी तथा फूलने वाले ों को इस खाद से नुक़सान होता है। शूकर की खाली और फ़सलों को भी हानि पहुंचाती है। परन्तु ुअरों के मांद में कोयला का चूरा, सूखी मिट्टी प्रभृति जाय तो सिवाय गोभी तथा फूलने वाले झाड़ों के फ़सलों में इस खाद का भी प्रयोग हो सकता है।

कबूतर की बीट-कबूतर की बीट भी खाद के काम

में आती है और बड़ी लाभकारी होती है। कबूतर के बीट को एक गड़हे में जमा कर के ऊपर से दो या तीन अंगुल मिट्टी से ढंक देना चाहिये और उसमें आठवें दसवें दिन पानी देने से छः महीने के लगभग में सड़कर बहुत उत्तम खाद हो जाती है। कबूतर के बीट की खाद शाक भाजी के लिये बड़े फ़ायदे की है।

७—मुर्ग़ें व मुर्ग़ियों के बीट की खाद—यह खाद भी कबूतर के बीट की खाद की तरह तय्यार की जाती है और बड़ी लाभकारी होती है। मुर्ग़ियों के बीट में कुछ ऐसे तत्व हैं जो पौदों की बाढ़ के लिये कुछ हानिकारी होते हैं इससे इस खाद को ख़ालिस न छोड़ना चाहिये। पाव भर मुर्ग़ी के बीट को १० सेर पानी में मिला कर छिड़कने से फ़सल को फ़ायदा पहुंचता है। इस खाद से उरद को लाभ होता है।

८—चिमगादड़ के बीट की खाद भी इसी भांति तय्यार की जाती है और गन्ने की खेती को बहुत फ़ायदा पहुंचाती है।

९—बतख़ के बीट की खाद उरद के वास्ते बड़ी मुफ़ीद होती है।

१०-दिहातों में जहां पहाड़ निकट हैं दूर दूर की चिड़ियां तोता प्रभृति बरगद आदि बड़े बड़े वृक्ष पर बसेरा लेते हैं। उन वृक्षों के नीचे पक्षियों की बीट बहुत गिरती है। किसानों को चाहिये कि इस बीट को पेड़ की गिरी हुई पत्तियां समेत

बटोर कर सड़ा लेवें और उसे खाद के काम में लावें। यह खाद बड़ी उपयोगी होती है। बहुत से दिहातों में इसका प्रचार भी है।

११—हाथी और ऊंट के लीद व लेंड़ की खाद—यह खाद भी घोड़े की लीद की तरह सड़ाई जाकर बनाई जाती है। इस खाद के छोड़ने से खेत नरम हो जाते हैं। तरकारियों को इस खाद से विशेष लाभ होता है।

जिन खादों का वर्णन ऊपर हो चुका है उन में भेंड़ व बकरी की लेंड़ की खाद सब से अधिक तेज़ होती है उससे कम घोड़े की लीद फिर उससे कम गोबर और सब से कम सुअर की भिष्टा फिर मनुष्य का मल। दामों में अव्वल नम्बर कीड़े मकोड़ोंका मलमूत्र होता है उसके उपरान्त चिमगादड़ और पक्षियों की बीट, फिर उससे कम लागत की भेड़ बकरियों की मेंगनी (लेंड़ी) फिर उनसे कम घोड़े की लीद फिर उससे कम शूकर का भिष्टा फिर मनुष्य का मल और सब से कम दामों का गोबर ...ता है।

समुद्र के तटों पर की पहाड़ियों में पक्षियों की बीट ...त अधिकता से मिलती है यह बीट गुआनों के नाम से ...द्ध है अमेरिका तथा इङ्गलेंड के किसान गुआनों की खाद ...ड़ी महिमा करते हैं विलायती किसानों का अनुभव है ...ल्ले की खेती के लिये गुआनों सर्वोत्तम खाद है।

हिन्दुस्तान में इसका व्यवहार नहीं है। जो लाभ गुवानों से होता है वही लाभ चमगादड़ तथा चिड़ियों की बीट से भी होता है, ताज़ी बीट में तो गुआनों की अपेक्षा कुछ कमतेज़ी रहती है पर सुखी हुई बीट का असर गुआनों से किसी प्रकार कम नहीं होता निरामिशासी पक्षियों की बीट की अपेक्षा मांस भोजन करने वाली पक्षियों की बीट की खाद अधिक उपयोगी होती है। इसी प्रकार कबूतर, मुर्गी, मुर्गा, बतख़ आदि घर में रहने वाली पक्षियों के बीट के खाद की समता गुआनों से हो सकती है। पक्षियों की बीट जो खाद में अधिक उपयोगी होती है उसका विशेष कारण यह है कि पक्षियों के मल और मूत्र में जुदाई नहीं है।

१२—पशुओं के मूत्र की खाद—यह खाद बहुत तेज़ और शक्तिमान होती है। इससे पौधों को अधिक लाभ होता है इसका गुण प्रायः सब किसानों को मालूम है पर वे इसकी रक्षा भली भांति नहीं कर सकते, कारण यह की उनको उपाय नहीं मालूम। मूत्र की खाद जमा करने की दो सरल उपाय हैं एक तो यह कि जहां पशु बांधे जांय वह जगह पक्की और ढालू बनाई जावे जिससे कि पशुओं का मूत्र एक ओर ढरक कर नाली से बहता हुआ किसी चभच्चे में जा गिरे और वहां और पदार्थों में मिलकर खाद बन जावे और दूसरा उपाय यह है कि जहां किसान अपने पशुओं को बांधें वहां कुछ धूल या बिचाली बिछा देवें और जब वह धूल

१३—हड्डी की खाद—यह खाद बड़ी उपयोगी है और चाहे जिस प्रकार खेत में पड़े इस का लाभ अवश्य होना है पर बड़े २ हड्डी के टुकड़े खेत में पड़ने से उनका असर जल्दी नहीं होता क्योंकि उनको गलकर मिट्टी में मिलने में देर लगती है । इसकारण जहां तक हो खेत में हड्डी की बुकनी छोड़नी चाहिये। हड्डी के चूरे चक्कियों मे पीस कर बनाये जाते हैं परन्तु दिहातों में सब जगह हड्डियां पीसने की चक्कियां नहीं मिल सकतीं वहां पर उनको पत्थर पर रखकर खूब बारीक कूट लेना चाहिये । कहीं कहीं हड्डी में कास्टिक प्रभृति देकर मुलायम कर लेते हैं। सरल रीति यह है कि किसी छोटे गड़हे या बकस में हड्डी की तह लगावें फिर उस पर एक तह लकड़ी की राख की देवें फिर हड्डी की तह लगावें उस पर फिर राख की तह देवैं इस प्रकार जब गड़हा या बकस भर जावे तो उसमें कुछ तरी दे देकर कई महीनों तक रक्खी रहने देवैं तो उत्तम खाद बन जावेगी। हड्डी की बुकनी सेम मटर परवल तथा अरारोट के वास्ते बड़ी उपयोगी होती है।

जल्दी के काम के लिये हड्डी को कुछ तेज़ाब डालकर उबालते भी हैं दो तीन घंटा में उबलकर कर खाद तय्यार हो जाती है।

हड्डी पानी तथा भाफ में भी उबाली जाती है और खेत में छोड़ी जाती है पर इस प्रकार की उबाली हुई हड्डी की

बुकनी खेतों में १० या ११ महीने के बाद गलना शुरू होती है। उबाली हुई या जोश दिई हुई हड्डी हलके खेत में ज़्यादा लाभकारी होती है।

दूसरी सरल उपाय हड्डियों के मुलायम करने की यह है कि पहिले ४ अंगुल चिकनी मिट्टी बिछावें फिर उस पर ६ अंगुल की तह हड्डी की जमावें और फिर उस पर एक तह ३ अंगुल चूने की देवें और इसी प्रकार मिट्टी हड्डी और चूने की तह बराबर देते जावें और ढेर मज़े का ऊंचा कर लय फिर सब के ऊपर एक मोटी तह मिट्टी से ढंक कर ऊपर से नीचे तक किसी लोहे या मज़बूत डंडे से कई एक छेद बनावें और उनमें ऊपर से पानी छोड़ देवें। यह पानी चूने में पहुंच कर उन्हें गरम कर देता है। यह गरमी महीनों बनी रहती है और हड्डी को मुलायम कर देती है, दो तीन महीने के बाद सारा ढेर मिला लिया जाय और खेत में छोड़ दिया जावे।

हड्डी को मुलायम करने की तीसरी सरल उपाय यह है कि जितनी हड्डी हो उसकी आधी व तिहाई मिट्टी मिलावें और पशुओं के मूत्र में तर कर किसी गड़हे में भर रख देवें और ऊपर फिर मिट्टी से ढंक देवें तो ६ महीने के लग भग में हड्डी मुलायम हो जावेगी और मूत्र के सम्बन्ध से अधिक उपयोगी खाद होगी।

इसी प्रकार हड्डी के साथ गोबर, हरी घास, सड़े गले

फल इत्यादि गीली चीज़ मिला कर गाड़ रखने से भी ५ या ६ महीने में हड्डी की पांस तय्यार हो जाती है।

हड्डी को गन्धक की तेज़ाब में गलाकर घी की नाईं कर लेते हैं जिसे पानी में मिलाकर खेत में छोड़ते हैं। यह खाद बहुत उत्तम होती है। धान, आलू और गन्ना प्रभृति को इससे बड़ा लाभ होता है।

हड्डी का कोयला और राख भी मध्यम प्रकार की खाद होती है।

आम, नारंगी, अमरूद, कटहल लीची आदि फल के पेड़ लगाने के पहिले जो गड़हा खोदा जाय उसमें कुछ बड़े २ टुकड़े हड्डियों के रख देने से उस पेड़ का फल बहुत मीठा होता है।

सारांश यह कि हड्डी की खाद बड़ी उपयोगी है पर इस देश के कोई किसान तो जाति पांति के भय से और कोई इसके गुण को न जानकर इसका सर्वथा अनादर करते हैं। जिनको जाति पांति का भय है उनको चाहिये कि कम से कम अपने खेतों से हड्डी बिनने वालों को रोकें जिससे कि स्वयम् पतित खाद तो बाहर न जाने पावै और जिनको यह भय नहीं है उनको चाहिये इसके गुण को जानकर इसका प्रयोग करें। देखो केवल खाद ही के वास्ते लाखों मन हड्डी हिन्दुस्तान से ढोकर बाहर जाती है।

१४—रुधिर (खून) की खाद—सूखा हुआ खून अच्छी खाद है। ताज़े खून में दसगुना पानी मिला देने से तुरंत

पांस का काम देता है। खून को किसी टीन या लोहे के बर्तन में छोड़ कुछ पानी मिला दें और उसे फिर चूने से ढंक दें. कुछ दिनों में वह सूख जायगा और खाद तय्यार हो जायगी। यह खाद बहुत दिनों तक रक्खी रह सकती है। नील, चना और फल के वृक्षों को लिये यह बड़ी उपयोगी खाद है। बलुही ज़मीन में इस खाद का गुण शीघ्र प्रगट होता है।

१५--मांस की खाद--रुधिर की खाद की तरह मांस की खाद भी उपयोगी है दोनों में साधारण रीति से भेद इतना ही है कि मांस में रुधिर की अपेक्षा सूखा अंश विशेष है। सड़ा गला मांस जिसे मनुष्य नहीं खाते खाद के काम में आ सकता है। उबाले हुये मांस से चरबी निकल जाने से अच्छी खाद होती है।

१६—अबाबील चिड़िया की खाद—इस खाद की भी गणना उत्तम खादों में किई जाती है इसको गन्ने के खेत में छोड़ने से ऊख के सम्पूर्ण रोग नष्ट हो जाते हैं।

१७—पशुओं के बाल प्रभृति की खाद--इसी प्रकार पशुओं के बाल, सींग, पर तथा चमड़े जो वृथा फेंक दिये जाते हैं सब खाद का काम दे सकते हैं।

१८—मृत पशु की खाद-दिहातों में अक्सर मरे हुए पशु चमड़ा निकाल कर ऐसे ही फेंक दिये जाते हैं जिनको गीध भक्षण कर लेते हैं। यदि वे भी खेत में गाड़ दिये जांय तो खेत को बड़ा लाभ होगा।

१९—मछली की खाद–मछलियों को किसी वर्तन व गड्हे में इकट्ठा कर निमक व गुड़ मिला देवें और जब खूब सड़ जावे तो खाद के काम में लाई जा सकती है सड़ी गली व निकम्मी मछलियों को चूना की तह देकर भी जमा करने से खाद का काम देती हैं फल के वृक्षों को इस खाद से विशेष लाभ होता है। मट्ठा (तक्र)के साथ इस खाद का प्रयोग अंगूर के झाड़ के लिये मुख्य खाद है घोड़े की लीद के साथ इसको मिलाकर खेत में देने से जवा के खेत को भी बड़ा उपकार होता है॥

अमेरिका इङ्गलेंड तथा जापान के किसान मछली की खाद का व्यवहार कर अधिक लाभ उठाते हैं। जिस प्रकार गुआनों का व्यवहार है उसी प्रकार मछली की खाद का भी व्यवहार उन देशों में होता है। समुद्र तटके देशों में बड़ी बड़ी मछलियां वहुत मिलती है वहां उनका तेल निकाला जाता है तेल निकालने के बाद जो अंश मछली का बच जाता है उसी की खाद बनाते हैं इस खाद को अंग्रेज़ी में फिश स्क्राप (Fish scrap) कहते हैं। यह खाद बनी बनाई विलायत से आती है धान चाह तम्बाकू और कपास को इससे विशेष लाभ होता है। हिन्दुस्तान में भी जहां कहीं इसका प्रयोग किया गया है वहां बड़ी सफलता हुई है।

२०—गोवर की राख—यह भी खाद के काम में आती है इसको ऐसी जगह रखना चाहिये जहां पानी में भीग न सके

सूखी राख खेत में देने से छोटे मोटे कीड़े जो पौदों में लग जाते हैं नष्ट होते हैं। राख की खाद फल फूल के वृक्षों को भी उपकारी होती है।

२१—खेत में पशुओंको बांधकर खाद देने की विधि—गरमियों में रात्रि को तथा जाड़ों में दिन को गाय, बैल, भैंस प्रभृति खेत में बांधे जाते हैं। इन पशुओं का गोबर मूत्र प्रभृति सब उसी खेतमें पड़ता है और भूमि को पुष्ट करता है। कहावत है:--

"जेहि क्यारिन में मूतै ढोर, सब खेतन में वह शिर मौर"।

ध्यान इस बात का रखना ज़रूर है कि ये पशु एकही जगह न बांधे जांय। जगह बदल देना चाहिये जिससे खाद सारे खेत में सम रहै। पशुवों को खेत में बांधने में कई फ़ायदे हैं एक तो यह कि सिवाय गोबर के मूत्र भी जिसे किसान ठीक रीति से जमा नहीं करता खेत में पड़ता है और वृथा नष्ट नहीं होता। दूसरे गैरी अर्थात् खाद की कूड़ी से खेत तक खाद ढोने की मेहनत और मज़दूरी बच जाती है तीसरे यह कि जिस खेत में बरसात के आरम्भ में पशु इस प्रकार बांधे जाते हैं उस खेत में घास व कतवार नहीं जमता जिससे निरवाई का भी ख़र्च बचता है। बांस का बाड़ा बांधकर खेत में पशुओं को खुला रखना और भी अच्छा है।

२२—खेतों में भेड़ों को बैठाना—खेत जुत कर तय्यार होजाने पर और अकलर बो जाने के बाद भी भेड़ बकरियों के झुण्ड के झुण्ड रात्रि में खेतमें बैठाये जाते हैं इसका प्रयोजन

यह है कि खेत में इनके बैठने से गरमी जल्दी पहुंचती है और इनकी लेंड़ व मूत्र भी रात भर में बहुत सी पड़ जाती है। धान तथा ऊख की खेती में इससे बड़ा लाभ होता है।

उद्भिज खाद।

२३—हरी घास की खाद--खुरपे से छिली हुई हरी घास किसी गड़हे में भर निरन्तर पानी देकर सड़ाना चाहिये और जब यह घास बिलकुल सड़कर गंधहीन होजावै तब खेत में छोड़ने से बड़ी लाभकारी खाद होती है। जो फ़सल रेताड़ ज़मीन में बोई जाती हैं उनको इस खाद से विशेष लाभ होता है।

२४—समुद्र जङ्गल की खाद--समुद्र जङ्गल अथवा समुद्र के जल के भीतर की घास कई प्रकार की होती। समुद्र जङ्गल बहुत जल्द सड़ कर खाद के काम का हो जाता है। समुद्र के किनारे यह खाद बहुतायत से मिलती है।

२५—सिंवार की खाद—सिंवार वा सिवाड़ अर्थात जल के भीतर की घास भी बहुत अच्छी खाद बनती है। सिंवार की कई जातें हैं और पृथक् पृथक् जाति के सिंवार के पृथक् पृथक् गुण हैं। सिंवार की खाद बनाने के लिये ज़रूरी है कि पानी से निकाल कर वह पहिले खूब सुखावें और फिर उसे घास की खाद की तरह गड़हे में भर कर मिट्टी से ढके और ऊपर से पानी दे देकर सड़ावें। गमले के झाड़ों को तथा बियाड़ को इस खाद से बड़ा फ़ायदा होता है।

२६—जादू अर्थात यदुरेशा—यह भी सिंवारकी जाति है। यह खाद ऐसी उत्तम है कि विना मिट्टी के संयोग भी इसमें पौदे और क़लम लगाये जाते हैं व बीज बोये जाते हैं इसी से इसको "जादू" कहते हैं। मामूली सिंवार की तरह यह खाद भी बनाई जाती है पर हाथी की लीद मिलाकर खाद बनाने से इस का गुण अधिक होता है। यह खाद हर तरह की फ़सल को उपकारी समझी जाती है और इस को अधिक उपयोगी बनाने की बहुत सी विधियां हैं परन्तु सब जगह इसका व्यवहार नहीं है इस कारण इसका विशेष वर्णन नहीं किया जाता।

२७—पालाई की खाद यह खाद की गिनती भी अच्छी खादों में है। पालाई को अङ्गरेज़ी में फर्न (Fern) कहते हैं। पालाई की जड़ पत्ते और डण्ठल सुखाकर कूट लिये जाते हैं और फिर सड़ाकर खाद बनाये जाते हैं। यह खाद हर फ़सल में उपकारी होती है। इस खाद के संयोग से मिट्टी भुरभुरी हो जाती है।

२८—जलशोला—यह एक प्रकार का पौदा है जो जल में होता है। इसके डण्ठल बड़े हलके होते हैं। विवाह इत्यादि में इसके डण्ठल से मौर बनता है। इसके कुछ खिलौने भी बनते हैं। इसी जलशोला से उत्तम प्रकार की खाद भी तैयार होती है जो किसानों का बड़ा उपकार करती है। इसकी डाल और पत्ती जल्दी सड़ जाती है पर डन्टल के सड़ने में कुछ देरी लगती है। छोटे छोटे तालाब या नहरों में यह

उगता है बरसात के दिनों में इसे इकट्ठा करने से विना दाम अच्छी खाद हांथ लग सकती है।

२९—बरसाती काई—काई सड़ जाने से बहुत अच्छी खाद होती है। काई को ज़मीन पर फैलाकर जोत देना चाहिये। काई मिट्टी में मिलकर भूमि को खूब उपजाऊ कर देती है। इस खाद में भी किसान का कुछ ख़र्च नहीं है।

३०—मंदार या मदार की खाद—मदार एक बहुत प्रसिद्ध वनस्पति है, इसको किसी किसी देश में आक भी कहते हैं। दिहातों में मदार बहुतायत से होता है पर सिवाय कुछ औषधियों के इसका और प्रयोग कोई नहीं करता। मालूम होता है कि किसान इसके गुण को भली भांति नहीं जानते नहीं तो इसका इस प्रकार अनादर न होता। मदार की खाद बहुत उत्तम होती है और इस देश में किसानों को विना मूल्य मिल सकती है। लङ्का आदि टापुओं में केवल खाद ही के निमित्त मदार की खेती किई जाती है। मदार की पत्ती, लकड़ी व छाल को सड़ाकर खाद बनाते हैं। मदार के पेड़ की हवा से भी आस पास के खेतों को बड़ा उपकार होता है। मदार के छाया से बहुत से पौदे खूब बढ़ते व फूलते हैं। इस देस में मंदार की खाद का प्रयोग नहीं है पर परीक्षा करने से मालूम हुआ है कि यदि मदारकी खाद काम में लाई जाय तो किसानों को बड़े सुलभ में उत्तम प्रकार की खाद हाथ लगेगी और खेती को बड़ा लाभ होगा।

३१—मदार की जड़—जिस प्रकार मदार से उपकार होता है वैसेही मदार की जड़ से भी लाभ होता है। मदार की जड़ का संग्रह किसान को अवश्य रखना चाहिये। ऊख, आलू मूंगफली प्रभृति के खेतों में दीमक अक्सर लग जाते हैं उनको दूर करने के वास्ते मदार की जड़ का चूरा पानी में घोलकर खेत में देना चाहिये।

३२—पलास या टेसू का फूल—संयुक्त प्रांत के दिहातों में पलास का फूल बहुत दिखाई देता है। इसे ढांक व छियूल भी कहते हैं। चैत व बैसाख के महीने में यह खूब फूलता है और सुहावना मालूम होता है। इस फूल की खाद बहुत अच्छी होती है। इसको सड़ाकर भूमि में छोड़ने से ऊसर ज़मीन भी खेती के योग्य हो जाती है। जो भूमि बड़ी निकम्मी हो उसमें पहिले ढांक के वृक्ष लगा दिए जाँय और जब वृक्ष खड़े हों उनके फूल व पत्तियां वहां गिर कर खूब सड़ने पावें तो ६ या ७ बरस में वह ज़मीन सुधर जायगी और वृक्षों को काट कर उनमें अच्छी खेती हो सकेगी। टेसू के फूल से शहद भी निकाली जाती है।

३३—नील के पौदों की खाद—नील का रंग निकालने पर जो डन्ठल बच रहते हैं उनकी खाद अति उत्तम होती है। इनका ढेर निमक देकर लगाना चाहिये जिससे गरमी के कारण इनमें से उपयोगी अंश जलकर निकल न जांय। निमक पड़ने से खाद का तेज़ भी बढ़ जाता है। नील का पुराना

बीज भी खाद के काम में लाया जाता है। नील को घोलकर पेड़ों में डालते हैं और अक्सर नील को वुकनी को भी खेत में भुरभुरा देने से फ़ायदा होता है। नील की खाद धान को बड़ी उपकारी होती है। कहावत हैः—

"जो तुम देव नील की जूठी, सव खादन में रहे अनूठी"।

३४-पाट के डंठल की खाद—पाट का डण्ठल भी सड़ जाने पर बहुत अच्छा खाद होता है पर इसके सड़ने में लग भग दो वरस के लगता है। इस लिये इसके डण्ठल के टुकड़े टुकड़े करके लोग खेतों में छोड़ देते हैं और वहां जानवरों और मनुष्यों से कुचल कुचल कर सड़ जाता है। जहां पाट सड़ाकर रेशा निकाला जाता है वहां की मिट्टी भी इसके संयोग से खाद वन जाती है। कड़ी ज़मीन के रेतीले ढेलों को फोड़ने के लिये पाट के डण्ठल डाले जाते हैं। इससे खेत की उपजाऊ शक्ति बढ़ जाती है अक्सर लोग पाट के डण्ठल को खेत में जमा करके जला भी देते हैं क्योंकि इसकी राख भी अच्छी खाद है।

३५—सन की खाद--जिस प्रकार पाट की खाद है उसी प्रकार सन की भी खाद लोग काम में लाते हैं। सन भी पाट की एक जाति हैं। अक्सर लोग खेतों में सन को खूब घना बरसात के आरम्भ में बो देते हैं और जब पौदे दो फुट के हो जाते हैं तब उस खेत को फिर से जात देते हैं। नतीजा यह होता है कि सन के पौदे खूब कुचल जाते हैं और पीछे पानी

बरसने से उसी खेत में भली भांति सड़कर खेत को बहुत मज़बूत बना देते हैं। कहावत है:—

"सन के डंठल खेत छिटावे, तिन ते लाभ चौगुनो पावे"।

३६—अलसी की खाद--पाट वा सन की तरह अलसी भी रेशा निकालने के लिये बोई जाती है। रेशा निकालने के बाद अलसी के डण्ठल को खाद के काम में लाते हैं। जैसे सनका डण्ठल वैसे ही इसको भी खूब सड़ाकर खेत में देते हैं। खेतों में हरी खाद देने के लिये भी अलसी बोई जाती है। रबी की खेती को इस खाद से भारी उपकार होता है।

३७—कार्क वृक्ष की खाद--कार्क या काग जिसका बोतल वगैरह का डट्टा बनता है सड़कर खाद का काम देता है। पर इस देश में यह खाद कम है और अधिक मूल्य की है इस कारण सब किसान इस खाद का प्रयोग नहीं कर सकते।

३८-उरद की खाद--उरद को पानी में सड़ाकर खाद के काम में लाते हैं उरद को सड़ने में एक महीने के लगभग लगता है। झाड़ों की क़लम वग़ैरह लगाने के लिये बड़ी उपयोगी खाद होती है।

३९--ऊख की खोई की खात—ऊख या पौंड़ा पेरने के बाद किसान इसे वैसे ही डाल देते हैं या जला देते हैं पर यदि इस की खाद बनाकर काम में लावें तो बहुत लाभ उठा सकते हैं। इस खाद बनाने की रीति यह है कि खोई के छोटे छोटे टुकड़े करके एक गड़हे में भर देवें फिर उस पर

शोरे का पानी छिड़क कर कुटे हुये कंकड़ बिछा देवें। इस प्रकार कई तह लगाकर खूब पानी डालें जिसमें सब खोई तर हो जावै। बाद को दूसरे चौथे दिन बीस दिन तक बराबर पानी देते रहें और फिर गड़हे की खोई को फावड़े से खूब ऊपर नीचे कर देवैं जब ज़रूरत हो खेत में डालकर जोत देंय। यह खाद दो महीना में तय्यार होती है और ऊख व कपास की फ़सल को बड़ी लाभकारी होती है।

४०—धान की भूंसी—धान की भूंसी जलाकर गोबर में मिला देने से उत्तम खाद बनती है। अकसर किसान लोग और खादों की तरह इसको भी सड़ाकर खाद बनाते हैं। आठ हिस्सा गोबर और एक हिस्सा धान की भूंसी की खाद मिलाने से गेहूं जौ ज्वार मकई वगैरह फ़सलों को लाभ होता है।

४१—थूहर की खाद—थूहर की पत्तियां और डालियां किसी काम में नहीं आतीं पर यदि इनको खूब कूटकर जिससे वे जल्दी सड जावें या फिर उग न सकें किसी गडहे में डालें और चार अंगुल मिट्टी की पुट बराबर देकर ऊपर से बन्द कर देंय और दो तीन बार पानी दे देवैं तो आठ या नौ महीने में इसकी खाद तय्यार हो जावैगी और जिस फ़सल में दिई जावैगी सब को फ़ायदा पहुंचावेगी। हाल के तजुरबे से मालुम हुआ है कि थूहर पशुओं के लिये एक अच्छा भोजन है।

५२--सनहिम्प अर्थात भिन्न भिन्न पौदों की खाद--जिस प्रकार फलीवाले वृक्ष पाट और सन की खाद उपयोगी होती है उसी प्रकार आलू के हरे पौदे, सलगम, धान, गोभी, गाजर, लहसुन आदि के डन्ठल व पत्ते खाद के काम में लाये जाते हैं। सन, पुआर, उड़द, अम्बाड़ी, तेवरा, मसुरी ये सब लम्बी फलीवाले झाड़ हैं। इनमें कोई तो बहुत कीमती हैं इससे उनकी खाद बनाने में बड़ा ख़र्च पड़ता है और कोई ऐसे हैं जो जल्दी से सड़ते नहीं इस कारण उसमें कठिनाई है। इसमें सब से अधिक उपयोगी और सस्ता सन है यह जल्दी और खूब बढ़ता है और सड़ भी जल्दी जाता है यद्यपि पआर इससे भी सस्ता है पर पहिले तो इस का जड़ समेत उखाड़ना कठिन है दूसरे वह जल्दी बढ़ता नहीं और सड़ने में भी बहुत समय लेता है। इन पौंदों की खाद देने की रीति यह है कि प्रथम वर्षा होते ही इनको खेतों में बो देवें और भादों तक अर्थात् फूल आवने के पहिले उखाड़ कर खेत में दबा देवें। रबी बोने के समय तक वे खूब सड़ जाते हैं। सड़ने पर खेत को दो तीन बार खूब जोत देना चाहिये जिससे वे मिट्टी में खूब मिल जांय। अथवा यह कि जिस खेत में रबी बोना हो उसी में इन को बोवें और महीने सवा महीने पर उस खेत को इन पौदों समेत खूब जोताई करें। किसानों को यह भी ध्यान रखना चाहिये कि जिस खेत में इस प्रकार की खाद का प्रयोग हो उस खेत में दूसरी

फ़सल वोने के पहिले कुछ चूना अवश्य दे देवें। इस प्रकार की खाद को ग्रीन मन्योर (Green Manure) अर्थात हरीद खाद कहते हैं।

४३—कुलथी या खुलत की खाद—हरी खादों में यह एक उत्तम प्रकार की खाद है। इसके जड़में कुछ ऐसे अंश है जो खेत की उर्वरा शक्ति को वढ़ा देते हैं यह पशुओं को भी खिलाया जाता है। इसके उगने के लिये अधिक वर्षा की ज़रूरत नहीं होती। इस कारण रवी की फ़सल कटने के वाद ही यह वोया जाता है और उससे कई फ़ायदे होते हैं एक तो यह कि हरी खाद और पशुओं का चारा हो जाता है दूसरे जहां यह वोया जाता है उस खेत की शक्ति वढ़ जाती है और तीसरे यह कि जेठ वैसाख की तपन से खेत वहुत सूखने नहीं पाता।

४४—सरसों—हरी खाद के वास्ते सरसों भी बोई जाती है।

४५—अरहर—कहीं कहीं हरी खाद खेत में देने के लिये लोग अरहर को खूब घनी वो देते हैं और जमने के वाद खेत को जोत देते हैं।

४६—अमिला—हरी खाद के सम्बन्ध में इस का भी कुछ वयान करना ज़रूरी है। किसानों को यह भली भांति मालुम है कि खेत में दूब और मोथा वड़ी वुरी वला है जहां यह जड़ पकड़ लेती है वहां इसका निकलना कठिन हो जाता

। सारे खेत में दूब और मोथा ही दिखाई देने लगता है ।
स घास को खेत से निकालने की सहज और एक पंथ दो
ाज की उपाय यह है :—जिस खेत में दूब बहुत हो उसके
ारों ओर कुछ ऊंची मेंड़ बांध देय और जब खेत में पानी
ूब भर जाय तो उसको ३ या ४ बार जोत देय फिर
ानी बरसै तो चार पांच दिन के बाद उसी प्रकार खेत को
फिर जोत कर छोड़ दे। बीच बीच में कड़ी धूप रहै तो इस
कार की दो ही जोताई काफ़ी होती है नहीं तो तीन या
चार दिन का अन्तर देकर कई बार जोताई करना होता है।
इसी को अभिला कहते हैं। अभिला देने से दो प्रयोजन सिद्ध
होता है एक यह कि खेत से दूब और मोथा निर्मूल हो जाता
है और दूसरे दूब और मोथा सड़कर उत्तम खाद हो जाता
है। ध्यान इस बात का रखना ज़रूरी है कि जब खेत में पानी
कम हो और जल्दी सूख जाने का डर हो तब खेत में अभिला
कभी न देवे। खेत से कासां और कुशा निर्मूल करने को
भी यही उपाय है।

४७—लकड़ी के बुरादे की खाद—लकड़ी के बुरादे को
सड़ाकर खाद के काम में लाते हैं और इसको अच्छी खादों
में गिनती करते हैं। लकड़ी का बुरादा जल्दी नहीं सड़ता
इसलिये किसानों को चाहिये कि बुरादे को पहिले पशुशाला
में बिछा देवें। इससे दो प्रयोजन सिद्ध होते हैं एक तो यह
कि शाला सूखा रहता है और पशुओं को सुख मिलता है
और दूसरा प्रयोजन यह सिद्ध होता है कि पशुओं के मूत्र

के सम्बन्ध से यह बहुत जल्द सड़ जाता है और उत्तम खाद हो जाता है। यह खाद बगीचों के वास्ते अच्छी समझी जाती है। बियाड़ वगैरह लगाने में बहुत फ़ायदा पहुंचाती है इस खाद से मिट्टी खूब भुरभुरी हो जाती है।

४८—पत्तियों की खाद—प्रायः जितने पेड़ हैं सब में साल में एक बार पतझड़ होकर नई पत्तियां निकलती है। गिरी हुई पत्तियां खाद के लिये बड़ी उपयोगी होती हैं। यदि ये पत्तियां हटाई न जांय और स्वयम् इधर उधर वायु के सम्बन्ध से फैलती रहें तो बरसात में सडकर भूमि में मिल जांयगी। और खाद का काम करेंगी। पर इस प्रकार पड़ी रहने देने में हानि है क्योंकि बहुत सी पत्तियां ऐसी जगह जाकर इकट्ठा हो जाती हैं जहां खाद की आवश्यकता ही नहीं है और बहुत सी पत्तियां पानी के साथ बहकर नदियों में जा मिलती हैं। इस कारण किसानों को चाहिये कि पतझड़ के समय इन पत्तियों को एक बड़े गड़हों में जमाकर लेवें और ऊपर से चार अंगुल मिट्टी से ढंक कर ऐसा प्रबन्ध कर देवें कि बरसात का पानी उस गड़हे में जा गिरै। पानी जाने से पत्तियां सड़ने लगेंगी और क़रीब ६ महीने में खूब सड़कर उत्तम खाद बन जावैगी। यह खाद हर फ़सल को उपकारी है पर फूल वाले वृक्ष तथा ऊख व सेम और गाजर को इस से विशेष लाभ होता है।

४९—पत्तियों की राख—दिहातों में पत्तियों को भर भूजा लोग भार में जलाने के लिये जमा कर लेते हैं। यह

भी पत्तियों का उचित प्रयोग है पर भार से निकली हुई राख वृथा न फेंकना चाहिये। क्योंकि पत्तियों की राख भी उत्तम खाद है। कहावत है:—

"गोबर राखी पाती सड़े, तब खेती में दाना पड़े"।

जब खेतों में कीड़े मकोड़े लग जाते हैं तब इस राख के छोड़ने से भारी लाभ होता है। राख की खाद धान उरद, सेम, परवल कद्दू बैंगन और लाल मिरच के लिये अच्छी होती है और प्याज़ तथा पोस्ता (अफ़ीम) के लिये तो यह मुख्य खाद है।

५०—पौदों और वृक्षों की राख—किसान इसे भी बहुधा खाद के काम में लाते हैं पर इसके विशेष हाल को न जानने के कारण प्रायः लाभ के बदले हानि उठाते हैं क्योंकि किसी राख में खार और किसी में चूने का हिस्सा अधिक होता है और वह खेत को जला देता है। इस कारण उचित यह है कि किसान ऐसी राखों का प्रयोग बहुत कम और समझ कर करें।

५१—नारियल की जटा की खाद—नारियल की जटा को यदि सड़ाकर खाद बनाई जाय तो बड़ा उपकार कर सकती है। क्योंकि इसमें भी वे तत्व हैं जो लकड़ी के बुरादे में पाये जाते हैं इसकी रेशा और बुकनी सड़ने पर गोबर की खाद की तरह फ़ायदा पहुंचाती है। धान व ऊख को इस खाद से लाभ होता है।

५२—सरसों की खली की खाद—बहुत कम किसान खाद में सरसों की खली का प्रयोग करते हैं। इसको केवल पशुओं के खिलाने के वास्ते रखते हैं। पर सरसों की खली भी उत्तम खाद है यद्यपि यह कुछ महंगी होती है तथापि इसका प्रयोग यदि धान, गोभी आलू परवल वा ऊख के के खेत में किया जाय तो किसान को नुकसान न रहैगा। ताज़ी खली पेड़में डालने से उसके तेज़ी से पेड़ों के सूख जाने का डर रहता हैं इस कारण इस को सड़ाकर खेत में देना चाहिये। यह १५ या २० दिन में सड़ती है और उस समय इसमें बड़ी दुर्गन्धि पैदा हो जाती है। सड़ाने के बाद सुखाकर बुकनी कर लेना अच्छा होता है, गन्ने वा मूंगफली के खेतों में जब कभी दीमक या लाल चींटे लग जाते हैं तब इसकी बुकनी के छिड़कने से बड़ा लाभ होता है। फल और फूल वाले वृक्षों के वास्ते भी सरसों की खली अच्छी खाद समझी जाती है।

५३—बिनौला की खाद—कपास के बिनौले की भी खाद बनती है। परन्तु इसकी खाद में उतना गुण नहीं है जितना सरसों की खली की खाद में होता है इस कारण यह सिद्ध किया गया कि रूई के बिनौले पशुवों को खिलाने से खाद के काम में लाने की अपेक्षा अधिक लाभ होता हैं। बिनौले की खाद मुख्य करके अनन्नास के लिये अच्छी समझी जाती है बिनौले का चूरा ऊख के खेत में भी छोड़ा जाता है।

५४—रेंड़ी की खली की खाद—इस खली को जानवर नहीं खाते अतएव सिवाय खाद के और दूसरा कार्य्य इससे सिद्ध नहीं होता। सरसों की नाईं रेंड़ी की खली सड़ाकर खेत में देना चाहिये। गन्ना और आलू व मूङ्गफली वगैरह की फ़सल को इससे बहुत ज़्यादा लाभ होता है। शलजम, गोभी और अदरक की यह मुख्य खाद है। चाह की खेती में भी यह खाद दी जाती है,

५५—नीम की खली की खाद—निमकौरी अर्थात् नीम का फल पेर कर भी तेल निकाला जाता है और जो पेरने से बच जाता है उसे नीम की खली कहते हैं। नीम की खली की खाद बहुत तेज़ होती है इस लिये इसको ज़्यादा न देना चाहिये और जिस खेत में नीम के खली की खाद दी जाय उस खेत में पानी ज़्यादा देना चाहिये। नीम की खली की खाद देने से खेत से दीमक चींटें वगैरह जन्तु बहुत जल्द भाग जाते हैं। आलू मूङ्गफली, गन्ना आदि फ़सलों में नीम की खली से विशेष लाभ होता है।

५६—तम्बाकू की डंठल—तम्बाकू के डंठल की खाद आलू व तम्बाकू की फ़सल के लिये बहुत लाभ दायक होती है

५७-तम्बाकू का चूरा भी अनन्नास के वृक्ष के लिये उत्तम खाद है। तम्बाकू का पानी देने से बैंगन (भांटा) को लाभ होता है।

खानिज खाद।

५८—शोरे की खाद—शोरे का चूरा खेत में फैलाकर जोत देना चाहिये यह गेहूं व तमाकू की फ़सल को उपयोगी है। शोरा मिली हुई मिट्टी अफीम की फ़सल को लाभकारी है। शोरा की खाद का फल बहुत जल्द दिखाई देता है पर राख वगैरह की तरह इसका असर ज़्यादा दिन तक खेत में नहीं रहता इस लिये शोरा को हर फ़सल में ज़रूरत के माफिक छोड़ना चाहिये। यदि खेत जोतने के पहिले शोरा न दिया गया हो तो बीज जम जाने पर भी शोरा ऊपर से छिड़क दिया जा सकता है पर इस हालत में खेत में पानी अधिक देने की ज़रूरत होती है याने कई बार खेत को खूब सींचना होता है। राख के साथ शोरा मिलाने में अधिक फ़ायदा हो सकता है। एक बीघा में २ मन तक शोरा छोड़ा जाता है। मट्टी से शोरा निकालने की विधि इस देश के लोनियों को खूब मालूम है॥

५६—सोडा की खाद—यह खाद ऊख में देने से फ़ायदा होता॥

६०—चूने की खाद—चूना भी खाद के काम का होता है चूना को खेत में डालने से वे पदार्थ जो पौधों के उपयोगी होते हैं जल्दी गल जाते हैं जिसे पौधे अपने जड़ों की द्वारा जल्दी खींचकर परवरिश पाते हैं। खेत में बोने के ६ महीने पहिले चूना १ बीघे में २५ सेर तक छोड़ना चाहिये। छीमी वाली फ़सलों को चूने की खाद से अच्छा लाभ होता है।

चूने को खाद देने की दूसरी रीति यह है कि परिमाण के अनुसार फूले हुये चूने को पानी में बुझाकर तथा गोबर और मिट्टी में मिलाकर गीला ही कुछ दिन हवा में रहने दे यदि ज़मीन कड़ी मटियार हो तो बहुत दिन तक हवा मे रखने की आवश्यकता नहीं है। बियाड़ लगाने या बीज छींटने के पहिले खेत मे डालना चाहिये १ बीघे के लिये १० या १२ मन ठीक है। निमक के साथ चूना देने से केला मूङ्गफली, नील, अरहर, उरद, चना, मूङ, आलू, व तमाकू आदि को उपयोगी है। चाह व पोस्ता (अफीम) की खेती मे चूना की खाद बड़े फ़ायदे की है।

६१—निमक की खाद—निमक का चूर्ण दूसरे खादों के साथ मिलाकर उस ज़मीन में देते हैं जिसमें खार का अंश बिलकुल नहीं है निमक को चूना के संग खेत में देने से फ़सल का भूसा बड़ा मज़बूत होता है। इससे बालियों के दाना भी मोटे हो जाते हैं शोरा के साथ निमक मिलाने से गेहूं की फ़सल को बड़ा लाभ होता है, निमक स्वयं नारियल गोभी, चुकन्दर आदि के खेतों को लाभकारी है। निमक की खाद देने से तम्बाखू की पत्तियां बड़ी और मोटी होती हैं। आलू में चिकनाहट आ जाती। निमक की खाद कपास को पाला से बहुत बचाती है। निमक पौधों के [illegible] से रोगों का नाश करता है और खेत के छोटे जन्तु भी इससे मर जाते हैं। समुद्र के निकट के देशों में निमक की खाद देने की आवश्यकता नहीं है।

६२—नोना या लोनही मट्टी—मट्टी की पुरानी दीवारों में जहां सफ़ाई नहीं होती अकसर नोना (लोना) लग जाता है यह भी खाद के प्रकार से खेत में डाला जाता है इससे लाल मिरचा ककड़ी व बैगन व कोहड़ा को विशेष लाभ होता है॥

६३—कोयले की खाद—कोयले के चूर को किसी और खाद के साथ देने से लाभ होता है। कोयला से पौदों के पत्तों का रंग अच्छा खुलता है और पौदों को पुष्टता भी पहुंचती है।

६४—तूतिया की खाद—खेत सींचने के समय जल में तूतिया मिला देने से खेत में के कीड़े मकोड़े भाग जाते हैं। और फ़सल को लाभ होता है॥

६५—हींग—यह बहुत मंहगी चीज़ है पर जब ऊख प्रभृति में कीड़े लगने लगें तब इसे पानी में घोलकर देने से कीड़े दूर होते हैं और फ़सल को लाभ पहुंचता है।

मिश्रित खाद।

६६—गुड़ की खाद—बिगड़ा हुआ गुड़ जो बज़ारोंमें सस्ता मिलता है लेकर खाद बनाना चाहिये। दूसरे प्रकार के खाद अर्थात् गोबर वगैरह की खाद के साथ मिलाने से फल वाले वृक्षों को लाभकारी होता है।

६७—साबुन के पानी की खाद—यह खाद भी बड़ी उपयोगी है गोभी आदि तरकारियों में दिई जाती है। ख़ासकर गमलों के छोटे २ पेड़ों को बड़ी लाभदायक है। मामूली

साबुन जिसे धोबी कपड़ा धोने के काम में लाते हैं पानी में घोलकर देने से फलों के वृक्षों के कीड़े और रोग दूर होते हैं। और पौदे बलिष्ट हो जाते हैं।

६८—खली के चूरे में गाय या बैल के पेशाब को मिला कर खाद बनाया जाता है। यह खाद गेहूं तथा जव को बहुत लाभ पहुंचाती है।

६९—गोबर व कूड़े में खारी निमक व कंकर का चूरा मिलाकर एक प्रकार की खाद तय्यार कि जाती है जो प्रायः रबी की कुल फ़सलों को उपयोगी होती है।

७०—एक मन कंकर के चूरा में गाय व भैंस का पेशाब व गोबर मिलाने से एक नवीन खाद तय्यार हो जायेगा। बोआई हो जाने के बाद यह खाद खेत में दिई जावे और सिंचाई का अच्छा प्रबन्ध किया जावे तो इस खाद से भारी लाभ होता है।

७१—कूड़ा करकट की खाद—जितना कूड़ा करकट घर का बटोरन वगैरह जिनको किसान नाचीज़ जानकर फेंक देते हैं उन सब में बहुत अनोखी खाद रहती है यदि इन्हीं कूड़ों को एक जगह अलग गड़हे में इकट्ठा करके सड़ावे तो गांव में सफ़ाई की सफ़ाई बनी रहे जिससे तन्दुरुस्ती रहेगी और बिना दाम सैकड़ों बीघे के वास्ते उत्तम खाद मिल जावेगी। इससे ज़्यादा सस्ती और दूसरी खाद नहीं हो सकती। कूड़े करकट १ वर्ष में सड़ जाते हैं और खाद को सुखाने से भुरभुरा और दुर्गन्ध रहित हो जाते हैं। बाग बगीचे तथा हर

प्रकार के फ़सल को इस खाद से बड़ा लाभ होता है। कू
करकट तम्बाकू कुमड़ा और खीरा को बड़ा लाभका
होता है।

७२—कसबा और शहरों के नाले—कूड़ा करकट की ख
के साथ इसका भी कुछ हाल लिखना ज़रूरी है बड़े ब
शहरों में या कसबों में जहां म्युनीसीपलेटी का इन्तज़ाम
वहां स्वास्थ (तन्दुरुस्ती) व सफ़ाई के ख्याल से बस्ती
गन्दा पानी बाहर गिराने के लिये नाले बने रहते हैं इन
नालों से कुल गंदा पानी व कुछ कूड़ा करकट व पेशा
वग़ैरह बहता है दिहातों में भी जहां कहीं बाज़ार या ब
मंडी होती है नाले बनाये जाते हैं। यह पानी बहुधा किस
नदी में या मैदान में जा गिरता है और वृथा नष्ट होता
उन किसानों को जिनके खेत के बीच या निकट से यह ना
बहते हों, चाहिये कि वे इसी पानी से खेत को सीचें। इ
से उनका दो कार्य्य सिद्ध होगा अर्थात एक तो खेत क
सिंचाई और दूसरी एक उपयोगी खाद का पड़ना। जह
कहीं यह खाद दिई गई वहां इसका फल बहुत अच्छा हुआ
है। जनाब मोरलेन्ड साहब भूतपूर्व डाइरेक्टर मोहक
कागज़ात देही व ज़िराअत लिखते हैं कि नाले के पान
से सींचने से बिला और कोई खाद दिये हुये एक खेत
साल में मकई आलू व तम्बाकू की तीन फ़सल बहुत अच्छ
तय्यार होती है। बड़े शहरों में कुछ लोग नाले के पानी

ींच कर आलू गोभी प्रभृति की खेती से भारी लाभ
ठाने भी लगे हैं।

७२—सेवट (Silt) की खाद—सेवट नदियों के किनारे
र्षा के बाद रहती है इनमें छोटी लकड़ी बहकर आती हैं
उनके सड़ने से भी उत्तम खाद हो जाती है। इससे ज़मीन की
पैदावार अच्छी होती है। इस खाद में विशेष गुण यह है कि
सिवाय उन चीजों के जो बोई जाती है दूसरे किस्म के पौदे
व घास नहीं जमते और निराई में बड़ी आसानी होती है
धान प्रभृति को यह खाद बड़ी लाभकारी है।

७४—सड़ी हुई मिट्टी की खाद में तूतिया मिलाकर खेत
में देने से भाड़ों के कीड़े मर जाते हैं और हर किस्म की
फ़सल को फ़ायदा पहुंचता है।; आम कटहल नारियल केला
लीची फालसा कपास संतरा आदि के वृक्षों को इससे बड़ा
लाभ होता है।

७५—मकान की मिट्टी—गिरे हुये पुराने मकान की
पुरानी मिट्टी में तूतिया मिला कर देने से गन्ना कटहल आम
और नारंगी की फ़सल को बहुत लाभ होता है।

७६—तालाब की कीचड़ की खाद—तालाब की कीचड़
भी बहुत अच्छी खाद है पर ताज़ी कीचड़ खेत में डालने से
मसलन नुक़सान होता है। कीचड़ में हड्डी का चूना
मिलाकर खाद देने से फल देने वाले वृक्षों को विशेष
फ़ायदा होता है तालाब की मिट्टी से लोना कलर दूर रहता है।

७७-खेत की मिट्टी को जलाना-कहीं कहीं खेत की मिट्टी को पत्ती वगैरह जमाकर जला देते हैं जिस से खेत के ऊपर की मट्टी कुछ जलकर खाद का काम देती है।

७८-सड़े गले फल व वनस्पतियां-जितने प्रकार के सड़े गले फल तरकारियां वगैरह हैं सब खाद के काम में आ सकती है। इनको वृथा न फेंकना चाहिए इनको खेत में डालने से भारी उपकार होता है।

७९-नैपाल देश में एक प्रकार की मट्टी होती है जिसमें खाद के सबगुण रहते हैं वह मिट्टी भी खेत में छोड़ने से बड़ा उपकार होता है।

८०-लोहे के चूरे-आज कल हिन्दुस्तान में लोहे की भट्ठियां भी हो चली है। इन भट्ठियों की जली हुई मट्टी और लोहे के जले हुये चूरे भी उत्तम खाद है। हड्डी की खाद की तरह इस खाद का गुण होता है।

अब पाठकगण को मालुम कि होगा कितनी खाद हैं जिनका प्रयोग वे सहज में कर सकते हैं और जिनके प्रयोग में उनको कुछ विशेष ख़र्च भी नही करना पड़ेगा। हां इन सब खादों के इकट्ठा करने में कुछ यत्न व चेष्टा करना तो अवश्य होगा। यदि वे इससे भी बचना चाहें तो आज कल के समय के अनुसार कुछ रसायनिक खाद का व्यवहार करलेंय। परन्तु इसमें भी उनको कुछ कृषि विज्ञान की आवश्यकता होगी। यह तो बहुत अच्छा है बिला इसके भली भांति खेती की

उन्नति नहीं हो सकती। अगर बहुत नहीं तो इतना ही जान लेना बहुत ज़रूरी है कि खेती का साधारण रसायन शास्त्र क्या है अर्थात पौदों के साथ मिट्टी हवा और जल का क्या नाता है। पौदों में कौन सामग्री पाई जाती है और साधारण वृक्षों में सार वस्तु क्या हैं और उनमें से वृक्षों के पालने पोसने वाली सार वस्तु किस प्रकार वायु व जल तथा मिट्टी के सम्बन्ध से पौदों को मिलती हैं।

वृक्ष में अङ्गार का जो अंश है उसका अधिक भाग हवा से मिलता है। अदृश्य रूप से कोयला हवा में मौजूद है। सूर्य्य के किरणों की सहायता से वह हवा से अलग होकर वृक्षों के पत्तों में आता है जहां वृक्षों के शरीर का निर्माण कारी रस बनता है। जल भी ऐसा ही उपकारी है और स्वयम् वृक्षोंका खाद्य भी है। परन्तु वायु तथा जल पर मनुष्यों का विशेष वश नहीं है। वायु तो सर्वथा दैवाधीन है और जल पहुंचाने के अर्थात् सींचने के जितने उपाय हैं वे सब सीमा भूत हैं।

इससे पौदों के पुष्ट करने और बढ़ाने की उपाय मट्टी के ज़रिये से ही होना सम्भव है। पैदावार बढ़ाने के लिये जानना चाहिये कि किस विशेष वस्तु के लिये खेत में कौन पदार्थ का रहना ज़रूरी है और यदि उनका अभाव और कम है तो हम कैसे पूरा कर सकते हैं।

अच्छी भूमि का एक हज़ार भाग लेकर रसायनिक यन्त्रों

के द्वारा उसके अंश को पृथक् पृथक् करने से मालुम होगा कि उसमें (१) पोटास १० भाग (२) सोड़ा २० भाग (३) चूना ४१ भाग (४) मग्नेशिया १ भाग (५) लोह ९४ भाग (६) एल्यूमिना (जो फिटकरी में रहता है) १४ भाग (७) फ़ासफ़रस (जो हड्डी में रहता है) ५ भाग (८) कारवोनिक एसिड (अङ्गार मिश्रित पदार्थ) ६१ भाग (९) सलफ्यूरिक एसिड (गन्धक मिश्रित पदार्थ) ९ भाग (१०) क्लोराइन (निमक का अंश) १२ भाग (११) सिलिका (वालू) ६०० भाग (१२) एमोनिया (नौसादर) १ भाग (१३) प्राणिज पदार्थ १२० भाग और (१४) जल १२ भाग रहता है।

किसी ख़ास फ़सल के लिये ज़मीन में इनमें से जो अंश अधिक रहना चाहिये और कम हैं या उसका क्षय हो गया है वह अंश खाद मिलाने से पूरा हो सकता है। रसायन शास्त्र के यन्त्रों के द्वारा मालुम हो जावेगा कि कौन सा अंश कम हो गया है और विज्ञानशास्त्र की सहायता से यह भी मालूम होगा कि किस फ़सल के वास्ते कौन से पदार्थ की आवश्यकता है। यही समझ कर खाद देने से खेती को वहुत लाभ होगा।

वहुधा सुनने में आया है कि खेत में भरपूर खाद देने पर भी अन्न की पैदावार अच्छी नहीं होती, इसका कारण क्या है? उचित प्रकार से खेत की जोताई करना, समय पर वीज वोना और उचित समय पर सिंचाई करना भी उत्तम

पैदावार के लिये आवश्यक हैं। इन तीनों में से कहीं एक में भी चूक हुई तो खाद का भी फल अच्छा नहीं होता।

अच्छी जोताई व गोड़ाई से नीचे की मिट्टी ऊपर आ जाती है और एक बड़ा फ़ायदा यह होता है कि ज़मीन की बहुत सी चीज़ें जो अपनी स्वाभाविक अवस्था में रहने से पौदों की जड़ से वृक्ष तक नहीं पहुंच सकतीं वे हवा के लगने से जड़ों के द्वारा वृक्षों में प्रवेश होने लायक हो जाती हैं। जैसे सोडा और पुटास जो पानी में अच्छी तरह घुल नहीं सकते लेकिन जब हवा के "आक्सिजन" व "कार्बोनिक एसिड ग्यास" के साथ मिलते हैं तब एक नूतन [illegible] कर पानी में घुल जाते हैं, इसी प्रकार "नाईट्रोजन" ([illegible]) जो हवा में बहुत ज़्यादा है लेकिन उस हालत में वृक्ष उससे लाभ नहीं उठाते। परन्तु वही जब आक्सिजन व हाईड्रोजन के साथ मिल कर नाइट्रिक एसिड बनता है तो वृक्ष उसे तुरन्त अपनी ओर खींच लेते हैं। इस कारण से जोताई खूब गहरी करना चाहिये। सिर्फ़ २ चार की हलकी जोताई से पैदावार कभी अच्छी न होगी। गहरी जोताई के लिये अच्छे हलों की भी ज़रूरत है पुराने चाल के देसी हल से जोतने में मेहनत बहुत पड़ती है पर लाभ उतना नहीं होता। इससे किसानों को चाहिये कि नवीन प्रकार के हलों का व्यवहार करें। इङ्गलैण्ड प्रभृति देशों के किसानों ने अनेक प्रकार के हल तैयार किये हैं जिनसे उनको जोताई में बहुत

सुविधा हो गया है। नये प्रकार के हलों में कानपुर का म्यस्टन हल इस देश के किसानों के लिये बहुत अच्छा है।

जोताई भी समय के साथ ही होनी चाहिये। आषाढ़ में वर्षा के आरम्भ होते ही खेत को एक बार अवश्य जोत देना चाहिये। कहावत है :—

"जो न वाहे अषाढ़ एक बार, फिर क्या वाहे बारम्बार"

मट्टी को नरम करने के लिये सिर्फ़ जोताई काफ़ी नहीं है जोताई के बाद मई भी देना चाहिये क्योंकि खेत के ढेलों का टूटना भी बहुत ज़रूरी है, कहावत है:—

"जो ढेले मोय तोड़ मड़ोर ताकी कुठिला ढूंगी बोर।
जो करेगा मेरी कान, ताके कुठिला आवे हान" ॥

जोताई के बहुत से ढंग हैं और हर एक प्रकार के जोताई के पृथक् पृथक् गुण हैं जिनका वर्णन किसी दूसरी पुस्तक में लिखा जायगा। यहां पर केवल इतना ही कहना बस है कि अच्छी पैदावार के वास्ते खाद के सिवाय अच्छी जोताई की भी ज़रूरत है।

दूसरी आवश्यकता समय पर बीज बोने की है। यदि बोने का समय निकल जाय और तब खेत में बीज डाला जाय तो अच्छी खाद और ठीक से जोताई का भी फल अच्छा न होगा। इस कारण किसानों को चाहिये कि खेत में बीज डालने में देरी न करें बीज छोड़ने के वास्ते कहावत है:—

"कातिक तेरह तीन अषाढ़, जो चूका तो बिया न भार"

अर्थात् पहिली वर्षा के बाद ही तीन दिन के अन्दर अषाढ़ में खेत बो देना चाहिये। इसी प्रकार कुवार की वर्षा समाप्त

होते ही कार्तिक में तेरह दिन के अन्दर चौमस को बो देना ज़रूरी है।

नक्षत्रों के हिसाब से भी सब चीज़ों के बोने का समय नियत है (जैसे 'चित्रा गेहूं आद्रा धान') और बहुधा किसान इन पर अमल भी करते हैं। कहावत है :—

"पुष्य पुनर्वसु बोवे धान, अश्लेषा जुन्हरी परमान।
मघा मसीना बोवे रेल, तबर्दांज पर हल में ढेल" ॥

बीज भी जहां तक हो परिमाण के साथ खेत में देना चाहिये। कोई फ़सल घनी बोई जाती है और कोई थोड़ी बिखरी हुई बोई जाती है यदि उनके नियम के विरुद्ध बोआई होगी तब भी फल अच्छा न होगा। कहावत है :—

"सन घनो बन बीखरी मेढक फन्दे ज्वार।
पैंड़ पैंड़ पर बाजरा करै दरिद्दर पार" ॥
"छिदा भलो जब चना, छिदी भली कपास।
जिनकी छिदी ऊखड़ी उनकी छोड़ो आस" ॥

और भी कहा है :—

"हिरन छलांगन कांकड़ी, पग पग पै कपास।
जाय कहो किसान से, बोवै घनी उखार" ॥
"कदम कदम पर बाजरा दंग कुदैनी ज्वार।
ऐसो बोवै जो कोई, घर घर भरै कुठार" ॥

खेत में जो बीज पड़ता है वह भी परिमाण के साथ होना चाहिये यहां पर भी यही कहना है कि यदि किसान

सुविधा हो गया है। नये प्रकार के हलों में कानपुर का म्यस्टन हल इस देश के किसानों के लिये बहुत अच्छा है।

जोताई भी समय के साथ ही होनी चाहिये। अषाढ़ में वर्षा के आरम्भ होते ही खेत को एक बार अवश्य जोत देना चाहिये। कहावत है :—

"जो न वाहे अषाढ़ एक वार, फिर क्या वाहे वारम्वार"

मट्टी को नरम करने के लिये सिर्फ़ जोताई काफ़ी नहीं है जोताई के वाद मई भी देना चाहिये क्योंकि खेत के ढेलों का टूटना भी वहुत ज़रूरी है, कहावत है:—

"जो ढेले मोय तोड़ मड़ोर ताकी कुठिला दूंगी वोर।
जो करेगा मेरी कान, ताके कुठिला आवे हान" ॥

जोताई के वहुत से ढंग हैं और हर एक प्रकार के जोताई के पृथक् पृथक् गुण हैं जिनका वर्णन किसी दूसरी पुस्तक में लिखा जायगा। यहां पर केवल इतना ही कहना वस है कि अच्छी पैदावार के वास्ते खाद के सिवाय अच्छी जोताई की भी ज़रूरत है।

दूसरी आवश्यकता समय पर वीज वोने को है। यदि वोने का समय निकल जाय और तव खेत में वीज डाला जाय तो अच्छी खाद और ठीक से जोताई का भी फल अच्छा न होगा। इस कारण किसानों को चाहिये कि खेत में वीज डालने में देरी न करें वीज छोड़ने के वास्ते कहावत है:—

"कातिक तेरह तीन अषाढ़, जो चूका तो विया न भार"

अर्थात् पहिली वर्षा के वाद ही तीन दिन के अन्दर अषाढ़ में खेत वो देना चाहिये। इसी प्रकार कुवार की वर्षा समाप्त

होते ही कार्तिक में तेरह दिन के अन्दर चौमस को बो देना
ज़रूरी है।

नक्षत्रों के हिसाब से भी सब चीजों के बोने का समय
नियत है (जैसे 'चित्रा गेहूं आर्द्रा धान') और बहुधा किसान
इन पर अमल भी करते हैं। कहावत है:—

"पुष्य पुनर्वसु बोवे धान, अश्लेषा जुन्हरी परमान।
मघा मसीना बोवे रेल, तबदीजै पर हल में ढेल"॥

बीज भी जहां तक हो परिमाण के साथ खेत में देना
...हिये। कोई फ़सल घनी बोई जाती है और कोई चीज़
...री हुई बोई जाती है यदि उनके नियम के विरुद्ध बोआई
... तब भी फल अच्छा न होगा। कहावत है:—

"सन घनो बन बीखरी मेढन फन्दे ज्वार।
...ड़ पैंड़ पर बाजरा करै दरिद्दर पार"॥
...छेद्दा भलो जब चना, छिदी भली कपास।
...की छिदी ऊखड़ी उनकी छोड़ो आस"॥

...कहा है:—

...न छलागन कांकड़ी, पग पग रहे कपास।
...हो किसान से, बोवे घनी उखास"॥
...क़दम पर बाजरा बेंग कुदौनी ज्वार।
... जो कोई, घर घर भरे कुठार"॥

... बीज पड़ता है वह भी परिमाण के साथ
...ं पर भी यही कहना है कि यदि किसान

अपनी पुरानी परिपाटी का अवलम्बन करें तौ भी उनको हानि न होगी क्योंकि पुराने कहावतों के अनुसार जो परिमाण बीज के नियत हैं वे भी बहुत ठीक हैं नीचे लिखी हुई कहावतों से बहुत सी चीज़ों के परिमाण मालुम हो जांयगे।

"जव गेहूं बोवे पांच पसेर, मटर के बीघा तीसै सेर।
बोवे चना पसेरी तीन, तीन बीघा जुन्हरी कीन॥
दो सेर मोथी अरहर मास, डेढ़ सेर बीघा बीज कपास।
पांच पसेरी बीघा धान, तीन पसेरी जड़हन मान॥
डेढ़ सेर बजरा बजरी सवा, कोदों काकुन सोया बोवा।
दो सेर बीघा सावां जान, तिल्ली सरसों अंजुरी मान॥
बरैं का दो सेर बुआवो, डेढ़ सेर बीघा तीसी नावो।
इहि विधि से जब बुवै किसान, दूने लाभ की खेती मान"॥

तीसरी आवश्यकता समय पर सिंचाई करने की है यदि इसमें किसी प्रकार चूक हुई तो सारी मेहनत वृथा हो जाती है। इसलिये किसानों को चाहिये कि यदि उनके अनुभव से वर्षा होने में कुछ देरी मालुम हो और बोये हुए खेत को जल की आवश्यकता हो तो उस समय वर्षा को न परखें कुएं तालाब या नहरों से जैसा सुविधा हो खेत अवश्य सींच देय। वर्षा की आगमन का अनुभव, नक्षत्रादि की चाल तथा वायु परीक्षा व मानसून से होती है पर यह बड़ा गूढ़ विषय है इस कारण वर्षा विचार तथा सिंचाई के प्रकार का विशेष वर्णन किसी और पुस्तक में अलग से किया जायगा।

॥ इति ॥

काश्तकारी और आवपाशी के काम के लिये बहुत मवज़ूं

मानो वेन सेंट्रिफ्यूगल पम्प ।

मारे कारख़ाने में ये पम्प हमेशा तय्यार हैं मंगाने से शीघ्र भेजे जाते हैं

ये पम्प कई नाप और दाम के हैं जो नीचे लिखे हैं ।

पम्प के साइसन व दहाने की मोटाई	प्रत्येक मिनट इतने ग्यालेन पानी निकलता है	दाम कलकत्ता के रेलवे स्टेशन तक	
		दाम लोहेके पर्जेवाले पम्प का	दाम तांबे के पुर्जे वाले पम्प का
२ इञ्च	६० से ११० तक	१७० रुपया	१८३ रुपया
३ ,,	१४० से २१० तक	२१० रुपया	२२५ रुपया
४ ,,	२५० से ४०० तक	२६० रुपया	२८० रुपया
५ ,,	४०० से ६०० तक	३५० रुपया	३८० रुपया
६ ,,	७०० से ९०० तक	३८५ रुपया	४२५ रुपया
पम्प के दाम में ज़रूरी सामान पुल्ली. नीचे का प्लेट बोलटू वगैरह शामिल है			

हमारे पम्पों से ७० फीट उंचाई तक पानी खींचा जाता है फ़ेहरिस्त तथा और हाल पूछने के लिये 'वालेस हाउस नं० ५ बैंक शैल स्ट्रीट कलकत्ता में–माथर व प्लाट लिमिटेडके कारख़ानाको लि-

WALLACE HOUSE, NO. 5 BANKSHALL STREET

सूचना

कृषि उपयोगी पुस्तकमाला की दूसरी संख्या "लाख की खेती" तय्यार है और बहुत शीघ्र छपकर प्रकाशित होगी।

पुस्तक मिलने का पता—

राधारमण त्रिपाठी.

नयहरी महल्ला, इलाहाबाद।

छापे उपयोगी पुस्तकमाला—संख्या ६

... की खेती

लेखक—

ठाकुर रामनरेशसिंह

मूल्य चार आना

कृषि उपयोगी पुस्तक माला-संख्या ३

धान की खेती
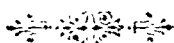
लेखक

श्रीमान् ठाकुर रघुनाथसिंह साहब बहादुर
ताअ़ल्लुक़दार आनरेरी मजिस्ट्रेट व आनरेरी मुन्सिफ
ईशनपुर ज़िला प्रतापगढ़ (अवध) के
सुपुत्र

श्रीमान् ठाकुर रामनरेशसिंह साहब

प्रकाशक

राधारमण त्रिपाठी

कार्य्याध्यक्ष कृषिभवन, इलाहाबाद

इलाहाबाद :

बाबू विश्वम्भरनाथ भार्गव के प्रबन्ध से स्टैन्डर्ड प्रेस में छपी

१००० प्रति } सन् १९१६ ई० { मूल्य चार आना

कृषि-सम्बन्धी-पुस्तकें

जो हमारे यहां मिलती है

१–"खेती-वारी" पं. अनन्दीप्रसाद मिश्र लिखित ... २)

२–"अर्थशास्त्र-धनविद्या" प्रोफेसर बालकृष्ण लिखित १॥)

३–"वैज्ञानिक-खेती" हेमन्त-कुमारी-देवी लिखित ॥।≡)

४–"ईख और उससे राव व गुड़ बनाने की रीति" पं. गंगाशङ्कर पचौली लिखित ... ।-)

५–"दूध और उसकी उपयोगिता" पं. गंगाशङ्कर पचौली लिखित ... ... ।)

६–"खाद और उनका व्यवहार" गयादत्त त्रिपाठी बी. ए. लिखित ... ... ।)

७–"लाख की खेती" गयादत्त त्रिपाठी बी. ए. लिखित ।)

८–"धान की खेती" ठाकुर रामनरेशसिंह साहब लिखित ... ... ।)

कृषि-भवन, इलाहाबाद ।

निवेदन ।

गत वर्ष कृषि उपयोगी पुस्तक माला की पहिली संख्या "खाद और उनका व्यवहार" प्रकाश करने के समय प्रतिज्ञा की थी कि "यदि उससे लोगों का कुछ भी उपकार हुआ और उत्साह बढ़ा तो बहुत शीघ्र दूसरी संख्या तथा क्रमशः और संख्या प्रकाश होंगी" मैं इस समय बड़े हर्ष के साथ स्वीकार करता हूं कि जैसी आशा थी वैसाही फल हुआ और मेरा उत्साह इतना बढ़ा कि मैं इस पुस्तक माला की दूसरी संख्या "लाख की खेती" और तीसरी संख्या "धान की खेती" एक साथ प्रकाश कर रहा हूं आशा है कि हमारे प्रिय पाठक महाशय इन पुस्तकों को भी अवश्य अपनावेंगे और मेरे उत्साह को बढ़ावेंगे ।

इन दोनों संख्या के प्रकाश करने में भी मुझे विशेष सहायता कई एक बड़े बड़े व्यापारियों से मिली है जिनको मैं धन्यवाद देता हूं । पाठकों के उपकारार्थ इन लोगों ने अपने विज्ञापन इस पुस्तक में प्रकाश करने को दिया है । इन विज्ञापनों से पाठकगण को मालूम होगा कि संसार में कृषि की उन्नति कहां तक हुई और इस उन्नति के हेतु, काश्तकारी के अच्छे अच्छे सामान क्या हैं और कहां से सुलभ हैं । इन व्यापारियों के सन्तोष के लिये हम अपने पाठक महाशयों से प्रार्थना करते हैं कि इनको पत्र लिखते समय इस पुस्तक का नाम अवश्य लिख दें ।

जवहरी मुहल्ला
इलाहाबाद
ता० २५ मई १६१६

राधारमण त्रिपाठी
कार्य्याध्यक्ष कृषिभवन

समर्पण।

हमारे श्रीमन्महोदय प्रताप ताप तापित पर पुञ्ज प्रजा-प्रति पालक क्षत्रिय पद्म पुञ्ज प्रभाकर श्री राजा प्रताप बहादुरसिंह साहब सी० आई० ई० राजा किला प्रतापगढ़ को सदैव प्राचीन विद्याओं के प्रचार को अत्यन्त ही अभिलाषा रहा करती है जिस कारण प्रायः सभी सभ्यगण उत्साहित रहा करते हैं अतएव मैं अपने बाल मन्यानुकूल इस सुन्दतर प्रकाशित पुस्तक को चरण समीप में समर्पित करता हूं।

रामनरेशसिंह।

धान की खेती ।

धान के गुण ।

महाशालिः स्वादुर्मधुर शिशिरः पित्तशमनो ।
ज्वरं जीर्णदाहं जठररुजम् चाऽपिशमयेत् ॥
शिशूनांयूनां वा यदपि जरतां वा हितकरः ।
सदासेव्यः सर्वैं रनलवलवीर्याणि कुरुते ॥१॥

अर्थात्—उत्तम जाति का चावल मधुर (मीठा) स्वादिष्ट नर्म और ठंढा होने के सिवाय पित्तनाशक, जीर्ण, ज्वर, दाह (हृदय की जलन) उदर रोग शांति करनेवाला है बालक युवा (जवान) वृद्ध और दुर्बलेन्द्रियजनों को गुणकारी है। पाचन-दीपन और बलदायक है।

धान । (ORYZA SATIVA.)

संस्कृत में—शाली, रक्तशाली, कलम, पांडुक, शकुनाहृत, सुगंधक, कर्दमक, महाशाली, पुष्पांडक, महिष्मस्तक, दीर्घशूक, कांचनक, हायन और लोध्रपुष्पक इत्यादि नाम है अङ्गरेज़ी में Padd; हिन्दी भाषा में धान कहते हैं। प्राचीन इतिहास के हिन्दू आर्षग्रन्थों के देखने से पता चलता है कि धान की खेती इस देश में सृष्टि क्रम के साथ २ न्यूनाधिकता के साथ होती चली आई है और यह अनाज किसी दूसरे देश से यहां लाकर नहीं बोया गया। इसकी उपज का प्रारम्भिक स्थान यही देश है। इसी देश से ले जाकर विदेशियों ने अपने यहां प्रचार किया है।

खेती होने से पूर्व में यह स्वतः उपजाऊ (खुदरौ) था जैसा कि इस समय भी तिन्नी के नाम से तालावों के निकट उत्पन्न होता है और स्वतः उपजाऊ होने ही से इसे फलाहार कहते हैं। इससे सिद्ध होता है कि जिस समय मनुष्य का जीवन केवल मांस और फल, वनस्पति, कंद, मूलादि पर रहा होगा उस समय धान भी भोजन के काम में लाया जाता होगा। हिन्दू जाति में इसे ऐसा पवित्र माना है कि सम्पूर्ण पूजा में देवालयों, शुभ सगुन में चावल अक्षत के नाम से काम में आता है। अग्निहोत्र, श्राद्ध, तर्पण में पिंड दान इसी से होता है। (मनु० अ० ३ श्लोक २७४)

अपिनः सकुलेजायाद्योनो दद्यात्त्रयो दशीम्।
पायसंमधु सर्पिभ्यां प्राक्छाये कुंजरस्य च ॥१॥

अर्थात्—पितर प्रार्थना करते हैं कि हमारे कुल में कोई ऐसा उत्पन्न हो कि वह भादों की मघा नक्षत्रयुक्त त्रयोदशी के दिन अथवा हस्त नक्षत्र की पूर्व दिशा में छाया होते, घृत, शहदयुक्त खीर (चावल और दूध शकर से पका अन्न) से हमें तृप्त करें अर्थात् पिंडदान देते हुए ब्राह्मण भोजनादि करावे। इसी प्रकार मनु० अध्याय ८ श्लोक २५० में लिखते हैं कि राजा ग्राम देशादि की सीमा परीक्षार्थ धान की भूसी गुप्त रीति से नीचे भूमि में गाड़ दे। इसी भांति प्राचीन अनेक आर्य ग्रन्थों, में तथा वेदों, स्मृतियों, पुराणों, वैद्यक के चर्क सुश्रुत, वाग्भट्ट आदि ग्रन्थों में इसके नाम व कार्य गुण-लक्षण लिखे मिलते हैं। इसकी आदि उत्पत्ति-भविष्य पुराण के ४५वें अध्याय से इस प्रकार पाई जाती है कि जिस समय सूर्यनारायण अमृत पान करने लगे उनके मुंह से जो अमृत के बूंद पृथ्वी

पर गिरे उनसे तीन अमूल्य पदार्थ—दूध ऊख, और धान उत्पन्न हुये । यदि हम इस लेख को अलंकारिक भाषा के लेख मानलें तब भी हम को, इनके गुणों को देखकर यह स्वीकार ही करना पड़ता है कि दूध, ऊख, धान में जो बल-वीर्य कांति दायक, पालक पोषक आरोग्यता के गुण भरे हैं वह और अनाजों में कम पाये जाते हैं और यह गुण अमृत से कुछ कम नहीं हैं । और वेदों में इन तीनों का लेख यज्ञादि सम्बन्धी अनेक स्थल में पाया जाता है । विना इन तीनों के कोई यज्ञ पूर्ण नहीं होता । सविधि सेवन से मनुष्य को अमरत्व प्राप्त हो सकता है । सूर्यनारायण को भी वेदों में ब्रह्म ही कहा है—(आदित्यवर्णं तमसः परस्तात् । यस्यसूर्यं-श्चक्षुः तदेवआदित्यः इत्यादि ॥) आदित्य—सूर्य सब पर्यायवाची शब्द हैं और सूर्य ही द्वारा अन्न की उत्पत्ति होती है क्योंकि सूर्य की उष्णता से (प्रकाश-तेजी से) जल मेघ बनता है । मेघों की वर्षा से अन्न उत्पन्न होता है जैसा गीता अध्याय ३ में लिखा है और सारे पदार्थ विज्ञानवेत्ता भी एक स्वर से यही कहते हैं । इससे निर्णय होकर यह सारांश निकला कि परमात्मा ने जीवों के पालन पोषणादि के सारे अन्न अपनी शक्ति के आधार पर उत्पन्न किये हैं । यजुर्वेद के पुरुषसूक्त ऋग्वेद के हिरण्यगर्भ सूक्त से इसका पूरा पूरा प्रमाण मिल सकता है ।

धान की उपज—भारतवर्ष के अतिरिक्त चीन, जापान, काश्मीर, अफ़गानिस्तान, ब्रह्मा आदि देशों में भी धान बहुतायत से होता है. और अनाजों की अपेक्षा इसका ख़र्च भी इन देशों में अधिक है । हमारे देश में धान के खेतों का क्षेत्रफल लग भग पांच करोड़ ईकड़ के हैं अर्थात् खेती से ढकी हुई सारी भूमि का चतुर्थांश केवल धान ही की उपज के आधीन है । विचारने का स्थल है कि इस देश के लिये धान के खेती की

कितनी आवश्यकता है कि जब यहां का धान वर्ष भर को नहीं पूरा होता तो ब्रह्मा आदि से मंगाया जाता है।

यदि गेहूं का हिसाब लगाया जावे तो देश भर में ढाई करोड़ ईकड़ भूमि में बोया जाता है तिससे धान का बोया जाना द्विगुण है। यद्यपि संयुक्त प्रदेश आगरा, अवध में चावल कम खाया जाता है परन्तु बंगाल, बिहार, ब्रह्मा, दक्षिणी हिन्द में तो मनुष्यों का भोजन अधिकतर चावल ही है।

डारविन (Darwin) के मतानुसार जो अनाज जितना बहुतायत से बोया जाता है उतनाही बृहताकार क्षेत्रफल में उसको फैलने का सावकाश मिलता है। और उतनीही अधिक उसकी जातियां होती हैं।

धान की इतनी जातियां हैं कि जो प्रत्येक जाति का एक २ दाना भी एक बड़े घड़े में डाला जाय तो घड़ा भर जाय। सम्भव है कि इसमें कुछ अतिशयोक्ति भी हो तथापि बुद्धि स्वीकार करती है इस वास्ते कि रिपोर्ट्रान इका-नोमिक प्रोडेक्ट्स (Reporters of economic product's) ने धान की जातियों के सम्बन्ध में जो विशेष सफलता प्राप्त करके पुस्तक लिखी है उससे पता चलता है कि धान की नौ सहस्र ९००० जातियां ऐसी हैं जिनका उक्त महा-शयों को पूरा ज्ञान था। सम्भव है कि इनसे भी अधिक जातियां हों जिनसे वे अपरिचित हों अथवा उनके दृष्टिगोचर न हुई हों। धानों के नाम हिन्दी काव्यानुकूल यथार्थ में घटित होते हैं हिन्दी नाम चार कारणों से रक्खे गये हैं।

॥ दोहा ॥

अर्थात्—जाति, गुण, क्रिया और स्वयं उपजाऊ होने से धान के भेद पहिचाने जाते हैं। इनमें से अधिकतर विशेषता का परिचय वर्ण (रंग) सुगंध-स्वाद चावल के संगठन (आकार) और गुण के अनुसार रक्खा गया है। कुछ चावलों ही पर निर्भर नहीं है इस देश की प्राचीन प्रणाली थी कि छोटे से छोटे पदार्थ का भी नाम उसके गुण कर्म रूप को देखकर सार्थक रक्खा जाता था। उदाहरण में वाराही कंद व्याघ्री इन्हीं दोनों को लीजिये तो. वाराही कंद (रतालू) अनुमान में वराह (सुअर) के आकार की होती है व्याघ्री (कसाह) इस वृक्ष के फूलों का आकार खिलने पर शेरनी के दांतों के समान जान पड़ता है। इसी भांति धान की जातियों के नाम भी हैं। वांसमती, भांटाफूल, फूलपियासा, रानीकाजर, कनकजीरा, श्यामघटा, वादशाहपसंद और हंसराज आदि हैं जिनमें से कुछ जातियों का वर्णन किया जाता है शेष वहुत सी जातियों का परिचय पुस्तक की पिछली सूची में लिखा गया है।

भांटाफूल।

(श्लोक)

सुगंधशालिर्मधुरोति वीर्य्यदः।
पित्तक्षमाख्चं रुचिदाहशांतिदः॥
स्तन्यस्तुगर्भस्थिरताऽल्पवातदः।
पुष्टिप्रदश्चाल्प कफोवलप्रदः॥१॥

अर्थात्—सुगंधित, स्वादिष्ट, मीठा और वलकारक है। पित्त, थकावट, अजीरण, पेट की जलन को ५

कितनी आवश्यकता है कि जब यहां का धान वर्ष भर को नहीं पूरा होता तो ब्रह्मा आदि से मंगाया जाता है।

यदि गेहूं का हिसाब लगाया जावे तो देश भर में ढाई करोड़ ईकड़ भूमि में बोया जाता है तिससे धान का बोया जाना द्विगुण है। यद्यपि संयुक्त प्रदेश आगरा, अवध में चावल कम खाया जाता है परन्तु बंगाल, बिहार, ब्रह्मा, दक्षिणी हिन्द में तो मनुष्यों का भोजन अधिकतर चावल ही है।

डारविन (Darwin) के मतानुसार जो अनाज जितना बहुतायत से बोया जाता है उतनाही बृहताकार क्षेत्रफल में उसको फैलने का सावकाश मिलता है। और उतनीही अधिक उसकी जातियां होती हैं।

धान की इतनी जातियां हैं कि जो प्रत्येक जाति का एक २ दाना भी एक बड़े घड़े में डाला जाय तो घड़ा भर जाय। सम्भव है कि इसमें कुछ अतिशयोक्ति भी हो तथापि बुद्धि स्वीकार करती है इस वास्ते कि रिपोर्ट्रान इकानोमिक प्रोडेक्ट्स (Reporters of economic product's) ने धान की जातियों के सम्बन्ध में जो विशेष सफलता प्राप्त करके पुस्तक लिखी है उससे पता चलता है कि धान की नौ सहस्र ९००० जातियां ऐसी हैं जिनका उक्त महाशयों को पूरा ज्ञान था। सम्भव है कि इनसे भी अधिक जातियां हों जिनसे वे अपरिचित हों अथवा उनके दृष्टिगोचर न हुई हों। धानों के नाम हिन्दी काव्यानुकूल यथार्थ में घटित होते हैं हिन्दी नाम चार कारणों से रक्खे गये हैं।

॥ दोहा ॥

जात यद्रच्छा गुण क्रिया, नाम जो चार विधान।
शाल्य नाज उतपति विषे, ये हैं मुख्य प्रमान ॥१॥

अर्थात्—जाति, गुण, क्रिया और स्वयं उपजाऊ होने से धान के भेद पहिचाने जाते हैं। इनमें से अधिकतर विशेषता का परिचय वर्ण (रंग) सुगंध-स्वाद चावल के संगठन (आकार) और गुण के अनुसार रक्खा गया है। कुछ चावलों ही पर निर्भर नहीं है इस देश की प्राचीन प्रणाली थी कि छोटे से छोटे पदार्थ का भी नाम उसके गुण कर्म रूप को देखकर सार्थक रक्खा जाता था। उदाहरण में वाराही कंद व्याघ्री इन्हीं दोनों को लीजिये तो. वाराही कंद (रतालू) अनुमान में वराह (सुअर) के आकार की होती है व्याघ्री (कसाह) इस वृक्ष के फूलों का आकार खिलने पर शेरनी के दांतों के समान जान पड़ता है। इसी भांति धान की जातियों के नाम भी हैं। वांसमती, भांटाफूल, फूलपियासा, रानीकाजर, कनकजीरा, श्यामघटा, वादशाहपसंद और हंसराज आदि है जिनमें से कुछ जातियों का वर्णन किया जाता है शेष वहुत सी जातियों का परिचय पुस्तक की पिछली सूची में लिखा गया है।

भांटाफूल।

(श्लोक)

सुगंधशालिर्मधुरोति वीर्यदः।
पित्तक्लमाघ्नं रुचिदाहशांतिदः॥
स्तन्यस्तुगर्भस्थिरताऽल्पवातदः।
पुष्टिप्रदश्चाल्प कफोवलप्रदः॥१॥

अर्थात्—सुगंधित, स्वादिष्ट, मीठा और वलकारक होता है। पित्त, थकावट, अजीरण, पेट की जलन को कम करता

है, दूध को बढ़ाता, गर्भ को स्थिर रखता है । कुछ थोड़ासा कफकारी है और वीर्य को उत्पन्न करता है।

भांटाफूल का रंग स्याही लिये होता है। पौधा तीन चार फिट अर्थात् दो से ढाई हाथ तक ऊंचा होता है। इसको भांटाफूल इसलिये कहते हैं कि भांटा (बैंगन) के फूल के सदृश ही इसका सुगन्ध व रंग होता है। मटियार भूमि में बहुत होता है। गोबर की पुरानी पांस इसके लिये उपकारी है । इसकी सिंचाई भी और धानों की अपेक्षा कम करनी पड़ती है और इसकी फस्ल दूसरे धानों से दो तीन सप्ताह (हफ़्ता) पीछे पकती है। इसका चावल पुलाव के काम आता है बादशाहपसंद के तद्वत गुण में होता है । मशीन (यंत्र) द्वारा इसका चावल निकालने से बहुत कम टूटेगा एक वर्ष का पुराना बड़ा सुगंधित सफेद व स्वादिष्ट हो जाता है इसी प्रकार जितनाही अधिक पुराना होगा उतनाही उत्तम होगा। खेत में पकते समय इसकी सुगन्ध दूर २ तक फैल जाती है इस चावल का भाव आठ से दस रुपया मन और पुराने का दस से बारह रुपया मन का भाव तक हो जाता है। प्रति ईकड़ में पन्द्रह-बीस मन के लगभग उपजता है । और तीस सेर बीज प्रति ईकड़ खेत में पड़ता है। बहुत से लोगों का कहना है कि कनकजीरा और रानीकाजर यही है परन्तु मेरे विचार से यह नाम किसी और दूसरे चावलों के हैं जो इस प्रांत में नहीं होते इनका नामार्थ निकालिये तो कनक अर्थात् धतूरा के जीरा के समान जो रंग में हो अथवा जिस धान का जीरा कनक अर्थात् सोने के सदृश वर्ण में हो वह कनकजीरा कहलाता है। और रानीकाजर का भी आशय यह निकलता है कि रानी के नेत्रों में लगे हुये काजर के समान हलकी-महीनधारी कालीधारी वाला धान, और यह दोनों

लक्षण भांटाफूल से नहीं मिलते ऐसेही रमकजरा को भी समझना चाहिये कि जो मोटा कुआंरी धान होता है जिसमें मोटी २ कालीधारियां होती हैं।

श्यामघटा।

(श्लोक)

कृष्णशालिस्त्रिदोषघ्नोमधुरःपुष्टिवर्द्धनः ॥१॥

(राजनिघंट श्लोक १६३)

अर्थात् काला धान त्रिदोष वातपित्त-कफ को शांति करता, मीठा ,शक्ति, वल वर्द्धक है। यह धान और धानों से अधिक काला होता है। यहां तक कि खेत में इसके पके हुये पौधों का दृश्य वादल की काली घटा के समान दिखाई पड़ता है इसी से इसे श्याम घटा कहते हैं।

दो ढाई हाथ अर्थात् ३ से ४ फिट तक का ऊंचा इसका पौधा होता है। जब पानी वरस के निकल गया हो और कुछ वदली रह गई हो तो ऐसी दशा में इसकी हरियाली बड़ी मनमोहनी व सुन्दर लगती है। चावल कोमल और छोटा होता है जो कूटने में टूट जाता है। इससे पुलाव के योग्य नहीं रहता, पुराना होने पर वड़ा सफेद हो जाता है। नया चावल आठ रुपया और पुराना दस से वारह रुपया मन विकता है १२ से १५ मन तक एक ईकड़ में उत्पन्न हो जाता है और इतने ही खेत में ३० सेर से अधिक वीज नहीं लगता।

हिरस।

यह धान सफेदी लिये कुछ पीला होता है श्यामघटा के वरावर ऊंचा इसका भी पौधा होता है। चावल स्वादिष्ट है,

उपज अच्छी होती है जितनाही पुराना होगा सुगन्ध भी उतनीही अधिक होगी। सात से आठ रुपया मन नया और दस बारह रुपया मन पुराने चावलों का भाव रहता है और पन्द्रह से बीस मन तक एक ईकड़ में पैदा होता है इसकी पनेरी (बीड़) लगाने के लिये ३० तीस सेर एक ईकड़ के हिसाब से बीजे का धान छोड़ना चाहिये। दूसरे धानों की फस्ल से दो सप्ताह पीछे इसकी फस्ल काटनी चाहिये।

बोने की विधि।

धान की बोवाई कई प्रकार से होती है इसलिये कि हर जगह पर एकही तरह की भूमि व धान की जातियां और सींचने की सामग्री नहीं होती और यही कारण है कि खर-बूजे के समान इसके भी न्यूनाधिक देशकालानुकूल गुण पाये जाते हैं। जैसे कि तपोवन और देहरादून का बांसमती चावल अथवा पेशावार के आस पास और बाड़ का चावल स्थानीय गुण से सम्बन्ध रखते हैं। परन्तु जिस भांति साधारणतः धान बोया जाता है अब मैं सूक्ष्म रीति से वह उपाय वर्णन करता हूं।

धान की खेती करने का समय।

जब हम विचारते हैं कि धानों के बोने के लिये कौनसा मुख्य समय होना चाहिये तो उनके जाति भेद के कारण से समय का भी भेद पड़ जाता है जैसे कि कुआंरी धान वर्षा का प्रारम्भ होते २ जून (आषाढ़) लगते ही बोया जाता है। सितम्बर (कुंआर) महीना के भीतरही काट लिया जाता है। कातिकी धान आषाढ़ (जून) मास में बोकर कातिक मास (अक्टूबर) तक काट लिया जाता है। जैसे बांसमती और श्यामघोद इत्यादि।

अगहनी धान की बोवाई भी वर्षारम्भ होते ही हो जाती है आषाढ़ लगतेही इसे बो देते हैं फिर वर्षा से खेत भरजाने पर इसकी बीड़ जोलाई व अगस्त के बीच में लगाई जाती है और अगहन (नवम्बर) महोने में फसिल पककर ठीक होजाती है। इसमें भाटाफूल हिरंजन आदि की खेती होती है।

साठी वर्षारम्भ होतेही जून (आषाढ़) मास में बोया जाता है और श्रावण भादों दोही मास में कट जाता है। जेठी धान की भी एक जाति पाई जाती है जो बलिया ज़िला के आस पास बहुतायत से होती है। इसको जैसरिया कहते हैं इस धान की बीड़ फागुन मास (मार्च व फरवरी) में छिटका दी जाती है। इसके पौधे बहुत ऊंचे २ उठते हैं। एक ऐसी भी जाति है जो बोई नहीं जाती स्वयं उपजाऊ है जो तालावों, झीलों, नदियों के किनारे बहुत उत्पन्न होती है इसकी खेती नहीं की जाती, यह बहुत महंगा विकता है जो आषाढ़ व सावन में ३० से ५० सेर तक प्रति ईकड़ में उत्पन्न होता है इसे हिन्दू जन पवित्र व फलाहार के समान समझ कर काम में लाते हैं इसकी ऋतु भी कार्तिक मास तक में पूरी हो जाती है इसको तिन्नी व पसई कहते हैं।

बोवाई।

धान की बोवाई दो प्रकार से की जाती है एक तो छिटकवां बोकर-दूसरे बीड़ लगाकर। छिटकवां बोने में ३२ बत्तीस सेर बीज का प्रति ईकड़ ख़र्च है और बीड़ लगाने में भी बीस से पैंतीस सेर तक बीजा पड़ता है। बीड़ लगाने की रीति बहुत अच्छी समझी जाती है। अच्छी जाति के छोटे धानों में कम बीज का खर्च होता है। कुआंरीधान प्रायः छिटकवां बोया जाता है। अगहनी, कातिकी धान की बीड़

लगाई जाती है। अगहनी धान के भी थोड़े से ऐसे भेद हैं—जैसे बजरबोंग, करंगी, खाटेन आदि जो छिटकवां बोये जाते हैं। अब मैं पुराने किसानों की थोड़ीसी कहावतें जिनपर कि उनको पूरा विश्वास है सर्वोपयोगी समझ कर लिखता हूं। इनसे यह भी पता लग सकता है कि हमारे सीधे सादे पुराने किसान अपने खेती के काम में कैसे कुशल थे और वे कृषी के नियमों को पालन करना जानते थे।

कहावत—आद्रा धान पुनर बहु पैय्या।
गा किसान जो बोवै चिरैय्या ॥१॥
श्लेषा लाया टार बटार।
माघा लाया यह कानो सार॥
पूर्वा मांजिन लाया भैय्या।
एक एक धान मां नौ नौ पैय्या ॥२॥

भूमि निर्णय।

धान की खेती के लिये मटियार और बीजर भूमि अच्छी समझी जाती है। मटियार—वह भूमि है जिसमें तीन भाग चिकनी मिट्टी और एक भाग बालू होती है।

दोमट—वह भूमि कहलाती है कि जिसमें चिकनी मिट्टी और बालू सम भाग हो अर्थात् आधी २ हो।

बीजर—यह भी मटियार ही की एक जाति है इसमें बालु-वनस्पतियों का कोयला और चूने का कुछ भाग रहता है। ऐसी भूमि में धान की खेती अच्छी होती है और दूसरा नाज कम बोया जाता है।

पांस।

धान के खेत के लिये गोबर की पांस अधिक काम में

लाई जाती है। जोकि पुरानी इकट्ठा किई हुई होती है और नया गोवर भी डाला जाता है।

हड्डी को पांसों में सोपर फास्फोट आफ लाइम् Super Phasphate of lime या बे.न मील Bone meal बहुत अच्छी समझी जाती है। वनस्पतियों की पांस में ढसाह की पत्तियां और नीम की खली बड़ी गुणकारी है इन दोनों के डालने से हानि पहुंचाने वाले कीड़े भी मर जाते हैं। और धान के खेत में फिर कोई बीमारी नहीं फैलती।

जोताई।

कुआंरी धान के लिये जोताई बहुधा फसिल कट जाने के पश्चात् कर दी जाती है और उसी खेत में चना आदि बो दिया जाता है और चना इत्यादि कटने पर ज्योंही वर्षा प्रारम्भ हुई खेत में पानी भर कर जिसे लेव लगाना कहते हैं दो तीन बार जोताई करके कई बार सरावन (पटैला) कर देते हैं जब मिट्टी पानी में अच्छी तरह से मिल जाती है तब बीज बोते हैं। और अगहनी धान के खेत को बोने अर्थात बीड़ लगाने से कई सप्ताह पहिले जब खेत पानी से अच्छी तरह भरा रहता है दो २ बार जोत कर सरावन करते हैं। इसी प्रकार तीन चार बार करने से खेत की मिट्टी सड़ जाती है गांव वाले इसीको कनीसार कहते हैं। ऐसा करने के दूसरे दिन बीड़ लगाई जाती है। जोताई के तीन चार दिन पीछे मिट्टी बैठ जाती है इस कारण से यदि बीड़ लगाने में कुछ भी देरी होगई तो बड़ी कठिनता पड़ती है। पहिले दो बार वाट्स व मिष्टन Watts or Meston हलसे और चार बार देसी हलसे जोताई कर देना चाहिये। चारही पांच बेर सरावन भी करना योग्य है।

निकाई ।

कुंवारी धान में जो घास बहुत हो तो चार पांच बेर निराने की आवश्यक्ता पड़ती है। इसमें एक घास का पौधा जो धान के पौधे से रूप रंग में मिलता है और डंवर कहलाता है उसके निकालने की बड़ी आवश्यकता पड़ती है। इसलिये कि वह धान बहुत सा भोज्य पदार्थ पांस व भूमि से खींच लेता है और धान से अधिक बलिष्ठ होकर खेत को निर्बल कर देता है। धान के पौधे निर्बल हो जाते हैं अगहनी धान में निराई नहीं की जाती केवल किसी २ खेत से एक घास जिसे नरई कहते हैं निकालने की आवश्यकता पड़ती है यह घास बहुधा अगहनी ही बोये हुये धानों में पाई जाती है।

सिंचाई

कुंवारी धान के लिये इतनी सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती—हां, यदि वर्षा कम हुई तो अवश्यमेव एक दो बार सींचने की आवश्यकता है और कातिकी धान में भी सिंचाई की कम आवश्यकता पड़ती है हां अगहनी धान में अच्छी तरह वर्षा हुई भी हो तो एक या दो पानी दे देना चाहिये। और जो वर्षा कम हो तो चार पांच बेर तक सींचना चाहिये। धान की सिंचाई और दूसरे अनाजों की तरह नहीं होती किंतु खेत पानी से भर दिया जाता है और जब थोड़ा सा अंश पानी का भूमि में रह जाता है तो फिर सिंचाई कर दी जाती है। केवल उसी समय अधिक पानी देना होता है जब पहिले पहिल बोड़ लगाई जाती है। यह बात तो संसार में सभी जानते हैं कि सारे पदार्थ संसारी पानी ही के आश्रय है और फिर धान के लिये तो लोग मसल ही कहते हैं कि धान पान का पानी जान है, अमुक आदमी बिलकुल धान पान है। धान

पान दोनों ऐसे कोमल हैं कि अधिक पानी में सड़ जायं थोड़ी सी खुश्की (गरमी) पाते कुम्हिलाय जायं—

कवित्त ।

पानी बिन मोती को जौहरी खरीदे नाहिं पानी बिन सूघर सिरोही कौन काम की ॥ पानी बिन खेत रेत होत एक पलक माहिं पानी बिन दामिनी सोहाती नहीं श्याम की ॥ पानी बिन सरिता-सरोवर उड़ाय धूर पानी बिन कीमति गई हीरा से जामकी ॥ एरे निरवानी पानी राखियो जहांन बीच पानी के गये जिन्दगानी केहि कामकी ॥ १ ॥

परन्तु धान की खेती का तो निस्तार पानी ही पर है यों तो पानी बिना कोई वृक्ष भी अपना खाद्य पदार्थ पृथ्वी से नहीं खींचता है और न फूलफल सक्ता है—

धान के रोग ।

धान के पौधे में बहुत से रोग लग जाते हैं विशेष कर गंदी (जो एक प्रकार की मक्खी होती है) और चरका। इन दोनों से खेती को बड़ी हानि पहुंचती है।

चरका—एक प्रकार का कीड़ा है जो धान के पत्तों को खा लेता है और खेती को हानि पहुंच जाती है। खेत को इस कीड़ा से बचाने के लिये नीम की खली और रुसाध की पत्तियां छोड़ना लाभकारी है। बहुत बार के परीक्षा करने से यह भी सिद्ध हो चुका है कि तम्बाकू के डंठल पानी में औटा कर वह पानी खेतों में छोड़ने से यह कीड़ा नष्ट हो जाता है। रुसाह के पत्तों व नीम की खली से कीड़े नष्ट हो जाने के अतिरिक्त खेत को पांस का भी बड़ा भाग पहुंच जाता है।

गंदी—या गांदी बड़ी दुरगंध युक्त मक्खी होती है इसी

से गंदी (गंधी) नाम भी पड़ गया है। जैसे मच्छर मनुष्यों और पशुओं के शरीर में लग कर रक्त चूस लेते हैं वैसेही यह मक्खी भी धानों का वह अंश जिससे चावल की उत्पत्ति है चूस लेती है। पौधे में एक भी चावल नहीं रह जाता। इस कीड़े से सहस्रों बीघा धान के खेतों की क्षति भी होजाती है। इन मक्खियों के दूर करने का कोई मुख्य उपाय नहीं है। देहातों में किसान खेतों के पास रात को आग जलाते हैं।जिसमें बहुत सी मक्खियां आकर जल जाती हैं। आजकल इनके नष्ट करने को एक दूसरा उपाय कृषी विभाग कार्य्यालय से इस तरह निकला है कि (उपाय) हलके टाट का बारह फिट (४ गज) लम्बा तीन फिट (१ गज) चौड़ा ४५ इञ्च (१$\frac{1}{4}$ हाथ) गहरा जाल बनाया जाय एक जाल में तीस फिट (१० गज) के अनुमान से टाट लगता है। इतने टाट में १५ फिट (५ गज) लम्बा ४५ इञ्च (१$\frac{1}{4}$ गज) चौड़ा थैला बन सक्ता है इस थैले का मुंह लम्बाई की ओर खुला रहता है और मुंह के किनारों पर एक एक बांस बारह बारह फिट (४ गज) लम्बा लगा दिया जाता है। जिनसे जाल तना रहे किनारे की ओर डेढ़ २ फिट टाट बांस से निकला रहे जिससे जाल की चौड़ाई ३ फिट (१ गज) हो जाती है, इस जाल को खुले हुये मुंह की ओर से धान के खेत में घसीटने से भी मक्खियां जाल में फंस जाती हैं जीवित बाहर लाकर मार डाली जाती है यह काम प्रातःकाल से दस बजे तक करना चाहिये, जिस दिशा की वायु चलती हो उसके सामने से जाल लेकर चलना उचित होगा, कि जिसमें वायु के झोंके से जाल खुला रहे और वायु के वेग से कीड़े अधिकता से जाल में मर जांय, बहुत मनुष्यों का यह विचार होगा कि ऐसा करने से धान का फूल गिर जायगा फिर धान न पैदा हो सकेगा। परन्तु उनका यह निराभ्रम है

मेरे विचार से खेती को कोई हानि नहीं पहुंचती और एक जाल में २) दो रुपया की केवल लागत पड़ेगी और एक ईकड़ खेत के कीड़ों के दूर करने का काम यदि मज़दूरों से लिया जायगा तो उनकी मज़दूरी दस बारह आने होगी। इस बात का हां अवश्य विचार रखना चाहिये कि सब चक की मक्खियां जाल द्वारा निकाल डाली और नष्ट कर दी जावें कि जिसमें दूसरे खेतों से मक्खियां आकर शुद्ध किये गये खेतों पर न बैठ सकें, प्रायः इन मक्खियों से कातिकी धान को अधिक हानि पहुंचती है।

प्रयोग

समूचा धान खाने में प्राण घातक है, केवल पूजा आदि बाहरी कार्यों में काम आता है परन्तु जब इसके ऊपर का छिलका (भूसी) मशीन या देशी रीति से निकाल डाला जाता है तो फिर चावल भोजन में कई प्रकार से काम में आता है भून कर चबाते हैं, दूध में पका कर खीर बनाते हैं दाल के साथ पकानें से खिचरी कहलाता है अलग पकाने को भात (कहते हैं) पुलाव और कई प्रकार की मिठाइयां बनती हैं। संस्कृत में तंदुल, हिन्दी में चावल, फारसी में विरञ्ज, अर्बी में उर्जसमन तूरानी में करञ्ज और सुरियानी भाषा में इसकोरोजी कहते हैं भारतवर्ष के आधे से अधिक भाग में मनुष्यों का जीवन विशेष कर चावल ही पर निर्भर है। दीन दुखियों से लेकर धनवान तक सभी इसको रुचि से खाते है, पुराना चावल उत्तम होता है। कैमिष्टरी वेत्ता (chemists) एक मनुष्य ने चावल में जो ९ उपयोगी पदार्थों का अंश जितना २ है इस भांति लिखा है:—

१—पानी =(Moisture)	१०'०३'
२—एैलब्यूमीनाइड Albiminoids	७'४४
३—रेशः (रग-तार-भोत्तरा) Fibre	१'
४—नशास्ता Curbonydrates	७७'१४
५—चरवी (मेदा) Fat	२'=३
६—राख Ash	१'५६
	१००' ००

उपरोक्त लेख से विदित है कि चावल में राख और चरवो मज्जा का अंश कम है और नशाश्ता (खाद्य पदार्थ) अधिक। इसी कारण से यह एक बहुमूल्य उत्तम भोजन है। यूनानी हकीमों (वैद्यों) का यह मत है कि चावल स्वादिष्ट होने के अतिरिक्त प्यास को शान्त करता, शरीर में स्थूलता लाता है आंतों के घाओं को खराश और रक्तातीसार और पेट की ऐठन के रोगों (गुरदा मसाना के मरज़ों) को दूर करने में लाभदायक है। प्रकृति उष्ण (गर्म) और रूखी और कोई २ सर्द व रूखी समझते हैं। विशेष करके गर्म (पित्त) प्रकृति वाले को गर्म और वात (ठंड) प्रकृति वाले को ठंढ है •सर्दी करता है।

"धान के भेदों की उपक्रमणिका"

धान की उपज लाभ हानि-

नाम धान	समय-मास		प्रति इकड़ में बीज		ख़र्च प्रति इकड़		उपज प्रति इकड़ मन के हिसाब	
	बोने का	काटने का	म.	से.	रु.	अ.	धान	पयाल
दूधी	अषाढ़	कुंवार	१	५	१=	११	१२	१६
रमकजरी	,,	,,	१	५	१=	११	१२	१६
फूल विरंज	,,	,,	१	...	१=	११	११	१६
मोतीचूर	,,	,,	१	...	१=	११	११	१६
राम जवाइन	,,	,,	१	...	१=	११	११	१६
बगरी	,,	,,	१	५	१=	११	१२	१६
धौला	,,	,,	१	,,	१=	११	१२	१६
गुलावकली	,,	,,	१	...	१=	११	११	१६
आम घोद	आषाढ़ में बीज डालकर श्रावण में बेड़ लगाई जाती है।	कुंवार अगहन मास में।	...	३०	१९	३	१=	१६
काटन			...	३०	१८	३	१६	१६
हंसराज			...	३०	१९	३	१=	१६
सुखदास			...	३०	१९	३	१६	१६
दिलबखशा			...	२५	१=	११	१६	१६
जोगिनिया			...	३०	१९	३	१६	१६
अझूवा			...	३०	१९	३	१६	१६
ढकी देसी			१	२४	१=	११	९	१६
बाघर बारी			,,	,,	१=	११	९	१६
महकी देसी			,,	,,	१=	११	८	१६

सम्बन्धी अनुमानित उपक्रमणिका

धान का मूल्य प्रति मन		पयाल का मूल्य		कुल मूल्य		लाभ		विशेष दशा
रु.	अ.	रु.	अ.	रु.	अ.	रु.	अ.	
२	८	३	...	३४	...	१५	५	
२	८	४	...	३४	...	१५	५	
२	४	४	...	२८	१२	१०	१	
२	४	४	...	२८	१२	१०	१	
२	८	४	...	३१	८	१२	१२	
२	८	४	...	३४	...	१५	५	
२	४	४	...	३१	...	१२	५	
२	१२	४	...	३४	४	१५	९	
२	१२	४	...	५३	८	२४	५	
२	८	४	...	४४	...	२४	१३	
२	८	४	...	४९	...	२९	१३	
२	८	४	...	४४	...	२४	१३	
२	८	४	...	४४	..	२५	५	
३	...	४	...	५२	...	३२	१३	
२	८	४	...	४४	...	२४	१३	
२	४	४	...	२४	४	५	९	
२	८	४	...	२६	८	७	१३	
२	८	४	...	२६	८	७	१३	

धान की उपज लाभ हानि सम्बन्धी

नंबर	नाम धान	समय-मास		प्रति ईकड़ में बीज		[illegible]		उपज प्रति ईकड़ मन के हिसाब	
		बोने का	काटने का	म.	से.	रु.	आ	धान	पयाल
१९	सांठा	आषाढ़	कुंवार	१	२४	१=	११	९	१६
२०	करमोह			,,	,,	१=	११	,,	१६
२१	धानी			,,	,,	१=	११	,,	१६
२२	डवली जासी			,,	,,	१=	११	,,	१६
२३	नौरंगी			,,	,,	१=	११	=	१६
२४	घंसमटरी			,,	,,	१=	११	,,	१२
२५	लुहटमटरी			,,	,,	१=	११	,,	१६
२६	जगनाहन			,,	,,	१=	११	,,	१६
२७	जगनाहन			,,	,,	१=	११	,,	१६
२८	गजराज			,,	,,	१=	११	,,	१६
२९	गौदा	ज्येष्ठ	अगहन	,,	,,	१=	११	९	१२
३०	ललहा			,,	,,	१=	११	,,	१६
३१	डलौसा			,,	,,	१=	११	,,	१६
३२	वावरफुही			,,	,,	१=	११	=	२०
३३	घुंघुवार			,,	,,	१=	११	९	१६
३४	दलोजरा			,,	,,	१=	११	=	१६
३५	सम्हालु			,,	,,	१=	११	,,	१६
३६	समोखन			,,	,,	१=	११	९	१६
३७	कड़ी			,,	,,	१=	११	,,	१६

अनुमानित उपक्रमणिका

धान का मूल्य प्रति मन		पयाल का मूल्य		कुल मूल्य		लाभ		विशेष दशा
रु.	आ	रु.	आ	रु.	आ	रु.	आ	
२	८	२	४	२४	१२	५	१५	
२	८	२	४	२४	१२	५	१५	
२	४	४	...	२४	४	५	९	
२	४	४	...	२४	४	५	९	
२	४	४	...	२२	...	३	५	
२	४	३	...	२१	...	२	५	
२	४	४	...	२२	...	३	५	
२	४	३	...	१९	...	१	३	
२	४	३	...	२१		२	५	
२	४	४	...	२२	...	३	५	
२	८	३	...	२५	८	६	१३	
२	८	४	...	२६	८	७	१३	
३	...	४	...	३१	...	१२	५	
२	८	५	...	२५	...	६	५	
२	१२	३	८	२४	१२	६	१	
२	८	४	...	२४	...	५	५	
२	८	४	...	२४	...	५	५	
२	८	४	...	२६	८	७	१३	
२	८	४	...	२६	८	७	१३	

धान की उपज व लाभ हानि सम्बन्धी उपक्रमणिका जो

नम्बर	नाम धान	समय		खर्च		उपज पाउन्ड में		धान का मूल्य	
		बोने का	काटने का			धान	पयाल	रु०	आ…
१	बासमती	जेठ में इन सब की पौधें लगाई जाती हैं।	कुवार	४७	...	१६=०	४५=४	१२०	
२	हंसराज			४६	१०	१७०४	२५०=	१२१	
३	सम्हालू			४७	...	१३६=	४=००	=५	
४	श्याम घटा			४७	...	२१=४	=५६२	६१	
५	जोगिनिया			५०	६	१२४=	३=१६	५१	
६	बासमतो			४६	१३	१५३६	३२४४	१०६	
७	बासमती			४७	...	१=७२	६१४४	१३३	
८	बांसफूल			४५	२	२१६०	५७६०	१३५	
९	डुलुख्वानी			४७	...	१६=०	६५५२	१०५	
१०	कांची			४७	...	१३६=	६७३६	५७	
११	सी. बी. एस			४७	...	=६४	३३३६	३६	
१२	शकबोजी			४७	..	६९६	१०२०	३४	
१३	बहार			४७	...	६४०	१७७६	१२	
१४	देहुला			२९	६	१३२०	२=३०	५५	
१५	मतभोरी			२९	१३	७=०	२२=०	३२	
१६	सी. बी. एस			२९	३	७००	२०=०	२९	
१७	जासौं			२९	६	६४०	२१४०	२६	

प्रतापगढ़ कृषि फारम से सिद्ध हुआ है प्रति ईकड़ के हिसाब से

पयाल का मूल्य		कुल मूल्य		लाभ		हानि		विशेष दशा
रु०	आ०	रु०	आ०	रु०	आ०	रु०	आ	
६	६	१२६	६	८२	६	...	...	पीलीभीत का
५	३	१२६	१४	८०	४	...	...	,, ,,
१०	...	६५	८	४८	८	...	...	लोकल
१७	१४	१०८	१४	६१	१४	...	...	,,
८	...	५६	१५	६	६	...	...	,,
६	१३	११६	८	६६	११	...	...	तपोवन का
१२	१३	१४६	१	६६	८	...	...	देहरादून का
१२	...	१४७	...	१०१	१४	...	...	बंगाल का
१३	...	११८	१०	७१	१०	...	...	,,
५	११	६२	११	१५	११	...	...	बरौदा का
६	१५	४२	१५	...	...	४	१	,,
२	६	३७	२	...	...	६	१३	काशमीर का
३	११	१५	११	...	...	३१	५	,,
५	१४	६०	१४	३१	८	...	...	लोकल
४	११	३७	३	७	६	...	...	,,
४	५	३३	४	७	४	...	...	लोकल
४	६	३१	१	१	११	...	...	,,

साधारण तेल से चलनेवाले
इञ्जन
"क्रेटन का सिमी डाइरेक्ट भागल इञ्जन"
इस इञ्जन का काम सहूलियत के साथ होता है
इस इञ्जन से रसोई घर के यन्त्र, आटे की चक्कियां, चारा काटने की कलें, आबपाशी तथा सफाई करने वाले पम्प बहुत उत्तम प्रकार से चलाये जाते हैं
यह इञ्जन सादी बनावट का बहुत मज़बूत और किफ़ायत से काम करनेवाला है
गवांर भी इसको सरलतासे चला सक्ता है
३½ से लेकर १२० घोड़े की ताक़तवाले तक इञ्जन हर समय गोदाम में तय्यार रहते हैं
खेती के, रसोई घर के, आटा पीसने तथा पम्प वगैरह और ज़मीदारोंके घर रोशनी करने के कुल सामान—
के यहां मिल सकते हैं—पत्र व्यवहार का पता :—
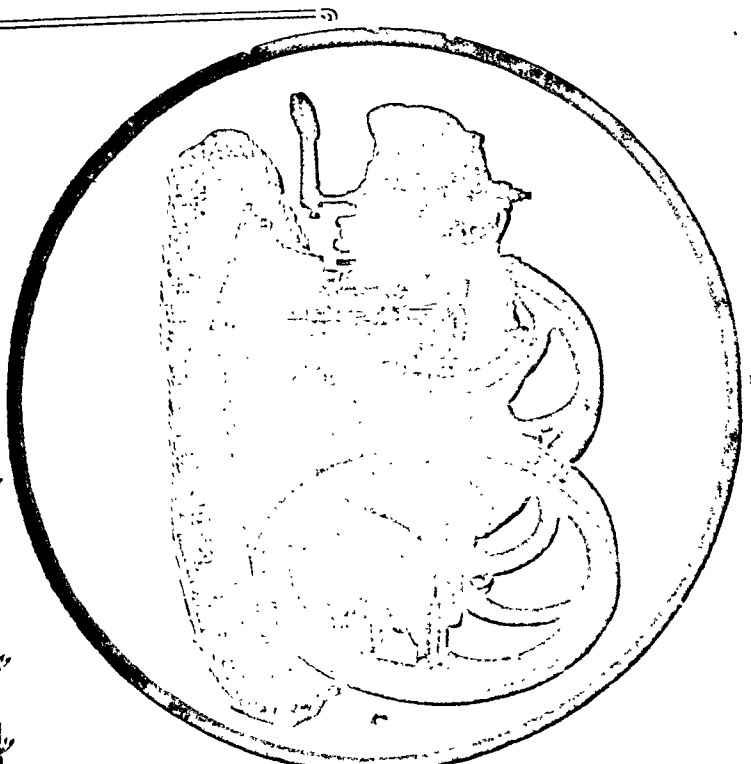
महाकवि-श्रीकालिदास-विरचित संस्कृत

ऋतु-संहार

(खण्डकाव्य)

हिन्दी-गद्य-पद्यानुवाद-सहित ।

अनुवादक

सुमति श्रीशिवप्रसाद पाण्डेय काव्यतीर्थ

(सेंट हेडपण्डित बेतियाराज एम० ई० स्कूल)

प्रकाशक

बाबू कृष्णप्रसादसिंह चौधरी

मनेजर पाटलिपुत्र पटना ।

पटना

एक्सप्रेसप्रेसमें बाबू श्यामनारायणसिंह-द्वारा मुद्रित।

सन् १९१७ ई०

प्रथमबार १०००]　　　　[मूल्य ।)
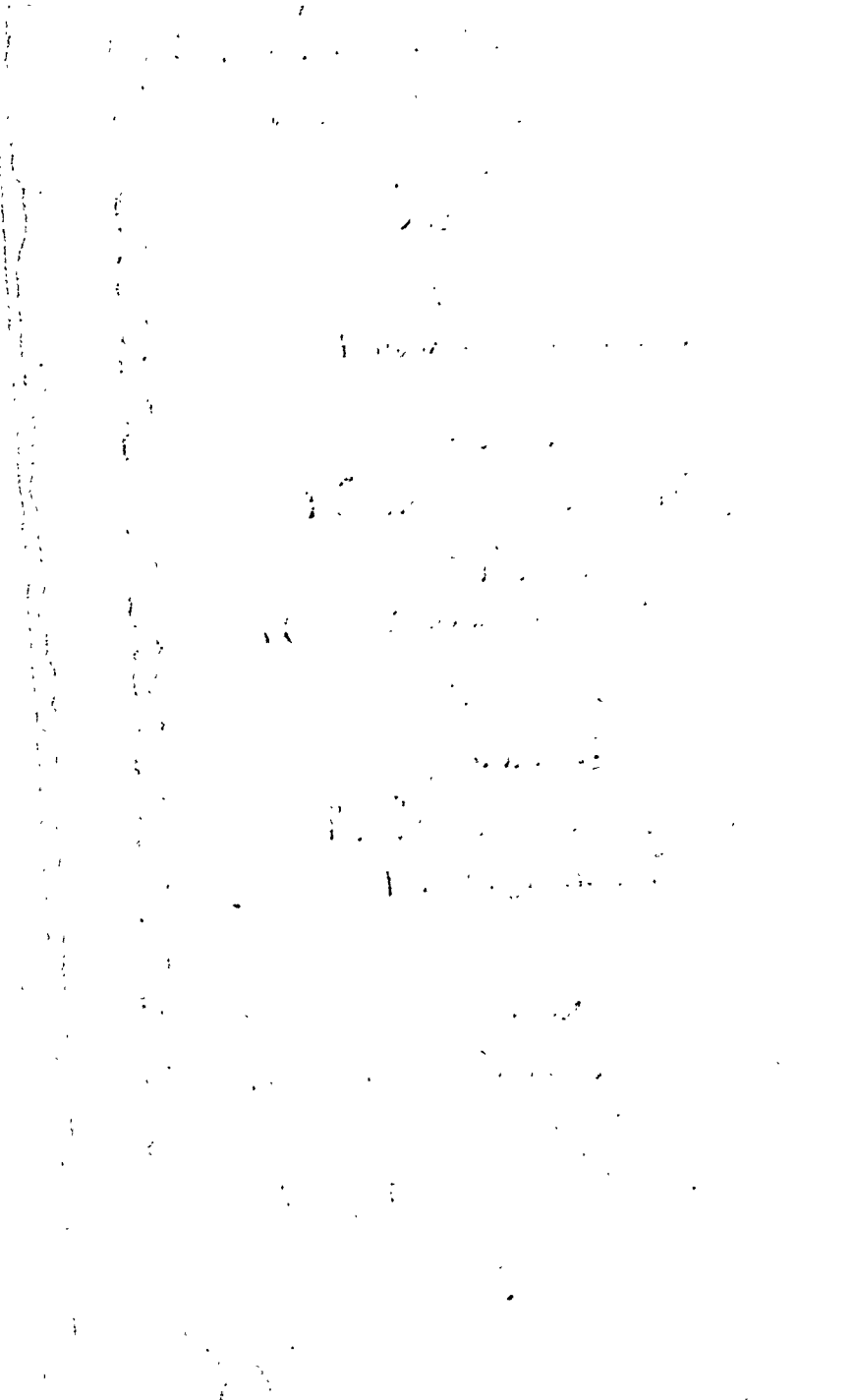
उपोद्घात ।

इसग्रन्थका नाम ऋतुसंहार है। ऋतुको उर्दू में मौसिम और अंगरेजी मे Season कहतेहैं। वह यद्यपि जाड़ा गरमी बरसातके भेदसे तीनही प्रकार की होतीहै, पर सूक्ष्मरूपसे एक वर्षमें चैत्र-आदि दो-दो मासकी वसन्त-आदि छः ऋतुएं होतीहैं। संहारका अर्थ यहां संग्रह या संक्षेप है। छओ ऋतुओंके संक्षिप्तवर्णनोंका संग्रह होनेसे इसका नाम "ऋतुसंहार" हुआ।

संस्कृत ऋतुसंहारके रचयिता महाकवि कालिदास हैं। आपको संसारका कौनसा विद्यानुरागी नहीं जानताहोगा? आपके बनाये जगत्प्रसिद्ध महाकाव्य, नाटक, खण्डकाव्य, लघुकाव्य, स्तोत्रादि आपकी कविताशक्तिके द्योतक हैं। श्रीमती भगवती जगदम्बा आपकी इष्टदेवता हैं। सप्तशती-चण्डीपाठमें भगवतीवाक्य है कि संसारकी सभी स्त्रियां मेरीही शक्तियां हैं—"स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु" इत्यादि। अतएव आपने नायिकावर्णनात्मक काव्य अनेक बनायेहैं। आपके नायिकावर्णनात्मक शृङ्गारतिलक-आदि ग्रन्थोंके अर्थ आध्यात्मिक और लौकिक दोनों पक्षोंमें होतेहैं। आपकी कविताओंपर लुब्ध हो किसीने कहाहै:—

"कालिदासकविता नवं वयो माहिषन्दधि सशर्करं पयः।
ऐणमांसमबला च कोमला सम्भवन्तु मम जन्म जन्मनि॥"

इति। उक्त महाकविने इस ग्रन्थके बहुतेरे श्लोकोंमें सम्बोध-

नात्मक "प्रिये" इत्यादि पदोंका व्यवहार कियाहै, जिसका अर्थ "हे प्यारी" इत्यादि होताहै। ऐसे ही सम्बोधन [illegible] श्रुतबोध और लोलिम्बराजमें भी किये हैं ; पर मैंने अनावश्यकता जान उन पदोंके अनुवाद नहीं किये। इस ग्रन्थकी भाषा क्लिष्ट न होनेके कारण इसके पदोंके पाठ अनेक प्रकारके देखेजातेहैं। बम्बईके निर्णयसागरप्रेसकी छपीहुई प्रतिके नोटमें बहुतसे पाठान्तर सन्निवेशित हैं। सब पाठोंको देख मैंने इसग्रन्थमें भद्दे अशुद्ध और अनुचित पाठोंको न रख सुन्दर शुद्ध और उचित पाठोंको ही रखाहै। इसके मूल श्लोकोंके ऊपर मैं नवीन छन्दोंके नाम भी देताआयाहूं।

काव्य कवितामात्रको ही कहतेहैं। इसके लक्षण रसगङ्गाधर साहित्यदर्पणादि ग्रन्थोंमें कईप्रकारसे वर्णित हैं। दर्पणकार कहतेहैं कि—"वाक्यं रसात्मकं काव्यम्"— अर्थात् अलौकिक आनन्ददायक वाक्यको काव्य कहतेहैं और पण्डितराज जगन्नाथका कथन है कि "रमणीयार्थ-प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्।" अर्थात् उत्तम अर्थको प्रगट करनेवाले शब्दसमूहको काव्य कहतेहैं। हिन्दीमें भी कहाहुआ है, यथा सुमतिविनोदे (चकिताछन्द) "वचन सरस माधुर्य व्यङ्ग्यवर उक्ति जुक्तिजुत। पदबिन्यासबिलास बिलक्षनःभूषनध्वनिजुत॥ सुवरनमय सदवनिता सी कविता बस आवै। तवै सुमतिकी छितिछोरनलों कीरति छावै॥" इत्यादि। किन्तु हिन्दी काव्यप्रभाकरकारने दर्पणकारके लक्षणकोही सर्वश्रेष्ठ मानाहै।

साहित्यसंसारमें "काव्य—" संज्ञक एक काव्यभेद भी होताहै। उसमें सर्ग नहीं होता, वह संस्कृत वा अन्य किसी भाषामें रचित रहता, उसमें वर्णनीय विषय एकही कोई रहता और वह मुख-प्रतिमुख-आदि सन्धिसामग्रियोंसे रहित होताहै (सा० द० सू० ५६३)

खण्डकाव्य वह कहलाताहै, जिसमें उक्त काव्य-नामक काव्यभेद वा महाकाव्यके लक्षण पूर्णरूपसे तो संघटित न हों, पर उनके लक्षणोंके कुछ अंश उसमें वर्णित होवें। इस ऋतुसंहारमें महाकाव्यके बहुतसे लक्षण संघटित हैं और बहुत से नहीं; अतएव यह खण्डकाव्य कहागया। ऋतुसंहार छः सर्गोंमें वर्णित है। इसकी प्रतियां असर्गबद्ध भी पाई-जातीहैं। इसके प्रथम पांचसर्ग प्रायः एक एक छन्द द्वारा समाप्त कियेगयेहैं। छठा सर्ग विविध छन्दोंमें वर्णित है। पद्यानुवादोंका क्रम भी लगढग ऐसाही है। नायक इसमें नागरिक युवजनोंके अतिरिक्त अन्य कोई प्रधान नहीं है, पर श्रीद्वारकाधीशके पुत्र विश्वविजयी अनङ्गदेवको नायक कहें तो किसीप्रकार कह भी सकतेहैं। इसमें शृङ्गाररस अङ्गी (प्रधान) और अन्य कई रस अङ्ग (अप्रधान) हैं। अर्थ (धन), धर्म, काम (सुखभोग), मोक्ष, इन चार पदार्थोंमें से तृतीय पदार्थकी प्राप्तिही इसका प्रधान फल है। इसके प्रति-सर्गान्तमें मङ्गलाचरणके श्लोक हैं। आरम्भके श्लोकमें भी वस्तुनिर्देश (ऋतुवर्णनारम्भ) रूपी मङ्गलाचरण प्रयुक्त हुआहै। उसके प्रथमचरणमें देवतावाचक सूर्यचन्द्र-शब्दोंका प्रयोग होनेसे उसका गणदोष परिमार्जित है। जगह जगह वनपर्वतादि वस्तुओंके वर्णन भी यथायोग्य सन्निविष्ट हैं। इसका तथा इसके सर्गोंके नाम विषया-नुसारही रखेगयेहैं। ये सभी लक्षण महाकाव्यके इसमें आगये हैं, महाकाव्यके और भी अनेक लक्षण विस्तरता-भयसे यहां नहीं लिखेजाते।

शृङ्गाररस इस काव्यका प्रधान रस है। विभाव (कारण) अनुभाव (कार्य) और सञ्चारी (सहायक) भावोंके संयोग-से परिपूर्ण होकर स्थायीभाव (प्रधान मनोविकारकी

रसवाज) रस (एक अनुभवनीय पदार्थ) बनजाताहै, जैसे कांजीआदि किसीप्रकारका विकार पानेसे दूध एक आस्वादनीय दधिका रूप धारण करलेताहै। किसी दूसरेके साथ मन मिलजानेसे जो प्रीति उत्पन्न होतीहै, उसे रति कहतेहैं (रतिशब्दके अर्थ औरभी होते हैं, पर यहां यही है)। रति ही शृङ्गाररसका स्थायीभाव है, शृङ्गाररसके आलम्बनविभाव नायक-नायिका हैं (पर जब भक्तिरसको भी शृङ्गाररसका अङ्ग मानने लगतेहैं, तब वहां भक्तके इष्टदेवही आलम्बन होतेहैं)। सखा सखी वन बाग आदिमें विहार इसके उद्दीपनविभाव, हाव भाव स्तम्भ लीला-आदि इसके अनुभाव और उन्मादआदि इसके सञ्चारीभाव हैं। श्रीकृष्णचन्द्रजी अधिष्ठातृदेवता और रङ्ग श्याम है। संयोग और वियोगके भेदसे यह रस दो प्रकारका होताहै। यह रस सब रसोंका राजा है, अतएव शृङ्गाररसात्मक वर्णन व्यास वाल्मीकि जयदेव जगन्नाथ भर्तृहरि तुलसी सूर केशव देव दास पद्माकर पजनेस विहारी रहीम सेवक हरिश्चन्द्र आदि महात्माओं और महाकवियोंके ग्रन्थोंमें भी विशेषरूपसे होताआयाहै।

काव्योंका महत्व और इससे लाभका वर्णन ग्रन्थान्तरोंमें बहुतप्रकारसे लिखाहुआ है यथा—"एकः शब्दः सुप्रयुक्तः सम्यग् ज्ञातः स्वर्गे लोके च कामधुग् भवति" इति व्या० म० भा०। "काव्यालापाश्च ये केचिद् गीतकान्यखिलानि च। शब्दमूर्तिधरस्यैते विष्णोरंशा महात्मनः॥" इति वि० पु०। "काव्यं यशसे ऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये। सद्यः परनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे॥" इति का० प्र०। "साहित्यसंगीतकलाविहीनः स्वयम्पशुः पुच्छविषाणहीनः। तृणन्न खादन्नपि जीवमान स्तद् भागधेयम्परमम्पशूनाम्॥" भ० ह०।

सवैया—"नृपके जसजूहसों अथ मिलै अरु धर्म सुनीति को पन्थ चलाई। जिय काम सुनायिकाकी सुखमा अरु मोक्ष मिलै हरिके गुन गाई ॥ चिरजीवी कहांलों कहैं सबसों इन आखर जोरिबेकी प्रभुताई। फल चारिहु होत संदेह विना तन आछत एक किये कविताई ॥" तथा कवित्त—"कैसे वालमीक सिद्ध होते कविताके विन, कैसे व्यास ईस यों विसेष सुखदाई है। सूर केसो तुलसी कबीर नान्हकहु कैसे जीवनमुकुत होते कीरति सुहाई है। कहै चिरजीवी मैं कहांलौं गुन गाऊं प्यारे कविताबिभूति चारो जुग चलिआई है। धर्म अर्थ काम मोक्ष चारो फलदाई ऐसी जगमनभाई धन्य धन्य कविताई है ॥" ल० चि० ॥

ऋतुसंहारके हिन्दी अनुवाद मुझे तीन देखनेमें आये। एक तो गद्यमें पं० कन्हैयालालमिश्र मुरादाबादी-कृत, जिसकी भाषा और अर्थ अधिकतर अस्पष्ट और अशुद्ध पायेगये। दूसरा साधारण पद्योंमें लाला सीताराम बी० ए० कृत, जिसकी भाषा और छन्दोंमें मौलिकता तथा अनुवादोंमें मूलके अनेक पद्यों और आशयोंका अभाव देखा गया। तीसराकवित्त-सवैयोंमें वावू देवनन्दन सिंह शिवहरी-कृत है, जिसमें सवैया-छन्द भी कवित्त ही के नामसे लिखे गये हैं। इसके कवित्तोंमें अनियत वर्णमात्राओं और वेमुहाविरे तथा मनगढ़न्त पदोंके प्रयोग अधिक हुए हैं, जिससे इनके अनूदित पद्य अरोचक एवं गौरवहीन देखे गये; अतएव एक अन्य अनुवादकी आवश्यकता हुई। उक्त वाबूसाहबके ग्रीष्मवर्णनानुवाद का पहला कवित्त यों है:—

"तरणिकर आतप प्रचण्ड तर जाहिमें, जासु पुनि चन्द्र रुचि रुचिर जग जान है। रजनि दिन मज्जन सुयोग जल जाहिमें पीवतमें शीत मनु अमियरसपान है। दिवसके अन्त

जहँ होत रमणीय पुनि शमित मनोज नृप थकित धनवान है। जगतमें आगत है कालसो विलोको प्रिया नाम है निदाघ सब ऋतुमहं महानहै ॥ १ ॥" सातवें श्लोक का अनुवाद यथाः— "ऊगत पसेननिके वुन्द सब अङ्गसन्धि भीजत रंगीन सारी भारी बहु मोलनकी। राखति उतारे तब अंगन से दूर तेजि रतिकी तयारी में न चाह करि लोचनकी ॥ पेन्हति महीन मीनकारीकी किनारी श्वेत सारी कुचमें ओहारि प्यारी पिक बोलनकी। ग्रीषमके ताप तातकालही निवारिदेत उन्नत उरोज उर लाइ प्रिय नौलनकी ॥" इत्यादि ॥

इस ग्रन्थका हिन्दी अनुवाद बाबू सोनासिंह चौधरी, प्र० सं० पा० पु० की आज्ञासे गद्य पद्य दोनोंमें कियागयाहै। तृतीयसर्ग नयी रौशनीवाले रसिकोंके मनोविनोदार्थ खड़ी बोलीमें और शेष पांचोसर्ग निखिलजनप्रिय प्राचीन पद्यभाषा (व्रजभाषा) में अनूदित हुएहैं। यथा काव्यनिर्णयेः— "भाषा व्रजभाषा रुचिर कहैं सुमति सब कोय। मिलै संसकृत पारसी पै अति प्रगट जु होय ॥" इत्यादि। उक्त व्रजभाषा-नियमानुसार पद्यानुवादोंमें ण श य व आदिके स्थानमें न स ज ब आदि रखनेकी चेष्टा कीगयीहै। अनुवाद मूलके अन्वयानुसार न लिख भावानुगत स्वतन्त्ररूपसे लिखा गया है। क्योंकि विना ऐसा किये आनुवादिक भाषामें मौलिकता वा रोचकता नहीं आती, विशेषतः संस्कृतके समासपूर्ण जटिल वाक्योंके अनुवादमें। इसका प्रथम ग्रीष्मवर्णन सर्व-जनप्रिय सवैयाछन्दोंके भेदोंमें, द्वितीय वर्षावर्णन तदुपयुक्त घनाक्षरीके भेदोंमें, तृतीय शरद् वर्णन खड़ी-बोलीके गीतिकाछन्दोंमें, चतुर्थ हेमन्तवर्णन पद्यप्रसिद्ध रोलाछन्दोंमें और पञ्चम शिशिरवर्णन रसिकजनप्रिय बरवै-छन्दोंमें वर्णित कियागयाहै। छठां वसन्तवर्णन उन्हीं

पूर्वोक्त छन्दोंमें लिखागयाहै। मधुरता मनोहरता और सारगर्भिता (भावव्यञ्जकता) आदिके कारण बरवै-छन्दको बहुत लोग छन्दःशिरोमणि कहाकरतेहैं, इस बातको खान-खाना रहीमकविने भी अपने नायिकाभेदके आरम्भमें स्पष्ट लिखा है, यथा—दो० "कवित कह्यो दोहा कह्यो तुलै न छप्पै छन्द। बिरच्यो यहै विचारिकै यह बरवैरसछन्द ॥" पर हां, बरवैछन्दके मध्यविरामोंपर भी जब एकएक दिहाती ढंगके सानुप्रास लहरिया किनगिया कोइलिया इत्यादिपद व्यवहृत किये जातेहैं तब वहां और भी सोनेमें सुगन्ध आजाताहै। अक्षर वर्ग और मात्राओंके द्वारा शब्दोंकी समताको अनुप्रास कहतेहैं, उसके विविध भेद अलङ्कार-ग्रन्थोंमें प्रसिद्ध हैं। इसग्रन्थके अनुवादमें लगभग सब प्रकारके अनुप्रासोंका व्यवहार कियागयाहै। यद्यपि श्रीतुलसी रहीम सेवक जगतसिंह आदिके—ग्रन्थ बरवैछन्दोंमें भी वर्णित हैं, पर उनमें सर्वत्र मध्यानुप्रास (प्रथम तृतीय विराममें परस्पर अनुरूपता) लानेकी चेष्टा किसीने नहीं की है। इस ग्रन्थके बरवैछन्दोंमें दिहाती शब्दों द्वारा मध्यानुप्रास लानेके लिये पूरी चेष्टा कीगयी है, यहांतक कि, कहीं कहीं उसके फेरमें पड़कर अनुवादमें मूलका अनुसरण-आदि भी छोड़देना पड़ा है। यद्यपि मेरे मित्रोंको इसके सवैया कवित्त और बरवै-छन्द औरोंकी अपेक्षा अधिक पसन्दपड़े हैं, पर मैं अपने मुंह अपने किसी पद्यकी विशेष प्रशंसा करना नहीं चाहता। इसके छन्द रस अलङ्कार ध्वनि व्यङ्ग्य पदविन्यास गुण दोषादि की विवेचना और अनुभव वे स्वयंही करलेंगे, जो कविताओंके मार्मिक रसिक और अनुभवी होंगे। क्योंकि—

"अधरस्य मधुरिमाणं कुचकाठिन्यं दृशोस्तथा तैक्ष्ण्यम्।
कवितायाः परिपाकाननुभवरसिको विजानाति ॥" किन्तु-

"तत्वं किमपि काव्यानां जानाति विरलो भुवि ।
मार्मिकः को मरन्दाना मन्तरेण मधुव्रतम् ॥" तथा चः—

भावत जिनहिं न मनवां, भामिनि-भाव ।
उचरत कवित-चितनवां, नहिं चित चाव ॥
विधिकृत ललित रचनवां, सो नहिं जान ।
का समुझै सुर तनवां, भईस नदान ॥

समस्त वाचकवृन्दसे सविशेष प्रार्थना यह है कि इस ग्रन्थकी छपाईमें मुद्रणादिजनित अशुद्धियां बहुत होगईहैं। अतएव इसके साथ इसकी दृष्टिगत अशुद्धियोंका शुद्धिपत्र लगा दिया गयाहै। जिसके अनुसार वे ग्रन्थ पढ़नेके पहले कृपया अशुद्धिसंशोधन अवश्य करलेंगे। आशा है, प्रवीण पाठकगण उक्त अनुवादोंको मूलसे मिलातेहुए विचारपूर्वक पढ़कर प्रसन्न हो मेरे परिश्रमको सफल करेंगे। मेरा स्थान—

दो० सुभ अस्थान महेन्दरू, पटना, सुरसरि तीर ।
तहां वसत सुमती सदा, सुमिरत श्रीरघुवीर ॥ इति शम् ।

पाटलिपुत्र-आफिस
पटना ।
विजया दशमी सं० १९७४

अनुवादक ।

श्रीगणेशाय नमः ॥

संस्कृत

॥ ऋतुसंहार काव्य ॥

हिन्दीटीकानुवाद सहित ।

ग्रीष्म (ज्येष्ठआषाढ़ ।)

(१)

(वंशस्थविलं वृत्तम्)

प्रचण्डसूर्य्यः स्पृहणीयचन्द्रमाः
सदावगाह-क्षत-वारिसञ्चयः ।
दिनान्तरम्योऽभ्युपशान्तमन्मथो
निदाघकालः समुपागतः प्रिये ॥

अर्थ—प्यारी ! गरमीका समय आगया । इस ऋतुमें सूर्य्य तीखा, चांद प्यारा, जलाशयके जल क्षीण, सायंकाल रमणीय और विषयवासना शान्त हो जाती है ।

*पद्यानुवाद * चकोरसवैया]*

तायरहे अतिउग्र दिनेस, निसाकर चांदनिचारु सुहाय ;
नित्यनितै सुमती असनान-विघट्टित वारिसमूह सुभाय ।

---

* पद्यानुवादमें संस्कृत के "प्रिये !"—आदि सम्बोधन-पदोंका हिन्दी नहीं कियागया है । प्रथम सर्गका अनुवाद भिन्न २ छन्दोंमें किया गया है, अन्य छन्दमें नहीं ।

धोसको पाछिलो जामहु त्यों अभिराम अराम-सन्यो सरसाय ।
मैन न चित्तको चैन हरै, अब ग्रीषम रम्य रह्यो दरसाय ॥

(२)

निशाः शशाङ्कः क्षतनीरराजयः

कचिद् विचित्रं जलयन्त्रमन्दिरम् ।

मणिप्रकाराः सरसञ्च चन्दनं

शुचौ प्रिये, यान्ति जनस्य सेव्यताम्॥

अर्थ—प्यारी ! (इस) आषाढ़में कहीं रात और चन्द्रमा, कहीं क्षीण जलाशय, कहीं अद्भुत रहट-फुहारेदार मकान, कहीं नाना प्रकारके ठंढे मणि और कहीं सरस चन्दन, मनुष्योंके सेवनीय होजाते हैं ।

[पद्यानुवाद, मौक्तिकदाम]

कहीं रजनी, रजनीकर चारु, कहीं छविछीन जलासयनीर ।
कहीं रहटैं, फहरात फुहार, कहीं निरुपाधि निकुंजकुटीर ॥
कहीं मुकुता, ससिकान्त सुहात, कहीं सरसात उसीर पटीर ।
यहै सुमती सुखसाधन होत नसावन भीषम ग्रीषमपीर ॥

(३)

सुवासितं हर्म्यतलं मनोरमं

प्रियामुखोच्छ्वासविकम्पितं मधु ।

सुतन्त्रिगीतं सरसं च चन्दनं

शुचौ निशीथेऽनुभवन्ति कामिनः ॥

अर्थ—आजकल (आषाढ़में) रात्रिके समय व्यसनी लोग सुगन्धित एवं मनोरञ्जक कोठेकी छत, प्यारीके मुखश्वाससे हिलता हुआ आसव, सितारका गान और सरस चन्दनके सुखका अनुभव किया करते हैं।

[पद्यानुवाद, मौक्तिकदाम]

सुवासन वासित स्वच्छ मनोहर हर्म्यनके छतकी छविजाल।
प्रियामुखमृष्टसुगन्धितस्वाससन्यो सुखआसवस्वाद रसाल॥
कपूर-सुकेसर-चन्दन-खौर, सुहावन तानतने सुर-ताल।
भले सुखभोगन भोगत भूरि सुखी सुमती इहि ग्रीषमकाल॥

(४)

नितम्बबिम्बैः सदुकूलमेखलैः
स्तनैः सहाराभरणैः सचन्दनैः।
शिरोरुहैः स्नानकषायवासितैः
स्त्रियो निदाघं शमयन्ति कामिनाम्॥

अर्थ—इस ऋतुमें स्त्रियां, रेशमी साड़ी और करधनी सहित नितम्बोंसे, हार-चन्दन-भूषित स्तनोंसे और स्नानके मसालों द्वारा सुगन्धित केशोंसे सुशोभित हो, कामियों की गरमी को शान्त किया करती हैं।

[पद्यानुवाद, चकोर]

झून झलाझल पैन्हि पटम्बर किंकिनि हू कसिकै कटिदेस।
उन्नत रूपसरोज उरोजन राजित यों मुकुताहल वेस॥
लेपि लसीं खस-चन्दन चारु कपूर-सुदान सुवासितकेस।
सीतलकाय नवेलि नहाय हरैं पियके तनताप अशेस॥

(५)

नितान्त-लाक्षारस-राग-लोहितै-

र्नितम्बिनीनां चरणैः सनूपुरैः ।

पदे पदे हंसरुतानुकारिभि-

र्जनस्य चित्तं क्रियते समन्मथम् ॥

अर्थ—इस ऋतुमें खूब गाढ़े महावरके रंगसे रँगे, डेग डेगपर हंसके कूजनका अनुकरण करनेवाले, स्त्रियोंके सनूपुर चरणोंके शब्द मनुष्यके चित्तमें वारवार कामोद्दीपन किया करते हैं।

पद्यानुवाद, मौक्तिकदाम]

प्रगाढ़ महावरके रसरंगन लोहित लीकन लिप्त ललाम।
मरालन की धुनिके अनुहारि सुनूपुर-सिंजन सों सुखधाम॥
विलासवतीजन-पंकजपांयन पेखत ही गति सों अभिराम।
जगै सुमती अनुरागिनके मन मौजभरो मनमत्थ निकाम॥

(६)

पयोधराश्चन्दनपङ्कशीतला-

स्तुषारगौरार्पितहारशेखराः ।

नितम्बदेशाश्च सहेममेखलाः

प्रकुर्व्वते कस्य मनो न सोत्सुकम् ॥

अर्थ—इस ऋतुमें, स्त्रियोंके हिमसदृश उज्ज्वल हार धारण किये, चन्दनचर्चित शीतल पयोधर एवं सुवर्ण की

कर्धनी कसे कटिपश्चाद्भाग (नितम्ब), किसके चित्तको नहीं उत्कण्ठित करते ?

[पद्यानुवाद, मौक्तिकदाम]

महाहिम-उज्वल डोलत लोल सुमौक्तिकमालन पालितओज ।
सुचन्दनपंक विलेप-लसी-तिय-हीतल-सीतल उच्च उरोज ॥
सुवर्णमयी-कटि-किंकिनि-भूषित चारु नितम्ब चढ़े चित चोज ।
करैं नहिं काहि सुचंचलचित्त निरेखत ग्रीषमरैनन रोज ॥

(७)

समुद्गतस्वेद-चिताङ्गसन्धयो
विमुच्य वासांसि गुरूणि साम्प्रतम् ।
स्तनेषु तन्वंशुकमुन्नतस्तना
निवेशयन्ते प्रमदाः सयौवनाः ॥

अर्थ—इस समय, ऊंचेस्तनवाली युवती स्त्रियां पसीने-से प्रत्यङ्ग तर-बतर हो, गाढ़े वस्त्रोंको त्याग, स्तनोंपर झीना कपड़ा वा रेशमी वस्त्र धारण करती हैं।

[पद्यानुवाद, चकोर]

पेस-पसीननते प्रतिअंग सरासर आज़ु सनी तर-बोर ।
नूतन-वैस-विलास-भरी नव-उच्च-उरोज-मनोहर-कोर ॥
गाढ़ गरू तजि तंग सलूकन आतप-ताप-नसी तिय ओर ।
लायरहीं उर अंसुक झूल, जगायरहीं मन मैन-मरोर ॥

(५)

नितान्त-लाक्षारस-राग-लोहितै-

नितम्बिनीनां चरणैः सनूपुरैः ।

पदे पदे हंसरुतानुकारिभि-

र्जनस्य चित्तं क्रियते समन्मथम् ॥

अर्थ—इस ऋतुमें खूब गाढ़े महावरके रंगसे रँगे, डेग डेगपर हंसके कूजनका अनुकरण करनेवाले, स्त्रियोंके सनूपुर चरणोंके शब्द मनुष्यके चित्तमें वारवार कामोद्दीपन किया करते हैं ।

पद्यानुवाद, मौक्तिकदाम]

प्रगाढ़ महावरके रसरंगन लोहित लीकन लिप्त ललाम ।
मरालन की धुनिके अनुहारि सुनूपुर-सिंजन सों सुखधाम ॥
विलासवतीजन-पंकजपांयन पेखत ही गति सों अभिराम ।
जगै सुमती अनुरागिनके मन मौजभरो मनमत्थ निकाम ॥

(६)

पयोधराश्चन्दनपङ्कशीतला-

स्तुषारगौरार्पितहारशेखराः ।

नितम्बदेशाश्च सहेममेखलाः

प्रकुर्व्वते कस्य मनो न सोत्सुकम् ॥

अर्थ—इस ऋतुमें, स्त्रियोंके हिमसदृश उज्ज्वल हार धारण किये, चन्दनचर्चित शीतल पयोधर एवं सुवर्ण की

कर्धनी कसे कटिपश्चाद्भाग (नितम्ब), किसके चित्तको नहीं उत्कण्ठित करते ?

[पद्यानुवाद, मौक्तिकदाम]

महाहिम-उज्वल डोलत लोल सुमौक्तिकमालन पालितओज।
सुचन्दनपंक विलेप-लसी-तिय-हीतल-सीतल उच्च उरोज॥
सुवर्णमयी-कटि-किंकिनि-भूपित चारु नितम्ब चढ़े चित चोज।
करैं नहिं काहि सुचंचलचित्त निरेखत ग्रीपमरैनन रोज॥

(७)

समुद्गतस्वेद-चिताङ्गसन्धयो
विमुच्य वासांसि गुरूणि साम्प्रतम्।
स्तनेषु तन्वंशुकमुन्नतस्तना
निवेशयन्ते प्रमदाः सयौवनाः॥

अर्थ—इस समय, ऊंचेस्तनवाली युवती स्त्रियां पसीनेसे प्रत्यङ्ग तर-बतर हो, गाढ़े वस्त्रोंको त्याग, स्तनोंपर झीना कपड़ा वा रेशमी वस्त्र धारण करती हैं।

[पद्यानुवाद, चकोर]

पेस-पसीननते प्रतिअंग सरासर आजु सनी सर-बोर।
नूतन-वैस-विलास-भरी नव-उच्च-उरोज-मनोहर-कोर॥
गाढ़ गरू तजि तंग सलूकन आतप-ताप-तपी तिय गोर।
लायरहीं उर अंसुक झून, जगायरहीं मन मैन-मरोर॥

(८)

सचन्दनाम्बु-व्यजनोद्भवानिलैः
सहारयष्टिस्तनमण्डलार्पणैः।
सवल्लकी-काकलि-गीत-निस्वनैः
प्रबुध्यते सुप्त इवाद्य मन्मथः॥

अर्थ—इस ऋतुमें, चन्दनमिश्रित-जलसे भिजाये हुए पंखोंकी वायुसे, हारयुक्त स्तनमण्डलोंको हृदयमें लगानेसे और वीणाके मधुर स्वरयुक्त गान सुननेसे सोया हुआ कामदेव भी जाग जाता है॥

[पद्यानुवाद, किरीट]

चन्दनके जलसों परिसिक्त सुहावनि-बीजना-वायु-झकोरन।
मल्लिका-मालती-मालन मंजु मनोजसरोज-उरोज-अँकोरन॥
गायन-तान-भरी बर बांसुरी ताल-तमूरन की सुनि सोरन।
सुप्त मनोजहु जागि उठै रसपागि उठै सुमती बरजोरन॥

(९)

सितेषु हर्म्येषु निशासु योषितां
सुखप्रसुप्तानि सुखानि चन्द्रमाः।
विलोक्य निर्यन्त्रणमुत्सुकश्चिरं
निशाक्षये याति ह्रियैव पाण्डुताम्॥

अर्थ—इस ऋतुमें, रात्रिके समय, चन्द्रमा, चूनेसे चुनेटी अटारियोंपर सुखसे निद्रित नायिकाओंके मुखोंको बहुत देरतक चावसे बेखटक देखकर ही मानो लज्जित हो भोरको पीला पड़ पड़ जाता है।

[पद्यानुवाद, चकोर]

ग्रीषमकी इन रैनन रम्य अटारिनकी छत पै छवि छाय।
निद्रित नव्य नवेलिनके मुखचन्दनकी दुति पै टक लाय॥
भांति सबै सुखमामय देखि ससी हियरे रहिजात लजाय।
सोइ मनो नितही नितही परभातन पीरो पर्‍यो दरसाय॥

(१०)

असह्यवातोद्धतरेणुमण्डला
प्रचण्डसूर्यातपतापिता मही।
न शक्यते द्रष्टुमपि प्रवासिभिः
प्रिया-वियोगानल-दग्ध-मानसैः॥

अर्थ—इनदिनों, प्रबलवायुसे उड़ायीहुईधूलिवाली, बहुत तीखे सूर्यकी धूपसे तपीहुई पृथ्वी, प्यारीके वियोगरूपी अग्नि-से दग्धचित्त विदेशियोंसे जरा भी नहीं देखी जासकती॥

[पद्यानुवाद, चकोर]

झौंकिल-वायु-झकोरन सों रजमंडल आसु रह्यो नभ छाय।
चंडदिवाकरके कटु-आतप-तापन ते जु रही अति ताय॥

सो अब ग्रीषमकी वसुधा परदेसिन सों लखिहु नहिं जाय।
आपहि जो विरहानल-ज्वालन तापितचित्त रहे अकुलाय॥

(११)

मृगाः प्रचण्डातपतापिता भृशं,
तृषा महत्या परिशुष्कतालवः।
वनान्तरे तोयमिति प्रधाविता
निरीक्ष्य भिन्नाञ्जनसन्निभं नभः॥

अर्थ—इस समय, खरतर तापसे तपे हुए हरिण, प्यासके मारे शुष्ककण्ठ हो, वनके अन्तरालमें गाढ़े अंजन के समान श्याम आकाशको देख उसे जल समझ कर बार-बार दौड़े फिर रहे हैं।

[पद्यानुवाद-चकोर]

ये वनके मृग भीषम-भानुके आतपतापन तापितकाय।
आतुर ह्वै अति तीखो-तृषान सों सूखे स्वकंठन सों मुह वाय॥
अंजनअच्छ अकासहिं स्वच्छ सरोवर जानि रहे दिसि धाय।
द्वै पहरी दिन दीनन हाय निदाघ रह्यो जग आजु सताय॥

(१२)

सविभ्रमैः सस्मितजिह्मवीक्षितै-
र्विलासवत्यो मनसि प्रवासिनाम्।
अनङ्गसन्दीपनमाशु कुर्वते
यथा प्रदोषाः शशिचारुभूषणाः॥

अर्थ—इन दिनों, सुन्दरियां, विलास तथा मन्दमुसकान-युक्त तिरछी चितवनोंसे विदेशियोंकेचित्तमें तुरन्त कामोद्दीपन कर देती हैं; जैसे चन्द्रमासे विभूषित रात्रि।

[पद्यानुवाद, चकोर]

हासविलासन वंकविलोकन आजु मयंकमुखी मन भाय।
जोवनवैस-विदेसवसे विरहीजनके मन मोद वढ़ाय॥
अंग अनंग जगायरहीं, उमगायरहीं, छगुनी छवि छाय।
चांदनि-चन्द्रविभूषण-भूषित जामिनि ज्यों जग स्वच्छ सुहाय॥

(१३)

रवेर्मयूखैरभितापितो भृशं
विदह्यमानः पथि तप्तपांशुभिः।
अवाङ्मुखो जिह्मगतिः श्वसन् मुहुः
फणी मयूरस्य तले निषीदति॥

अर्थ—इस समय सूर्यकी किरणोंसे अत्यन्त तापित, मार्गमें तपी हुई धूलियोंसे जलता हुआ, वार वार हंफता हुआ टेढ़ी गतिवाला सर्प, मुंह नीचे किये हुआ, मोरकी छांहमें जा वैठता है।

[पद्यानुवाद, चकोर]

वारहिवार दिवाकरके करुए करजालनसों कुम्हिलाय।
तापतपी मगधूलिन के तिमि दारुनदाहन सों तन ताय॥
कुंचितकाय भुजंग अधोमुख भूरि उसांसन लेत लखाय।
चाहत छांह लुकातफिरै मुरवान के पंखन के तर जाय॥

(१४)

तृषा महत्या हतविक्रमोद्यमः

श्वसन् मुहुर्भूरिविदारिताननः।

न हन्त्यदूरेऽपि गजान् मृगाधिपो

विलोलजिह्वश्चलिताग्रकेशरः॥

अर्थ—इस समय, बड़ी प्याससे पराक्रम और उद्योग छोड़, बारंबार हांफताहुआ, खूब मुंह बाए, जीभ लपलपाता और धौनेके केशोंको कंपाता हुआ सिंह, अपने निकट-वर्ती हाथियोंको भी नहीं मारता।

[*पद्यानुवाद, चकोर*]

घोरतृषातुर द्वैपहरीन पराक्रमहीन अहो मृगराज।
भूरि भयावन आनन बायकै लेत उसांसन-सांसन आज॥
कम्पितकेसर जीहविलोल लखात मनो यमही महराज।
पै नहि रंचकहू झपटै निजपासहु पेखि मतंग-समाज॥

(१५)

विशुष्ककण्ठाहृतशीकराम्भसो

गभस्तिभिर्भानुमतोऽभितापिताः।

प्रवृद्धतृष्णोपहता जलार्थिनो

न दन्तिनः केशरिणोऽपि बिभ्यति॥

अर्थ—सूखे कण्ठों में जलकण धारण किये हुए, सूर्यके किरणोंसे तापित, बढ़ी हुई प्यासा से सताये, प्यासे हाथी, इस समय सिंहसे भी नहीं डरते।

[पद्यानुवाद, चकोर]

सूखे स्वकंठन सुंडनमें सुभ सीतल वारिहिं आजु रहे भरि।
वासरमांहि दिवाकरके करुए कर जालन ज्वालन सों जरि॥
चाहिरहे पयपान चहूं दिसि दारुन-प्यास-प्रयासनमें परि।
ग्रीषम-तापित आजु गयन्द न सेरहु सों यह नेकु रहे डरि॥

(१६)

हुताग्निकल्पैः सवितुर्मरीचिभिः
कलापिनः क्लान्तशरीरचेतसः।
न भोगिनं घ्नन्ति समीपवर्तिनं
कलापचक्रेषु निवेशिताननम्॥

अर्थ—इनदिनों मोर, जिनके शरीर और चित्त हुने हुए अग्निके समान सूर्यकी किरणोंसे सन्तप्त होरहे हैं, अपनी पूंछोंपर फन रखकर बैठेहुए समोपवर्ती सर्पको भी (जिन से इनको स्वाभाविक वैर है) नहीं मारते।

[पद्यानुवाद, चकोर]

आहुतिके हुत अग्निसमान प्रचंड दिवाकरके करजाल।
ये वनमोर तचे-तन-चेतन, कैसहु काटिरहे तपकाल॥
पै निजपंखन पै नतमस्तक पासहि पेखि भुजंग विसाल।
छेड़त आजु न रंचक हू, दिन वेसक बीतिरहे विकराल॥

(१७)

सुभद्रमुस्तं परिपाण्डुकर्दमं
सरः खनन्नायतपोत्रमण्डलैः।

प्रदीप्तभासा रविणाऽभितापितो
वराहयूथो विशतीव भूतलम् ॥

अर्थ—इनदिनों, प्रचण्डकिरणवाले सूर्यसे तपाया हुआ शूकरसमूह, अपने चौड़े थुथनोंसे उस तालाब को, जिसके किनारोंपर मोथे (घास) खूब जमे हुए हैं और कीचड़ जिसकी सूखकर पोली होगयी है, खनते हुए ऐसे मालूम पड़ते हैं मानो ये पृथ्वी की तह में घुसे जारहे हों ॥

[पद्यानुवाद, चकोर]

मंजुलमोथ पकेघनपंक रहे गरहे-सर ये सरसाय।
चाकरे थूथुन आजु उन्हें यह खोदत सूकर के समुदाय ॥
चंडमयूख-मयूखनतें सुमतो अब ये अभितापितकाय।
देखिपरैं जनु ढूंढ़त ठंढ रहे धरतीतलमाहिं समाय ॥

(१८)

विवस्वता तीक्ष्णतरांशुमालिना
सपङ्कतोयात् सरसोऽभितापितः।
उत्प्लुत्य भेकस्तृषितस्य भोगिनः
फणातपत्रस्य तले निषीदति ॥

अर्थ—इससमय, मेंढ़क अति तीव्र-किरणशाली सूर्यसे तापित हो, पङ्किलजलवाले (उष्ण) सरोवरमें से उछल, प्यासे सर्पके फणारूपी छातेके नीचे बैठ जाता है। गरमी से व्याकुल हो वह अपने प्राणजानेका कुछ भी डर नहीं मानता।

[पद्यानुवाद, चकोर]

दारुणताप दिवाकरके, दिनमें, अति आतपतापहिं पाइकै।
बारि सपंक सरोवरको, नहिं नेकहु जात लह्यो उसिनाइकै॥
कूदि हहा तितसों इक मेढ़क बैठिरह्यो अहिके ढिग जाइकै।
तीरहिं जो फन भीपन काढ़ि सुतीखो तृखान उसांसत आइकै॥

(१६)

समुद्धृताशेषमृणालजालकं,
विपन्नमीनं द्रुतभीतसारसम्।
परस्परोत्पीड़नसंहतैर्गजैः
कृतं सरः सान्द्रविमर्दकर्दमम्॥

अर्थ–इससमय, परस्पर अंगोंमें अंग रगड़ते हुए, ढेरके ढेर स्नानार्थी हस्तियोंने सरोवरको ऐसा विगाड़ डाला है, कि कमलोंके सभी नाल उखाड़ डाले, मछलियां मार डालीं और कीचड़ोंको धाङ्धूङ्कर पानी गदला कर डाला; जिससे डर कर सभी जलपक्षी भाग गये हैं।

[पद्यानुवाद, चकोर]

तापतपे रगरात मतंग नहात परस्पर या सर आय।
नाल उपारि मले कल कंज, दले दल मीनन के धरि धाय॥
देखि उपद्रवहू इनके पुनि सारस–हंस भजे भय पाय।
डालत पंकभरे जलमें यह दीन्ह सबै दिसि कीच मचाय॥

(२०)

रविप्रभोद्भिन्न-शिरोमणि-प्रभो
विलोल-जिह्वाद्वय-लीढ-मारुतः।

विषाग्निसूर्यातप-तापितः फणी

न हन्ति मण्डूककुलं तृषाकुलः ॥

अर्थ–इन दिनों सूर्यकी किरणोंसे देदीप्यमान मस्तकमणिवाला, अपनी चंचल जिह्वाओंसे वायु-पान करता हुआ, सर्प, अपनी विषज्वाला तथा सूर्यतापसे तापित और प्याससे व्याकुल होनेके कारण, मेढ़कोंको नहीं मारता ।

[पद्यानुवाद, चकोर]

सूरजके करजालन जासिर जोति मणीन जगामग जागै ।
जासु लपालप जीह दुहूंन ते पौनको पान महाप्रिय लागै ॥
जो विष-आतप-ताप-तप्यो पुनि प्यासभरो पयपै अनुरागै ।
सो अहि मेढ़कपुंजहिं आजु, दपेटत नाहिं निरेखिहु आगे ॥

(२१)

सफेन-लालावृत-वक्त्रसम्पुटं,

विनिर्गतालोहितजिह्वमुन्मुखम् ।

तृषाकुलं निःसृतमद्रिगह्वराद्

गवेषमाणं महिषीकुलं जलम् ॥

अर्थ–देखो, लाल जीभ निकाले, ग्रीवा ऊपर किये, प्याससे व्याकुल, जल खोजते हुए, फेन और लारभरे मुखसे सुशोभित, ये जंगली भैंसोंके झुंड, पहाड़की गुफामेंसे बाहर निकले ।

[पद्यानुवाद, चकोर]

फेन औ लार अपार भरे अति-प्यास-उसांसन सों अकुलाये ।
लाळ लपालप जीह लपावत ग्रीवन ऊपर ओर उठाये ॥
निर्झर-झील-नदी-नद-नार-निखातन नीर संवाचत भाये ।
ये निकरे गिरिखोहनतें अरनान * के झुंड भुरे मुंह बाये ॥

(२२)

[मालिनीवृत्त]

पटुतर-दवदाहोच्छुष्क-शष्पप्ररोहाः
परुषपवनवेगोत्क्षिप्त-संशुष्क-पर्णाः ।
दिनकरपरितापक्षीणतोयाः समन्ताद्
विदधति भयमुच्चै र्वीक्ष्यमाणा वनान्ताः ।

अर्थ—इन दिनों घासके अङ्कुर, प्रचण्ड दावानलकी लपट-से झुलस गये हैं, तीखी वायुके वेगसे सूखे हुए पत्ते, उड़ गये हैं और चारों ओर सूर्यके आतपसे प्रायः सभी जलाशयोंके जल सूख गये हैं, इस प्रकार ये वनके प्रान्त देखनेपर बड़ा ही भय उत्पन्न कर रहे हैं ।

[पद्यानुवाद, मदिरा]

उग्र-दवानल-ज्वालन ते नव अंकुर घासन के जरिगे ।
तापित-वायु-झकोनते तरुपात पुरान सवै झरिगे ॥
चारिहु ओर जलासयके जल, तापतपे पियरे परिगे ।
ये वनभागहु ग्रीपमके वहु भीपम-भावनसों भरिगे ॥

* अरना—जंगली भैंसा

(२३)

श्वसिति विहगवर्गः शीर्णपर्णद्रुमस्थः
कपिकुलमुपयाति क्लान्तमद्रेर्निकुञ्जम् ॥
भ्रमति गवययूथः सर्व्वतस्तोयमिच्छन्-
च्छरभकुलमजिह्मं प्रोद्धरत्यम्बु कूपात् ॥

अर्थ—इस समय पक्षिगण ठूंठे वृक्षोंपर बैठे हुए हांफ रहे हैं, वानरगण गरमीकी थकावटसे पहाड़ी कुञ्जोंमें जा रहे हैं, प्यासे घोड़परास और नीलगाय चारोंओर घूम रहे हैं और हाथियोंके बच्चे गड़होंमेंसे जल (अपने शुण्डसे) सोधे ऊपर खींच रहे हैं ।

[पद्यानुवाद, बरसात]

पातविहीन तरूनकी डारन बैठि विहंग उसांसन लै रहे ।
वानरयूथहु जाय गिरीन के सीतल कुंज निकुंजन छै रहे ॥
घूमत ये वनरोझ * सबै चहुंधा जल खोजत व्याकुल ह्वै रहे ।
कुंडनते करिसावक हू निज सुंडन सूधे सुनीर अचै रहे ॥

(२४)

विकचनवकुसुम्भस्वच्छसिन्दूरभासा,
प्रबलपवनवेगोद्भूतवेगेन तूर्णम् ।
तटविटपलताग्रालिङ्गनव्याकुलेन,
दिशि दिशि परिदग्धा भूमयः पावकेन ॥

अर्थ—खिलेहुए नये कुसुमके समान स्वच्छ तथा सिन्दूर-के रंगवाले, तीव्रवायुके वेगसे वेगवान्, वृक्षकी शाखाओं तथा लताओंकी फुनगियोंको वारवार अपनी ओर खींचनेवाले, दवानल (वनडाढ़े) ने, सब ओर वनप्रान्तको तुरन्त ही जला-डाला।

[*पद्यानुवाद, चकोर*]

खूब खिले नवफूल कुसुम्भसी सेंदुरसी पुनि सुन्दर लाल।
झोंकिल-वायु-झकोरनते सुमती सुविसेपितवेग विसाल॥
ये धधकात लपेटि रहीं लग लूमत लोनी लता-तरु-जाल।
भूजिदिये वनभूमिविभाग जहां-तहँ जागत पावकज्वाल॥

(२५)

ज्वलति पवनविद्धः पर्वतानान्दरीषु
स्फुटति पटुनिनादैः शुष्कवंशस्थलीषु।
प्रसरति तृणमध्ये लब्धवृद्धिः क्षणेन
ग्लपयति मृगवर्गम्प्रान्तलग्नो दवाग्निः॥

अर्थ—इन दिनों, दवानल (वनडाढ़ा) पर्वतोंकी कन्द-राओंमें वायु लगनेसे वढ़ कर धधकने लगता है, सूखे वांसोंके वनमें चटाचट-पटापट शब्द करता फूट-फूटकर प्रकट होने लगता है, फिर घासफूसके समूहमें लगकर तुरन्त ही फैल जाता और निकटवर्ती प्रान्तोंमें लगकर मृगगणोंको व्याकुल करदेता है।

[पद्यानुवाद, मदिरा]

पौनप्रचारन प्रेरित ह्वै धसिकै गिरिकन्दरमें धनकै ।
गांठनमें बरि सूखे सुबांसके फोरि चटाचट कै ठनकै ॥
हेलत घास-झलासनमें छनमें बन सानसन्यो सनकै ।
लागि समीप दवानलज्वाल पसूनको हाय हियो हनकै ॥

(२६)

बहुतर इव जातः शाल्मलीनां वनेषु
स्फुरति कनकगौरः कोटरेषु द्रुमाणाम् ।
परिणतदलशाखानुत्पतन् प्रांशुवृक्षान्
भ्रमति पवनधूतः सर्वतोऽग्निर्वनान्ते ॥

अर्थ—इन दिनों, वायुसे प्रेरित वनाग्नि (वनडाढ़ा) सेमलके वनोंमें अनेकरूपसे फैलाहुआ, वृक्षोंके खोढ़रोंमें सोनेके रंगसा चमका करता है और पके पत्तों एवं पुरानी शाखावाले ऊंचे वृक्षोंके ऊपर चढ़ताहुआ वनप्रान्तोंमें सर्वत्र घूमाकरता है ।

[पद्यानुवाद, मदिरा]

सेमर-झारिनमें बहुभांति बढ़ा चिनगारिन सों चमकै ।
वृक्षनके खोढ़रानमें लागि सुवर्णके वर्णन सों दमकै ॥
सूखे बिसाल तरून के तुंग फुनुंगन तेजभर्यो तमकै ।
पौनप्रचारिन यों बनडाढ़ सबै वनवीथिनमें बमकै ॥

(२७)

गजगवयगजेन्द्रा वह्निसन्तप्तदेहाः
सुहृद इव समन्ताद्द्वन्द्वभावं विहाय ।

हुतवहपरिखेदादाशु निर्गत्य कक्षाद्

विपुलपुलिनदेशान्निम्नगां संविशन्ति ॥

अर्थ—इस समय, बनडाढ़ेसे तापित बनैले हाथी, घुड़परास और सिंह मित्रोंके सदृश परस्पर विरोध छोड़, अग्निके तापसे व्याकुल हो गुफाओंसे निकल-निकल ऊंचे कछारवाली नदियोंके किनारे जा-जा सो रहे हैं।

[पद्यानुवाद, चकोर]

दीह-दवानल-ताप-तपे निलगाय गयन्द मृगी मृगराज ।
वाहिर ह्वै गिरिखोहनतें अकुलात उताहुल औचक आज ॥
वैर-विरोध विसारि सुमीत से हेरि महीतल सीतलसाज ।
ऊंचअरारन की नदिनारन धार-किनारन सोवत भ्राज ॥

(२८)

कमलवनचिताम्बुः पाटलामोदरम्यः

सुखसलिलनिषेकः सेव्यचन्द्रांशुहारः ।

व्रजतु तव निदाघः कामिनीभिः समेतो

निशि सुललितगीते हर्म्यपृष्ठे सुखेन ॥

अर्थ—हे वाचक! जिसमें जल कमलसमूहोंसे भरजाते, जो गुलाबोंके सुगन्धसे सुहावन जानपड़ता, जिसमें जलका छिड़काव सुखदायक होजाता एवं चन्द्रमाकी किरणें सेवनीय होजाती हैं; ऐसा यह ग्रीष्मकाल कामिनियोंके साथ मनोहर-गानयुक्त अटारीपर तुम्हारा सुखसे बीते ।

[पद्यानुवाद–दुमिला]

सरसै सरनीर सरोजनसों, खुसबूई गुलाबकी खासी रहै ।
सुमती सुखनीर-नहात रहैं, निसि चांदनी चारु उजासी रहै ॥
गर मालचमेली सी बालनबेली अनंग-उमंगन भासी रहै ।
तब बीतै निदाघनिसा सुखसों सुअटारिन गान हुलासी रहै ॥

इति महाकवि-श्रीकालिदासकृतौ ऋतुसंहारकाव्ये काव्यतीर्थ-
सुमति-शिवप्रसादशर्मविरचित-भाषानुवाद-समन्विते
ग्रीष्मवर्णनं नाम प्रथमः सर्गः ।

वर्षावर्णन ।

(वर्षा = श्रावण-भाद्रपद)

---

(१)

सशीकराम्भोधरमत्तकुञ्जर-

स्तडित्पताकोऽशनिशब्दमर्दलः ।

समागतो राजवदुन्नतध्वनि-

र्घनागमः कामिजनप्रियः प्रिये ! ॥ *

अर्थ—प्यारी ! अब कामिजनोंका प्यारा वर्षाकाल, फुहारोंसे भरेहुए मेघोंको मतवाले हाथी, बिजलीको पताका, और वज्र (ठनका) के शब्द (ठनक) को नगाड़े बना, ऊंची हहास बांधे, किसी महाराजके समान आपहुंचा ।

[*पद्यानुवाद, मनहरन घनाक्षरी*]

बूंदभरे बादर जो उनये अकासमाहिं,

सोई मतवारे कारे कुंजर सजाये हैं ।

चमक चहूंघा चपलानकी मचत सोई,

फरहरे सुन्दर सुरंग फहराये हैं ॥

---

* इस सर्ग में पहले मूलके १९ श्लोक इसी वंशस्थविलवृत्तसे तथा अनुवाद के २७ पद्य घनाक्षरी (कवित्त या दण्डक छन्द) के मनहरन और रूपनामक भेदोंसे रचेगयेहैं ।

ठनकाकी ठनक वजत सो नगारे भारे,
सुमति सँयोगी-हीय सुख सरसाये हैं ।
कामिनके प्राणप्यारे महाराज पावस जू,
घोर-रोर भरत महीपै आजु आये हैं ॥

(२)

नितान्त-नीलोत्पल-पत्र-कान्तिभिः
क्वचित्प्रभिन्नाञ्जन-राशि-सन्निभैः ।
क्वचित्सगर्भ-प्रमदा-स्तन-प्रभैः
समाचितं व्योम घनैः समन्ततः ॥

अर्थ—कहीं नीले कमलदलके समान गहरी कान्तिवाले, कहीं गाढ़े अञ्जनसमूहके सरीखे, कहीं गर्भिणी स्त्रियोंके स्तनोंके सदृश कान्तिवाले बादलोंसे चारो ओर आकाश आच्छन्न हो गया है।

[पद्यानुवाद, रूपघनाक्षरी]

नील कल कोमल कमलके दलन ऐसे
काहू ओर उमड़ि घुमड़ि घिरि घूमि रहे।
काहू ओर अतिघन-अंजनकी रासि ऐसे
उनये, गगनके सिखर जनु चूमिरहे ॥
गर्भिनीतियन के सुकारे कुचकोर ऐसे
स्याम रंग धारे काहू ओर लगि लूमिरहे ।
चारौं ओर घोर ये घनाघन घमंडी आजु
मौजभरे मंजुल मही पै झुकि झूमिरहे ॥

(३)

तृषाकुलैश्चातकपक्षिणां कुलैः

प्रयाचितास्तोयभरावलम्बिनः ।

प्रयान्ति मन्दं बहुवारिवर्षिणो

बलाहकाः श्रोत्रमनोहरस्वनाः ॥

अर्थ—प्यासे पपीहोंसे प्रार्थित, जलसमूहको धारण करनेवाले, अनेक धाराओंसे बरसनेवाले, कर्णसुखद-गर्जन-वाले बादल धीरे धीरे घूमरहे हैं ॥

[*पद्यानुवाद, रूपघनाक्षरी*]

प्यासभरे प्रेमिक-पपीहनके जीहनसों

याचित, अमित सरसावत हिये अनंद ।

सरित-कछारनसों धारनसों नारनसों

भरि भरि वारि भूरि हरत प्रजाके दंद ॥

जनमनभावन सुहावन-सबद-वारे

गरज मचावैं बरसावैं, बहु वारिवुन्द ।

सुमति सुहावैं, छिति छावैं, हरसावैं हीय,

घुमरत आवैं, ये सघन घन, मन्द मन्द ॥

(४)

बलाहकाश्चाशनिशब्द-मर्दलाः

सुरेन्द्रचापं दधतस्तडिद्गुणम् ।

सुतीक्ष्णधारा-पतनोग्र-सायका-

स्तुदन्ति चेतः प्रसभं प्रवासिनाम् ॥

अर्थ—इन दिनों, वज्रके शब्द (ठनकाकी ठनक) रूपी नगाड़ावाले, विजलीकी डोरीसे युक्त इन्द्रधनु धारण किये, तीव्रधाराकी वृष्टिरूपी भयङ्कर वाणवाले (वीर) वादर विदेशियोंके चित्तको वरवस व्यथित कर देते हैं॥

[*पद्यानुवाद, मनहरन*]

गरजत घोररोर घहर मचावैं घूमि,
रनके नगारेकी अवाज सी सुनावै हैं।
दामिनीके दामनसों दमकत दीप्तिमान,
इन्द्रधनु धारे, विकरारे रंग भावै हैं॥
विरहि-वधून दुःखदैन पैन सायकसे
खरतर वारिधार-वुन्द वरसावैं हैं।
घेरि घेरि गहरे गराजनसों वार वार,
वादर ये विवस विदेशिन सतावैं हैं॥

(५)

प्रभिन्नवैदूर्य्यनिभैस्तृणाङ्कुरैः
समाचिता प्रोत्थितकन्दलीदलैः।
विभाति शुक्लेतर-रत्न-भूषिता
वराङ्गनेव क्षितिरिन्द्रगोपकैः॥

अर्थ—वैदूर्य्यमणिसदृश घासोंके सघन अंकुरोंसे, जहां-तहां उपजेहुए गोवरछत्तों वा कदलीके दलोंसे और वीर-बधूटियोंसे भरीहुई पृथ्वी, असित (हरित श्याम तथा धूसर) रत्नोंसे भूषित वेश्याके समान सोभरही है।

[*पद्यानुवाद, मनहरन*]

सोहैं घासअंकुर सलोने नीलमनि ऐसे,
तति लतिकानकी निकुञ्जन हरी भई।
बीरवधूवृन्दन विराजित विशेष भांति,
वसुधा असेस वेस भावन भरी भई॥
गोवरके छत्ते छोर-छोर फोर-फोर फैले,
नवदल केदली सुरंगनिखरी भई।
वारवधू मानो मंजु मदन-उमंग-वारी,
आजु अंग असित-जवाहिर-जरी भई॥

(६)

सदामनोज्ञं स्वनदुत्सवोत्सुकं
विकीर्णविस्तीर्णकलापशोभितम्।
सविभ्रमालिङ्गन-चुम्बनाकुलं
प्रवृत्तनृत्यं कुलमद्य वर्हिणाम्॥

अर्थ—सर्वदा सुन्दर, वोलते हुए, उत्साहभरे, फैलेहुए वड़े वड़े पुच्छोंसे सुशोभित, परस्पर सादर आलिङ्गन और चुम्बनमें आसक्त, मयूरोंके समूह, अब नाचने लग गये।

[*पद्यानुवाद, मनहरन*]

सुरँग सुहावने मनोहर पयोधरकी,
धुनि सुनि बार-वार सुख उपजावैं ये।
फूले फहराये सहराये पूंछ-पंखवारे,
चितवत चारु चित्तचाव सरसावैं ये॥

मिलि मिलि मेलि मेलि खिलि खिलि खेलि खेलि,
सुमति परस्पर विनोदन वढ़ावैं ये।
सुखमय-सोर-वारे प्यारे मतवारे आजु,
वन अनियारे मोर नाचत सुहावैं ये॥

(७)

विपाटयन्त्यः परितस्तटद्रुमान्
प्रवृद्धवेगैः सलिलैरनिर्म्मलैः।
स्त्रियः सुदुष्टा इव जातसम्भ्रमाः
प्रयान्ति नद्यस्त्वरितं पयोनिधिम्॥

अर्थ—इस समय, शीघ्रता और कोपसे युक्त दुष्टा स्त्रियोंकी भांति बरसातकी नदियां, अपने तीव्र वेगवाले मलिनजलोंसे तटके (समीपवर्ती) वृक्षोंको ढाहती हुई, तीव्रताके साथ समुद्रकी ओर जा रही हैं।

[*पद्यानुवाद, रूपघनाक्षरी*]

खरतरधारनके निकट किनारनके,
ऊंचे ऊंचे विटपकतारन गिराय रहीं।
काटतीं करारन, घंघोरतीं गरद-रेत,
मलमय दूषित प्रवाहन वढ़ाय रहीं॥
कुटिल कुढंगवारी कर्कश कुरंगवारी,
नारिनसी भांवरी भरत छहराय रहीं।
नदियां उतावरी ढरति नीरढारन सों
पारावारवारन धरापै धसि धाय रहीं॥

(८)

तृणोत्करैरुद्गतकोमलांकुरै-
विंचित्रनीलै हॅरिणीमुखक्षतैः ।
वनानि वैन्ध्यानि हरन्ति मानसं
विभूषितान्युद्गतपल्लवै द्रुमै : ॥

अर्थ—इस समय, विचित्र ही नील रंगके, हरिणियोंके मुखसे चरेहुए नवीन तथा कोमल अङ्कुरवाले घासोंसे भरे विन्ध्याचलके वनसमूह, नूतनपल्लववाले वृक्षोंसे विभूषित हो, मनको मोहित कररहे हैं।

[पद्यानुवाद, मनहरन]

नाना भांति नवदल अंकुर विराजमान,
दृग-अभिराम स्याम घासन सुहाये हैं ।
कहीं कहीं कछु कछु हरिनीगनन के
मुखन अधखाये तृन अति छवि-छाये हैं ॥
किसलयकलित ललित वनकुंजनके
पुंजन सों परमा परम प्रगटाये हैं ।
वन उपवन विन्ध्यगिरि के सवेई वेस
ह्वैरहे मनोहर हरित मनभाये हैं ॥

(९)

विलोलनेत्रोत्पलशोभिताननै-
र्मृगैः समन्तादुपजातसाध्वसैः ॥

समाचिता सैकतिनी वनस्थली
समुत्सुकत्वम्प्रकरोति चेतसः ॥

अर्थ—इस समय, चञ्चल-नेत्रकमलोंसे सुशोभित मुख-वाले भयभीत हरिणोंसे चारो ओर भरीहुई रेतीली वनभूमि, देखनेवालेके चित्तमें उत्कण्ठा (विषयवासना) उत्पन्न कर देती है ।

[*पद्यानुवाद, रूपघनाक्षरी*]

आयत-विलोल-चख-लोचन-कमलदल-
सोभित-सुआनन ये काननके मृगगन ।
चारौं ओर भ्रमत भयातुर से, हेरि हेरि
घहरत घोर रोरवारे कजरारे घन ॥
भोरे भाव सुमति सुहावने सुचंचल
सलोने उन कोमल कुरंगन दसौ दिसन ।
रेतभरी राजित रुचिर वनभूमि आजु,
रुचि उपजावतीं, रमन की, रसीले-मन ॥

(१०)

अभीक्ष्णमुच्चैर्ध्वनता पयोमुचा
घनान्धकारीकृतशर्वरीष्वपि ।
तडित्प्रभादर्शितमार्गभूमयः
प्रयान्ति रागादभिसारिकाः स्त्रियः ॥

अर्थ–इस समय, ऊंचे स्वरसे शब्द करनेवाले मेघोंसे, रात अत्यन्त अँधेरी होजानेपर भी, अभिसारिका (छिपकर प्यारेके

पास जानेवाली) स्त्रियां, अपनी मार्गभूमियोंको बिजलीके प्रकाशसे देखती हुई, बड़ी उत्कण्ठा (चाव) से (उन के पास) जारही हैं।

[*पद्यानुवाद, रूपघनाक्षरी*]

विकल-वियोगी-बाल-अबला-बिदेसिनकों
तरजत बार-बार गरजत ऊंचे-रोर।
कारे कजरारे धूमधारे घनकी घटान
निसि अंधियारी छटा छायरही छितिछोर॥
देखती दिसन दीह-दामिनी-दमंकनतें,
मग पग देति, मीत-मिलन मनाती जोर।
सुखद-सुहागवारी अतिअनुरागवारी
जायरहीं प्यारी आजु विपिनविहारी-ओर॥

(११)

पयोधरैर्भीम-गभीर-निस्वनै-
स्तटिद्भिरुद्वेजितचेतसो भृशम्।
कृतापराधानपि योषितः प्रियान्
परिष्वजन्ते शयने निरन्तरम्॥

अर्थ—इनदिनों, स्त्रियां, भयङ्कर तथा गम्भीर शब्दवाले मेघों और (चमकती) बिजलियोंसे डर-डर कर अपराधी पतियोंको भी शय्यापर वारवार आलिङ्गन करने लगती हैं।

[*पद्यानुवाद, मनहरन*]

सुनि सुनि सानदार कानन गँभीर घोर
घहर घनाघनके घूमत घटानको।

चौंकि चौंकि, चंचल-दृगंचलसों देखि देखि,
छितिछोर-छाई छवि छनदा-छटानकी ॥
भामिनी भयातुर ह्वै रूठीहू अनूठी आजु,
औचक अजीव ही सनी सी सुखसानकी।
परयंक प्यारेको निसंक भरि भरि अंक,
मेटि रहीं सब संक तन-मन-प्रानकी ॥

(१२)

विलोचनेन्दीवर-वारि-विन्दुभि-
र्निषिक्त-विम्बाधर-चारुपल्लवाः।
निरस्तमाल्याभरणानुलेपनाः
स्थिता निराशाः प्रमदाः प्रवासिनाम् ॥

अर्थ—इन दिनों, विदेशियोंकी स्त्रियां, अपने नयनकमलोंके जलविन्दुओंसे (अपने) विम्बसमान सुन्दर अधरपल्लवोंको भिजाये, हार आभूषण और अनुलेपन त्यागे, पतिके आनेकी आशा छोड़े, वैठीहुई हैं।

[पद्यानुवाद, रूपघनाक्षरी]

अविरल वारिधार दृग-अरविन्दन सों,
निसिदिन मेहकी घटासी दुरि ढारि ढारि।
सुखसिम्ब विम्बसे अधर अरुनारे प्यारे,
भावती भिजावती दुगुन दुख धारि धारि ॥
भूषन उतारि, छारि विविध विलास-लेप,
अभरन-हार-भार इतउत डारि डारि।

वैठी आजु वहुएं विदेसिनकी हूकि हूकि,
निपट निरास ये धिसूरैं हिय हारि हारि ॥

(१३)

विपाण्डवं कीटरजस्तृणान्वितं-
म्भुजङ्गवद् वक्रगति प्रसर्पितम् ।
ससाध्वसै र्भेककुलै र्विलोकित-
म्प्रयाति निम्नाभिमुखं नवोदकम् ॥

अर्थ—इस समय, अत्यन्त मलिन कीड़ों, गर्दों और तिनकों-से युक्त, सांपके समान टेढ़ी चालवाला, जोरसे वहता और भयभीत मेढ़कोंसे देखाजाता हुआ नया पानी, नीचेकी ओर वहा जारहा है।

[पद्यानुवाद, रूपघनाक्षरी]

अति मटमैले ये घंघोले रेत माटी मैल
तृण दल कीट काठ विविध वहायरहे।
टेढ़ो-मेढ़ी चालन सुतीव्रधार धारे धाय
भाजत भुजंग ज्यों भयावन से भायरहे ॥
भयभीत भूरि भेकराजन की भोरन सों
नीके निरखात ये सुमति सरसायरहे।
वाढ़यढ़े, विकट, वहत वरसाती नीर
ढरकत नीची ओर अजव सुहायरहे॥

(१४)

प्रफुल्ल-पत्रां नलिनीं समुत्सुकां
विहाय भृंगाः श्रुतिहारिनिस्वनाः ।
पतन्ति मूढाः शिखिनां प्रनृत्यतां
कलापचक्रेषु नवोत्पलाशया ॥

अर्थ—इस समय, कर्णसुखद स्वरवाले मूढ़ भौंरे, विकसित पत्रवाली खिली हुई कमलिनी (कमलसमूह) को छोड़, नाचतेहुए मोरोंके पंखोंपर, नवीन कमलकी आशासे (नये प्रकारका कमल जान) मड़रा रहे हैं ।

[पद्यानुवाद, रूपघनाक्षरी]

कानन मधुर मंजु गुंजत मनोहर ये
मौजभरे प्यारे मतवारे झुमतो मलिन्द ।
नाचत-मयूर-पुच्छमण्डल-पै मोहित ह्वै
नीलकंज गुनत नवीन अतिही अनन्द ॥
भरि भरि झौंर भौंर टकरात एते हाय
तजितजि आछे विकसित अरविन्दवृन्द ।
झेलत कसाल कोटि, फिरि फिरि धोखा खात,
रूप के रसिक यों परत परमा के फंद ॥

(१५)

वनद्विपानां नवतोयदस्वनै-
र्मदान्वितानां स्वनतां मुहुर्मुहुः ।

कपोलदेशा विमलोत्पलप्रभाः
सभृङ्गयूथैर्मदवारिभिः श्रिताः ॥

अर्थ–इससमय, नवीन मेघोंके शब्दोंसे मतवाले, वार-वार शब्द करनेवाले जंगली हाथियोंके स्वच्छकमल-सरीखे कपोलमण्डल, भौंरोंके झुंडोंसे युक्त मदजलोंसे व्याप्त रहाकरते हैं॥

[पद्यानुवाद, मनहरन]

नदत नवीननीर उनये घनाघनकी
घहर गँभीर घोर नीके सुनिसुनि ये।
सुमति सुहाते वन्यगज मदमाते मंजु
भरत चिकार मुंड ऊंचे धुनिधुनि ये॥
मद वरसाते, दरसाते कलकंज जैसे
गंडदेस उनके गठीले गुनिगुनि ये।
सुख सरसाते छवि छाते चंचरीकपुंज
वैठे वेस भाते मड़राते पुनिपुनि ये॥

(१६)

सतोय-नम्राम्बुद-चुम्बितोपलाः
समाचिताः प्रस्रवणैस्समन्ततः।
प्रवृत्तनृत्यैः शिखिभिः समाकुलाः
समुत्सुकत्वं जनयन्ति भूधराः॥

अर्थ–इस समय, जलसे भरे झुकेहुए बादलोंसे जिनके शिलातल चूमेगये हैं, जिनके चारोओर झरने झररहे और

मोर नाचरहे हैं, ऐसे ये पर्वत देखनेवालोंके हृदयमें उत्कण्ठा वढ़ारहे हैं ।

[पद्यानुवाद, रूपघनाक्षरी]

सिखरन चूमि चूमि, झूमि झूमि झोंका खात,
सघन घटानकी छटायें छवि छावैं आजु ।
चारौं ओर झहरात नीके नीरधारन ये,
निरझरझार यों सुमति सरसावैं आजु ॥
आनँदउमंगन मुरैल मतवारे प्यारे,
नाचि-नाचि परमा परम प्रगटावैं आजु ।
भूधर ये भूषित विविधवनकुंजनसों
चितवत चौगुनी उमंग उपजावैं आजु ॥

(१७)

कदम्ब-सर्जार्जुन-केतकी-वनं
विकम्पयँस्तत्कुसुमाधिवासितः ।
सशीकराम्भोधर-संग-शीतलः
समीरणः कं न करोति सोत्सुकम् ॥

अर्थ—इनदिनों, कदम्ब, साल, अर्जुन, एवं केतकीके वनको कँपाताहुआ, उनके पुष्पोंसे सुगन्धित और जलबिन्दुभरे बादलोंके संगसे शीतल, वायु, किसको न उत्कण्ठित कर देती है ।

[पद्यानुवाद, रूपघनाक्षरी]

अर्जुन असोक साल केतकी कदम्ब अम्ब
कटहर केदली करौंदन कँपावैहै ।

लागि लागि सौरभसनित उन पुष्पनसों
सुमति सुवास आसपास प्रगटावैहै ॥
नीरभरे घनकी घटान परसत वेस
हीतलसुखद स्वच्छ सीतल सुहावैहै ।
ऋतु-बरसातकी सरस पुरवाई पौन
तनमन काके ना अनंग उमगावैहै ॥

(१८)

शिरोरुहैः श्रोणितटावलम्बिभिः
कृतावतंसैः कुसुमैः सुगन्धिभिः ।
स्तनैः सुपीनैर्वदनैः ससीधुभिः
स्त्रियो रतिं सञ्जनयन्ति कामिनाम् ॥

अर्थ—इनदिनों, स्त्रियां कमरपर लटकतेहुए केशोंसे, भूषणबनायेहुए सुगन्धित पुष्पोंसे, पुष्ट और ऊंचे स्तनोंसे तथा मद्ययुक्त मुखोंसे कामियोंकी कामना उत्तेजित करदेती हैं।

[पद्या[illegible]वाद, रूपघनाक्षरी]

नवल-नितम्बनलों स[illegible]ने सहरात वेस
चीकने चुभी[illegible] केसपासन सुहातीं आजु ।
महँदी-महावर-के रंगन रंगीली वाल
भूषन-प्रसूनन सुगन्ध सरसातीं आजु ॥
उन्नत-सघन-उरजन इतरातीं मंजु
माधवीमधुर * अधरन छविछातीं आजु ।
खासी चंचला † सी मृदुहासिन सों भासी ये
बिलासिनके चित्त चाव चौगुनी बढ़ातीं आजु ॥

* माधवी=(माध्वी) मदिरा । † चञ्चला=बिजली ।

(१६)

तडिल्लताशक्रधनुर्विभूषिताः
पयोधरास्तोयभरावलम्बिनः ।
स्त्रियश्च काञ्चीमणिकुण्डलोज्ज्वला
हरन्ति चेतो युगपत्प्रवासिनाम् ॥

अर्थ—इन दिनों, इन्द्रधनुष (पनसोखा) से विभूषित बिजलियां, जलके बोझको धारणकरनेवाले बादल और कर्धनी तथा मणिकुण्डलोंसे विभूषित स्त्रियां विदेशियोंके मनको तुरन्त मोहलेती हैं ।

[*पद्यानुवाद, मनहरन*]

चारौंओर चपला चमाचम चमंकै चारु,
चारौंओर इन्द्रधनु-परभा प्रकासैहै ।
चारौं ओर घोर घनाघनकी घनेरी घटा
निसदिन वारिवुन्द भरिभरि भासैहै ॥
किंकिनी सँवारे कटि कामिनी कलोलैं लोल
जरित जवाहिरात कुण्डल उजासैहै ।
पावसविलास यों वियोगिन विदेसिनके
हेरत हरत हीय हौंसन हुलासैहै ॥

(२०)

[*वसन्ततिलकं वृत्तम्*]

मालाः कदम्बनव-केसर-केतकीभि-
रायोजिताश्शिरसि बिभ्रति योषितोऽद्य ।

कर्णान्तरेषु ककुभद्रुममञ्जरीणां
श्रोत्रानुकूलरचितानवतंसकाँश्च ॥

अर्थ—इनदिनों, स्त्रियाँ कदम्बके नवीन केसरोंकी तथा केतकियोंकी माला शिरपर और अर्जुनवृक्षकी मञ्जरियों-से कानके योग्य बनाये हुए भूषणोंको कानोंमें धारण करती हैं।

[पद्यानुवाद, मनहरन]

मालती सुमल्लिका कदम्बकेसरनकी
सुकेतकी-चमेलिनकी गूंथि गूंथि माला ये।
चोटिनमें पाटिनमें जूरनकंगूरन में
कंठन करनमें लपेटि वेस वाला ये ॥
अरजुन-मंजरीन विरचि विसेस वेस
सुमति असेस मेलि मंजुल मसाला ये ॥
पैन्हि पैन्हि कानन करनफूल फूलीफिरँ
आनन अनूप ज्यों फवत फूलडाला ये ॥

(२१)

कालागुरुप्रचुरचन्दन-चर्चिताङ्ग्यः
पुष्पावतंससुरभीकृतकेशपाशाः।
श्रुत्वा ध्वनिं जलमुचां त्वरितम्प्रदोषे
शय्यागृहं गुरुगृहात्प्रविशन्ति नार्यः ॥

अर्थ—इनदिनों, रातमें, मेघोंकी ध्वनि सुनसुन कर, स्त्रियां, अगर और चन्दनके लेपसे चर्चित हो, फूलोंके गहनोंसे

चोटियोंको सुवासित कर, सासके घरसे घराऊ कामोंको समाप्त करकरके अपनेअपने शयनके घर में (पतिके निकट) तुरन्त चली जाती हैं ।

[*पद्यानुवाद, रूपघनाक्षरी*]

केसर अगर खस चन्दन कपूर लेप
लेपिलेपि अंगन सुरंगन सुहातीं आजु ।
नानाभांति वासित सुमनके सुभूपनसों
केसन सँवारि वेस वेसन बनातीं आजु ॥
सावनी घटाकी धुन सुनत सुहावनी ये
गुरुजनगेहसों तुरत सतरातीं आजु ।
प्यारी प्रानप्यारेके सयनगृह जातीं रैन
मैनमदमाती इतरातीं छविछातीं आजु ॥

(२२)

[*मालिनीवृत्तम्*]

कुवलयदलनीलैरुन्नतैः स्तोकनम्रै-
र्मृदुपवनविधूतैर्मन्दमन्दं चलद्भिः ।
अपहृतमिव चेतस्तोयदैस्सेन्द्रचापैः
पथिकजनबधूनां तद्वियोगाकुलानाम् ॥

अर्थ—इनदिनों, ऐसा जानपड़ताहै कि नीलकमलके पत्तोंके सदृश नीले, ऊंचे, जलसे कुछ-कुछ झुके, मन्दमन्द वायुसे उड़ाये, धीरेधीरे चलते हुए, इन्द्रधनुषयुक्त मेघोंसे, प्रिय-वियोगसे व्याकुल पथिकजनोंकी स्त्रियोंके चित्त, मानो चुरालिये गये हैं ।

[पद्यानुवाद, मनहरन]

नीले नीलकंज से सुमति अतिऊंचे कहीं
नीचे तोयभारन, भिरे से भूमितलसों।
मन्द-मन्द वहत समीरसे उड़ाये अच्छ,
मन्द मन्द डोलत चहूंधा ये चपलसों॥
धारे इन्द्रधनुप पयोधर धुंधारे कारे
अतिअनियारे पूर्ण पावस के जलसों।
चोरेलेत चित ये वियोगिनीवधूजनके
घिरत घटानकी छटान वायुवलसों॥

(२३)

मुदित इव कदम्बैर्जातपुष्पैः समन्तात्
पवनचलितशाखैः शाखिभिर्नृत्यतीव।
हसितामिव विधत्ते सूचिभिः केतकीनां
नवसलिलनिषेकाच्छान्ततापो वनान्तः॥

आज नवीनजलद्वारा सिक्त होनेसे तापहीन वनप्रान्त, चारो ओर कुसुमित कदम्बोंसे प्रमुदित सा, पवन-कम्पित शाखायुक्त वृक्षोंसे नाचता सा, और केतकियोंकी कलियों (के खिलने) से हंसता सा जानपड़रहा है।

[पद्यानुवाद, रूपघनाक्षरी]

कंटकित नूतन कदम्बनके पुष्पनसों
है रहीं अनन्दित लता ज्यों लग लूमि-लूमि।
चारौं ओर पवनप्रचारी झार-डारिनसों
नाचि सी रही हैं मनो झुकि-झुकि झूमि-झूमि॥

केतकी-कुसुमअवलीनकी खिली कलीन
　　मुरि मुसक्यात सी छवीली छवि चूमि-चूमि ।
नीके नये नीरधार-धारन अन्हाये तन-
　　तापहिं नसाये आज राजरहीं वनभूमि ॥

(२४)

शिरासि वकुलमालां मालतीभिःसमेतां
　　विकसितवनपुष्पैर्यूथिकाकुड्मलैश्च ।
विकचनवकदम्बैः कर्णपूरम्बधूनां
　　रचयति जलदौघः कान्तवत् काल एषः ॥

अर्थ—मेघोंके समूहोंसे युक्त यह वर्षाकाल, आजकल, स्त्रियोंके जूड़ोंकेलिये खिलेहुए जंगली फूलों, जुहीकी कोंढ़ियों तथा मालती और मौलसरीके पुष्पोंकी माला एवं खिले नये कदम्बोंका कर्णफूल वनाता है, जैसे कोई प्यारा अपनी प्यारीकेलिये पुष्प-भूषण वनाता हो ।

[पद्यानुवाद, मनहरन]

मनहरवास मंजु मालतीसुमन मेलि
　　मौलसरी-मालन सुमति सुख दैरह्यो ।
खिलीखिली यूथिका-कलिन वनपुष्पन हूं
　　भांतिभांति भासित सुभूषन सजैरह्यो ॥
फूले नौल कंटकित कलित कदम्बनके
　　कै कै कर्नकुण्डल अजव छवि छैरह्यो ।
जलधरमालाको समय सुखदायी आजु
　　खासो प्रानप्यारो प्रानप्यारिनको ह्वैरह्यो ॥

(२५)

दधति कुचयुगाग्रैरुन्नतैर्हारयष्टिम्
प्रतनु-सित-दुकूलान्यायतैः श्रोणिविम्बैः।
नवजलकणसेकादुन्नतां रोमराजिं
त्रिबलिबलिविभागैर्मध्यदेशैश्च नार्य्यः॥

अर्थ—इनदिनों, स्त्रियां, ऊंचे कुचमण्डलोंसे पुष्पमाला, चौड़े नितम्बोंसे झीने एवं उजले पट्टाम्बर, और त्रिबलिरेखायुक्त मध्यभागोंसे नवीन जलविन्दुसिक्त जगीहुई रोमावली धारण करती हैं।

[*पद्यानुवाद, रूपघनाक्षरी*]

ओजभरे ऊंचे उगे उभय उरोजन पै
धारतीं सुहार हार हिलत हमेलैं आजु।
झलकत आयत नितम्ब सुखसिम्बनपै
झीनी सेतसारिन सँवारि मौज मेलैं आजु॥
सीर नीर तनपै परेते नये नीरदके
ठाढ़ो-रोमराजिन विराजि रुचि रेलैं आजु।
उदरसुरंगवारी त्रिवलितरंगवारी
रतिरनरंगवारी कामिनी कुलेलैं आजु॥

(२६)

नवजलकणसेकाच्छीततामादधानः
कुसुमभरनतानाम्भञ्जकः पादपानाम्।

जनितसुरभिगन्धः केतकीनां रजोभिः
परिहरति नभस्वान् प्रोषितानाम्मनांसि ॥

अर्थ—नवीन जलकी वृष्टिसे ठंढी, पुष्पभारसे झुके वृक्षोंको भग्नकरनेवाली, और केतकियोंके परागोंसे सुगन्धित वायु, इनदिनों विदेशियोंके मनको तुरन्त हरलेती है।

[पद्यानुवाद, रूपघनाक्षरी]

सींचो नये जलसों सुसीतल ह्वै हीलतसों
सीतलकरनि जगतीतल सबेई कोन।
दल-फल-फूलनके भारन झुकी सो,
उझुकी सो, तरुडारनकी भंजनि तृपाकी दौन ॥
केतकीप्रसूनन के प्रचुरपरागन सों
सुमति सुवास खास भरत सुहाने गौन।
विरहिविदेसिनके चितको चुरायेलेति
भोगिन भुरायेलेति यह पुरवाई-पौन ॥

(२७)

जलभरनमितानामाश्रयोऽस्माकमुच्चै-
रयमिति जलसेकैस्तोयदास्तोयनम्राः ।
अतिशयपरुषाभिर्ग्रीष्मवह्नेः शिखाभिः
समुपजनिततापं ह्लादयन्तीव विन्ध्यम् ॥

अर्थ—इनदिनों "जब हम जलके भारसे झुकते हैं, तब यही हमारा आश्रय होताहै" यह समझकर जलसे झुके-

हुए मेघ गरमीकी वनाग्निके अत्यन्त कड़े तापसे तपेहुए विन्ध्याचलको जल सींचसींचकर आह्लादित से कररहे हैं।

[पद्यानुवाद, मनहरन]

नीर-भार-नमित सुमति सुखदेनहारे
आस्रय पियारे वेस विन्ध्यमहीधर हैं।
खरतर जेठके जलाकन जलाये
झुलसाये त्यों दवानलसों आठहू पहर हैं॥
भरि-भरि वारि यातें सघन घनाघन ये
घेरत चहूंधासों मचावत घहर हैं।
गिरिहिं जुड़ावत से झुकि-झुकि झूमि-झूमि
झहरैं झकोरैं झहरावैं नीरझर हैं॥

(२८)

बहुगुण-रमणीयो योषितां चित्तहारी
तरुविटपलतानां बान्धवो निर्विकारः।
जलदसमय एष प्राणिनां प्राणहेतु-
र्दिशतु तव हितानि प्रायशो वाञ्छितानि॥

अर्थ—बहुत गुणोंसे रमणीय, कामिनियोंके चित्तको हरनेवाला, वृक्षशाखाओं और लताओंका सच्चामित्र एवं प्राणियोंका प्राणद यह वर्षाकाल सदा तुम्हारी * शुभकामनाओं को पूर्ण कियाकरे।

* यह 'तुम्हारी' पद श्रीकालिदास की ओरसे उन की प्यारी के प्रति और अनुवादक की ओरसे वाचकवृन्दके प्रति समझना चाहिये।

[*पद्यानुवाद दुमिल-सवैया*]

गुण सुन्दर भूरि भरे सुमती, वनितान विनोद बढ़ायोकरै।
सुखदेत लता-तरु-पौधन कों, हरियाली छटा छिति छायोकरै॥
तनताप नसावत बारहिबार, सुवारि सदा बरसायोकरै।
यह पावस जीवन जीवन देत सुवासना तेरी पुरायोकरै॥

——:o:——

इति-महाकवि-श्रीकालिदास-विरचिते ऋतुसंहारकाव्ये
सुमति-शिवप्रसाद-रचित-गद्यपद्यानुवादसंवलिते
वर्षावर्णनं नाम द्वितीयः सर्गः।

शरद्वर्णनम् ।

(शरद् = आश्विन-कार्तिक ।)

[मूलं वसन्ततिलका-वृत्तम्]

(१)
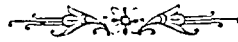
काशांशुका विकचपद्ममनोज्ञवक्त्रा
सोन्माद-हंसरव-नूपुरनाद-रम्या ।
आपक्वशालिललिता तनुगात्रयष्टिः
प्राप्ता शरन्नववधूरिव रम्यरूपा ॥

अर्थ—कासरूपी पट्टाम्बर पहने, विकसितकमलरूपी सुन्दर-मुखवाली, उन्मत्त हंसोंकी ध्वनिरूपी नूपुरनिनादसे रमणीय, कुछकुछ पकेहुए धानोंसे सुशोभित, पतले शरीर और मनोहर आकृतिवाली शरद नवोढ़ानायिकासी आ पहुंची।

[पद्यानुवाद—गीतिका]

वस्त्र कासविकासमय सरसिज-वदन-शोभासनी ।
मत्त-सारस-हंसरव—शब्दित मनोहर पैजनी ॥
पक्वधान-सुरंग-रंजित नव्यतन सुखमामयी ।
दिव्य दुलही सी सरद उलही अहाहा ! आगयी ॥

ऊंचे कछाररूपी जङ्घा और नितम्बवाली, मदभरी नायिकाओं की सी नदियां आज मन्दगतिसे जारही हैं।

[पद्यानुवाद]

मीनचेलहवाकी चमक मणिकिंकिणी सी देखिये।
तीरवर्ति मरालपंगति माल उज्वल पेखिये॥
सरित-उच्चकछार--जंघनितम्बउन्नत कामिनी।
जारहीं गम्भीर ये मदमत्त ज्यों गजगामिनी॥

(४)

व्योम क्वचिद्रजतशंखमृणालगौरै-
स्त्यक्ताम्बुभिर्लघुतया शतशः प्रयातैः।
उत्प्रेक्ष्यते पवनवेगचलैः पयोदै-
राजेवचामरवरैरभिवीज्यमानः॥

अर्थ—अव आकाश, कहीं चांदी शंख और कमलनालके सदृश उजले, जलहीन अतएव हल्के होने से सैकड़ों भांति बिखरे एवं वायुवेग से चलाये मेघोंके द्वारा वीजित होता हुआ, सैकड़ो चामरोंसे वीजित राजा की नाईं दिखाई दे रहा है।

[पद्यानुवाद]

चाँद-चाँदी-शंख-सरसिजनाल से उजले कहीं।
हीनजल हलके अनेको भांतिसे उबले कहीं॥
वायुचालित मेघ चारो ओर उमड़े चलरहे।
महाराज अकाशको यह चौंरसे हैं झलरहे॥

(५)

भिन्नाञ्जनप्रचयकान्ति नभो मनोज्ञं
बन्धूकपुष्परजसारुणिता च भूमिः।
वप्राश्च पक्वकलमावृतभूमिभागा
उत्कण्ठयन्ति न मनो भुवि कस्य यूनः॥

अर्थ—इस समय, गाढ़े अंजनसमूह की आभा से युक्त सुन्दर आकाश, दुपहरिया के फूलों के रज से लाल भूमि, और पके धानों से ढकेहुए भूमिभागों से युक्त खेत, संसार में किस युवक के मन को नहीं उत्कण्ठित करते।

[पद्यानुवाद]

गाढ़-अञ्जनराशि-रञ्जित नील स्वच्छ अकाश है।
दुपहरीपुष्पोंके रजसे लाल भूतल पास है॥
खेत यों परिपक्वधानोंके सुवालोंसे भरे।
किस युवकका चित्त ये उत्सुक नहीं करते खरे॥

(६)

मन्दानिलाकुलितचारुविशालशाखः
पुष्पोद्गमप्रचयकोमलपल्लवाग्रः।
मत्ताद्विरेफपरिपीतमधुप्रसेक-
श्चित्तं विदारयति कस्य न कोविदारः॥

अर्थ—जिसकी सुन्दर और विशाल शाखाएं मन्द पवनसे हिलायी गयी हैं, जिसके पल्लवोंके अग्रभाग पुष्पोंके विकाससे

सुहावने हो रहे हैं, जिसकी मधुधारा मतवाले भौंरोंसे पियी गयी है, ऐसा कचनार, इस समय, भला किसके चित्त को नहीं वेधता ?

[पद्यानुवाद]

मन्दवायुविलोल जिसकी डालियां हैं डोलतीं।
लाल-पल्लव-फूल-मय कलियां सुचारु कलोलतीं॥
पी सुरस जिसका अली करते सरस गुंजार हैं।
चित्त ये किसका नहीं कचनार करते पार हैं॥

(७)

तारागणप्रचुरभूषणमुद्वहन्ती
मेघोपरोधपरिमुक्तशशाङ्कवक्त्रा।
ज्योत्स्नादुकूलममलं रजनी दधाना
वृद्धिम्प्रयात्यनुदिनम्प्रमदेव बाला॥

अर्थ—नक्षत्रगणरूपी अनेक भूषण धारण किये, मेघमण्डलमें से निकले हुए चन्द्रमण्डल-रूपी-मुखवाली रात्रि, चांदनी-रूपी स्वच्छ सारी पहिरे नवयौवना नायिकाकी नाईं प्रतिदिन बढ़ती जारही है।

[पद्यानुवाद]

भूरिभूषणसम सजग तारागणोंसे जगमगी।
मेघमण्डलसे कढ़ी मुखचन्द्रकिरणोंसे उगी॥
दिव्य दीपित चांदनी-सारी सँवारे यामिनी।
नित्य बढ़ती जारही ज्यों नव्य नीकी भामिनी॥

(८)

कारण्डवाननविघट्टितवीचिमालाः
कादम्बसारसकुलाकुलतीरदेशाः ।
कुर्वन्ति हंसविरुतैः परितो जनस्य
प्रीतिं सरोरुहरजोरुणिताश्च नद्यः ।

अर्थ—जिनकी लहरें, हारिल चकवा आदि जलपक्षियोंकी चोंचोंसे छिन्नभिन्न होगयी हैं, जिनकी तीरभूमि, बतक सारस-आदि से भरगयी है, जो कमलकी धूलियोंसे लाल होरही हैं, ऐसी नदियां, चारो ओर हंसोंके शब्दोंसे मनुष्योंको प्रसन्न कररही हैं ।

[पद्यानुवाद]

टूटतीं जिनकी तरंगें चोंच चकवोंकी लगे ।
तीरपर जिनके विनोदी हंससारस रसपगे ॥
पङ्करजसे लाल ये नदियां नई छवि छारहीं ।
हंसकूजनसे सुरम्य सुहारहीं मन भारहीं ॥

(९)

नेत्रोत्सवो हृदयहारिमरीचिमालः
प्रह्लादकः शिशिरशीकरवारिवर्षी ।
पत्युर्वियोगविषदिग्धशरक्षतानां
चन्द्रो दहत्यनुदिनन्तनुमङ्गनानाम् ॥

अर्थ—इनदिनों, नेत्रोंका उत्सवस्वरूप, मनोहर किरणा-वलीसे युक्त, आनन्दवर्धक, शीतके बिन्दुजलको बरसानेवाला

चन्द्रमा, पतिके वियोगरूपी विषवाणोंसे विधीहुई नारियोंके शरीरको प्रतिदिन जलाया करताहै।

[पद्यानुवाद

चक्षुरञ्जन चित्तहर शीतलकिरणमाला-विशाल।
शीत-शीतल विन्दुजल-वर्षी मनोमोदक मसाल॥
चन्द्रमा यह रातदिन तनमें बढ़ाता दाह है।
नारियोंके, जिनके विरही जीसे कढ़ती आह है॥

(१०)

आकम्पयन् फलभरानतशालिजालान्
आनर्तयन् कुरुवकान् कुसुमावनम्रान्।
प्रोत्फुल्लपङ्कजवनां नलिनीं विधुन्वन्
यूनां मनो मदयति प्रसभं नभस्वान्॥

अर्थ—इनदिनों, फलके बोझसे झुकेहुए धानोंको कंपाती हुई, फूलोंसे झुकेहुए कुरैयाके फूलोंको नचातीहुई, विकसित कमलोंसे युक्त कमलश्रेणीको झकोरतीहुई वायु, तरुणजनोंके मनको बरबस मत्त करदेतीहै।

[पद्यानुवाद]

मन्दमन्द कँपारहीहै नम्र धानोंकी कतार।
है डुलाती सुबसनी शुभ सेवतीपुष्पोंकी डार।
फुल्लकमलोंके वनोंको है हिलाती बारबार।
चित्त युवकोंका चुरालेती अहा वहती बयार!!

(११)

सोन्मादहंसमिथुनैरुपशोभितानि
स्वच्छानि फुल्लकमलोत्पलभूषितानि ।
मन्दप्रचारपवनोद्गतवीचिमाला-
न्युत्कण्ठयान्ति हृदयं सहसा सरांसि ॥

अर्थ—मतवाली हंसदम्पतियोंसे शोभित, विकसित श्वेत तथा रक्त कमलोंसे भूपित, धीरे धीरे बहतीहुई वायुसे झिलमिलाते हुए तरङ्गभङ्गोंसे युक्त, स्वच्छ सरोवर (इनदिनों) युवकजनोंके हृदयको तुरन्त उत्कण्ठित करदेते हैं।

[पद्यानुवाद]

तीरपर चरते सुहंसी-हंस-वृन्द विराजमान ।
नीरपर यों स्वच्छ श्याम सरोजवर विभ्राजमान ॥
मन्द बहती वायुसे लहरें ललित लहरारहीं ।
क्या तलावोंकी अहा अद्भुत छटायें छारहीं !!

(१२)

नष्टं धनुर्वलभिदो जलदोदरेषु
सौदामिनी स्फुरति नापि वियत्पताका ।
धुन्वन्ति पक्षपवनै र्न नभो बलाकाः
पश्यन्ति नोन्नतमुखा गगनं मयूराः ॥

अर्थ—अब पनसोखा मेघोंमें नहीं दीखता, आकाशकी पताकारूपिणी बिजली अब नहीं चमकती, बकुलियां पंखके पवनोंसे अब आकाशको नहीं धुनतीं और मोर अब ऊपर मुह उठाये आकाशकी ओर नहीं देखते।

[पद्यानुवाद]

इन्द्रचापोंकी घटाओंपर छटा छाती नहीं।
दामिनी नभकी अटापर दौड़ दिखलाती नहीं॥
अब नहीं बकपांत उड़ती दीखती आकाशमें।
मोर मुह उन्नत किये अब घूमते न हुलासमें॥

(१३)

नृत्यप्रयोगरहिताञ्छिखिनो विहाय
हंसानुपैति मदनो मधुरप्रगीतान्।
त्यक्त्वा कदम्बकुटजार्जुनसर्जनीपान्
सप्तच्छदानुपगता कुसुमोद्गमश्रीः॥

अर्थ—अब कामदेव, नाचरंगरहित मोरोंको छोड़ मधुर-ध्वनिवाले हंसोंके चित्तमें समागया। और पुष्प-विकाशको शोभा कदम्ब, कोरैया, अर्जुन, साल और नील-अशोकके वृक्षोंको छोड़ छतुइनके वृक्षोंमें आगयी।

[पद्यानुवाद]

छोड़कर अब नाचरंग-विहीन-मोरोंको मदन।
मंजु-कूजित-हंसगणको है सताता रातदिन॥
छोड़ अर्जुन साल कदमों औ कुरैयोंके दराज।
पुष्पशोभा छारही छतुइनके वृक्षों हो पै आज॥

हरणकरतीहुई (शीतल मन्द सुगन्ध) प्रभात-वायु नर-नारियोंको उत्कण्ठित करदेती है।

[पद्यानुवाद]

नीलकमलों-पद्मकुमुदोंको कँपाती वारवार।
उनमें लगनेसे सुखद शीतल सुगन्धित स्वच्छसार ॥
पत्तियोंसे है गिराती ओसकी बूंदें अपार।
नारिनरके चित्त यह उमगारही प्राती बयार ॥

(१६)

सम्पन्नशालिनिचयावृतभूतलानि
सुस्थस्थितप्रचुरगोकुलशोभितानि ।
हंसैश्च सारसकुलैः प्रतिनादितानि
सीमान्तराणि जनयन्ति जनप्रमोदम् ॥

अर्थ—जहांके भूमिभाग परिपक्व धानोंसे ढकेहुए हैं, जो सुखसे बैठेहुए अनेक गाय-बैलोंसे सुशोभित और हंससारसआदि जलपक्षियोंसे शब्दित हैं; गांवोंके ऐसे सीमाप्रान्त (इन दिनों) मनुष्योंके हृदयमें आनन्द उत्पन्न करदेते हैं।

[पद्यानुवाद]

खेत हैं परिपक्वधानोंसे कहीं लहरारहे।
बैठकर सुखसे कहीं गो-गोप सौम्य सुहारहे ॥
हंससारसके निकर ये कूदते मन भारहे।
ग्रामसीमाप्रान्त यों सबके विनोद बढ़ारहे ॥

(१७)

हंसैर्जिता सुललिता गतिरङ्गनाना-
मम्भोरुहैर्विकासितैर्मुखचन्द्रकान्तिः।
नीलोत्पलैर्मदचलानि विलोचनानि
भ्रूविभ्रमाश्च सरितान्तनुभिस्तरंगैः॥

अर्थ—(इनदिनों) नायिकाओंकी ललितगति हंसोंसे, मुखचन्द्रकी शोभा विकसित कमलोंसे, मदभरे चञ्चल नेत्र नीलकमलोंसे तथा भौहोंके विलास नदियोंकी छोटी तरङ्गोंसे जीतलियेगये हैं।

[पद्यानुवाद]

नारियोंकी धीरगति हंसोंने जीती आज है।
फुल्लकमलोंने वदनविधुका लजाया साज है॥
नील-नीरजराजिने उनकी नयनशोभा हरी।
भंगि भौहोंको तरंगोंने हरी शोभाभरी॥

(१८)

श्यामालताः कुसुमभारनतप्रवालाः
स्त्रीणां हरन्ति धृतभूषणबाहुकान्तिम्।
दन्तावभासविशदस्मितवक्त्रकान्ति-
म्बन्धूकपुष्परुचिरा नवमालती च॥

अर्थ—फूलोंके वोझसे झुकेहुए पल्लवोंसे युक्त श्यामालतायें स्त्रियोंकी भूषणभूषित भुजाओंकी शोभाको और दुपहरीके फूलोंके सहित सोभती नेवाड़ी, दांतोंकी चमक और स्वच्छ मुसकानयुक्त मुखकी शोभाको धारण कररही हैं।

[पद्यानुवाद]

शोभती श्यामालता दलफूलभारोंसे झुकीं।
नारियोंकी वांह सी वहुआभरण-आभा-ढकीं॥
दुपहरी-फूलोंके वीच नई नेवाड़ी भ्राजती।
रक्तदन्तउजास हासविलास मुखछवि छाजती॥

(१६)

केशान्नितान्तघननीलविकुञ्चिताग्रा-
नापूरयन्ति वनिता नवमालतीभिः।
कर्णेषु च प्रचलकाञ्चनकुण्डलेषु
नीलोत्पलानि विकचानि निवेशयन्ति॥

अर्थ—(इनदिनों) स्त्रियां अत्यन्त घने नीले और घुंघुराले केशोंको नेवाड़ीके फूलोंसे शोभित कररहीं तथा चञ्चल सुवर्णकुण्डलयुक्त कानोंपर विकसित नीलकमल धारण कररहीहैं।

[पद्यानुवाद]

श्याम घुँघरारी सघन अलकावली मुखपर ललाम।
रचरहीं नवमालिकामुकुलोंसे अवलाएं निकाम॥
हेमनिर्मित लोल कुण्डल कलित-निजकानोंसे आज।
नारिगण हैं धारतीं नवनीलनीरज श्यामसाज॥

(२०)

हारैः सचन्दनरसैः स्तनमण्डलानि

श्रोणीतटं सुविपुलं रसनाकलापैः ।

पादाम्बुजानि वरनूपुरशेखरैश्च

नार्यः प्रहृष्टमनसोऽद्य विभूषयन्ति ॥

अर्थ—(इनदिनों) प्रसन्नचित्त कामिनीगण चन्दन-विलेपनों और हारोंसे स्तनमण्डलोंको, कर्धनीकी लड़ियोंसे उन्नत नितम्बोंको और सुन्दर नूपूरभूषणोंसे चरणकमलोंको विभूषित कररही हैं ।

[पद्यानुवाद]

आज मलयज माल उरजोंपर विराजित चारुतर।
रूपसिन्धु नितम्बपर यों किंकिणीके चार लर॥
पद्मचरणोंमें मनोहर पैजनी झनकारमय।
धारती हैं नारिगण निज आभरण शृङ्गारमय॥

(२१)

[मालिनीवृत्त]

स्फुटकुमुदचितानां राजहंसाश्रितानां

मरकतमणिभासा वारिणा पूरितानाम् ।

श्रियमातिशयरूपां व्योम तोयाशयानां

वहति विगतमेघञ्चन्द्रतारावकीर्णम् ॥

अर्थ—(इनदिनों) मेघरहित चन्द्रतारा-विराजित अकाश, खिले हुए कोईं के पुष्पों से व्याप्त, राजहंसोंसे सेवित, मरकतमणिसदृश जलसे परिपूर्ण जलाशयोंकी उत्तम शोभा धारण कररहा है ।

[पद्यानुवाद]

आज स्वच्छ सरोवरोंमें नील जल मरकतसमान ।
स्वेत विकसित कुमुदहंसविलास उसपर भ्राजमान ॥
कररहा उनसे है सरवर व्योम भी यह स्वच्छ श्याम ।
मेघहीन सुचन्द्र-तारा-चंद्रिका-चकमक-ललाम ॥

(२२)

दिवसकरमयूखैर्बोध्यमानम्प्रभाते
वरयुवतिमुखाभम्पङ्कजं जृम्भतेऽद्य ।
कुमुदमपि गतेऽस्तं लीयते चन्द्रबिम्बे
हसितमिव वधूनाम्प्रोषितेषु प्रियेषु ॥

अर्थ—प्रातःकालमें सूर्यकिरणोंसे विकसितकियाजाता-हुआ नवीन नायिकाओंके मुखके समान कमल, इनदिनों, खिलरहा है । कोईं भी, चन्द्रमाके अस्त होजानेपर, पतियोंके विदेशचले जानेसे वहुओंकी हँसीके समान मुरझारहीहै ।

[पद्यानुवाद]

प्रात रवि-आभा-विभासित सित कमल ये खिलरहे ।
नव्य-सुन्दरि-नारि-मुखमण्डलविभा से मिलरहे ।

इन्दुअस्तहुए कुमुद कुम्हलारहे द्युतिहीन ये।
कुलवधूमुसकान ज्यों प्रिय-विरह-शोक-मलीन ये॥

(२३)

शरदि कुमुदसङ्गाद् वायवो वान्ति शीता,
विगतजलदवृन्दा दिग्विभागा मनोज्ञाः।
विगतकलुषमम्भः श्यानपङ्का धरित्री,
विमलकिरणचन्द्रं व्योम ताराविचित्रम्॥ *

अर्थ—इस शरदऋतुमें, वायु कोईके सङ्गसे शीतल वह रही है, दिशाओंके प्रान्त मेघोंसे रहित होनेके कारण सुन्दर दिखाई पड़ते हैं, जल निर्म्मल हो गया, पृथ्वीके कीचड़ सूखगये, और आकाश निर्म्मलकिरणवाले चन्द्रमासे युक्त तथा ताराओंसे चित्रित होगया है।

[पद्यानुवाद]

कुमुदबनसंसर्ग-शीतल मन्द वैहर वहरही।
जल हुए निमल अपंक, सुश्यानमय शोभित मही॥
मेघहीन सुरम्य सब दिक्प्रान्त अति मनभारहे।
चांदनी शशि व्योम तारा स्वच्छ सुमति सुहारहे॥

(२४)

असितनयनलक्ष्मीं लक्षयित्वोत्पलेषु
कणितकनककाञ्चीं मत्तहंसस्वनेषु।

* इस श्लोकके अनन्तर दो श्लोक औरभी किसी २ पुस्तकमें देखे जाते हैं; जो इस पुस्तकमें नहीं हैं।

अधररुचिरशोभा बन्धुजीवे प्रियायाः
पथिकजन इदानीं रोदिति भ्रान्तचित्तः ॥

अर्थ—इस समय नीलकमलोंमें अपनी प्यारीके कजरारे नेत्रोंकी शोभाको, मतवाले हंसोंके शब्दोंमें उसकी बजती हुई सुवर्णकिंकिणीको एवं दुपहरियाके पुष्पोंमें उसके होठोंकी सुरम्य शोभाको देख भ्रममें पड़े बटोही विरहविद्ध हो) रो रो मरते हैं।

[*पद्यानुवाद, मालिनी*]

सुनयन कजरारेकी छटा उत्पलोंमें।
सुमधुर धुनि काञ्चीकी सुहंसीदलोंमें ॥
निरख अधरलाली दुपहरीमें प्रियाकी।
पथिक विकल होते शान्ति खोते हियाकी ॥

(२५)

स्त्रीणां निधाय वदनेषु शशाङ्कलक्ष्मीं
हास्ये विशुद्धवदने कुमुदाकरश्रीम्।
बन्धूककान्तिमधरेषु मनोहरेषु
क्वापि प्रयाति सुभगा शरदागमश्रीः ॥

अर्थ—(इस) शरदकी शोभा, स्त्रियोंके मुखोंपर अपने चन्द्रमाकी छटा, निर्मलविकसितमुखयुक हास्योंपर कुमु[illegible]

खानकी शोभा एवं मनोहर होठोंपर दुपहरीपुष्पोंकी शोभा स्थापितकर अब कहीं चलीजाना चाहरही है ।

[पद्यानुवाद]

तरुणि-मुख-छटामें चन्द्रशोभा छिपाकर
छवि कुमुदवनोंकी स्वच्छ-हासोंमें छाकर ।
धर अधरदलोंमें दुपहरीकी ललाई
शरद यह कहीं अब जारहीहै सुहाई ॥

(२६)

विकचकमलवक्त्रा फुल्लनीलोत्पलाक्षी
कुसुमितनवकाशस्वेतवासो वसाना
कुमुदरुचिरहासा कामिनीवोन्मदेयं
परिदिशतु शरद्वश्चेतसः प्रीतिमग्रयाम्

अर्थ—विकसित-कमलरूपी मुखवाली, खिलेनीलकमलरूपी नेत्रवाली, पुष्पित नयेकासरूपी चारो ओर फैली हुई बड़ी साड़ी पहिरे, काईरूपी मधुरहास्यवाली कामभरी कामिनी सी यह शरद तुम्हारे चित्तको परम प्रसन्नता प्रदान करे।

पद्यानुवाद, छप्पय ।]

विकसित-सित-अरविन्दवदनि कलकुमुदसुहासा ।
नीलकमलकृतनयन विभासितविशदविलासा ॥
कुसुमित नूतन स्वच्छकास कल्पितसितसारी ।
कामकलाकसमसी कामिनी सी सुखकारी ॥

भासी खासी सुखमासुभग सरद सुमति सुखवासमय।
आनन्द अखिल उरपुर भरै पावन प्रकृतिविकासमय॥

इति-महाकवि-श्रीकालिदास-विरचिते ऋतुसंहारकाव्ये
सुमति-शिवप्रसाद-रचित-गद्यपद्यानुवादसमन्विते
शरद्वर्णनं नाम तृतीयः सर्गः।

हेमन्त ।

(हेमन्त = अगहनपूस)
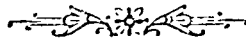
उपजातिवृत्तम् ।

(१)

नवप्रवालोद्गमपुष्परम्यः
प्रफुल्ललोध्रः परिपक्वशालिः ।
विलीनपद्मः प्रपतत्तुषारो
हेमन्तकालः समुपागतोऽयम् ॥

अर्थ—अब लोध्रके फूल फूलगये, धान पकगये, कमल नष्ट होगये, पाला पड़नेलगा, इस प्रकार यह नये पुष्प और पल्लवोंसे रमणीय हेमन्तसमय आगया ।

[रोलाछन्द, पद्यानुवाद]

नव-दल-अंकुर-कुसम-रम्य संकुचित कमलकुल ।
प्रफुलित-सुललितलोध पक्कनवसालिसमाकुल ॥
ओसजोस अतिअधिक जाड़ जियमाहिं जगायो ।
देखत ही देखतै समय हिमको यह आयो ॥

(२)

मनोहरैश्चन्दनरागगौरै-
स्तुषारकुन्देन्दुनिभैश्च हारैः ।

(२)

विलासिनीनां स्तनशालिनीनां
नालंक्रियन्ते स्तनमण्डलानि ॥

अर्थ—अब उन्नतस्तनवाली कामिनीगण चंदनलेपसे उज्वल तथा हिम (बर्फ) कुन्द और चन्द्रमाके सदृश मनोहर हारोंसे स्तनोंको नहीं विभूषित करतीं ।

[पद्यानुवाद]

समदमदनकल केलिकलाकोविद कामिनिगन ।
निजउर उभरत सुमति मनोहर उरजसरोजन ॥
सीतल मलयजलेपलसित सित हलरन हारन ।
पहिरत नहिं अब सीतभीत, सुखमय सृंगारन ॥

(३)

न बाहुयुग्मेषु विलासिनीनां
प्रयान्ति सङ्गं वलयाङ्गदानि ।
नितम्बबिम्बेषु नवं दुकूलं
तन्वंशुकं पीनपयोधरेषु ॥

अर्थ—अब विलासिनी स्त्रियां हाथोंमें कंकण बिजायठ आदि आभूषण, कमरमें नवीन पट्टवस्त्र और उन्नतपयोधरोंपर झीने वस्त्र नहीं धारण करतीं ।

[पद्यानुवाद]

अब नहिं कंकन बलय बांक बांहन तिय धारैं ।
सीतल सकल उतारि आभरन जहँतहँ डारैं ॥

नहिं नितम्बपर नवदुकूल अनुकूल सुहावैं ।
पीन उरोजन सीस कंचुकी अब न चढ़ावैं ॥

(४)

काञ्चीगुणैः काञ्चनरत्नचित्रै-
र्न भूषयन्ति प्रमदा नितम्बान् ।
न नूपुरै हँसरुतं भजद्भिः
पादाम्बुजान्यम्बुजकान्तिभाञ्जि ॥

अर्थ—अब स्त्रियां सुवर्ण-रत्न-जटित करधनियोंसे नितम्बों को तथा हंसनिनादीनूपुरोंसे चरणकमलोंको नहीं भूषित करतीं ।

[पद्यानुवाद]

कंचन-मनिमय कलित ललित किंकिनीकलापन ।
निजनितम्ब नहिं करत बिभूषित अब अबलाजन ॥
मधुरमरालनिनादरम्य नूपुर मनहारी ।
पहिरत नहिं पदपदुमदलन सिहरी बर नारी ॥

(५)

गात्राणि कालीयकचर्चितानि
सपत्रलेखानि मुखाम्बुजानि ।
शिरांसि कालागुरुधूपितानि
कुर्व्वन्ति नार्यः सुरतोत्सवाय ॥

अर्थ—इन दिनों स्त्रियां भोगविलासके लिये अपने अङ्गोंमें हरदीका उबटन लगातीं, मुखारविन्दों पर साटीपाटी साटतीं तथा सिरके जूड़ोंको अगरके धूपसे धूपित किया करती हैं ।

[पद्यानुवाद]

तिय उबटहिं अब अङ्ग उबटनाहरदीलेपन।
पाटिन साटिन साटि सुमुख निज निरखहिं दर्पन॥
अगरतगरबरधूप धूपि सिर केसन बासैं।
बहुबिध सजत सिंगार केलिमय करिकरि आसैं॥

(६)

रतिश्रमक्षामविपाण्डुवक्त्रा
प्राप्तेऽपि हर्षाभ्युदये तरुण्यः।
हसन्ति नोच्चैर्दशनाग्रभिन्नान्
प्रभिन्नरागानधरानवेक्ष्य॥

अर्थ—भोगविलासके परिश्रमसे फीकी-मुखकान्तिवाली युवतियां, अपने प्यारेके दांतोंसे कटे एवं बिगड़ेरङ्गवाले होठोंको देख, (दुखनेके भयसे) आनन्दकी उमङ्ग आनेपर भी, जी खोलकर (जोरसे) नहीं हंसतीं।

[पद्यानुवाद]

सुरतपरिश्रम-खिन्नबदनछवि छटी छबीली।
पियदन्तक्षत-छिन्नअधर तरुनी गरबीली॥
हँसति नहीं दिल खोलि खुलन होठन सिकुराये।
अवसर हांसिहुकेर अतिहु आनन्द उर आये॥

(७)

पीनस्तनोरःस्थलभागशोभा-
मासाद्य तत्पीड़नजातखेदैः।

ग्रलमैस्तुहिनैः पतद्भि-

राक्रन्दतीवोषासि शीतकालः ॥

शीतकाल (इससमय) पालापड़नेसे पुष्टपयोधर-
की शोभा धारणकर, (फिर) स्तनोंके प्रपीड़नसे
रमे घासोंपर पड़ीहुई सीतकी बूंदें टपका-
न सा कररहा है ।

[पद्यानुवाद]

उरभाग-सरिस सोभा सरसावत ।
लिपीड़नजनित खेद सो जनु दरसावत ॥
वफूलफलन फुनगिनसों चोवत ।
दिन प्रातहि प्रात सीतऋतु यह नित रोवत ॥

(८)

शालिप्रसवैश्चितानि

मृगाङ्गनायूथविभूषितानि ।

रक्रौञ्चनिनादितानि

सीमान्तराण्युत्सुकयन्ति चेतः ॥

दिनो, धानके पौधोंसे भरेहुए, हरिणियोंके झुंडों
चकवा-चकइयोंसे शब्दित, ग्रामके सुशोभित
चत्तको प्रसन्न करदेते हैं ।

[पद्यानुवाद]

लेसम्पन्न हरेपीरे मनभावन ।
रिणीहरिणवृन्दसों सुमति सुहावन ॥

सीमा
प्रफुल्ल
प्रसन्न
अर्थ—इनदि
देते निचारि
उरजनोंके नि
निकसित
सार
सद्-संचार
निरख
मार्ग
अवेग
अर्थ
साती और

सारस बक चक हंसवंश रंजन जनजीके।
सीमाप्रान्त सुरम्य गांव-गवई के नीके॥

(९)

प्रफुल्लनीलोत्पलशोभितानि
शरारिकादम्बविघट्टितानि।
प्रसन्नतोयानि सशैवलानि
सरांसि चेतांसि हरन्ति यूनाम्॥

अर्थ—इनदिनो, खिले नीलकमलोंसे सुशोभित, हंस-सारस-आदिसे विचालित, स्वच्छजल और सेवारोंसे युक्त सरोवर युवकजनोंके चित्तको हरलेते हैं।

[पद्यानुवाद]

विकसित नील सुरम्य सरोजन अतिमनभावन।
सारस-बत-कलहंस-कुलित जगजीय-लुभावन॥
सह-सेवार सर विमल-तरल-सीतलजल सोहत।
निरखत नैनन सुखद सुमति जुवजनमन मोहत॥

(१०)

मार्गं समीक्ष्यातिनिरस्तनीरं
प्रवासखिन्नं पतिमुद्वहन्त्यः।
अवेक्षमाणा हरिणेक्षणाक्ष्यः
प्रबोधयन्तीव मनोरथानि॥

अर्थ—इससमय, परदेश-निवाससे खिन्न पतिको चिन्तन करती और उनकी बाट देखती हुई, विरहिणी सुन्दरी स्त्रियां,

मार्गोंको जलकीचड़आदिसे रहित देख, भांतिभांतिके मनोरथों को जगारही हैं अर्थात् उनके आगमनआदिकी आशा कररही हैं।

[पद्यानुवाद]

सोचत विरहविथान वियोगिनि तियसमुदाई ।
विगतनीर लखि पन्थ गुनत जिय कन्तअवाई ॥
हेरत प्रीतमबाट भामिनी नित टक लाये ।
जिय अभिलाष जगायरहीं लोचन ललचाये ॥

(११)

पाकं व्रजन्ती हिमसङ्गशीतै-
राधूयमाना सततं मरुद्भिः ।
प्रिये प्रियंगुः प्रियविप्रयुक्ता
विपाण्डुतां याति विलासिनीव ॥

अर्थ—हेप्यारी (इसऋतुमें) पालापड़नेसे शीतल, प्रतिक्षण वायुसे कँपायीजातीहुई कंगुनी, वियोगिनी नायिका की भांति, पीली पड़ती जारहीहै ।

[पद्यानुवाद]

परसत सीतलसीत * सीत नित पवनझकोरन ।
कांक † पाँकमहं पाकि पाकि पियरात छनहिछन ॥
प्रियवियोग सों व्यथित मनहु कोउ पियकी प्यारी ।
प्रतिदिन पीरीपरतजात सूखत हियहारी ॥

(१२)

पुष्पासवामोदसुगन्धवक्त्रो
निःश्वासवातैः सुरभीकृताङ्गः ।

* सीत-हिम । † कांक=कंगुनी, नाम टंगुनी ।

परस्पराङ्गव्यतिषङ्गशायी
शेते जनः कामशरानुविद्धः ॥

अर्थ—(हेप्यारी ! इस ऋतुमें) कामार्त स्त्री-पुरुष पुष्पोंके मद्यके गन्धसे मुखको और अपनेश्वासवायुसे अंगों को सुगन्धित किये परस्पर लिपटेहुए सोयेरहते हैं।

[पद्यानुवाद]

आसव-पुष्पसुगन्ध-गन्ध-गन्धितनिजआनन ।
सुरभित-सुभनिस्वासवायुवासित सबही तन ॥
मेलि परस्पर अंग परमप्रमुदित दम्पतिजन ।
सोवैं सुचिर अनंगरंग-रंजित सुखरैनन ॥

(१२)

दन्तच्छदैर्दन्तविघातचिह्नैः
स्तनैश्च पाण्यग्रकृताभिलेखैः ।
संसूच्यते निर्दयमङ्गनानां
रतोपभोगो नवयौवनानाम् ॥

अर्थ—इस ऋतुमें, नवयौवना स्त्रियोंका प्रगाढ़ भोग-विलास, दन्तक्षतोंसे चिह्नितहोठोंके द्वारा तथा नखक्षतोंसे चिन्हित स्तनोंके द्वारा, स्पष्टरूपसे सूचित होरहा है।

[पद्यानुवाद]

दसन-दसनकृतरेख-राजितमय अधर सलोने ।
कर नखरेखन रुचिर पयोधर छिद-तरलोने ॥
अलस उनींदे नैन तरुन-बनितागनकेरे ।
'सुमति' रहे प्रगटाय रातरतिरंग घनेरे ॥

(१४)

काचिद्विभूषयति दर्पणसक्तहस्ता

बालातपेषु वनिता वदनारविन्दम्।

दन्तच्छदम्प्रियतमेन निपीतसारं

दन्ताग्रभिन्नमपकृष्य निरीक्षते च ॥

अर्थ—कोई स्त्री, सवेरे धूपमें बैठी हुई, हाथमें आरसी लिये अपने मुखारविन्दका शृंगार कर रही और अपने प्यारे द्वारा चूसेहुए तथा उनके दांतोंसे कटेहुए होंठको हटाती-सिकुड़ाती अपने मुखकी शोभा देख रही है।

[पद्यानुवाद]

कोउ बैठी वरबाल बालरवि-आतपमाहीं।
कर आरसि लै वदनकमल निज सजत सुहाहीं ॥
प्रियतम-अधर-निपीत-अधर-दन्तनकी रेखन।
फिरिफिरि देखत सुमुखि चहतिहै फिरिफिरि देखन ॥

(१५)

अन्याः प्रकामसुरतश्रमखिन्नदेहा

नक्तम्प्रजागरविपाटलनेत्रपद्माः।

शय्यान्तदेशलुलिताकुलकेशपाशा

निद्राम्प्रयान्ति मृदुसूर्यकराभितप्ताः ॥

अर्थ—कोई (स्त्रियां) जिनके शरीर अत्यन्त भोगविलासके परिश्रमसे खिन्न और नेत्र रात्रिमें जागरणके कारण लाल होगये हैं, प्रातःकालकी धूपमें पलंगके छोर पर बिखरे और उलझे केशोंको बिना संवारे ही सोईहुई हैं।

[पद्यानुवाद]

रजनिरचित अतिसुरतरंग-श्रम-खिन्नसरीरा।
सुमुखि अधिकजागरण-रक्त-लोचनयुग धीरा॥
पड़ी पलँग, निज केस वेस बिखरे उरझाये।
कोउ सवेर लौं सोयरही नव-आतप-ताये॥

(१६)

निर्माल्यदामपरिभुक्तमनोज्ञगन्धं
मूर्ध्नोऽपनीय घननीलशिरोरुहान्ताः।
पीनोन्नतस्तनभरानतगात्रयष्ट्यः
कुर्वन्ति केशरचनामपरास्तरुण्यः॥

अर्थ—सघन तथा श्यामकेशवाली, पुष्ट एवं ऊँचे स्तनोंके भारसे झुकीहुई, कोई युवतियां, गलेमें पहिरी हुई कुम्हलाई मालाको सिरसे उतारकर चोटीपाटी रचती हैं।

[पद्यानुवाद]

स्याम सघन सिर केस वेस वासित सुकुमारी।
पीनपयोधर-भार-नम्रतर-तनु कोउ नारी॥
कुम्हिल्यो निज गतगन्ध सुघर गरहार उतारी।
धाम बैठि चोटीपाटी विरचति प्रिय-प्यारी॥

(१७)

अन्या प्रियेण परिभुक्तमवेक्ष्य गात्रं
हर्षान्विता विरचिताधरगण्डशोभा।

कूर्पासकम्परिदधाति नवं नताङ्गी
व्यालम्बिनी विलुलितालककुञ्चिताक्षी ॥

अर्थ—कोई पतली स्त्री, प्रातःकालमें, अपनी बिखरी अलकोंके कारण आंखें सिकुड़ाये, अपने अङ्गोंको प्यारेसे परिमर्दित देख आनन्दित होतीहुई, होठ और गालों पर नया शृङ्गार सजकर। (रातकी आंगी उतार) दूसरी आंगी पहिररही हैं।

[पद्यानुवाद]

अलकजालसों दवेदृगन कोऊ अलवेली।
पियमर्दित तन लखत प्रात पातरी नवेली॥
नवल कंचुकी बदलिरही हरषित हिय होती।
अधर-कपोलन सजि सिंगार नव ससि-रवि-जोती॥

(१८)

अन्याश्चिरं सुरतकेलिपरिश्रमेण
खेदं गताः प्रशिथिलीकृतगात्रयष्ट्यः।
सम्पीड्यमानविपुलोरुपयोधरार्ता
अभ्यञ्जनं विदधति प्रमदाः सुशोभाः॥

अर्थ—कोई सुन्दरी (स्त्रियां) भोगविलासके परिश्रमसे हारकर अङ्गप्रत्यङ्गसे ढीली पड़ीहुई एवं अपने पीन जंघों और पयोधरोंके अत्यन्त पीड़ित होजानेके कारण कष्ट सहती हुई (अपने) अङ्गोमें तेल उबटन लगारही हैं।

[पद्यानुवाद]

अतिसय-सुरतविलास-खेद-स्रमखिन्न छबीली।
सिथिल सलोने सकल अङ्ग अलसात रसीली॥
पिय-परिपीड़ित-पीनपयोधरजघन हठीली।
उबटन-तेल लगाय रहीं बैठी गरबीली॥

(१६)

बहुगुणरमणीयो योषितां चित्तहारी
परिणत-बहुशालिव्याकुलग्रामसीमः
विनिपतिततुषारः क्रौञ्चनादोपगीतः
प्रदिशतु हिमयुक्तः काल एष प्रियं नः।

अर्थ—अनेक गुणोंसे रमणीय, स्त्रियोंके चित्तको हरने-वाला, पकेहुए धानोंसे चारोओर भराहुआ, पाला गिराने-वाला, हंस सारसोंसे निनादित, यह हेमन्तकाल तुम्हारा कल्याण कियाकरे।

[पद्यानुवाद, दुर्मिल—सवैया।]

गुन बेसक बेस बिसेसभरे, रमनीय छटाछवि छायी रहै।
परिपक्व सुधानभरे सवखेत, युवायुवती मनभायी रहै॥
सरसावत सीत सबैथलही, बक-सारस-नाद सुहायी रहै।
हिमसंयुत प्यारे हिमन्तके द्योस तिहारे सदा सुखदायी रहै॥

इति महाकविश्रीकालिदास-विरचिते ऋतुसंहारे खण्डकाव्ये
सुमति-शिवप्रसादशर्म्म-विरचित पद्यपद्यानुवाद-
संवलिते हेमन्तवर्णनं नाम चतुर्थः सर्गः।

अथ

शिशिर-वर्णनम् ।

(शिशिर=माघ फाल्गुन)

वंशस्थविलं वृत्तम् ।

(१)

प्ररूढ़-शालीक्षुचयावृतक्षितिं
　　सुखस्थितक्रौञ्चनिनादशोभितम् ।
प्रकामकामं प्रमदाजनप्रियं
　　वरोरु कालं शिशिराह्वयं शृणु ॥

अर्थ—हे वरोरु (अच्छीजांघवाली) ! जिसमें तयार धान और ऊखोंसे पृथ्वी ढकी हुई है, जो सुखसे बैठे चकवोंके शब्दोंसे सुशोभित है, जिसमें काम अधिक जागता है, जो स्त्री गणोंको बहुत प्यारा मालूम होता है, ऐसी इस शिशिर-ऋतुका वर्णन सुनो।

[पद्यानुवाद, बरवैछन्द)

खेतन धान केतरिया * सुपक तयार,
　　चौरन चकइ बगुरिया चहकत चार।
विहरत तरुन-तरुनियां कसमस-काम
　　यह ऋतु सिसिर सोहनियां † सबसुखधाम ॥

---

* केतरिया = (केतारी) ऊख। † यह पद मूलके अनुसार स्त्रीका सम्बोधन और वर्तमान ऋतुका विशेषण दोनो होसकता है।

(२)

निरुद्धवातायतमन्दिरोदरं

हुताशनो भानुमतो गभस्तयः।

गुरूणि वासांस्यबलाः सयौवनाः

प्रयान्ति कालेऽत्र जनस्य सेव्यताम्॥

अर्थ—इस ऋतुमें बड़े बड़े बन्द मकानोंके भीतरी भाग, अग्नि, सूर्यकी किरणें, गाढ़े कपड़े और युवती स्त्रियां, ये मनुष्योंके सेवनीय होजाते हैं।

[पद्यानुवाद]

बन्दकिवार भवनवां, दमकत आगि,
नितनित घामतपनवां, प्रातहिं जागि।
गातन गझिन ओढ़नवां, नवतिय संग,
सबहिं सुखद एहि दिनवां उदित अनंग॥

(३)

न चन्दनं चन्द्रमरीचिशीतलं

न हर्म्यपृष्ठं शरदिन्दुनिर्मलम्।

न वायवः सान्द्रतुषारशीतला

जनस्य चित्तं रमयन्ति साम्प्रतम्॥

अर्थ—इन दिनों, मनुष्यके चित्तको, न चन्दन प्रसन्न करता, न चांदनीसे शीतल शारदीयचन्द्रकिरण सी [illegible]

प्रसन्न करती, न अत्यन्त शीतसे सनीहुई वायु ही प्रसन्न करती है ।

[पद्यानुवाद]

अमल उघार अटरिया अब न सुहात,
चन्दनचारु अंजोरिया नहिं छवि छात ।
सनसन बहत बतसवा नहिं सुख देत,
व्यापित सिसिरसँदेसवा निखिल निकेत ॥

(४)

तुषारसङ्घातनिपातशीतलाः
शशाङ्कभाभिः शिशिरीकृताः पुनः ।
विपाण्डुतारागणचारुभूषणा
जनस्य सेव्या न भवन्ति रात्रयः ॥

अर्थ—अत्यन्त ओस पड़ने तथा चन्द्रमाकी किरणोंसे ठंढी और उजले-पीले-भूषणसदृश ताराओंसे युक्त, रात्रियां, इनदिनों, मनुष्योंके सेवनयोग्य नहीं होतीं ।

[पद्यानुवाद]

सरसत सारिरइनियां सीत सजोर,
चमकत चांद चदनियां चारिहु ओर ।
गहगह गगन तरैयन यद्पि जनात,
तदपि न यह रसरैयन रजनि सुहात ॥

(५)

गृहीतताम्बुलविलेपनस्रजः
सुखासवामोदितवक्त्रपङ्कजाः ।
प्रकामकालागुरुधूपवासितं
विशन्ति शय्यागृहमुत्सुकाः स्त्रियः ॥

अर्थ—इनदिनों अनुरागभरी स्त्रियां, पान खा, सुगन्धलेप लगा, माला पहिर, सुखपूर्वक मद्यपानसे मुखको सुवासित कर, अगरके धूपसे सुवासित शय्यागृहको गमनकरती हैं।

[पद्यानुवाद]

रुचिर चबावत पनवां, सजत सिंगार,
मधुमय-मुदित-बदनवां, पगझनकार ।
धूपित अगर-तगरवां वासित वेश,
चलत लचकि पियघरवां, सुमुखि, सुवेश ॥

(६)

कृतापराधान् बहुशोऽभितर्जितान्
सवेपथून् साध्वसमन्दचेतसः ।
निरीक्ष्य भर्तॄन् सुरताभिलाषिणः
स्त्रियोऽपराधान् समदा विसस्मरुः

अर्थ—इस समय, स्त्रियां, पहलेके अपराधों (अन्य स्त्रीके संसर्गसे दोषी) और अतएव बहुतप्रकारसे डांटे

प्रसन्न करती, न अत्यन्त शीतसे सनीहुई वायु ही प्रसन्न करती है।

[पद्यानुवाद]

अमल उघार अटरिया अब न सुहात,
चन्दनचारु अंजोरियो नहिं छवि छात।
सनसन बहत बतसवा नहिं सुख देत,
व्यापित सिसिरसँदेसवा निखिल निकेत॥

(४)

तुषारसङ्घातनिपातशीतलाः
शशाङ्कभाभिः शिशिरीकृताः पुनः।
विपाण्डुतारागणचारुभूषणा
जनस्य सेव्या न भवन्ति रात्रयः॥

अर्थ—अत्यन्त ओस पड़ने तथा चन्द्रमाकी किरणोंसे ठंढी और उजले-पीले-भूषणसदृश ताराओंसे युक्त, रात्रियां, इनदिनों, मनुष्योंके सेवनयोग्य नहीं होतीं।

[पद्यानुवाद]

सरसत सारिङ्गनियां सीत सजोर,
चमकत चांद चदनियां चारिहु ओर।
गहगह गगन तरैयन यद्पि जनात,
तदपि न यह रसरैयन रजनि सुहात॥

(५)

गृहीतताम्बुलविलेपनस्रजः
सुखासवामोदितवक्त्रपङ्कजाः ।
प्रकामकालागुरुधूपवासितं
विशन्ति शय्यागृहमुत्सुकाः स्त्रियः ॥

अर्थ—इनदिनों अनुरागभरी स्त्रियां, पान खा, सुगन्धलेप लगा, माला पहिर, सुखपूर्वक मद्यपानसे मुखको सुवासित कर, अगरके धूपसे सुवासित शय्यागृहको गमनकरती हैं।

[पद्यानुवाद]

रुचिर चबावत पनवां, सजत सिंगार,
मधुमय-मुदित-बदनवा, पगझनकार ।
धूपित अगर-तगरवां वासित वेश,
चलत लचकि पियघरवां, सुमुखि, सुबेश ॥

(६)

कृतापराधान् बहुशोऽभितर्जितान्
सवेपथून् साध्वसमन्दचेतसः ।
निरीक्ष्य भर्तॄन् सुरताभिलाषिणः
स्त्रियोऽपराधान् समदा विसस्मरुः ॥

अर्थ—इस समय, स्त्रियां, पहलेके अपराधी (अन्य स्त्रीके संसर्गसे दोषी) और अतएव बहुतप्रकारसे डांटेधमकाये

कांपतेहुए भयविह्वल पतियोंको सुरतानुरागी देख, मद्यपानकी नशासे (स्वयं भी अनुरागिणी हो), उनके अपराधोंको भूलगई हैं ।

[पद्यानुवाद]

चूकत पतिहिं, तिरियवा तमकि निहारि,
दीन्ह कठोर किरियवा तरजि हँकारि ।
परि पुनि मैन-मरोरवां, करि मधुपान,
भरिभरि लेत अँकोरवां, सुमुखि सयान ॥

(७)

प्रकामकामैर्युवभिः सुनिर्दयं
निशासु दीर्घास्वभिरामिताश्चिरम् ।
भ्रमन्ति मन्दं श्रमखेदितोरवः
क्षपावसाने नवयौवनाः स्त्रियः ॥

अर्थ—इनदिनों, बहुत बड़ी रातमें अत्यन्तकामी तरुणजनोंसे बहुतदेरतक रमायीजानेके कारण परिश्रमसे थकीजांघवाली नई युवतियां रातबीतनेपर (सवेरेमें) धीरे २ भ्रमण करती हैं ।

[पद्यानुवाद]

निशि अतिउदितमदनवां हृदयकठोर ।
पुनिपुनि रमत रमनवां रमनि अंकोर ॥
रतिरँग-थकित-जघनवां अति सुकुमार ।
थमिथमि चलत अंगनवां तिय भिनुसार ॥

(८)

मनोज्ञकूर्पासक-पीड़ितस्तनाः
सरागकौशेयविभूषितोरवः।
निवेशितान्तःकुसुमैः शिरोरुहै-
र्विभूषयन्तीव हिमागमं स्त्रियः॥

इनदिनों स्त्रियां मनोहर कंचुकीसे स्तनोंको कस, रंगीन साड़ियोंसे जंघाआदि अंगोंको सुशोभित कर, चोटियोंमें फूल खोंस, इस (शिशिर) ऋतुको भी भूषित कर देती हैं।

[*पद्यानुवाद*]

उदित उरोजन अंगिया कसि कसि रोज,
सारिहु पहिरि सुरंगिया चमकत चोज *।
जूरन विरचि सजनियां कुसुमन डारि,
सिसिरहु करत सोहनियां तनुअनुहारि॥

(९)

पयोधरैः कुङ्कुमरागपिञ्जरैः
सुखोपसेव्यैर्नवयौवनोत्सवैः।
विलासिनीनाम्परिपीड़ितोरसः
स्वपन्ति शीतम्परिभूय कामिनः॥

अर्थ—इस ऋतुमें कामीलोग विलासवती स्त्रियोंके, केसर-चर्चित सुखसेव्य नयोजवानीकी उमंगरूपी स्तनोंसे (अपनी) छाती दबाये शीतको जीतकर सोये रहते हैं।

---

*चोज=सूक्ष्मता, उत्तमता। चमकना=झलकना, प्रकाश होना।

[पद्यानुवाद]

फसमस-वैसविलासवा, सुखसरखोर,
कुंकुम-कलित-कलसवा तियकुचकोर।
लाय हिये हियदेसवा, सोवत कन्त,
काटत सिसिरकलेसवा सुखसरसन्त॥

(१०)

सुगन्धि-निश्वास-विकम्पितोत्पलं
मनोहरं कामरतिप्रबोधनम्।
निशासु हृष्टाः सह कामिभिः स्त्रियः
पिबन्ति मद्यं मदनीयमुत्तमम्॥

अर्थ—(इस ऋतुमें) स्त्रियां रातमें अपने प्यारोंके साथ प्रसन्नचित्त हो, सुगन्धित निश्वाससे हिलते हुए कमलदल वाला, रति और कामको जगानेवाला, मनको मोहनेवाला तथा नशा बढ़ानेवाला उत्तम मद्य पिया करती हैं।

[पद्यानुवाद]

आसव सुमतिसजनवां, भावन बेस,
रति-उपजावन मनवां, हरन कलेस।
सुरभित साँसन करवा-कमल कँपाय
रैनन पियत पियरवा प्यारिहिं प्याय॥

(११)

अपगतमदरागा योषिदेका प्रभाते
नतनिविड़कुचाग्रा पत्युरालिङ्गनेन।

प्रियतमपरिभुक्तं वीक्षमाणा स्वदेहं
व्रजति शयनवासाद्वासमन्यं हसन्ती ॥

अर्थ—इस समय पतिके आलिङ्गनसे दबे और झुकेहुए
ावन-कुचकोर-वाली कोई स्त्री, रातका नशा टूटनेपर प्रातः-
ाल अपनी देहको प्यारेसे परिभुक्त देख-देख हंसतीहुई
ायनगृहसे (निकल) अन्यगृहको गमन करती है।

[पद्यानुवाद]

जागि सुमुखि भिनुसरवां, रतिगृह त्यागि
झुकत उरज पियगरवां दबिदबि लागि।
रजनि रमित रतिरनवां, निरखत गात,
दलकत कढ़त अँगनवां, मृदु मुसुकात॥

(१२)

अगुरुसुरभिधूपामोदितान् केशपाशान्
गलितकुसुममालान् कुञ्चिताग्रान् वहन्ती।
त्यजति गुरुनितम्बा निम्ननाभिः सुमध्या
उषसि शयनवासं कामिनी कामशोभा॥

अर्थ—ऊंचे नितम्ब और गम्भीर नाभिवाली, कामकी
ोभा सी कोई कामिनी, अगर-तगरके सुगन्ध-धूपसे वासित
वं पुष्पमालारहित उलझे केशोंकी शोभा धारण किये, अपने
यनगृहसे बाहर निकलती है।

[पद्यानुवाद]

वासित अगर-तगरवा, कुटिल प्रलम्ब—
अलकन-उरझित हरवा, उदित नितम्ब।

नाभि निगूढ़ सोहनियां, कटि कमनीय,
बहरति बाल विहनियां रतिरमनीय ॥

(१३)

कनककमलकान्तैः चारुविम्बाधरोष्ठैः
श्रवणतटनिषक्तैः पाटलोपान्तनेत्रैः।
उषसि वदनविम्बैरंससंयुक्तकेशैः
श्रियइव गृहमध्ये संस्थिता योषितोऽद्य॥

अर्थ—आज इस प्रातःकालमें सुन्दर-विम्बाफल-सदृश अधरोंसे युक्त, सोनेके कमलसे सुन्दर, कानोंतक फैले हुए लालप्रान्त-नेत्र तथा कन्धोंपर लटके हुए केशोंसे विराजमान मुखमण्डलवाली सुन्दरी स्त्रियां, आज लक्ष्मीकी नाई बैठीहुई सोभरही हैं।

[पद्यानुवाद]

मुख जनु कनककमलवा, अधर सुढार
श्रुति-गत नयन-युगलवा, सित रतनार।
लट जनु कुटिल नगिनियां, लुरि लहराति,
श्रीजनु आजु सजनियां*, सुभग सुहाति॥

(१४)

पृथुजघनभरार्त्ताः किञ्चिदानम्रमध्याः
स्तनभरपरिखेदान्मन्दमन्दं व्रजन्त्यः।

* सजनियां=प्यारी।

सुरतसमयवेषं नैशमाशु प्रहाय,
दधति दिवसयोग्यं वेषमन्यास्तरुण्यः॥

अर्थ—मोटी जांघोंके बोझसे व्यथित, कुछ झुकीहुई-कमर-वाली, स्तनोंके बोझसे थककर धीरे धीरे चलतीहुई कोई कोई युवतियां, (रातके) रतिसमयके वेष (पुशाक) को छोड़ दिनके योग्य दूसरा वेष धारण कररही हैं ।

[पद्यानुवाद

सिथिलित-सघन ज़घनवां, कटि वल खात,
थलथल थहरत थनवां, गति गहरात।
रइनि-विलास-बसनवां, तिय तजि प्रात,
बदलति वेष बिहनवां, ळलित लखात॥

(१५)

नखपदचितभागान् वीक्षमाणाःस्तनान्तान्
अधरकिसलयाग्रं दन्तभिन्नं स्पृशन्त्यः।
अभिमतरतवेषं नन्दयन्त्यस्तरुण्यः
सवितुरुदयकाले भूषयन्त्याननानि॥

अर्थ—इनदिनों सर्योदयके समय युवती स्त्रियां नखक्षतों से भरेहुए (अपने) स्तनमण्डलोंको तथा दन्तक्षतोंसे छिन्न अधरोंष्ठोंको छूती तथा अनुकूल रतिविलासके वेषको पसन्द करती हुई, अपने मुखमण्डलोंको विभूषित कररही हैं।

[पद्यानुवाद]

पिय-नख़-रेखन छतिया निरखत छिन्न,
छुवत अधर-मृदुपँतिया दसनन भिन्न।

तिय रति-रमित-वसनवां लखत अनन्द,
सजत सिंगार सवेरवां निजमुखचन्द ॥

(१६)

प्रचुरगुड़विकारः स्वादुशालीक्षुरम्यः,
प्रबलसुरतकेलिर्जातकन्दर्पदर्पः ।
प्रियजनरहितानां चित्तसन्तापहेतुः,
शिशिरसमय एष श्रेयसे वोऽस्तु नित्यम् ॥

अर्थ—जिसमें अनेक प्रकारके गुड़ तयार होते हैं, जो स्वादिष्ठ धान और ईखोंसे रमणीय जान पड़ती है, जिसमें कामोद्रेक तथा भोगविलास अधिक हुआकरता है, वह विरहिणी-विरहियोंके चित्तको दुःखित करनेवाली यह शिशिर-ऋतु सदा तुम्हारी कल्याणकारिणी होवे ।

[पद्यानुवाद, छप्पैछन्द]

बनत विपुल गुड़ खांड़ सुभग भेली बहुभांती ।
सुधास्वाद नव पके धान-ईखनकी पांती ॥
कामकामना कलित कन्तकामिनि सुख सोवैं ।
सुमति अभंग-उमंगसंग नित रतिरंग होवैं ॥
बहुविरहीविरहिनिहिय विथा विकट बढ़ावने हेतु यह ।
नित सिसिर तिहारो सुभ करै संयोगिन सुखसेतु यह ॥

इति-महाकवि-श्रीकालिदास-विरचिते ऋतुसंहारे खण्डकाव्ये
सुमति-शिवप्रसादशर्म-रचितगद्यपद्यानुवाद-संवलिते
शिशिरवर्णनं नाम षष्ठःसर्गः ।

वसन्त-वर्णन ।

(वसन्त = चैत वैशाख)
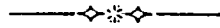
मूलं—वंशस्थवृत्तम् ।

(१)

प्रफुल्लचूताङ्कुरतीक्ष्णसायको
द्विरेफमालाविलसद्धनुर्गुण: ।
मनांसि वेद्धुं सुरतप्रसङ्गिनां
वसन्तयोधः समुपागतः प्रिये ॥

अर्थ—हे प्यारी वसन्तरूपी वीर आगया । बौरे आमके अंकुर इसके बाण हैं, भौंरोंकी पंक्ति ही इसके धनुषका रोदा है और यह कामुकजनोंके मनकों वेधनेके लिये तयार है ।

[पद्यानुवाद, अरसातसवैया]

मंजरि बौरे रसालनकी वर वान अनोखे चहूं बगरायगो ।
बांधे कतार मलिन्दके वृन्द सरासन सो गुनपूर सुहायगो ॥
कामिनके हिय वेधिवेको वहु अस्त्र मनोभवके छिति छायगो ।
बानक वेस बनाये सुवागन प्यारो वसन्तबहादुर आयगो ॥

(२)

उपजाति-वृत्तम् ।

द्रुमाः सपुष्पाः, सलिलं सपद्मं,
स्त्रियः सकामाः, पवनः सुगन्धिः ।

सुखाः प्रदोषा दिवसाश्च रम्याः
सर्वं प्रिये चारुतरं वसन्ते ॥

अर्थ—प्यारी! वृक्षोंमें फूल फुलानेलगे, जलाशयोंमें कमल ठनेलगे, स्त्रियां अनुरागिणी होने लगीं, वायुमें सुगन्ध या, सांझ सुहावनी होनेलगी और दिन रमणीय होने लगे, न्तऋतुमें सभी मनोहर होजाते हैं।

[पद्यानुवाद, अरसातसवैया]

नसों भरिगे तरुपुंज सरोजनसों भये नीर सुहावने।
मिनि कामकलानभरी वर पौन सुगन्धसने मनभावने॥
ऽ सुहावनी नीकी लसे दिन यों सुमती मनमौजबढ़ावने।
ऋतुराज वसन्तके आज समाज सबै सुखमा-सरसावने॥

(३)

ईषत्तुषारैः कृतशीतहर्म्याः
सुवासितं चारु शिरः सचम्पकैः।
कुर्वन्ति नार्योऽपि वसन्तकाले
स्तनं सहारं कुसुमै र्मनोहरैः॥

अर्थ—इस वसन्तमें झीने शीतकणोंसे ठंढी अटारीवाली यां, चम्पायुक्त मनोहर पुष्पोंसे अपने शिरों को सुवासित स्तनोंको हारयुक्त कियाकरती हैं।

[पद्यानुवाद, मत्तगयन्दसवैया]

के सीतके सीकरसों कछु सीतल सोभित सुभ्र अटारी॥
प्रत कै सिर चम्पकपुष्पन मंजु मनोजमयी नव नारी॥
मनोहरके वर हार बनाय बनाय लसीं सुकुमारी।
तन छायरहीं छबिसों इहि औसर उच्चउरोजनवारी॥

(४)

वापीजलानां मणिमेखलानां
शशाङ्कभासां प्रमदाजनानाम् ।
चूतद्रुमाणां कुसुमानतानां
ददाति सौरभ्यमयं वसन्तः ॥

अर्थ—यह वसन्त सरोवरोंके जलोंको, मणिमय कर्धनियोंको, चन्द्रकिरणोंको, कामिनीगणोंको एवं फूलोंसे झुकेहुए आमके वृक्षोंको सुन्दरता बढ़ा देता है ।

[पद्यानुवाद अरसातसवैया]

ताल तलैयनके जलकी मनि-मेखलकी सुखमा सरसात है ।
भामिनिभूषन-इन्दुमयूख-पियूषन पै परमा परसात है ॥
फूले-फले सहकारकी डारन आभा अनोखी नयी दरसात है ।
रूप अनूप सुगन्ध-सन्या वन-बागन आजु वसन्त सुहात है ॥

(५)

उपेन्द्रवज्रा ।

स्तनेषु हाराः सितचन्दनार्द्रा
भुजेषु कम्बूवलयाङ्गदानि ।
प्रयान्ति निःशङ्क मनङ्गसौख्यं
नितम्बिनीनां जघनेषु काञ्च्यः ॥

अर्थ—इस ऋतुमें स्त्रियोंके स्तनोंपर विमलचन्दनोंसे भीजे हुए हार, बाहुओंमें शंखचूड़ो और विजायठ एवं नितम्बों (कमरके पिछले भाग) पर कर्धनोंकी लड़ियां कामजनित सुखको निःसन्देह बढ़ा देती हैं ।

[पद्यानुवाद]

बरवै।

निजहिय हलरत हरवा चन्दनसेत,
भुजन वलय-बरहरवा अति छवि देत।
पहिरि कलित करधनियां, निज कटिकोर,
मेटति सुमुखि सजनियां, मदन-मरोर॥

(६)

उपजातिः।

कुसुम्भरागारुणितै र्दुकूलै-
र्नितम्बबिम्बानि विलासिनीनाम्।
रक्तांशुकैः कुङ्कुमरागगौरै-
रलङ्क्रियन्ते स्तनमण्डलानि॥

अर्थ—इस ऋतुमें स्त्रियां कुसुमकी रँगी साड़ियोंसे अपने नितम्बोंको एवं लाल रेशमी वस्त्रोंसे स्तनोंको सुशोभित किया करती हैं।

[पद्यानुवाद]

पहिरि कुसुमरँग सरिया, झिलमिल भून,
बिलसति बाल केसरिया, जघन दुहून।
छतियन कुमकुमरँगिया अतिटहकार,
कसिकसि अंसुक-अँगिया सजति सिंगार॥

(७)

कर्णेषु योग्यं नवकर्णिकारं
स्तनेषु हारा अलकेष्वशोकः।
शिखासु माला नवमल्लिकायाः
प्रयान्ति कान्तिम्प्रमदाजनस्य ॥

अर्थ—इनदिनों स्त्रियोंके कानोंपर सुन्दर कर्णिकारपुष्प स्तनोंपर हार, अलकों पर अशोकपुष्प जूड़ोंमें नेवाड़ीफूलके सिरपेंच खूब ही शोभादेते हैं।

[पद्यानुवाद]

तियगर सहरत हरवा, अलक असोक*,
नवल नेवारि-गजरवा जूरन ओक।
स्रवनन सेत सेवतिया, सुरत-सहेत
वदन सरस मृदु बतिया, मन हरिलेत ॥

(८)

सपत्रलेखेषु विलासिनीनां
वक्त्रेषु हेमाम्बुरुहोपमेषु।
स्तनान्तरे मौक्तिकसङ्गजातः
स्वेदोद्गमो विस्तरतामुपैति ॥

अर्थ—इस समय स्त्रियोंके पत्रलेख (सटियाविंदुली) युक्त स्वर्णकमलसदृश मुखों और स्तनोंपर मोतियों के समूहमें उत्पन्न पसीना बढ़ने लगजाता है।

[पद्यानुवाद]

हेमकमल-मुखपटिया, लटियन सोह,
छजत सुमोतियन छतिया, सुख-सन्दोह।
तहँ तहँ प्रगट पसेनवां पसरत देह।
निरखत सुमति सजनवां सहितसनेह॥

(९)

उच्छ्वासयन्त्यः श्लथबन्धनानि
गात्राणि कन्दर्पसमाकुलानि।
समीपवर्तिष्वपि कामुकेषु
समुत्सुका एव भवन्ति नार्यः॥

अर्थ—इस समय, स्त्रियां शिथिल सन्धि (वा बन्धन) वाले मदनमत्त गात्रोंको उच्छ्वासित करती (अकड़ती) हुई समीपमें कामुकपतियोंके रहने पर भी उत्कण्ठित (समागमकांक्षिणी) ही रहाकरती हैं।

[पद्यानुवाद]

अति-रति-हौंसन उमरत, झुमरत गात,
अब तिय मचलत घुमरत नित इतरात।
यद्यपि रहत सजनवां सबछन संग,
चहतरहत तियमनवां तउ रति-रंग॥

(१०)

तनूनि पाण्डूनि मदालसानि,
मुहुर्मुहुर्जृम्भणतत्पराणि।

अङ्गान्यनङ्गः प्रमदाजनस्य,
करोति लावण्यरसोत्सुकानि ॥

अर्थ—इनदिनों कामदेव, स्त्रियोंके पतले गोरे मतवाले तथा वार वार जम्हाते हुए अङ्गोंको शृङ्गारसमें मग्न करदेता है।

[पद्यानुवाद]

पातरि गौरवनियां अति अंगराति,
अव तिय तरल तरुनिया समद सुहाति।
अँग अँग उदित अनँगवा वदलत रंग,
उभरत भरत उमंगवा, सरसत संग॥

(११)

इन्द्रवज्रा।

नेत्रेष्वलोलो मदिरालसेषु,
गण्डेषु पाण्डुः कठिनः स्तनेषु।
मध्येषु नम्रो जघनेषु पीनः,
स्त्रीणामनङ्गो बहुधा स्थितोऽद्य ॥

अर्थ—इनदिनों कामदेव स्त्रियोंके मदभरे अलसाये नेत्रोंमें निश्चल, कपोलोंपर गौरवर्ण, स्तनोंपर कठोर, कटिप्रदेशों पर नम्र एवं जघनों (जंघों वा नितम्बों) पर पुष्टरूपसे निवास करता है।

[पद्यानुवाद]

मधुमद-अलस चितौनन लसित अलोल,
कुचन कठिन सुखमौनन, गोर कपोल।
लचत लचकयुत लंकन, जघनन पीन,
बसत मदन बहुअंकन, अब युवतीन॥

(१२)

उपजातिः।

अङ्गानि निद्रालसविह्वलानि
वाक्यानि किञ्चिन्मदनालसानि।
भ्रूक्षेपजिह्मानि च वीक्षितानि
चकार कामः प्रमदाजनानाम्॥

अर्थ—इन दिनों कामदेवने स्त्रियोंके अङ्गोंको नींद और आलससे, वचनोंको मद और लालसासे एवं दृष्टियों को कुटिल कटाक्षोंसे युक्त कर डाला है।

[पद्यानुवाद]

कसमस अलस उनिंदिया, निखरत देह,
मधुमद बैन अनँदिया, सनित सनेह।
भृकुटी कुटिल सोहनियां, चितवन बंक,
तियतन कीन्ह मोहनियां, अतन असंक॥

(१३)

उपजातिः।

प्रियङ्गु-कालीयक-कुङ्कुमाक्तं
स्तनाङ्गरागेषु विलासिनीभिः।

आलिप्यते चन्दनमङ्गनाभि-
मदालसाभि मृगनाभियुक्तम् ॥

अर्थ—इस ऋतुमें मदभरी विलासिनी स्त्रियां अगर केसर श्यामालता तथा कस्तूरीसे मिश्रित चन्दनलेप गोरे स्तनोंपर लगाया करती हैं।

[पद्यानुवाद]

कुमकुम अगर केसरवा मृगमद पूरि,
मलयजलेप सिंगरवा रचि रचि रूरि।
चरचत उरजकलसवा सुवरनगोर,
विलसति समदविलसवा तिय पियकोर ॥

(१४)

गुरूणि वासांसि विहाय तूर्णं
तनूनि लाक्षारसरञ्जितानि ।
सुगन्धि-कालागुरुधूपितानि
धत्ते जनः कामशरानुविद्धः ॥

अर्थ—अब कामार्त जन भारी और गाढ़े वस्त्रों को छोड़ छोड़ लालरंगसे रंगे झीने सुगन्धित एवं अगरसे धूपित वस्त्रों को धारण कररहे हैं।

[पद्यानुवाद]

धूपित अगरसुगंधन, वगरत वास,
रँगि रँगि ललित सुरंगन, सहित हुलास।

पहिरत फूल, सजनवां, सुमति सचैन,
तजि तजि गझिनवसनवां, अब, दुखदैन ॥

(१५)

पुंस्कोकिलश्चूतरसेन मत्तः
प्रियामुखं चुम्बति सादरोयम् ।
गुञ्जद्द्विरेफो ऽप्ययमम्बुजस्थः
प्रियं प्रियायाः प्रकरोति चाटुम् ॥

अर्थ—यह आमके रस से मत्त कोयल अपनी प्यारीका मुख आदरपूर्वक चूमरहा है, गूंजताहुआ यह भौंरा भी कमलपर बैठ अपनी प्यारी की प्रशंसा (खुशामद) कर रहा है।

[पद्यानुवाद]

अम्बन सरस-मोजरवा, चखत सहेत
कोइलरि-मुख कोइलरवा, चुमि चुमि लेत ।
तियसंग बैठि भंवरवा, कमलन कोस,
मनहर भरत गुंजरवा, प्रेमहिं पोस ॥

(१६)

इन्द्रवज्रा ।

ताम्रप्रवालस्तवकावनम्रा-
श्चूतद्रुमाः पुष्पितचारुशाखाः ।
कुर्वन्ति कान्ते पवनावधूताः
पर्युत्सुकं मानसमङ्गनानाम् ।

अर्थ—हे प्यारी! (इस समय) लालपल्लवोंके गुच्छोंसे झुके, बौरभरी सुन्दर शाखावाले, पवनकम्पित, आमके वृक्ष स्त्रियोंके चित्तको उत्कण्ठित कररहेहैं।

[पद्यानुवाद]

लुहलुह नव दल फुलवा, डोलत लोल,
तहँ गुंजरत अलिकुलवा, करत कलोल।
उझुकत झुकत झवनवां, कुसुमित डार,
तियतन बढ़त मदनवां, लखि सहकार *॥

(१७)

उपजातिः।

आमूलतो विद्रुमरागताम्राः
सपल्लवम्पुष्पचयन्दधानाः।
कुर्वन्त्यशोका हृदयं सशोकं
निरीक्ष्यमाणा नवयौवनानाम्॥

अर्थ—(इस समय) जड़से फुनगीतक मूंगेके सदृश लाल, पल्लव और फूलोंको धारण किये, देखेजातेहुए अशोक-वृक्ष (विरहिणी) नवयौवनाओंके हृदयको दुःखित कररहेहैं।

[पद्यानुवाद]

कुसुमभरित, रंग-मुंगवा † मनसिजओक,
नव-दल-मूल-फुनुंगवा फवत असोक।
निरखत छवि इहि दिनवां नववय नारि,
विनु पिय होत मलिनवां विरह बगारि॥

* सहकार=आमके वृक्ष † मूंगे के रंग सा लाल।

(१८)

वसन्ततिलकं वृत्तम् ।

मत्तद्विरेफपरिचुम्बितचारुपुष्पा

मन्दानिलाकुलितनम्रमृदुप्रवालाः ।

कुर्व्वन्ति कामिमनसां सहसोत्सुकत्वं

बालातिमुक्तलतिकाः समवेक्ष्यमाणाः ॥

अर्थ—(इन दिनों) नवीन अतिमुक्त (माधवी वा मोगरा) की लतायें—जिनके सुन्दर पुष्प मतवाले भौंरोंसे वारवार चूमे जारहे और झुकेहुए कोमल पल्लव मन्दमन्द बहतेहुए पवन से डुलाये जारहेहैं—देखनेसे कामियोंके मनमें तुरन्त ही विषयानुराग उत्पन्न होजाताहै ।

[*पद्यानुवाद, चकोर-सवैया*]

माते फिरैं मड़राते अली चहुं चूमते चारु लता तरु डाल ।
वैहर मन्द डुलाय रहीं विखरे नव चीकने पल्लव लाल ॥
माधवी-मोगरा-मंजुनिकुंज निरेखत ही झुमती इहिकाल ।
कामुक मौज मढ़ाय रहे सरसाय रहे अब नीके निहाल ॥

(१६)

कान्ताननद्युतिमुषामचिरोद्गतानां

शोभा परा कुरुवकद्रुममञ्जरीणाम् ।

दृष्ट्वा प्रिये सहृदयस्य भवेन्न कस्य

कन्दर्पबाणनिकरै र्व्यथितं हि चेतः ॥

अर्थ—हे प्यारी (इन दिनों) प्यारी की मुखकान्ति को चुरानेवाली सेवती की नयी मञ्जरियों की परम शोभा देख किस रसिक का चित्त कामदेवके बाणोंसे विद्ध नहीं होजाता ?

[पद्यानुवाद]

प्यारीके आननमंजुसरोजकी आभा अनोखी गहे गढ़वार *।
या उनये नये सेवती के वर बौरन वेश विलोकि बहार ॥
कौनसे प्रेमपियासे विलासी बटोहिन को हियरो इहिबार।
मैन के बानन विद्ध न होत लगे सरसन्त वसन्त-बयार ॥

(२०)

आदीप्तवह्निसदृशैर्मरुतावधूतैः
सर्वत्र किंशुकवनैः कुसुमावनम्रैः।
सद्यो वसन्तसमये समुपागते हि
रक्तांशुका नववधूरिव भाति भूमिः॥

अर्थ—(इस समय) वसन्त के आते ही भूमि प्रज्वलित अग्निके समान, वायुसे कम्पित एवं सर्वत्र फूलोंसे झुकेहुए टेसुओंके वनसे, लालसाड़ी पहिने नई बहू सी सोभने लगगयी है।

[पद्यानुवाद, चकोर-सवैया]

दीपित पावकज्वालसमान समीरतरंगन डोलत डार।
फूलन भूमेझुके टहकार सुहात ये किंशुक-टेसू-कसार ॥

* गढ़वार—गाढ़ा।

आवतही विलसन्त वसन्तके सारी गहे जनु सूही सँवार।
भूमि नई उलही दुलहीसी विराजिरही वनवागमझार॥

(२१)

किं किंशुकैः शुकमुखच्छविभिर्न दग्धं
किं कर्णिकारकुसुमैर्नकृतं मनोज्ञैः।
यत्कोकिलाः पुनरमी मधुरैर्वचोभि-
र्यूनां मनः सुवदने नियतं हरन्ति॥

अर्थ—हेसुमुखि! जब ये कोयल अपनी मीठी वोलियोंसे युवकजनोंका चित्त हरलेतेहैं, तो सुग्गेके चोंचके सदृशरंगवाले टहकार टेसुओंने, क्या नहीं जलाया और सुन्दर कर्णिकार (कनियार वा कनइल) पुष्पों ने क्या (अन्धेर) नहीं किया, अर्थात् सव कुछ किया।

[पद्यानुवाद मत्तगयन्द]

कोइल जो मृदुवोलिन वोलि कलोलिकलोलि विलास वगारो।
सो सुनिकै मुरझात युवा मदनातुर मारयो फिरै हियहारयो॥
त्यों सुकतुंडसे या टहकार परासको डार न काहिय जारयो।
त्यों कनियारके मंजुल फूल हियो नहिं काविरहीको विदारयो॥

(२२)

पुंस्कोकिलैः फलरसैः समुपात्तहर्षैः
कूजद्भिरुन्मदकराणि वचांसि धीरम्।
लज्जान्वितं सविनयं हृदयं क्षणेन
पर्याकुलं कुलगृहेऽपि कृतं वधूनाम्॥

अर्थ—फलोंके रसोंसे हर्षित, धीरे धीरे मदकारक बोली बोलतेहुए कोकिलोंने कुलवन्ती बहुओंके लज्जायुक्त एवं विनीत हृदयको भी क्षणभरमें व्याकुल करडालाहै।

[पद्यानुवाद]

नीके नये फलके रस माति अनन्दित अंग उमंग बढ़ाये।
कोकिल कामकी हूंकजगावन धीर गँभीर कुहूक मचाये॥
हीय सतीकुलवन्तिनके अतिलाजसने जु रहे सकुचाये।
सोउ अबै अकुलाय उठे विलसन्त लसन्त बसन्तके आये॥

(२३)

आकम्पयन् कुसुमिताः सहकारशाखा
विस्तारयन् परभृतस्य वचांसि दिक्षु।
वायुर्विवाति हृदयानि हरन् बधूनां
नीहारपातविगमात् सुभगो वसन्ते॥

अर्थ—इस वसन्तमें वायु बौरेहुए (मञ्जरीयुक्त) आमकी शाखाओंको कँपातीहुई, कोकिलोंकी बोलियोंको सब दिशाओंमें फैलातीहुई, बहुओंके हृदयोंको हरण करतीहुई एवं शीतऋतुके चलेजानेसे सुहाती हुई बहाकरती है।

[पद्यानुवाद, किरीटसवैया]

बौरनभारभरी सहकारकी डारन मन्दहिमन्द कँपावत।
केलिकलोलत कोयलके कल कूकन चारिहु ओर बढ़ावत॥
बीतत ही पतझार हिमन्त, बसन्तको नीको समै अब आवत।
आजु नबेलिनके मन मोहत मंजुल धीर समीर सुहावत॥

(२४)

कुन्दैः सविभ्रमवधू-हसितावदातै-

रुद्योतितान्युपवनानि मनोहराणि।

चित्तं मुनेरपि हरन्ति निवृत्तरागं

प्रायेण रागचालितानि मनांसि पुंसाम्॥

अर्थ—सविलास वहुओंके मुसकानके सदृश उज्वल कुन्दके पुष्पोंसे प्रकाशित मनोहर उपवन, विषयवासनानिवृत्त मुनिजनोंके मनको भी हरलेते हैं ; तो उनलोगोंके लिये क्या कहनाहै; जिनके चित्त प्राय : विषयानुरक्त होजायाकरतेहैं।

[पद्यानुवाद]

ये सविलास वधूमुखहास-उजास सी कुन्दकली विकसीं अब।
जासों बिराजित बागवनी-बन-वाटिका लोनी लसी विलसीं अब॥
वासनाहीन मुनीनके चित्तहु मोहत ये परमापरसीं अब।
कामिनके मन कामकलानकी वासना वेस विसेस वसीं अब॥

(२५)

प्रालम्बिहेमरशनाः स्तनसक्तहाराः

कन्दर्पदर्पशिथिलीकृतगात्रयष्ट्यः।

मासे मधौ मधुरकोकिलभृङ्गनादै-

र्नार्यो हरन्ति हृदयं प्रसभं नराणाम्॥

अर्थ—इस चैत्रमासमें कमरपर लटकती सुवर्णमय करधनी वाली, स्तनोंपर-सुशोभित-हारवाली एवं कामोद्रेकसे-शिथिल-शरीरवाली स्त्रियां कोकिल और भ्रमरोंके मधुर शब्दोंकी सहायतासे मनुष्योंके चित्तको हठात् हरण करलेतीहैं ।

[पद्यानुवाद]

दीपित हेममयी कटि किंकिनि हार उरोजन पै लटकाये ।
ऊगे अनंगउमंगन यों अंगना अंग-अंग फिरैं अलसाये ॥
यामधुमासमें कोकिल-कूजन गूँजनहू अलिके सरसाये ।
चेतस हेरि हिरायरहे अनुरागिनके मन मौज मढ़ाये ॥

(२६)

नानामनोज्ञकुसुमद्रुमभूषितान्तान्
हृष्टान्यपुष्टनिनदाकुलसानुदेशान् ।
शैलेयजालपरिणद्ध-शिलागुहौघान्
दृष्ट्वा जनः क्षितिभृतो मुदमेति सर्वः ॥

अर्थ— (इनदिनों) अनेक प्रकारके सुन्दर पुष्पयुक्त वृक्षोंसे भूषित प्रान्तवाले, प्रसन्न कोकिलोंके शब्दोंसे शब्दित प्रस्थरप्रदेशवाले एवं शैलेयजाल (सिलाजीत वा पहाड़ी वृक्षोंके समूहों) से व्याप्त शिलातल और कन्दरसमूहवाले पर्वतोंको देखकर सभी लोग प्रसन्न होरहेहैं ।

[पद्यानुवाद, चकोर]

आजु अनेक मनोहर वृक्षके फूलन वेस बिभूपितडार ।
लोल कलोलत कोकिलके कलकूजन कूजित-कुंज-कछार ॥

(२४)

कुन्दैः सविभ्रमवधू-हसितावदातै-
रुद्योतितान्युपवनानि मनोहराणि।
चित्तं मुनेरपि हरन्ति निवृत्तरागं
प्रायेण रागचालितानि मनांसि पुंसाम्॥

अर्थ—सविलास वधुओंके मुसकानके सदृश उज्वल कुन्दके पुष्पोंसे प्रकाशित मनोहर उपवन, विषयवासनानिवृत्त मुनिजनोंके मनको भी हरलेते हैं ; तो उनलोगोंके लिये क्या कहनाहै; जिनके चित्त प्रायः विषयानुरक्त होजायाकरतेहैं।

[पद्यानुवाद]

ये सविलास वधूमुखहास-उजास सी कुन्दकली विकसीं अव।
जासों विराजित वागवनी-वन-वाटिका लोनी लसी विळसीं अव॥
वासनाहीन मुनीनके चित्तहु मोहत ये परमापरसीं अव।
कामिनके मन कामकलानकी वासना वेस विसेस वसीं अव॥

(२५)

प्रालम्बिहेमरशनाः स्तनसक्तहाराः
कन्दर्पदर्पशिथिलीकृतगात्रयष्ट्यः।
मासे मधौ मधुरकोकिलभृङ्गनादै-
र्नार्यो हरन्ति हृदयं प्रसभं नराणाम्॥

ासमें कमरपर लटकती सुवर्णमय करधनी
ोभित-हारवाली एवं कामोद्रेकसे-शिथिल-
ोकिल और भ्रमरोंके मधुर शब्दोंकी सहा-
चित्तको हठात् हरण करलेतीहैं।

[पद्यानुवाद]

टि किंकिनि हार उरोजन पै लटकाये।
ों अंगना अंग-अंग फिरैं अलसाये॥
केल-कूजन गूंजनहू अलिके सरसाये।
यरहे अनुरागिनके मन मौज मढ़ाये॥

(२६)

सुमद्रुमभूपितान्तान्
गनिनदाकुलसानुदेशान्।
रेयाद्र-शिलागुहौघान्
ः क्षितिभृतो मुदमेति सर्वः॥

हनों) अनेक प्रकारके सुन्दर पुष्पयुक्त
वाले, प्रसन्न कोकिलोंके शब्दोंसे शब्दित
शैलेयजाल (सिलाजीत वा पहाड़ी वृक्षोंके
शलातल और कन्दरसमूहवाले पर्वतोंको
ासन्न होरहेहैं।

[पद्यानुवाद, चकोर]

ोहर वृक्षके फूलन वेस विभूपितडार।
ोकिलके कलकूजन कूजित-कुंज-कछार॥

यों निखरे-नवजात-शिलारस-राजि-चिराजित-काटरद्वार।
याविधि पेखि पहारकनार लहैं सबही सुअनन्द अपार॥

(२७)

नेत्रे निमीलयति रोदिति याति मोहं
घ्राणं करेण विरुणद्धि विरौति चोच्चैः।
कान्ताविर्योगपरिखेदित-चित्तवृत्ति-
र्दृष्ट्वाध्वगः कुसुमितान् सहकारवृक्षान्॥

अर्थ— (इनदिनों) प्यारीके विरहसे खिन्नचित्त पथिक, पुष्पित (बौरेहुए) आम्रवृक्षोंको देख देख कभी नेत्रोंको मूंद-लेताहै, कभी रोने लगता है, कभी बेचेत होजाताहै, कभी हाथसे नाक दबालेताहै और कभी ऊंचे स्वरसे कराहने लगजाताहै।

[पद्यानुवाद, मत्तगयन्द]

देखि रसालनके तरुजालन बौरभरे चहुंओर सुहाने।
खेदित वृन्द बटोहिनके विरहानलज्वालनसों अकुलाने॥
नैनन मूंदत रोवत यों मुरझात झँवात झखैं झपताने।
मञ्जरिगन्ध लगे, बिनुतीय, दबावत नाक लगैं चिचियाने॥

(२८)

समदमधुकराणां कोकिलानाञ्च नादैः
कुसुमितसहकारैः कर्णिकारैश्च रम्यैः।
इषुभिरिव सुतीक्ष्णैर्मानसं मानिनीनां
तुदति कुसुममासो मन्मथोद्दीपनाय॥

अर्थ—यह कुसुममास (चैत्र वा वैशाख) मनवाले भ्रमरों तथा कोकिलोंके शब्दोंसे और अत्यन्त तीखे वाणोंके सदृश बौरे हुए आम्रवृक्षों तथा रमणीय कर्णिकार (कनियार वा कनइल) वृक्षोंके द्वारा कामोद्दीपन करानेके लिये मानवती स्त्रियोंके मनको विद्ध कररहाहै।

[*पद्यानुवाद मनहरन-घनाक्षरी*]

गुंजरत प्यारे मतवारे अलि-फूकनसों
 कोकिला-कुहूकनसों हूकन मचावैहै।
पिंजरित मंजरीभरित सहकारनसों
 कर्णिकार-डारनसों हिय हहरावैहै॥
तीखे निजसरसे सलोने इन वस्तुनसों
 बरबस कामना अमित उमगावैहै।
आज कुसुमाकर कमान कुसुमन केके
 वेधत वियोगिनीवधूटिन सतावैहै॥

(२६)

रुचिरकनककान्तीन् मुञ्चतः पुष्पराशीन्
 मृदुपवनविधूतान् पुष्पिताँश्चूतराशीन्।
अभिमुखमभिवीक्ष्यक्षामदेहोऽपि मार्गे
 मदनशरनिघातै र्मोहमेति प्रवासी॥

अर्थ—(इस समय) मार्गमें सुन्दर सुनहले मोजरोंको बरसातेहुए मन्द वायुसे कम्पित एवं बौरभरे आम्रवृक्षोंको सामने देख दुबले परदेशी (पथिक) भी कामदेवके वाणोंके प्रहारोंसे अचेत होजायाकरताहै।

[अनुवाद, रूपघनाक्षरी]

सोनेसे सुभग रंगवारे अनियारे प्यारे
धारे वेश बौरन चहूंघा बगरायरहे।
मन्द मन्द वहत अनन्द सों मिलित मंजु
मारुतझकोरनसों झूमत सुहायरहे॥
ऐसी देखि सामुहें सुभग सहकारसोभा
सकल संयोगोहीय सुख सरसायरहे।
बाहन विलोकत बटोही दूबरेह देह
पुष्पबानबानन विधेसे मुरझायरहे॥

(३०)

परभृतकलगीतैर्ह्लादिभिः सद्वचांसि
स्मितदशनमयूखान् कुन्दपुष्पप्रभाभिः।
करकिसलयकान्तिं पल्लवैर्विद्रुमाभै-
रुपहसति वसन्तः कामिनीनामिदानीम्॥

अर्थ—इससमय यह वसन्त कोकिलोंके मनोहर कुहूकोंसे स्त्रियोंकी मधुर वाणियोंको, कुन्दपुष्पोंकी शोभासे उनके मुसकान एव दन्तशोभाको और मूंगेके रंगवाले पल्लवोंसे उनके करतलोंकी शोभाको हंसताहुआ सा दिखाई देरहाहै।

[पद्यानुवाद, मनहरन-घनाक्षरी]

मदकल कामदूत कोकिल कुहूकन सों
भामिनी-बचन अनुहरत सुहावैहै॥

कुन्द कुसुमनके विकासन विलासनसों
चन्द्रमुखीहासन उजासन उड़ावैहै ॥
ललित प्रवालहू प्रवाल से लखाय लाल
कोमलता कामिनीकरनकी चुरावैहै ।
आपने समाजनसों सरस वसन्त आजु
सुन्दरीन सुमति हँसत सरसावैहै ॥

(३१)

कनककमलकान्तैराननैःपाण्डुगण्डै-
रुपरि निहितहारैश्चन्दनार्द्रैः स्तनान्तैः।
मदजनितविलासैर्दृष्टिपातै र्मुनीन्द्रान्
स्तनभरनतनार्यः कामयन्ति प्रशान्तान् ॥

अर्थ—(इनदिनों)स्तनोंके भारसे झुकीहुई स्त्रियां; सुवर्णके कमलस दृश ऊपर पड़ेहुए हार वाले एवं चन्दनोंसे भीजे हुए स्तनोंसे और मद्यजनित विलासोंसे युक्त कटाक्षोंसे शान्तचित्त मुनियोंको भी सकाम कररहीहैं ।

[पद्यानुवाद]

सोनेसे सलोने कल कोमलकमल ऐसे
गोरे गोलगाल मंजु मुखछवि छातीं ये ।
पियसुखसार चार चन्दनचरचकार
उरजकिनार हारभार हलरातीं ये ॥
बांके मदछाके औनचलित चितौननसों
गजगति गौनन तरुनि इतरातीं ये ।

दलकत आतीं दबीजातीं ये उरोजओज

मानस मुनीनहूंकी ललना लुभानीं ये ॥

(३२)

मधुसुरभिमुखाब्जं लोचने लोध्रताम्रे

नवकुरुबकपूर्णः केशपाशो मनोज्ञः।

गुरुतरकुचयुग्मं, श्रोणि-बिम्बन्तथैव

न भवति किमिदानीं योषितां मन्मथाय ॥

अर्थ—इनदिनों स्त्रियोंका मद्यसुगन्धयुक्त मुख, लोध्रके सदृश लाल नेत्र, नये कोरैयेके फूलोंसे सुन्दर जूड़ा, बड़े-बड़े दोनो स्तन और नितम्ब, इस प्रकार स्त्रियोंका कौनसा अंग भला कामोद्दीपनके लिये नहीं होता? अर्थात् उसके सभी अङ्ग कामोद्दीपक होजाते हैं।

[पद्यानुवाद, मनहरन]

मधुगन्ध मोदित मनोहर मुखारविन्द

अति अनियारे रतनारे कजरारे नैन।

कोमल नवल यों कुरैयनकी कलिकान

गूंथे केशपाश ये परम परमाके ऐन ॥

उन्नत उरोजकुम्भ उरपै विराजमान

नवल नितम्ब त्यों चितैयनके चैनदैन।

कौन सो न अंग अंगनाको उमगंत आजु

मंजुल मनोहर मदत मतवारो मैन ॥

(३३)

वसन्ततिलकम्।

आकम्पितानि हृदयानि मनस्विनीनां
वातैः प्रफुल्लसहकारकृताधिवासैः।
सम्बाधितम्परभृतस्य मदाकुलस्य
श्रोत्रप्रियै र्मधुकरस्य च गीतनादैः॥

अर्थ—इनदिनों बौरेहुए आमके वृक्षोंसे सुगन्धित वायुने धीर स्त्रियोंके हृदयोंको भी सञ्चालित करदिया है। मदमत्त कोकिलोंके कुहुक और भौंरोंके मधुर गुञ्जार (चारों ओर, भर गये हैं।

[पद्यानुवाद, रोलाछन्द]

बौरे-सरस-रसाल-बास-वर-सरस-बतासन।
तियहिय धीरज तजनचहत जनु लेत उसांसन॥
मदकल कोकिल कूक भवरगुंजार मधुर धुनि।
विकल वियोगिन करत चहुँघा चुनिचुनि पुनिपुनि॥

(३४)

रम्यः प्रदोषसमयः स्फुटचन्द्रहासः
पुंस्कोकिलस्य विरुतं पवनः सुगन्धिः।
मत्तालियूथविरुतं निशि सीधुपानं
सर्वं रसायनमिदं कुसुमायुधस्य॥

अर्थ—(इनदिनों) रमणीय सन्ध्याकाल, खिलीहुई चांदनी, कोयलके शब्द, सुगन्धित पवन, मतवाले भौंरोंके गुञ्जार और रात्रिमें मद्यपान, ये सभी कामदेवके उद्दीपक होजाते हैं।

[पद्यानुवाद]

सुखमय सांझ सुहात, चांदनी रुचिउपजावनि।
कोकिलकुहुक अचूक, सुगन्धित पवनहु पावनि॥
समद-मधुपरव-रम्य रइनि मधुपान मनोहर।
मदनदेवके साज सुमति सबही यों सुखकर॥

(३५)

छायां जनः समभिवाञ्छति पादपानां
नक्तन्तथेच्छति पुनः किरणं सुधांशोः।
हर्म्यं प्रयाति शयितुं सुखशीतलञ्च
कान्ताञ्च गाढमुपगूहति शीतलत्वात्॥

अर्थ—(इसऋतुमें) दिनमें तो मनुष्य वृक्षोंकी छाया चाहता है, रातमें चांदनी पसन्दकरता है, सुखदायक एवं शीतल कोठेके छतपर सोनेके लिये जाताहै और ठंढक मालूम होनेपर प्यारीको भलीभांति लिपटालेता है।

[पद्यानुवाद,]

दिनमहँ तीछन घाम चहत जिय छांह तरुनकी।
रैननहू पुनि होत सुमति रुचि इन्दुकिरनकी॥
सीतल सुखद अटान ऊबि साजन सुख सोवैं।
सिहरि सिहरि प्यारिहिं अँकोरि ठंढक पुनि खोवैं॥

(३६)

मालिनीवृत्तम्।

मलयपवनविद्धः कोकिलेनाभिरम्यः
सुरभिमधुनिषेकाल्लब्धगन्धप्रबन्धः।
विविधमधुपयूथैर्वेष्ट्यमानः समन्ताद्
भवतु तव वसन्तः श्रेष्ठकालः सुखाय॥

अर्थ—दक्षिणपवनसे युक्त, कोकिलोंसे रमणीय, सुगन्धित मधुक्षरणसे सुगन्ध, नानाप्रकारके भ्रमरोंद्वारा चारों ओरसे घिराहुआ (यह) उत्तम वसन्तसमय तुम्हारे सुखके लिये होवे।

[पद्यानुवाद]

सीतल मलयसमीर कोकिलाकुहुक-मनोहर।
सरसत रस मधुगन्धसुगन्धित सवथल सुन्दर॥
बहुविधि गूंजत मधुपमण्डलीमण्डित दिसिदिसि।
यह वसन्त तव सुखद होय सबभांति दिवस-निसि॥

(३७)

शार्दूलविक्रीडितम्।

आम्रीमञ्जुलमञ्जरीवरशरः सत्किंशुकं यद्धनु
र्ज्या यस्यालिकुलं कलङ्करहितं छत्रं सितांशुः सितम्।
मत्तेभो मलयानिलः परभृता यद्वन्दिनो लोकजित्
सोयं वो वितरीतरीतु वितनुर्भद्रं वसन्तान्वितः॥

अर्थ—आमकी मनोहर मञ्जरी ही जिसके बाण हैं, सुन्दर टेसू ही जिसका धनुष है, कलङ्करहित भ्रमरगण ही जिसकी ज्या है, सुविमल चन्द्रमा ही जिसका श्वेत छत्र है, मलयपवन ही जिसका मतवाला हाथी है, कोयल ही जिसके वन्दीगण हैं और वसन्त जिसका साथीहै, ऐसा यह लोकविजयी कामदेव तुम्हारा कल्याण कियाकरे ।

[पद्यानुवाद, छप्पयछन्द]

लसित सुभग सहकार बौर सायक सुभ कीन्हें ।
अलिकुल नवल निषंग, चाप टेसू कर लीन्हें ॥
अमलधवलछवि छत्र छजत ससिकिरन मनोहर ।
मलयपवन गज मत्त, वन्दिगन कोकिल कलस्वर ॥
सरसत-वसन्त-मन्त्री-सहित महाराज मन्मथ महित ।
तव सदा सर्वथा सुभकरैं सुमति विश्वविजयी विदित ॥

———:※:———

इति-महाकवि-श्रीकालिदास-विरचिते ऋतुसंहारे खण्डकाव्ये सुमति-शिवप्रसादशर्म्म-रचित-गद्यपद्यानुवाद-संवलिते वसन्तवर्णनं नाम षष्ठः सर्गः समाप्तः ।

ऋतुसंहारके पद्यानुवादमें आयेहुए कठिनशब्दोंके अर्थ ।

—:o:—

[अ]

अचूक = न चूकनेवाली ।
अचेरहे = पी रहे हैं ।
अटा = अटारी, कोठा ।
अतन = अनङ्ग, कामदेव ।
अधर = निचला होंठ ।
अभंग = लगातार, अखण्ड ।
अमल = निर्मल, स्वच्छ ।
अमित = बेहद, अनेक ।
अरना = जंगली भैंसा ।
अरविन्द = कमल ।
अलक = मुखपर लटकीहुई लट ।
अलोल = अचञ्चल, स्थिर ।
अविरल = घना, लगातार ।
असेस = अशेष, सब ।
असोक = अशोकवृक्ष ।
असंक = निश्शङ्क, निडर, निर्भय ।
अहो = आश्चर्यसूचक अव्यय ।
अँकोर = अंकवार, अङ्कमाल ।
अँकोरचां = अंकवारमें, अङ्कमें ।
अंगराति = अंगड़ाती, देह मरोड़ती या जम्हातीहुई ।
अंगना = स्त्री, आंगन ।
अंसुक = अंशुक, रेशमी कपड़ा। मलमल ।

[आ]

आतप = घाम, धूप ।
आभा = शोभा, प्रकाश ।
आरसी = ऐना, दर्पण ।
आसव = मद्य ।

[इ]

इतरातीं = अठिलातीं ।
इन्द्रधनुष = पनसोखा ।

[उ]

उग्र = कड़ा, भयङ्कर ।
उच्च = ऊंचा ।

उजास=दीप्ति, प्रकाश।

उझुकत=नीचेऊपर हिलता, झूमता हुआ।

उताहुल=घबराया हुआ।

उदित=उगाहुआ, जागृत, उन्नत, प्रकाशित।

उनये=उमड़े हुए।

उन्नत=ऊंचा।

उभय=दोनो।

उमरत=उमड़ता वा चढ़ता हुआ।

उमंग=उत्साह, आनन्द।

उरोज=स्तन।

उसीर=उशीर, खस।

[ऋ]

ऋतु=मौसिम।

[ओ]

ओक=स्थान, घर।

ओज=ज़ोर, बल, जोश।

[क]

कर=किरण, शुण्ड, हाथ।

करवा=मद्यादि पीनेकेलिये मिट्टीका बरतन।

कल=मधुर, कोमल, मनोहर।

कलित=धारण किये, सुन्दर।

कलाप=समूह, मोरके पंख।

कल्पित=बनाया हुआ।

कसमस=कसमसाताहुआ, कसाहुआ।

कांक=मालटांगुन, कंगुनी।

किंकिनी=किंकणी, क्षुद्र-घंटिका, करधनी।

किशलय=कोमल नये पत्ते।

कुटीर=कुटी, झोपड़ा।

कुसुम=फूल, कुसुम्भ, बरेंका फूल।

कुञ्चितकाय=अंगोंको सिकुड़ाये वा टेढ़ा किये।

कुलेलें=कुलेल (कलोल क्रीड़ा वा विनोद) करती हैं।

कुमुदिनी=कोईके पुष्पोंका सरोवर।

कुमुद=कोईफूल।

कुटिल=टेढ़ी।

केतारी = ऊख ।
केशर = सिंहके धोनेके केश ।
कोश = कमलपुष्प का मध्य-भाग, खज़ाना ।
कोटर = खोढ़र, गुफा ।

[ख]

खरतर = तेज, तीव्र ।

[ग]

गंडदेश = गाल ।
गढ़वार = गाढ़ा ।

[घ]

घनावन = मेघ ।

[च]

चंचरीकपुञ्ज = भौंरोंके समूह ।
चंचला = बिजली ।
चंद्रिका = चांदनी ।
चम्पक = चम्पा ।
चक्षुरञ्जन = नेत्ररञ्जन ।
चण्डमयूख = सूर्य ।
चार = चारु, सुन्दर ।
चित्तहर = मनोहर ।
चेतन = चित्त ।
चोज = उत्तमता, खूबी ।

[छ]

छिन्न = कटाहुआ ।

[ज]

जलधरमाला = मेघसमूह ।
जाल = समूह ।
जीवन = पानी, प्राण ।
जीह = जीभ ।
जोस = जोश, बल, तेज़ी ।

[त]

तचे = तपेहुए, तप्त ।
तति = समूह, पंक्ति ।
तरैयन = तारागण, ताराओंसे ।
तमकि = रंजहोकर ।
तउ = तौभी ।
तरजि = धमकाकर ।
तीछन = तीक्ष्ण, तीखा, तेज़ ।
तीरवर्ती = तटपर वर्तमान ।
तीन = तेज़ ।
तुङ्ग = ऊंचा ।

[द]

दन्तक्षत = दांत से कटा हुआ वा काटना ।
दम्पति = स्त्री पुरुष ।
दिव्य = अत्युत्तम, स्वर्गीय ।
दीपित = चमकता दमकता वा जलता हुआ ।
दीह = बड़ा, लम्बा, बहुत ।
द्योस = दिवस, दिन ।

[ध]

धवल = उजला ।

[न]

नतमस्तक = शिर झुकाये हुए ।
नदत = गरजते हुए ।
नव = नया ।
नव्य = नया ।
नवमालिका = नेवाड़ीफूल ।
नम्रतरतनु = बहुत झुकी देहवाली ।
नव जात = नये उत्पन्न ।
नाल = कमल की डंटी ।
निशाकर = चन्द्रमा ।
निरुपाधि = निरुपद्रव, शान्त ।
निकाम = अत्यन्त ।
निर्झर = झरने ।
निखात = गड्ढा ।
निपीड़न = दबाना ।
निश्वास = सांस ।
निपीत = पिया हुआ, चूसा हुआ ।
नितम्ब = कमरका पिछला हिस्सा, चूतड़ ।
निखिल = सब, समग्र ।
निकेत = घर, स्थान ।
निगूढ़ = छिपाहुआ, गहरा ।
नखरे = धोये, स्वच्छ ।
निषङ्ग = तरकस ।

[प]

पक्व = पकाहुआ ।
पटीर = चन्दन ।
परमा = शोभा ।
परिसिक्त = सींचा हुआ ।
पारावार = समुद्र ।
पिंजरित = सघन ।
पीन = पुष्ट, मोटा ।
प्रयास = परिश्रम, मिहनत ।
प्रचण्ड = बहुत कड़आ, उग्र, क्रोधित, बहुत कड़ा ।
प्रसून = फूल ।

[फ]

फबत = सोभताहुआ या सोभता है ।

[ब]

बन = समूह (बन) ।
बनडाढ़ = दावानल, जंगल में लगी हुई आग ।
बनरोझ = जंगल का घुड़परास वा नीलगाय ।
बगरत = फैलताहुआ, फैलताहै ।
बानक = वेष, भेस ।
बालरवि = प्रातःकालके सूर्य ।
बीजना = व्यजन, बेना, पंखा ।
बैहर = वायु ।
बौर = मोजर, आमकी मञ्जरी ।
बौरे = मोजराये, मञ्जरीयुक्त ।
ब्यापित = व्याप्त, फैल गया, फैलाहुआ ।

[भ]

भङ्गि = मरोड़, विलास ।
भाजत = भागताहुआ ।
भावन = सुहावन, प्यारे,
भार = बोझ, समूह ।
भीषम = भयङ्कर ।
भुजङ्ग = सर्प ।
भृकुटी = भौंह ।
भेक = मेढ़क ।
भ्राज = सोभताहै ।

[म]

महाहिम = वर्फ ।
मल्लिका = मोतिया, वेली, वेला ।
मयूख = किरण ।
मनहर = मनोहर ।
मनोमोदक = मनको प्रसन्न करने वाला ।
मलयज = चन्दन ।
मधुमय = मद्यगन्धयुक्त ।
मलिन्द = भौंरे ।
मनोभव = कामदेव ।
मरोर = व्यथा ।
मचलत = घमंड करती, जिद करतीहुई ।
मधुमास = चैत, वसन्तके महीने ।
मलयसमीर = दक्षिणवायु ।
मधुप = भौंरे ।
मण्डित = शोभित, भूषित ।
महित = पूजित, मान्य ।
माधवी = मदिरा (माध्वी) ।

मानस = मन ।
मुकताहल = मुक्ताहार ।
मुकुल = कोंढ़ी ।
मृष्ट = स्पृष्ट, स्पर्श कियाहुआ ।
मृदु = कोमल, मधुर ।
मृगमद = कस्तूरी ।
मेह = मेघ ।
मेखला = करधनी, कमरबन्द ।

(र)

रजनीकर = चन्द्रमा ।
रहट = जलयन्त्र ।
रसाल = आम, रसीला ।
रङ्ग = रण, क्रीड़ा, आनन्द ।
रक्त = लाल ।
रसरैयन = रसराजोंको, रसिकोंको ।
रमण = विहार, प्यारा, पति ।
रति = रमण, समागम, प्रीति (Love) ।
रतनार = लाल ।
राजि = समूह, पांती ।
रूरि = सुन्दर ।
रोर = शब्द ।

[ल]

लपावत = लपलपाता वा हिलाता हुआ ।
ललना = स्त्री ।
लुलित = डुबाया हुआ, विघट्टित, खण्डित ।
लूमत = लटकती हुई ।
लोहित = लाल ।
लोनी = सुन्दर, लावण्यमयी ।

[व]

वदन = मुख ।
वासना = कामना, ख्वाहिश ।
वार = नद नदी समुद्रका इसपारका किनारा ।
विनोद = आनन्द, मनोरञ्जन, मनोरञ्जकता ।
विनोदी = खेलवाड़ी, प्रसन्न ।
विभ्राजमान = सोभताहुआ ।
विभा = आभा, शोभा ।
विपुल = बहुत ।
विद्ध = विधा हुआ, घायल ।
विलोल = चञ्चल ।
विघट्टित = परिचालित, घंघोला हुआ ।
विश्व = संसार ।
वीरबधू = भगजुगनी, खद्योत, भकजोन्हा ।

———

[स]

सरसाता
सरसत } = सरस होता है, सोभता है।
ससिकान्त = चन्द्रकान्त मणि, चन्द्रमासा सुन्दर (शशिकान्त)।
सतराती = देह बचाकर हटती हुई, कतराती हुई।
सरित = नदी।
सरसिज
सरोज } = कमल।
सरवर = बराबरी।
समाकुल = भराहुआ।
सम्पन्न = भरापूरा।
सरासन = तरकस (शरासन)
सहकार = आम।
सहेत = सस्नेह, प्यारसहित।
...न्दोह = समूह।
...टिन = सटियोंको।
...लि = (शालि) धान।
...यक = बाण।
...जन = प्यारा, मित्र, स्त्रीका पति।
... = उजला।
...न = शब्द (शिञ्जन)
...रस = शिलाजीत।

सीत = (शीत) पाला, ओस।
सीकर = (शीकर) जलकण, बून्दें।
सुवास = सुगन्ध।
सुखमा = अत्यन्त शोभा।
सुप्त = सोयाहुआ।
सुरत = रति, समागम, सुध, सूरत।
सुधास्वादु = अमृतसा मीठा।
सूही = लाल रंगकी।
सेत = श्वेत, उजला।
सेतु = पुल।
सौरभ = सुगन्ध, सुन्दरता।

[ह]

हर्म्य = कोठा, अटारी।
हलरत = डोलताहुआ, झूमता हुआ।
हंकारि = पुकारकर, कहकर।
हुत = हुनाहुआ, हवन किया हुआ।
हुमरत = उमगती हुई।
हूक = मनकी व्यथा।
हेम = सुवर्ण, सोना।
हौंस = ख्वाहिश। उत्कण्ठा,

—:o:—

शुद्धिपत्र ।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध		शुद्ध
१	१४	जलाशयके	...	सर्वदा स्नान होनेसे जलाशयके
३	१६	स्नानके	...	स्नान और
५	२	उत्काण्ठित	...	उत्कण्ठित
,,	१६	चकार	...	चकोर
६	१७	रसपागि	...	अनुरागि
,,	१९	हियैव	...	हियेव
७	८	देखि	...	पेखि
,,	१९	वायु-झकोरन	...	वायु–झकोरन
८	२	विरहानलज्वालन		विरहानलज्वालन
,,	१०	वारवार	...	वारवार
९	२	कामोद्दोपन	...	कामोद्दीपन
,,	८	विभूपण	...	विभूपन
,,	१६	नीच किये हुआ		नीचे किये
१०	१३	जीह-विलोल	...	ज़ीहविलोल
११	१२	सर्पका भी	...	सर्पको भी
१३	११	स्त्नानार्थी	...	स्नानार्थी
,,	१६	यासर	...	तालहिं
,,	१९	डालत	...	डोलत

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१५	११	वीं क्ष्यमाणा ...	वीं क्ष्यमाणा
१७	१	सिन्दर ...	सिन्दूर
१८	१६	वढ़ा ...	बढ़ी
१६	१७	हे वाचक ...	हे प्यारी
२२	२२	झमिरहे ...	झूमिरहे
२३	७	कणसुखद ...	कर्णसुखद
२४	१३	विवस विदेशिन	बिवस बिदेसिन
२५	४	विशेषभांति ...	बिसेषभांति
२८	८	वस ...	वेस
३३	१३	गडदेस ...	गंडदेस
४०	२१	कुण्डल ...	कुंडल
४१	८	जलविन्दुसिक्त	जलबिन्दु पड़नेसे
४३	५	आस्त्रय ...	आस्रय
४४	२	गुण ...	गुन
४६	२१	हंसादिरूपकी	हंसादिरूपी
४७	६	सरित-उच्च ...	सरितउच्च
४८	४	वप्राश्व ...	वप्राश्च
”	१३	परिपक्क ...	परिपक्व
५३	२३	पष्प शोभा ...	पुष्पशोभा
५७	६+७	झुकीं, ढकीं ...	झुकी, ढकी
”	२२	निजकानोंसे ...	निजकानोंपै
६०	६	मम्मः ...	मर्म्मः
”	१५	निमल ...	निर्मल
”	२१	और भी ...	और भी क्षेपकसे

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध		शुद्ध
६१	१	शोभा	...	शोभां
६४	१४	कुसम	...	कुसुम
६५	१	(२)		
६७	१८ + १९	खालि, आनन्द		खोलि, आनंद
६८	११	नित	...	जनु
,,	२१ + २२	शालि, हरिणी, हरिण		सालि, हरिनी, हरिन,
६९	१	हंसवंश	..	हंसवंस
,,	१२	विकसित	...	विकसित
७१	७	गान्धत	...	गन्धित
७२	१३	अधर-दन्तन	...	अधर दन्तन
७३	२ + ३	श्रम, जागरण	...	स्रम, जागरन
७३	७	दामपरिभुक्त	...	दाम परिभुक्त
८०	२०	पुनिपुनि	...	रहिरहि
,,	५	चूकत	...	चूके
८४	१५	श्रुति	...	स्रुति
८६	१५	स्वाद	...	स्वादु
,,	१८	वढावने	...	वढ़ावन
,,	२३	षष्ठः सर्गः	...	पञ्चमः सर्गः
९०	४	अतिछविदेत।	...	पुनि छवि देत—
९१	१२	सुरत-सहेत	...	सुरत सहेत
९३	७	गौरवनियां	...	गौरवरनियां

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध		शुद्ध
६६	७+२०	वेश, डोलत	...	वेस, डोलत,
१०३	६	किकिनि	...	किंकिनि
१०२	१६	संचलिते	...	संचलिते
१०६	३	वेश	...	वेस
"	८	दूवरेह	...	दूवरेहू
१०७	१	कुन्द कुसुमन	...	कुन्दकुसुमन
"	२१	श्रौन	...	स्रौन
१०६	१२+१४	सरसवतासन, भवर		बहतवतासन भँवर

(भूमिकामें)

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	१०	कालिदास ह	कालिदास हैं
२	१६	विलक्षनः	विलच्छन
४	१	रसवांज	रसवीज
५	१	अथ	अर्थ

इत्यादि ।

पाटलिपुत्र-कार्यालय

मुरादपुर-बांकीपुरकी विक्रयार्थ पुस्तकें।

सटिक श्रीशिवमहिम्नःस्तोत्र।

जगद्विख्यात श्रीशिवमहिम्नः स्तोत्रका परिचय हिन्दुओं को देना वृथा है ; क्योंकि देशमें इसका प्रचार बहुत है। हमारे इसके प्रकाशनका कारण यह है, कि इसकी कितनी ही टीकाएं हमने देखीं ; पर उन में पाठान्तर बहुत ही मिले। यही कारण है, कि हमने बहुत ढूंढ़-खोज कर एक आठ सौ वर्षके पुराने लेखसे मिला इस स्तोत्रको प्रकाशित किया है। इसकी संस्कृत और हिन्दी टीका भी सर्व्वबोधगम्य बनाई गई है। इस पुस्तकमें शिवपार्थिवपूजनकी विधि भी बड़ी सरलतासे लिखी गई है। यह शिवपूजकोंके बड़े ही उपकार की चीज है। इतना होने पर भी सर्वसाधारणमें प्रचारके लिये दाम सिर्फ दो ही आने रखे गये हैं। छपाई सफाई और कागज अच्छा है।

इसके विषयमें बिहारकी सुप्रसिद्ध मासिक पत्रिका 'लक्ष्मी' (अगस्त १६१६ की) कहती है,—

"यह प्रसिद्ध शिवमहिम्नः स्तोत्रका सटीक संस्करण है। टीका बड़ी अच्छी है। शिवभक्तोंके लिये उपादेय है।..."

शिवताण्डव और वेदसारशिवस्तोत्र ।

उक्त नामके ये दो स्तोत्र एकत्र ही छापेगये हैं। एकके रचयिता विख्यात शिवभक्त राक्षसराज रावण और दूसरेके स्वामी शंकराचार्य हैं। इन स्तोत्रोंसे उन लोगोंको अत्यन्त आनन्द प्राप्त होगा, जो इनका अर्थ समझते हुए पूजान्तमें आरतीके समय इन्हें सुललित स्वरोंसे प्रेमपूर्वक पढ़ सकेंगे (जैसे विष्णुमन्दिरोंमें संस्कृतज्ञ भक्त अच्युताष्टक-आदि पढ़ते हैं)। जिज्ञासुजनोंके भक्तिवर्धनके लिये इसके साथ संस्कृत अन्वय तथा हिन्दी सरल टीका लगाई गई है। यह वही शिवताण्डव है, जिसकी अपूर्व रचनासे प्रसन्न हो औढरढरन भगवान महादेव ने कैलाशको कोरमें दबे हुए रावणको तुरन्त ही उन्मुक्त किया था। कौन सा संस्कृतानुरागी इसको रचनाकी अपूर्वताको नहीं जानता होगा ? दूसरा स्वामी शंकराचार्यरचित वेदसार-स्तोत्र भी उनके सभी स्तोत्रों में अत्युत्तम है। दाम ≈)

सुमति-विनोद ।

(प्रथम भाग)

यह एक विविध प्रकारकी रसीली और फुटकर ढाई सौ कविताओंका संग्रह है। यदि आप थोड़े ही मूल्यमें नाना भांतिके सरस पद्योंका एक संग्रह पाना चाहतेहैं, यदि आप श्रीराधाकृष्णविषयक नये और अनूठे पद्योंके प्रेमी हैं, यदि आप आधुनिक पद्योंमें भी प्राचीनताकी झलक देखना चाहतेहैं, यदि आप छोटे-छोटे पद्योंमें भी अच्छी अच्छी युक्तियां देखना चाहते हैं, यदि आप चित्रकाव्यके कुछ नमूने किसी ग्रन्थके पद्योंमें देखलेना चाहते हैं, यदि आप बिहारके किसी प्रसिद्ध कविकी माधुर्यमयी कविता देखना चाहते हैं और यदि आप काव्यग्रन्थोंके कुछ भी मर्मज्ञ हैं, तो इस पद्यकाव्यका संग्रह

करनेमें देर न करें। जिसकी प्रशंसा सरस्वती, मर्यादा, रंग-विहार, रसिकमित्र आदि प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओंने मुक्तकण्ठसे की है, उस विनोदके लिये मूल्य चार आना कुछ भी नहीं।

कृष्णकीर्त्तन।

नामहीसे पुस्तकका विषय स्पष्ट है। आनन्दकन्द व्रजचन्द्र भगवान श्रीकृष्ण और भगवती राधारानीके गुणानुवाद-सम्बन्धी सरल और सुन्दर संस्कृत-दोहा और उनका हिन्दी-अनुवाद इस पुस्तकमें प्रकाशित किया गया है। संस्कृत और हिन्दी दोनो कविताएं भावमयी और मधुर हैं। मूल्य दो आने।

देखिये इसके विषयमें "सरस्वती" (एप्रिल १९१७ की) क्या लिखती है:—

"...इस ३२ सफेकी अच्छी छपी पुस्तकमें १०० दोहे हैं। वे सबके सब संस्कृतमें हैं। छपे बड़े टाइपमें हैं। नीचे छोटे टाइपमें उनका हिन्दी अनुवाद उसी छन्दमें है। पुस्तकका नाम ही उसके विषयका यथेष्ट सूचक है। एक उदाहरण,—

कोमलानि मधुराणि शुचि-सुखद-भक्ति-भरितानि।
नाशयन्ति दुरितानि किल, राधाहरिचरितानि॥
भक्तिभरित कोमल मधुर, सुन्दर सुखद पवित्र।
नासत सारे पापको, राधाकृष्ण-चरित्र॥"

श्रीकृष्णप्रसाद सिंह चौधरी

मनेजर पाटलिपुत्र

मुरादपुर, बांकीपुर।

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन सम्बन्धी परीक्षाओंकी

विवरण-पत्रिका

जिसमें परीक्षाओंके नियम और
उपनियमके अतिरिक्त १९७६
विक्रमाब्दकी परीक्षाओंके
विषय और पुस्तकोंका
विवरण है।

श्रावणी पूर्णिमा १९७५ वि०

सम्मेलन-कार्य्यालय, प्रयाग

मूल्य -)

पुस्तकें

निम्नलिखित पुस्तक-विक्रेताओंने परीक्षा-मन्त्रीको सूचना दी है कि सम्मेलनकी प्रथमा, मध्यमा, उत्तमा इत्यादि परीक्षाओंमें नियत पुस्तकें उनके पास विक्रीकेलिए रहती हैं—

१. रामनरेश त्रिपाठी, साहित्य-भवन, जानसेनगंज, प्रयाग।
२. मर्य्यादा पुस्तक भण्डार, प्रयाग।
३. रामप्रसाद ऐन्ड ब्रदर्स, पुस्तक-विक्रेता, आगरा।
४. मध्य-भारत पुस्तक एजेन्सी, इन्दौर।
५. हिन्दी पुस्तक एजेन्सी, कलकत्ता।
६. विज्ञान-परिषत् कार्य्यालय, प्रयाग।
७. गृहलक्ष्मी-कार्य्यालय, प्रयाग।

विवरण-पत्रिका

नियम, और उपनियम अध्याय ५ से ९

परीक्षा-सम्बन्धी नियम

६३—सम्मेलनकी ओरसे प्रति वर्ष हिन्दीमें तीन परीक्षाएँ ली जायँगी—प्रथमा, मध्यमा और उत्तमा।

*   *   *   *   *

६८—सभी देश, जाति और अवस्थाओंके परीक्षार्थी इन परीक्षाओंमें सम्मिलित हो सकेंगे।

६९—प्रथमामें उत्तीर्ण परीक्षार्थी मध्यमा परीक्षामें बैठ सकेगा। परीक्षा-समितिको अधिकार होगा कि किसी विशेष परीक्षार्थीको विना प्रथमामें उत्तीर्ण हुए ही मध्यमामें सम्मिलित होनेकी अनुमति दे।

७०—मध्यमा परीक्षामें उत्तीर्ण परीक्षार्थीको "विशारद" की उपाधि दी जायगी।

७१—विशारद-उपाधि-धारी ही परीक्षा-समितिद्वारा निर्धारित विषयोंमेंसे किसी एक विषयमें उत्तमा परीक्षामें सम्मिलित हो सकेगा।

७२—उत्तमामें उत्तीर्ण विशारदको उसके विषयमें "रत्न" की उपाधि दी जायगी।

७३—प्रथमामें उत्तीर्ण व्यक्तिको प्रमाण-पत्र और उपाधि-परीक्षाओंमें उत्तीर्ण व्यक्तिको उपाधि-पत्र मिलेगा, जिसपर

सम्मेलनकी मुद्राकी छापके अतिरिक्त सभापति, प्रधान मन्त्री और परीक्षा-मन्त्रीके हस्ताक्षर होंगे।

७४—इन परीक्षाओंमें हिन्दी-भाषा और देवनागरी-लिपिका व्यवहार होगा।

* * * * *

७६—यदि कोई परीक्षार्थी किसी विषय वा विषयोंमें उत्तीर्ण न हो तो उसे अगले वर्ष उसी विषय वा विषयोंमें परीक्षा देनेका अधिकार होगा।

७७—परीक्षार्थियोंको सम्मेलनके छपे आवेदन-पत्रके फ़ार्मको भरकर समितिद्वारा नियत तिथिपर वा उससे पहलेही सम्मेलन-कार्य्यालयमें भेज देना होगा। आवेदनपत्रके साथ नीचे लिखी रीतिसे शुल्क आना चाहिए—

प्रथमा परीक्षा २); मध्यमा परीक्षा ५); उत्तमा परीक्षा १०)

शुल्क सहित आवेदन-पत्र ठीक समयसे न आनेपर कोई परीक्षार्थी परीक्षामें सम्मिलित न हो सकेगा।

स्त्रियोंसे शुल्क नहीं लिया जायगा।

७८—आवेदन-पत्रका रूप परीक्षासमिति निश्चित करेगी। *

७९—सम्मेलनके प्रत्येक अधिवेशनमें पिछली परीक्षाओंमें उत्तीर्ण व्यक्तियोंको सभापति प्रमाण-पत्र, उपाधियाँ, पदक, पारितोषिक आदि प्रदान करेंगे।

८०—परीक्षा-समितिको अधिकार होगा कि आरायज़नवीसी और मुनीमीकी विशेष परीक्षाएँ स्थापित करे।

८१—परीक्षा-समितिको अधिकार होगा कि परीक्षाओंके

---

*आवेदनपत्र सम्मेलन कार्य्यालयसे विना मूल्य मिलेगा।

९—प्रमाणपत्र अथवा उपाधिपत्र खो जानेपर १) शुल्क देनेसे प्रतिलिपि मिल सकेगी।

१०—शुल्क सहित आवेदन-पत्र भेजनेकी तिथि परीक्षाके आरम्भकी तिथिसे कमसे कम ३ मास पहले होगी, जिसकी सूचना पूर्वोक्त तिथिसे कमसे कम दो मास पहले सम्मेलन-पत्रिकामें प्रकाशित की जायगी।

११—प्रत्येक प्रश्न-पत्र साधारणतः १०० अङ्कोंका होगा और प्रत्येक प्रश्नके साथ साथ उसके पूरे अङ्क प्रकाशित किये जायँगे।

१२—प्रति वर्षकी परीक्षाकेलिए समिति पहलेसे ही परीक्षाकेन्द्रोंकी नियुक्ति करेगी, किन्तु उसे अधिकार होगा कि शुल्क आजानेकी तिथिके एक मासके बादतक निर्दिष्ट केन्द्रोंमेंसे कुछके नाम निकाल दे अथवा उनकी नामावलीमें और नाम जोड़ दे।

१३—यदि परीक्षार्थी अपने आवेदनपत्रमें दिए हुए केन्द्र तथा परीक्ष्य विषयका परिवर्तन करना चाहे तो परीक्षाकी नियत तिथिसे ३१ दिनके पहलेही प्रार्थनापत्र भेजे। यह अवधि बीत जानेपर कोई परिवर्तन न हो सकेगा।

१४—यदि कोई परीक्षार्थी परीक्षामें न बैठे तो शुल्क लौटाया नहीं जायगा।

१५—अनुत्तीर्ण परीक्षार्थी परीक्षासमितिसे पूछ सकता है कि वह किन किन विषयोंमें अनुत्तीर्ण हुआ है और यदि अपनी उत्तर पुस्तक फिरसे जचवाना चाहे तो सम्मेलनपत्रिकामें परीक्षाफल छपनेके एक मासके भीतरही प्रति प्रश्नपत्र एक रुपया शुल्क परीक्षामंत्रीके पास भेजकर जचवा सकता है।

अध्याय ६—प्रथमा परीक्षा

१—प्रथमा परीक्षामें उत्तीर्ण होनेकेलिए प्रत्येक विषयमें परीक्षार्थीको प्रति सैकड़ा ३३ अंक प्राप्त करने होंगे। उत्तीर्ण परीक्षार्थी तीन श्रेणियोंमें विभक्त होंगे। प्रथम श्रेणीमें वे परीक्षार्थी होंगे जो सब विषयोंके अंक मिलाकर प्रति सैकड़ा ५० या उससे अधिक अंक पावेंगे। द्वितीय श्रेणीमें वे होंगे जो सब विषयोंमें मिलाकर ४० प्रतिशत या उससे अधिक किन्तु ५० प्रतिशतसे कम अंक पावेंगे। तृतीय श्रेणीमें वे होंगे जो सब विषयोंके अंक मिलाकर ३३ प्रतिशत या उससे अधिक किन्तु ४० प्रतिशतसे कम अङ्क प्राप्त करेंगे।

२—परीक्षाके स्थान अजमेर, अल्मोड़ा, अलवर, अलीगढ़, आगरा, आरा, इटावा, इन्दौर, इनानजांव (ब्रह्मा), उदयपुर, एटा, कलकत्ता, कानपुर, काशी, कोटा, खंडवा, गोरखपुर, जबलपुर, जयपुर, झांसी, दिल्ली, देवरिया, देहरादून, धौलपुर, नरसिंहपुर, प्रयाग, फ़ीरोज़ाबाद, फ़ैज़ाबाद, ब्यावर, बड़ौदा, बांकीपुर, बांदा, बिलासपुर, बीकानेर, बुलन्दशहर, भरतपुर, मथुरा, मुज़फ़्फ़रपुर, मेरठ, राजनांदगांव, रायबरेली, राठ, रीवां, लखनऊ, लालगंज, लश्कर, शाहजहांपुर, सिरसागंज, सीतापुर, हरदोई और हरिद्वार होंगे।

इसके अतिरिक्त यदि और कोई स्थान केन्द्र बनाया जायगा तो उसकी सूचना समाचारपत्रों द्वारा दी जायगी। साधारण रीतिसे नए केन्द्र इन नियमोंके अनुसार बन सकेंगे—

(१) प्रस्तावित केन्द्रसे १० परीक्षार्थियोंके सशुल्क आवेदनपत्र शुल्क भेजनेकी अन्तिम तिथिसे ३० दिन पहिलेही आजायँ।

(२) व्यवस्थापक, परीक्षास्थान और निरीक्षककी नियुक्तिका प्रस्ताव प्रस्तावित केन्द्रके किसी हिन्दी हितैषी द्वारा शुल्क भेजनेकी अन्तिम तिथिसे ३० दिन पहिलेही आ जाय।

३—प्रथमा परीक्षाकेलिए इन विषयोंमें परीक्षा देनी होगी-

१—साहित्य।
२—भारतका इतिहास।
३—भूगोल।
४—अङ्कगणित।
५—विज्ञान और स्वास्थ्यरक्षा।

अध्याय ७—मध्यमा परीक्षा

१—मध्यमा परीक्षामें उत्तीर्ण होनेकेलिए प्रत्येक विषयमें परीक्षार्थीको प्रतिशत ४० अङ्क प्राप्त करने होंगे। उत्तीर्ण परीक्षार्थी दो श्रेणियोंमें विभक्त होंगे। प्रथम श्रेणीमें वे परीक्षार्थी होंगे जो सब विषयोंके अङ्क मिलाकर प्रतिशत ५५ या उससे अधिक अङ्क प्राप्त करेंगे। दूसरी श्रेणीमें वे होंगे जो ४० प्रतिशत या उससे अधिक किन्तु ५५ प्रतिशतसे कम अङ्क पावेंगे।

२—मैट्रीकुलेशन, स्कूल लीविङ्ग सार्टिफिकेट, राजपूताना मिडिल और वर्नाक्यूलर फ़ाइनल उत्तीर्ण परीक्षार्थी यदि प्रथमाके साहित्यमें उत्तीर्ण हो जायँगे तो उन्हें मध्यमा परीक्षा देनेका अधिकार होगा परन्तु जिन्होंने हिन्दी लेकर मैट्रिक, स्कूल लीविंग तथा हिन्दी नार्मल पास किया है उनकेलिए साहित्य परीक्षा भी आवश्यक न होगी।

३—परीक्षाके स्थान अजमेर, अल्मोड़ा, अलवर, अलीगढ़, आगरा, आरा, इटावा, इन्दौर, पटा, कलकत्ता, कानपुर, काशी, कोटा, खंडवा, गोरखपुर, जबलपुर, जयपुर, देवरिया, नरसिंहपुर, प्रयाग, फ़ीरोज़ाबाद, फ़ैज़ाबाद, बड़ौदा, बांकीपुर, बांदा, बुलन्दशहर, बिलासपुर, बीकानेर, मुजफ़्फ़रपुर, मेरठ, राजनांदगांव, रायबरेली, लखनऊ, लश्कर, शाहजहांपुर हरदोई और हरद्वार होंगे। इसके अतिरिक्त यदि और कोई स्थान भी केन्द्र बनाया जायगा तो उसकी सूचना समाचारपत्रों द्वारा दी जायगी। साधारण रीतिसे नए केन्द्र इन नियमोंके अनुसार बन सकेंगे।

(१) प्रस्तावित केन्द्र से ७ परीक्षार्थियोंके सशुल्क आवेदनपत्र शुल्क भेजनेकी अन्तिम तिथिसे ३० दिन पहिले ही आ जायँ।

(२) व्यवस्थापक, परीक्षा स्थान और निरीक्षककी नियुक्तिका प्रस्ताव प्रस्तावित केन्द्रके किसी हिन्दी हितैषी द्वारा शुल्क भेजनेकी अन्तिम तिथिसे ३० दिन पहिले ही आ जाय।

४—मध्यमा परीक्षाकेलिए चार विषयोंमें परीक्षा देनी होगी, वह यह हैं—

(१) साहित्य, जिसमें चार पत्र होंगे। (२) इतिहास, जिसमें दो पत्र होंगे। और निम्नलिखित विषयोंमेंसे कोई दो—गणित, दर्शन, विज्ञान, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, ज्योतिष, वैद्यक, कृषिशास्त्र, संस्कृत अनुवाद और इंग्लिश अनुवाद।

अध्याय ८--उत्तमा परीक्षा

१—उत्तमा परीक्षाके उत्तीर्ण परीक्षार्थी दो श्रेणियोंमें

विभक्त होंगे। प्रथम श्रेणीमें वे होंगे जो ६० प्रतिशत या उससे अधिक अङ्क प्राप्त करेंगे। दूसरी श्रेणीमें वे होंगे जो ४५ प्रतिशत या उससे अधिक किन्तु ६० प्रतिशतसे कम अङ्क प्राप्त करेंगे।

२—उत्तमा परीक्षाकेलिए परीक्षार्थीको अपने परीक्ष्य विषयके सम्बन्धमें एक निबन्ध हिन्दी भाषामें लिखकर, जो छपे हुए डबलक्रौन १६ पेजीके २०० पृष्ठोंके लगभग हो, परीक्षासे दो मास पूर्व परीक्षामंत्रीके पास भेज देना होगा। इस लेख के न पहुँचनेपर अथवा समिति द्वारा अयोग्य समझे जानेपर समितिको अधिकार होगा कि उस वर्षकी उत्तमा परीक्षामें परीक्षार्थीको सम्मिलित न होने दे। निबन्ध आरम्भ करनेसे पहले उसकी संक्षिप्त सूची भेजकर परीक्षा-समितिकी अनुमति ले लेना आवश्यक होगा।

३—उत्तमा परीक्षाकेलिए परीक्षा-केन्द्र प्रयागराज होगा।

४—उत्तमा परीक्षा निम्नलिखित विषयोंमेंसे किसी एकमें दी जा सकती है—

(१) हिन्दी-साहित्य—जिसमें हिन्दीके उर्दू रूप अथवा मराठी, बंगला, गुजराती, भाषाओंमेंसे किसी एकका साधारण ज्ञान आवश्यक होगा, (२) संस्कृत साहित्य—जिसमें हिन्दीके उर्दू रूप अथवा मराठी, बंगला, गुजराती, भाषाओंमेंसे किसी एकका साधारण ज्ञान आवश्यक होगा, (३) ज्योतिष, (४) गणित, (५) दर्शन, (६) विज्ञान, (७) इतिहास, (८) अर्थ-शास्त्र, (९) अंग्रेज़ी साहित्य (१०) पुरातत्त्व।

५—नियम ७२के अनुसार इस भांति "रत्न" की उपाधि दी जायगी—हिन्दी साहित्य, संस्कृत साहित्य, दर्शन, अंग्रेज़ी साहित्य, इतिहास और अर्थशास्त्रमें उत्तीर्ण होनेवालोंको

"साहित्यरत्न" की; गणित, विज्ञान, ज्योतिष और वैद्यकमें उत्तीर्ण होनेवालोंको "विज्ञानरत्न" की।

६—परीक्षार्थी पुस्तकें किसी भाषामें पढ़ सकते हैं, उत्तर-पुस्तक और निबन्ध नियम ७४ के अनुसार हिन्दी भाषा और देवनागरी अक्षरोंमें लिखना होगा।

अध्याय ९—आरायज़नवीसी तथा कारिन्दगीरी और मुनीमी

१—आरायज़नवीसी और मुनीमी परीक्षाओंमें उत्तीर्ण होनेकेलिए प्रत्येक विषयमें परीक्षार्थीको प्रतिशत ४० अङ्क प्राप्त करने होंगे। उत्तीर्ण परीक्षार्थी दो श्रेणियोंमें विभक्त होंगे। प्रथम श्रेणीमें वे परीक्षार्थी होंगे जो सब विषयोंके अङ्क मिला कर प्रतिशत ५५ या उससे अधिक अङ्क प्राप्त करेंगे, दूसरी श्रेणीमें वे होंगे जो ४० प्रतिशत या उससे अधिक किन्तु ५५ प्रतिशतसे कम अङ्क पावेंगे।

२—जिन परीक्षार्थियोंने हिन्दी लेकर मैट्रिकुलेशन, स्कूल लीविंग अथवा नार्मल परीक्षा पास की है और जो प्रथमा या मध्यमा परीक्षाके साहित्यमें उत्तीर्ण हैं उनकेलिए इन परीक्षाओंके साहित्य विषयमें सम्मिलित होना अनिवार्य्य न होगा।

३—आरायज़नवीसी तथा कारिन्दगीरी परीक्षाकेलिए दो विषयोंमें परीक्षा देनी होगी—

(१) साहित्य।

(२) राजनियम (क़ानून) और अदालती तथा ज़मींदारी कारबार।

४—मुनीमी परीक्षाकेलिए दो विषयोंमें परीक्षा देनी होगी—(१) साहित्य। (२) वही खाता तथा गणित।

५—जैसा अध्याय ७ उपनियम २ है।

शुल्क भेजनेकी अन्तिम तिथि

संवत् १९७६ विक्रमाब्दकी सब परीक्षाओंकेलिए शुल्क सहित आवेदनपत्र भेजनेकी अन्तिम तिथि वैशाख शुक्ल ११ सं० १९७६ ता० १० मई सन् १९१९ नियत है। इस तिथिके बाद आवेदनपत्र और शुल्क स्वीकृत न होंगे। शुल्क-प्राप्तिकी रसीदें ज्येष्ठ कृष्ण ११ के पहले कार्य्यालयसे भेज दी जायँगी, जिन परीक्षार्थियोंको ज्येष्ठ शुक्ल १ तक न मिलें परीक्षा मन्त्री-को सूचित करें।

परीक्षारम्भ की तिथि

संवत् १९७६ विक्रमाब्दकी सब परीक्षाएँ रविवार भाद्रपद शुक्ल ६ सं० १९७६ ता० ३१ अगस्त १९१९ से आरम्भ होंगी। प्रतिदिन दो प्रश्नपत्र दिये जायँगे, एक प्रातःकाल साढ़े छः बजेसे साढ़े नौ बजेतक और दूसरा ढाई बजेसे साढ़े पाँच बजेतक। परीक्षा-क्रम १९७६ के सम्मेलन पञ्चाङ्गमें छपा है, जो सम्मेलन-कार्य्यालयसे ।=) में मिलता है।

उत्तमा परीक्षा

उत्तमा परीक्षा १९७६ के पाठ्यविषय और पाठ्यग्रन्थ इस विवरण-पत्रिकामें नहीं दिये गये हैं। जिनको उत्तमा परीक्षा-

के पाठ्यविषय और पाठ्यग्रन्थ जाननेकी इच्छा हो वह सम्मेलन-कार्यालयसे उत्तमा परीक्षाके विवरणको -)॥ का टिकट भेजकर मँगा लें।

१९७९ की परीक्षाओंकेलिए पाठ्यविषय और पाठ्यग्रन्थ

प्रथमा परीक्षा १९७९

साहित्य

सूर-विनय पत्रिका

साहित्यमें २ प्रश्नपत्र होंगे—

प्रश्नपत्र १—पठित पद्य, नाटक, पिङ्गल और अलङ्कार।

पाठ्यग्रन्थ—१. राधाकृष्णदास : राजस्थान केसरी (नागरी-प्रचारिणी-सभा काशी)

२. हरिश्चन्द्र : सत्य हरिश्चन्द्र (नागरी-प्रचारिणी-सभा काशी)

३. मैथिलीशरण गुप्त : रगमें भंग (इण्डियन प्रेस)

४. श्रीधर पाठक : ऊजड़ ग्राम।

४. रामचरित मानस : अयोध्या काण्ड।

५. भूषण : शिवाबावनी (हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन)

६. रामनरेश त्रिपाठी : मिलन।

पिङ्गल—पाठ्यग्रन्थोंमें आये हुए छन्दोंके नाम, लक्षण, यतिस्थान, गणभेदका ज्ञान। सरल पिंगल (सम्मेलनद्वारा प्रकाशित), हिन्दी पद्य रचना (साहित्य भवन प्रयाग), काव्य-कुसुमाकर प्रथम भाग (विनायक राव) अथवा और किसी पिङ्गल ग्रन्थसे यह विषय पढ़ा जा सकता है।

अलङ्कार—उपमा, रूपक उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, व्याज और

साधारण अनुप्रास और उनके भेदोंका ज्ञान। अलङ्कार मंजूषा (लाला भगवानदीन), काव्यकुसुमाकर प्रथम भाग (विनायकराव), मानस दर्पण (चन्द्रमौलि सुकुल) वा अन्य किसी अलङ्कार ग्रन्थसे यह विषय पढ़ा जाय।

प्रश्नपत्र २—पठित और अपठित गद्य, अलङ्कार और व्याकरण।

पाठ्यग्रन्थ—१. बालकृष्ण भट्ट : सौ अजान और एक सुजान।

२. जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी : अनुप्रासका अन्वेषण।

३. भाषासार पहला भाग (सम्मेलन-कार्य्यालय)

४. तृतीय सम्मेलनके सभापतिका भाषण (सम्मेलन-कार्य्यालय, प्रयाग)

अलङ्कार—जैसा पहिले प्रश्नपत्रमें है।

व्याकरण—भाषा भास्कर अथवा हिन्दी व्याकरण (पुरुषोत्तमदास टण्डन)

प्रश्नपत्र ३—निबन्ध लेखन,

निम्नलिखित पुस्तकोंसे सहायता मिल सकती है—

१. सत्यदेव : लेखनकला।

२. निबन्ध-शिक्षा (खड्गविलास प्रेस)

भारतका इतिहास

इतिहासमें एक प्रश्नपत्र होगा।

पाठ्यग्रन्थ—१. शालोपयोगी भारतवर्ष।

२. मिश्र बन्धु : भारतवर्षका इतिहास भाग १ (सम्मेलन-कार्य्यालय, प्रयाग)

भूगोल

भूगोलमें एक प्रश्नपत्र होगा। साधारण और प्राकृतिक

भूगोल, रुद्रनारायण : मिडिल क्लास भूगोल (प्रकाशक राम-नारायण प्रयाग) से पढ़ा जाय।

अङ्कगणित

अङ्कगणितमें एक प्रश्नपत्र होगा।

विषय—अङ्कगणित सम्पूर्ण, चक्रवर्त्ती वा अन्य किसी ग्रन्थसे।

आरम्भिक विज्ञान और स्वास्थ्यरक्षा

इस विषयमें एक प्रश्नपत्र होगा।

पाठ्यग्रन्थ—१. विज्ञान प्रवेशिका भाग १ (विज्ञान-परिषत् प्रयाग)
२. ताप (विज्ञान-परिषत् , प्रयाग)
३. स्वास्थ्य (डा० सरयूप्रसाद इन्दौर)

मध्यमा परीक्षा १९७६

साहित्य

साहित्यमें ४ प्रश्नपत्र होंगे।

प्रश्नपत्र १—पठित और अपठित पद्य, पिङ्गल, रस और अलङ्कार।

पाठ्यग्रन्थ—१. केशव : रामचन्द्रिका।
२. जायसी : पद्मावत, पूर्वार्द्ध।
३. तुलसी : विनय पत्रिका।
४. प्रियप्रवास दशम सर्गसे अन्ततक।
५. भूषण : भूषण ग्रन्थावली सम्पूर्ण (सम्मेलन-कार्य्यालय, प्रयाग)
६. सूरदास : विनयपत्रिका (सम्मेलन-कार्य्यालय)

पिङ्गल, रस और अलङ्कार—सम्पूर्ण। इन विषयोंका अध्ययन नीचे लिखे ग्रन्थोंसे अथवा इन्हीं कोटिके ग्रन्थोंसे करना चाहिये।

१. भगवानदीन : अलङ्कार मंजूषा।

२. दास : काव्य निर्णय।

३. भानु : छन्दप्रभाकर (जगन्नाथ प्रेस, बिलासपुर)

प्रश्नपत्र २—पठित और अपठित गद्य, व्याकरण और अलङ्कार।

पाठ्यग्रन्थ—१. महावीरप्रसाद द्विवेदी : किरातार्जुनीय (इण्डियन प्रेस)

२. अम्बिकादत्त व्यास : गद्यकाव्यमीमांसा।

३. द्वितीय वर्षके साहित्य-सम्मेलनके सभापतिका भाषण (सम्मेलन कार्य्यालय)

४. हरिश्चन्द्र : मुद्राराक्षस।

५. रामदास गौड़ : भारी-भ्रम (विज्ञान कार्य्यालय, प्रयाग)

व्याकरण और अलङ्कार—सम्पूर्ण। अलङ्कार, पहले प्रश्नपत्रके (१), (२) वाले अलङ्कार ग्रन्थोंसे वा उसी कोटिके अन्य ग्रन्थोंसे पढ़ा जाय। व्याकरणकेलिए भाषा भास्कर, पुरुषोत्तमदास टण्डन लिखित हिन्दी व्याकरण आदि व्याकरण ग्रन्थ आलोचनात्मक दृष्टिसे पढ़े जायँ।

प्रश्नपत्र ३—निबन्ध रचना।

विषय—गद्य लेख किसी दिये हुए विषयपर लिखना होगा।

प्रश्नपत्र ४—भाषा और लिपिका इतिहास।

पाठ्यग्रन्थ—१. ओझा : नागरी अङ्क और अक्षर (सम्मेलन-कार्य्यालय)

२. हरिश्चन्द्र : नाटक (खड्गविलास प्रेस)

३. मिश्रबन्धु विनोद भाग १—पृष्ठ १५ से ८४ तक, १०५पृष्ठ से ३५३ तक, पृष्ठ ३६२ से ३८४ तक, पृष्ठ ३८८ से ४०१ तक, पृष्ठ ४१३ से ४१९ तक।

४. मिश्रबन्धु विनोद भाग २—निम्न लिखित कवि और लेखक—सेनापति, मलूकदास, बेनी, महाराज जसवन्तसिंह, बिहारी, मतिराम, छत्रसिंह, भूषण, सुखदेव, कालिदास, महाराज छत्रसाल, निवाज, वृन्द, देव, बैताल, आलम, गुरु गोविन्दसिंह, पठान सुलतान, श्री पति, महाराज विश्वनाथ सिंह, घाघ, नागरीदास, चरणदास, दास, तोष, रसलीन, गिरिधर, नूर मुहम्मद, ठाकुर, गुमान, दूलह, सूदन, दत्त, ब्रजवासी दास, गोकुलनाथ, गोपालनाथ, बोधा, लल्लू जी लाल, सदल मिश्र, पद्माकर, ग्वाल, सूर्य्यमल।

५. मिश्रबन्धु विनोद भाग ३—पृष्ठ १०७३ से १०८० तक, पृष्ठ १२२५ से १२४६ तक तथा निम्न लिखित कवियों और लेखकोंका वर्णन—

द्विज देव (काष्ठजिह्वा स्वामी), गिरधरदास, पजनेश, महाराज रघुराजसिंह, शिवप्रसाद, रघुनाथदास, लेखराज, दयानन्द सरस्वती, लक्ष्मणसिंह, लछिराम, बालकृष्ण भट्ट, हरिश्चन्द्र, श्रीनिवासदास, शिवसिंह सेंगर, अम्बिकादत्त व्यास, सुधाकर, प्रतापनारायण मिश्र, देवीप्रसाद पूर्ण, देवकीनन्दन खत्री।

यदि मिश्रबन्धु विनोद प्राप्य न हो तो उसके तीनों भागोंके स्थानपर निम्नलिखित पुस्तकें पढ़ी जायँ।

१. मिश्रबन्धु : हिन्दीका संक्षिप्त इतिहास (मिश्रबन्धु विनोदसे उद्धृत, सम्मेलनद्वारा प्रकाशित)
२. महावीरप्रसाद द्विवेदी : हिन्दी भाषाकी उत्पत्ति।
३. श्यामसुन्दरदास : हिन्दी कोविद रत्नमाला भाग १।
४. रामनरेश त्रिपाठी : कविता कौमुदी प्रथम भाग।

इतिहास

इतिहासमें दो प्रश्नपत्र होंगे।

प्रश्नपत्र १—भारतवर्षका इतिहास।

पाठ्यग्रन्थ—१. मिश्रबन्धु : भारतवर्षका इतिहास भाग १।
२. भारतीय शासन पद्धति (खड्गविलास प्रेस)
३. बालकृष्ण : भारतवर्षका इतिहास दोनों भाग।
४. प्रयागप्रसाद त्रिपाठी : भारतवर्षका इतिहास, मुसलमानोंका शासन।
५. नन्दकुमारदेव शर्मा : सिक्खोंका इतिहास (मनोरञ्जन पुस्तक-माला)
६. द्वारकाप्रसाद चतुर्वेदी : वारन हेस्टिङ्ग।
७. शालोपयोगी भारतवर्ष।

प्रश्नपत्र २—इतिहास तत्व तथा यूरोपका इतिहास।

पाठ्यग्रन्थ—१. चिपलूणकर : इतिहास (अनुवादक गङ्गाप्रसाद)
२. रामदास गौड़ : यूरोपका संक्षिप्त इतिहास।
३. हिन्दुओंकी राजकल्पना।
४. सुपार्श्वदास गुप्त : पार्लमेण्ट।
५. विनायक ओक : फ्रांसकी राज्यक्रान्तिका इतिहास (तरुण भारत ग्रंथावली)
६. प्राणनाथ विद्यालङ्कार : शासन पद्धति (मनोरंजन पुस्तक-माला)

नोट—संस्थाओं और विचारोंके विकास और जनसाधारणकी दशापर इतिहासके अध्ययनमें मुख्यतः ध्यान देना चाहिये। लड़ाइयों और राजाओंकी कथामात्रपर विचार करना पर्याप्त न होगा।

गणित

गणितमें एक प्रश्नपत्र होगा।

पाठ्य विषय इस प्रकार पर हैं:—

१. बीज-गणित—बापूदेव शास्त्री कृत दोनों भाग वा अन्य किसी ग्रन्थसे निम्न लिखित विषय पढ़े जायँ और अभ्यास किया जाय—

परिभाषा, संकलन, व्यवकलन, कोष्ठ, गुणन, भागहार, घातक्रिया, मूलक्रिया, प्रकीर्णक, महत्तमापवर्तन, लघुत्तमापवर्त्य, बीजात्मक भिन्न पदोंका व्युत्पादन, भिन्न पदोंका रूप भेद, भिन्न पदोंका संकलन और व्यवकलन, भिन्न पदोंका गुणन, भिन्न पदोंका भागहार, भिन्न पदोंकी घातक्रिया, भिन्न पदोंकी मूलक्रिया, भिन्न सम्बन्धि-प्रकीर्णक, समीकरणका व्युत्पादन, एकवर्ण एकघात समीकरण, अनेक वर्ण एकघात समीकरण, एकघात समीकरण सम्बन्धी प्रश्न, इष्ट कर्म और क्षीष्ट कर्म, करणीका व्युत्पादन, करणियोंका रूप भेद, उनका संकलन और व्यवकलन गुणन और भागहार, घातक्रिया और मूलक्रिया, महत्तमापवर्तन और लघुत्तमापवर्तन, भिन्न करणियोंका रूप भेद उनके संकलन आदि और कर्म करणी सम्बन्ध, प्रकीर्णक और असंभाव्य राशिका गणित, करणीयुक्त एकघात समीकरण, वर्ग, घन, तथा चतुर्घात समीकरण, गुण, अनुपात, चलन, अव्यक्त वारद्योतक, लुप्यमान भिन्न राशि तथा छियुक्पत् विधि।

२. सरल त्रिकोणमिति—लक्ष्मीशंकर मिश्र कृत वा अन्य ग्रन्थोंसे यह विषय पढ़े जायँ और उनका अभ्यास किया जाय।

कोण मापनेकी रीति, त्रिकोण मितीय सम्बन्ध, दिये हुए त्रि० समकोणके कोण, मिश्र कोण, घातमापक संख्या, त्रिभु-

जके कोण और भुजका सम्बन्ध, त्रिभुज गणित, क्षेत्रफल आदि, उँचाई दूरी मापनेकी रीति, तथा इन सबके उदाहरण

३. रेखा गणित—रेखागणित पहले चार और छठा अध्याय जैसा यूक्लिडका लिखा हुआ प्रसिद्ध है, अथवा हाल और स्टिवेंस कृत रेखागणित पांचों भाग।

दर्शन

दर्शनमें एक प्रश्नपत्र होगा।

विषय—भारतीय और युरोपीय दर्शन।

पाठ्यग्रन्थ—१. रामावतार शर्म्मा : युरोपीय दर्शन।

२. भगवद्गीता, तिलक रचित वा अन्य टीकासे।

३. ईश, केनकठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य और श्वेताश्वतरोपनिषदोंका अनुवाद।

४. वैशेषिक सूत्र (अनुवाद)।

५. न्याय सूत्र (अनुवाद)।

६. गणपति जानकीराम दुबे : मनोविज्ञान (नागरी प्रचारिणी सभा, काशी)

विज्ञान

विज्ञानमें एक प्रश्नपत्र होगा।

पाठ्यग्रन्थ—१. सम्पूर्णानन्द : भौतिकशास्त्र (मनोरञ्जन पुस्तकमाला)

२. विज्ञान प्रवेशिका भाग २ (विज्ञान परिषत् प्रयाग)

३. चुम्बक (विज्ञान परिषत्, प्रयाग)

४. रामदास गौड़ : गन्धक, फास्फोरस (विज्ञान-परिषत् प्रयाग)

धर्मशास्त्र

धर्मशास्त्रमें एक प्रश्नपत्र होगा।

ग्रन्थ—१. मनुस्मृति (अनुवाद)।

२. याज्ञवल्क्यस्मृति दाय भाग प्रकरण और आचार प्रकरण।

३. महाभारत, शान्तिपर्व छप्पनवें अध्याय (प्रश्नारम्भ) से लेकर अनुशासनपर्व १६४ वें अध्यायके पूर्व पर्य्यन्त। अध्यायकी संख्या कलकत्तेके शरच्चन्द्र सोम द्वारा प्रकाशित हिन्दी महाभारतसे दी गयी है। निम्न लिखित १५ प्रकरणपर प्रश्न न किये जायंगे—

१-ऋषियोंकी निवास दिशा, २-श्रीकृष्ण माहात्म्य, ३-जनकोपाख्यान, ४-ज्वरोत्पत्ति, ५-दक्षयज्ञ विनाश, ६-शिवसहस्रनाम, ७-उशनाकी कथा, ८-शुकदेव जन्म, ९-श्री कृष्णोक्त नाम निरुक्त, १०-हयग्रीवोपाख्यान, ११-मद्यपानोपाख्यान तथा उपमन्यूक्त महेश्वरसहस्रनाम, स्तव माहत्म्यादि, १२-च्यवन कुशिक सम्वाद, १३-दान धर्म पर्वान्तर्गत नक्षत्र योग-दान वर्णनसे लेकर "इन्द्र गौतम सम्वाद" पर्य्यन्त, १४-विष्णु सहस्रनाम तथा १५-अनुशासन पर्वका द्वादश अध्याय।

अर्थशास्त्र

इस विषयमें एक प्रश्नपत्र होगा।

ग्रन्थ—१. बालकृष्ण : अर्थशास्त्र (गुरुगुल कांगड़ी)

२. महावीर प्रसाद द्विवेदी : सम्पत्तिशास्त्र।

ज्यौतिष

ग्रन्थ—१. इन्द्रनारायण द्विवेदी : सूर्य्य सिद्धान्त, भूमिका सहित (सम्मेलन कार्य्यालय)

२. दुर्गाप्रसाद खेतान : ज्यौतिषशास्त्र।

वैद्यक

इस विषयमें एक प्रश्नपत्र होगा।

पाठ्यग्रन्थ—१. त्रिलोकीनाथ वर्म्मा : हमारे शरीरकी र
　　भाग १ और २।
　　२. नगेन्द्रनाथ सेन : वैद्यक शिक्षा।
　　३. सरयूप्रसाद : स्वास्थ्य।
　　४. शुश्रूषा (सरस्वती भवन, झालरापाटन)

संस्कृतसे अनुवाद; अङ्गरेजीसे अनुवाद

प्रत्येक विषयमें एक प्रश्नपत्र होगा।

साधरण संस्कृत अथवा अङ्गरेज़ी गद्यसे हिन्दी अनु
करना होगा।

कृषिशास्त्र

इस विषयमें एक प्रश्नपत्र होगा।

पाठ्यग्रन्थ—१. तेजशंकर कोचक : कृषिशास्त्र।
　　२. गंगाशंकर पचौली : केला, ईख गुड़, शक्कर।
　　३. हरिराम सिंह वर्म्मा : कृषिकोष।
　　४. वैनयावर : बागवानी (हिन्दी प्रेस प्रयाग)।
　　५. ठाकुर रामनरेश सिंह : धानकी खेती।
　　६. वलराम उपाध्याय : आलूकी काश्त।

अरायज़नवीसी परीक्षा १९७

साहित्य

साहित्यमें दो प्रश्नपत्र होंगे—

प्रश्नपत्र १—पठित और अपठित गद्य-अलङ्कार और व्याकर
जो पाठ्यविषय और पाठ्यपुस्तकें प्रथमा परीक्षाके साहि

प्रतिष्ठा।

पादन।

अनुवाद

हिन्दी

्द, दक्ष

व्यान)।

।

९८७

द्वार

कि ह